Published by Seth Gurumukhraya Sukhanandji

C/o Marwaribazar Bombay, No. 2, Printe I by Ramchandra Yesu Shedge, 'Nirnaya Sagara' Press, No. 23, Kolbhat Lane, Bombay.



शात्र में भिष विद्य पाटकीक सामने मुनिषमेका महान् प्रेय श्रीमृत्याचार संस्कृतसम्या और हिंदीमामाटीकामहित उपस्थित करता हूं। इसमें मुनिषमेकी संयक्तियाये बहुत विसाससे वर्णन की गेर्ट हैं। इसमें बारह अधिकार हैं—

मृत्युणापिकार, षृद्दाव्यास्यानमहारहायापिकार, संदेशसया-स्यानास्त्रास्, सामाचारापिकार, यंचाचायापिकार, विद्याद्विकारि-कार, पदावस्यकापिकार, द्वादसाद्विकापिकार, कानगास्मावनापि-कार, मामबगारापिकार, स्वित्युणापिकार, पर्याक्षिकपिकार । इन अधिकारीका जैसा नाम है उसीके अञ्चमर क्यन किया गया है।

जनतक मुनिभमंका कोई मंत्र मकाशित नहीं हुआ या इस कारण महुनने भव्यजीबोकी मुनिभमंकी कियाओंक सरूपका ज्ञान ही नहीं था। जब भाग्योदयसे मुनिजनंतकीर्ति दि० जैन भंधमाजाने भव्य जीबोंक उपकारार्थ इस महान् मंत्रको मकाशित किया है। इस महान मंत्रके मुक्का श्रीवहकेरलागी हैं। इस मंत्रका संस्कृतरीका आचारकृतिके कर्ती श्रीवस्त्रेनिदितिहांतक-वर्षी है। इसरी मृत्याचार महीपक संस्कृतरीका श्रीसक्कशीर्ति अनुसार जैपुरी देशभाषा टीका पं० नंदलालजी जैपुरनिवासीने आधी ५१६ गाथा तक बनाई उसके बाद उक्त पंडितजीका खर्गदास होगया । पश्चात् पं० ऋषभदासजीने अवशिष्ट आधी बनाके उसटीकाको पूर्ण किया। उसकेविषयमें "टीका देशभाषामय पारंभी स नंदलाल पूरण करी ऋषमदास यह निरंधार है" ऐसा भाषाकारका कविचमी है। जैनमतमें मोक्ष मुनिधर्मसे ही है इस-लिये मोक्षकेलिये यही अंथ साक्षात उपयोगी होसकेगा । यह

आचार्यने भी बनाई है और पहली आचारवृत्ति संस्कृतटीकाके

भाषाटीका उक्त भाषाटीकाके अनुसार ही की गई है । अब हम विशेष न लिखकर केवल इतना ही कहते हैं कि इस प्रंथमाला के संरक्षक श्रीमान सेठ सस्तानंदजीने जो इस प्रंथका उद्घार

परिचय देते रहेंगे।

करर क्षमा करते हुए साध्याय करें । इत्यलं विशेष । जैनप्रेयउद्धारककार्यालय केश्वाबारी पो • गिरगांव-चंदह

कार्तिहरूरि १४ सं १९७६

कराया है उसके लिये कोटिशः घन्यवाद है जीर आशा करते हैं कि उक्त सेठ साहब इसके फंडके बदानेमें अपनी उदारताका अंतमें प्रार्थना है कि इस मंधके संपादन व संशोधन करनेमें जो बटियां रहगई हों उनको साध्यायमेमी सज्जनगण शदकर मेरे

जिनवाणीका सेवक पं॰ मनोहरलाल पाडम (मैनपुरी) निवासी पुराक गिलनेक पते--

१ सेंड गुरुमुखराय सुमानंदजी, मारवाही बाजार पो० नं० २ बंचई.

२ पं० रामप्रमादजी जैन, सेक्ड--

मनिअनेनदीति दि० जैनमेधमाता सुलानेदपाडी पो० गिरगांव-चंबई I

३ मैनेजर—जैनग्रंथउद्गारककार्यालय

सत्तरगठी होदावाडी पो० गिरगांव--- वंबई ।

मुनिअनंतकीर्ति दि॰ जेन-ग्रंथमाला

१ यह प्रंथमाला खर्गीय मुनिअनंतकीर्तिजीके सारणार्थ सीली-गई है। इसमें प्राचीन आर्षप्रंथोंका उद्धार कराया जायगा।

इसके संरक्षक श्रीमान् सेठ गुरुमुखराय मुखानंदजी हैं। २ मुनिमहाराजके नामसे खुलनेका कारण यह है कि एक समय मिनिमहाराज अमण करते हुए मुम्बईनगरमें पधारे । एक दिन यहांके सुप्रसिद्ध उक्त सेठ सुखानंदजीके यहां सुनि महारा-

जका आहार नवधा भक्तिके साथ निर्विध हुआ। उसके हर्भमें सेठ साहबने अपनी उदारताका परिचय देनेके लिये ११०१) ग्यारहसी एक रुपये मुनिजीके नामसे जैनमंथ उद्घार करानेके लिये दानमें दिये । मुनिमहाराज फिर अमण करते हुए भुरैना

नगरमं पधारे और रोगसे असित होजानेसे वहां उनका सर्गवास होगया । उसके कुछ दिनों वाद उन म्यारहसी एक रुपयेसे मुनिधर्मका महान् प्रंथ मूलाचार हिंदी भाषा टीका सहित मुनिमहाराजके नामसे प्रकाशित किया गया है। ३ इसमें जितने अंथ मकाशित होंगे उनका मृत्य लागतमात्र

रक्ला जायगा । लागतमें श्रंथ संपादन कराई, संशोधन कराई छपाई, जिल्द संघवाई आफिसस्तर्च और कमीशन भी शामिल समझा जायगा ।

मिति कार्तिक सुदि } १८ स० १९७६ } पं॰ मनोहरलाल शास्त्री सचरगली होदाबाड़ी पो० गिरगांव वेवर्ड ।

अथ मूलाचारस्य विषयसूची । प्र. सं. 🗆

विषय

धिकार।२।(७१)

मगळाचग्णकर प्रत्यारयान तथा संमाके सरप

बहनेकी शतिशा

सामायिकका स्थरूच

विषय

रिणाम करे उसका वर्णन

मरणके भयका निराकरण....

गेन्यास मरणका फल वर्णन कर जेतमंगलकर दुगुरा

अधिकार समाप्त

मृत्रगुणाधिकार । १ । (३६)	सामाधिकका विशेष सारूप १	,
गित्राधरणवर गृतगुण बद्द-	दोवोंके स्यागका धर्णन २ः	₹
मेकी प्रतिक्षा १	प्रमादेकि स्थानका वर्णन २	₹
पट्टाईसम् गुजोके भेद	आरमसंस्कारकालका वर्णन	
चिमहामतीके नाम २	कर सन्याम आहो-	
(बमहाप्रतीवास्त्रस्य ₹	चनावायर्गन २०	4
विसमितियोंके नाम ५	शमणवा वर्णन २१	Ę
विश्वनिधिवासम्य ५	मरणभेदवा, सथा मरण विरा-	
विद्यितिरोधेक नाम 🤒	भनेसे देव दुर्गति होनेका,	
ांच≮दियनिरोधका सरूप ८	बोधदर्शम होनेका तथा	
८८ आयस्यकोंके नाम १०	बालमरणवा स्वरूप वर्णन २०	,
हुइ आवस्यवीका स्वरप १०	ऐसा सुन धपक चिंतवन	
र्धेच आदिसात मूल ग्रु-	करे तथा आचार्य उपदेश	
र्णोकास्वरूप १३	दे दृदको उसका वर्णन ३५	
त्त्रुणों वा फल वर्णन	क्षपक हद हो जिनवचनका	•
कर अधिकार समाप्त १६	शरण हैके अत्यंत रद प न	
षृद्दम्प्रत्याख्यानसंस्तरस्तया-	floor of order edge	

१७

~ .d	, ,	·	
. 45	-	mentarras ignimes soft	•
415-1-11-14-14-14-14-14-14-14-14-14-14-14-1	•	*** +** +	
+	٠.	tarage of comment	
	**,	terrese force and	
Ť (************************************	, ,	14.5 +2 4	
المارية في المارية المارية		*** ** * * ********* ***	
Angerting of Conf. from	١,	1	
में तेल जमानारक चेंद्र		desperter mont took	
source front	•	AT THE IS YOU HELD	
to the factorial of 1 controls of the	1.	\$110 et \$ 1.9	
n' twanter 13am		+ · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	
me to Tropical	٠,	their sart	
।० रेम्सिक्सलामा हा लि-		tom Thomas Ind	
बरम, उत्तर्ने क्रेंड मृति-		*** * * * *	
० व साले गुरु दे पान		की संदे कुत्र, भौति वासला	
नव कृत निन्तक भःचा-		रणी बीबर्क उत्पन्तरः	
पेक्षे भाषा है पुरुषकार		144	
THE P NT, THE HOUSE		म में भगर देश जान ,	
च है म'चा ने ६ हाल बाकर		वृत्रण्यद्व, भाषा मन	
૧૯૫૧ (શિલ્લક દન દ ૧૯૫૧ મુસારે સીલે બીંગ		नि सा का भाजार, परि	
रण स्थार साला अल देवी अल्लाह केल देंगे		444 ,,	1.
देने पन हैं उसका विशेष		मन्यानार्वेश्वेद श्वेद्धात्र नः. रीपांचा स्थान द्वीरः.	
कार्य	11		
आवासीका सवाचार वर्णक		वर्षाच्या राज्य । वर्षाच्या राज्य स्तुर्भक्षः	1.,
	٠.	4 11 M. D. 194 45, 45.	

विषय प्र. सं. | विषय दिषय पू. सं. प्रावश्चितपका वर्णन १४५ रहादि मादि माठ प्रकार शहताका विशेष वर्णन विनयका वर्णन, विनयके 111 चारित्राचारका वर्णन, वहां यांच भेद कह दर्शनविन-पंचमहाबरीका वर्णन १२० यका वर्णन १४६ राविभोजनत्यागका वर्णन.... १२२ शानविनयका वर्णन 889 प्रशिधानका वर्णन १२३ चारित्रविनयका वर्णन १४८ शमितियोंके नाम तथा ईयी-तपवितयका पर्णन १४९ श्रमितिका धर्णन १२५ उपचारविनयका विशेष वर्णन १४९ सापासमितिका धर्णन १२६ विनयका माहात्म्यवर्णन १५४ ययणासमितिका यर्णन १३० वैवाक्त्यका वर्णन १५५ आदाननिधेपणासमितिका वर्णन १३० स्वाच्यायका वर्णन १५६ प्रतिष्ठापना समितिका वर्णन १३२ आर्त रीद्र धर्म द्यक्रप्यानका समितिकी महिभाका वर्णन वर्णन १५७ तीनग्रसियोका वर्णन १३८ च्यासर्गना वर्णन ... 75? कार प्रवचनभविकाओंका तपकी महिमा तप आचार वायन १३६ समाप्त १६२ पंच महामतीकी भावनाका वर्णन र ह ६ बीर्वाचारका वर्णन १६३ सपञाबारका वर्णन, सपके नाम १३९ पिंडद्राकि-अधिकार ।६। (८२) अनशनतपदा यर्णन १४० मंगळाचरण, आठपकार अवधीदर्यनप्रशास्त्रीत १४१ विद्रशिक नाम, अधा-रमपरित्यागका वर्णन १४२ कर्जन वर्णन तथा सी-धतिपरिसंख्यानका पर्णन १४३ लह उद्गम दोषोंके नाम १६७ कायद्रेद्राका वर्णन १४३ सोलह उद्गमदोषोंके मत्ये-विविक्तास्यासनका यूपेन १४४ कका सरुप भेद, भेदीके बाह्यतपका वर्णन समाप्तकर स्तस्यका विशेष यर्णन १६८ व्यायंत्रा तर्जेके साम ११५

. .

		·
रियम		शिष पूर्वः
मीलह उपाइन होगों हे ना	705	वंतारनेतीका सम्य पंत
मीलह उलाइनदोगीके पनी		गमोतार मंत्रती महिना १९७
कता मन्य, तय		हद आराजनीके सम २०१
मेदीका रामप वर्णन	. १७5	नामायिक नियुक्तिका यर्गन
दम अञ्चलदोगीके नाम	. १८२	. संपा-नाम मानना द्वना
दश प्रकार अशन दोगीं ह	1	देवकालमायेनदीने विशेष
शस्य तथा मेर, मेरीन		वर्गन र०१
सहप्रयोग		
संयोजनादीय तमा प्रमाणदी	-	निधा २०८
वीं हा वर्णन अंगारदोन		
धुमदोपका वर्णन	. 244	गायामपमायनपाठका विशेषण
आहार छेनेका तमा आहा		विशेष्य प्रति अर्थ कर
छोडनेका वर्णन मोत		शिशप वर्णन २१५
नकी झुद्धताका वर्ण		वंदनानिर्वृत्तिके छह निधेन
चौदहमलोंके नाम		कथन २:९
प्रामक आहार तथा द्रव्यक्षे		कृतिकर्म चितिकर्म प्राकर्म
कालमावकी श्रद्धताव		विनयकमोंका वर्णन २१९
वर्णन पूर्वक एपणा समि		विनयकमें होबानुपृतिवि-
तिकी विश्वक्रिका वर्ण		नय अर्थनिमित्तविनय
भोजनके बत्तीस मुख्य अंत		कामतंत्रविनय भयविनय
राय तथा अन्य अने		और मौक्षत्रिनय इसतरह
अंतरायोंका वर्णन		पांच भेद वर्णन २२१
अंतमगळ अधिकार छठा प		
असमान मानकार छठा ।		

श्चान चारित्र तप विनय औपचारिकविनय इनका विशेष वर्णन

.... २२२

यडाबस्यकाधिकार । अ (१५९) मंगलाबरण पूर्वक आवश्य-

कके खरूप कहनेकी प्रतिशा १९६

पू. सं.

विषय

1111	
वंदनीय अवदनीयका भेद वर्णन २२४	अनित्यत्वानुपेदाका वर्णन २५६
कितने स्थानोंमें वंदना करना	अशरणानुत्रेक्षाका वर्णन २५६
उसकावर्णन २२५	एकत्वाद्वेपेक्षाका वर्णन २५७
वंदनाके मत्तीसदीप २२८	अन्यत्वानुषेक्षाका वर्णन २५८
वंदनानिर्युक्तिकी समाप्तिका	संसागनुषेक्षाका वर्णन २५९
वर्णन २३०	लोकानुप्रदावा वर्णन २६२
प्रतिक्रमण निर्युक्तिके छह निद्धेप२३१	अद्युचित्वानुवेशाका वर्णनः . २६५
प्रतिक्रमणका स्वरूप भेद	आसवानुपेक्षाका वर्णन २६७
भेदीकाससम २३१	सयरानुवेद्याका वर्णन २७१
तथा आठोचनाका म्वरूप	निर्जरानुप्रधाका वर्णन २७२
विधान वर्णन २३६	धर्मानुप्रशाका वर्णन २७४
प्रत्यास्थाननिर्देशिके छद	बोधदुर्लमानुप्रधाका वर्णन २७६
निक्षेप २३७	अनुपेक्षाकी महिमानर्थन
प्रत्यास्यानके दस भेदीका	अधिकार पूर्ण . २७९
वर्णन २.३८	अनगारभाषनाधिः
चार प्रकारके प्रत्याख्यानकी	कार १९। (१२५)
द्युद्धताका धर्णन २३९	मंगलाचरणपूर्वक अनगारमा-
कायोज्यर्गके छद्द निक्षेपीका	यनामहर्नेकी प्रक्रिया २८०
षर्णम २४२	िंगग्रहि आदि दश प्रकार
बायोत्मर्गदा विशेष वर्णन २४२	शुद्धिक नाम तथा इनकी
आवश्यककी महिमा सधा	महिमा २८१
आसिका निवेधिकाका स्वरूप २५४	िंगद्यद्विका धर्णन २८२
आवश्यक पालनेका फल २५५	मतद्विका वर्णन २८५
जावस्यक पालनका घल ६५५ ज्ञाहदशानुमेशाधिकार (८) (७६)	वसतिकाद्यदिका वर्गन २८७
मंगरापरणपूर्वेत बारह अञ्चर	विद्वारशक्षिका वर्णन २९०
शाओंके नाम २५५	
दामाक नाम २५५	निशास्त्रिका वर्णन २९४

??				
विषय	વૃ. સં.	विषय पृ. र्स.		
।।नश्चद्धिका वर्णन	२९ ९	द्रव्यक्षेत्रकालमावशुद्धिका वः ३३८		
ज्ज्ञनशुद्धिका वर्णन	 ₹०२	कुरिसताचारके संसर्गका		
।।क्यश्चद्धिका वर्णन	३०७	(संगतिका) निषेष ३४१		
।पशुद्धिका वर्णन	₹ १ 0	जो सघको छोड सेच्छाचारी		
यानद्यद्धिका वर्णन	4{8	हो शिक्षा नहीं मानता		
वनगरभावनाकी मा	हेमा-	उसको पापयमण कहा है ३४३		
कथन ••••	₹ १ ९	जो पहले शिष्य न होकर		
त्रमयसाराधिकार ।		आचार्यपना करनेको		
गलाचरण, समयसार		किरता है उसको पापवन		
	३२१	मण कहा है ३४३		
थ्या वैराग्युका नाम सम		स्ताप्यायका माहातम्य वर्णन ३४६		
कहा है		च्यानका विस्तारसे वर्णन ३८७		
वारित्ररहितज्ञान निरर्थक		जीवके द्रव्यगुणपर्यायका वर्णन ३४९		
उयमरहित छिंग निरर्थ		कपायका निषेध वर्णन ३५१		
इम्यक्त्यरहित तपनिर्थः		विहा उपस्पका निषेध वर्णन ३५२		
यानका माहात्म्य वर्णन		जक्षचर्यके भेदोंका वर्णन ३५४		
माचेलक्य ठॉच ब्युत्स्टष्ट :		मावलिंगका वर्णन ३५९		
रता प्रतिलेखन ऐसे '				
प्रकार लिंगकल्पका ब	र्णन ३२६ (शीलगुणप्रस्ताराधि-		
मो पिङ्युद्धि उपधि		कार १११। (२६)		
शय्याञ्जब्धि नहीं करते	ने हैं	मंगलाचरणकार शीलगुण		
उनका निषेध कयन	३२९	कहनेकी प्रतिशा इ६१		
तो अधःकर्मकर मोत्रन व	इस्ते 🏻	अठारह् हुजार शीउके		
हैं उनका अत्यंत नि	वेषेय	भेदीका वर्णन ३६१		
है उनको सुनि श्रावद	हरूप 🕽	चौरासीलास उत्तरगुर्वोके		
. दोनों धर्मों से रहित का	हा है वदर्ग	मेदवर्णन २६३		

विषय प्र. सं. । विषय पृ. सं. वेदका वर्णन जीलगणोंके संख्या प्रसार अ-.... 398 द्यसंक्रमण नष्ट उदिष्ट ऐसे टेश्याका वर्णन 39/ पंचविकल्प वर्गन ३६६ प्रतिचार सुप्रमें पाचों इंद्रि-बोंके प्रतीचारका वर्णन ३९९ शीडगणका फलवर्णन ३६९ उपपाद उद्धर्तनका (जीवोंकी पूर्योप्तिनामाधिकार।१२।(२०२) गति आगतिका) वर्णन ४०४ मंगटाचरण, बीससूत्रपदोंका स्यानाधिकारसूत्रका वर्णन उसमें वर्णन ३६९ जीवसमासीका वर्णन ४१४ पर्योभिसप्रका वर्णन **३**७० गणस्थानींका वर्णन ४१७ देहसूत्रका पर्णन उसमें देव-मार्गणास्यानीका वर्णन ४१७ देहका वर्णन ३७२ जीवोंके कुलोंका वर्णन ४२१ नरकदेहका वर्णन ३७३ बारों गतिके जीवोंका अस्य देव तथा मनुष्यतिर्येथोंके बहुत्व वर्णन शरीरकी उंचाई वर्णन ३७५ बंधहेत्रहा वर्णन चार प्रदा-द्वीपसमदोंका वर्णन ३७९ रके हेता १२४ मच्छादिक जीवोंकी जघन्य प्रकृतिबंधका विशेष यर्णन ४२५ उत्पृष्ट अवगाहनाका वर्णन ३८१ मियतिबंधका वर्णन १३० कायसंस्थानका वर्णन ३८३ अनुमागबैधका वर्णन ४३० इंद्रियसंस्थान तथा इंद्रियोंके ब्रदेशबंधका वर्णन --- 838 विषयोंका वर्णन ३८४ आर्टी कमें धय करके अह योनिसरूपका वर्णन ३८७ गणविराजमान परमारमा चारों गतिके जीवोंकी आयुका मगवान मोक्षपदको प्राप्त यर्णन --- **३८**९ होते हैं उसका वर्णन संस्याप्रमाणका वर्णन ३९५ रूप अंतमगढाचरणकर योगका वर्णन **३**९६ अँग सम्हल

₹₹

॥ अय म्लानारकी अकारादिकमणे गागायनी ॥

गाया	24	ग में	41,411	2.4. 11.4.
37			भरं य स्रुगाउपे	154 255
विषेत्रसम्दानं	31	3	सम्प्रकारशंगदृद्धाः	57 15 35.6
नगगरियद्गिया ने	31		भगरा भारते	130 359
अरहेननिद्धपृष्टिमा	111	34	शबुरमगरणभेग	44+1 A+5
अगुन्दिणहानलेहन	141	1 1	अस्थनस्योदगःसे	2{{1 A}5
अंत्रिनिदेशिया	141	įγ	मनिग् देवबल गिरेभी	4631 445
अस्पेत्रममण्याणं	3 \$1	41	भापतिनेहं हुपाडि	1641 A33
असत्तमुक्ष्यंती	1.1	44	अपागुर्ग मिन्नं	१६९। ४२८
भमितंत्रद बहुभावे	₹•∤	44	' अभिनदं पुण दुविहं	4 3,41 A.A.
भ्रमागमणे बाडे	4.1	100	अयमाणे वशियरणे	4531 A£4
अण्णोष्णगुक्ताओं	< 41	144		162 883
अज्ञायणे परियष्टे	CY	145	भतिगला अतितुद्दा	deal aft
अधिकारवत्यवेसा	641	150	अद्भग्नगर्स सन्धि	4651 864
अगिहरयमिस्सणिळए	८५।	151	अरिहंति णमोदारं	१९७। ५०५
अद्रतेरसवारसः	561	२२३	' अरहंतणमोश्चारे 🚥	1561 408
अबीवाविय दुविहा	122	२३०	अरिइंति वंदणणमं	२१५। ५६२
अभिरमणे हिंसादी	1•31	२३८	अरहंतेषु य राओ	२१८। ५७०
अचित्तरैवमाणुस	1291	२९२	अस्भुद्वाणे अंत्रति	२२१। ५८१
अण्णे अपेध्छसिद्धं	9341	111	अवगयदि तवैण तर्म	ररहे। ५८८
अपरिग्यहर्स मुणियो	1141	383	अणादिहं च यदं व	२२८। ६०३
अनसणअवमोदरि <i>र्य</i>	4351	₹¥€	अणाभोगक्दं कम्मं	२३३१ ६२०
अस्प्रद्वाणं किदिअ	4821	₹७₹	भणागद्भदिइतं	२३८१ ६१७
शह श्रीवचारिओ सलु	1528	₹<9	अद्धाणगदं गवमं	२३८। ६३८
अञ्चहाणं सम्मदि…	१५र।	३८२	अणुभासदि गुरुवयणं	१४०। ६४१
अद्याणतेण सावद	1451	१९२	भसणे खुड्पसम्भे	5831 ERR

भाषा	ष्ट्र से.	गा.सं.	याथा	ष्ट्र.सं.	गा.सं.
शसणे पाणे तद् सा	2831	£x £	अस्सायं तु चरित्तं	३५०।	963
अहमदं देवतियं	3885	६५७	े अत्यस्स जीविवस्म य	₹ 431	564
आं दहंच दुवे	१५०।	ξoq	अदिक्रमण बदिक्रमणं	3 (11	1-35
शहरांच दुवे	२५०	(vv	अत्यस्य संपञ्जीगो	3441	9-25
अद्भुवसंसर्थमेग	१५५।	658	बहुारम जोयनिया	3611	9068
राण्यो अण्यं सोयदि	२५९।	4.5	अगुलअसदाभागं	3631	9060
अण्यं इमं सरीरं	१५५।	900	अद्वेषणुसद्दस्या	3641	9054
शमुद्रवियाविलगहमे	3561	७२३	अस्तीदिमदं विगुणं	3681	9056
अत्य कामसरीरा	3551	484	थदिता यत जोणी	3001	11
अभिहृदमणसा एदे	3551	433	असुरेस सागरोवम	3531	1110
अञ्चेषसाहि एवं		UEY	अमुराणमधेखेला	8031	1141
क्षणयारमद्वरिधीणं	2601	466	भविरदं संरमणं	X0 ¢1	1960
भपरिग्गहा भणिच्छा	2641	420	अश्यि अणंता जीवा	¥111	\$ - \$
अण्यादमणुष्यादं	2161	693	अतरदीये मणुया	* ? ? !	1212
अवसोमवस्त्रमेतं	3551	69¥	श्रष्टुदिस्युत्तरदेवा…	YZYI	1216
असर्थ जदि का पार्थ	2541	e3.	श्रविर्श्नमुर्दुस्भ गया	*261	1888
अञ्जबद्दतवोकम्मा	31	695	आ		
अवगदमाणस्यंभा	1001	452	कादा हु मज्झ जाणे	331	*
शहिब चम्मं च तहेबमं	ai•€1	cre	आदारणिमित्र किर	3<1	63
थाँहणिस्टर्ण गाउ	3-41	445	आरादण उवज्रतो	*51	50
अच्छीहिश पैच्छंता	3.61	64.8	आदावणादिगहणे	183	934
अट्ठविद्दकम्ममूर्व	3941	cc2	आणा अणवस्यावि य	4+1	168
अबद्दृ शहरहं	३१ण	663	आएसे एवंतं	150	148

३१९: ८८७ आएसस्य दिश्तं ...

३२२। ८९६ कार्गतुयबत्यव्या ...

३२६। ९०८ | आबासयटाणादिसु

३२७। ९०९ आर्गनुक्यामहरूं ...

३४३१ ९६९ आस्विदि जे तु इस्सं

451 150

41 145

ASI JER

441 155

धणयारा भयवंता

भव्यवहारी एको ...

अमेलकं होचो ...

अधेलकोतिय ...

अंडो शिवसण वसी

गःचा	7.मं. सा.म.	मत्या	तु सं. मा.मं.
उद्गिय दीइयर्ड	3541 433	एगो समाजंदि स	eli teo
डबलद्पुरुषपाचा	1001 614	एवं दिश्यवित्रं	227 103
रुपण्णस्मियं बाही	1-11 415	एवं गायाचारी	eal 324
उभारे परस्वां	1141 511	एमा य चोडिद्योदी	501 \$34
उनवादी बहुगमी	\$40140AA	एवं श्रीवृतिसामा	५५। ११५ ५५। ११५
उत्तरमा वर्षामा गाउँ उत्तरमानेवरक्षेत्र य	\$0019-\$4		
उपस्थितपुरम् उपसङ्गियणसुद्		एइन्दियारियामा	9201 265
	\$64144.8	एशाई धरा छनी	3531 558
उद्रासेणाहारो	***11324	एदाओं सहुवत्रयम	356 556
उद्गर्भेशुस्थामी •••	4.519340	एमचनिक्येक्य	3541 550
उम्बद्धिय सुंता	4081444	एराई भारताई	3541 585
उदबादुवरुगमी	**614465	एकी बरणाबारी	askı sak
उवानिया गोदं	えらくしょうえん	एमी दु बाहिरतवी	3xx1 342
Ψ.		एयम्पेण मर्ग निर्दे	144 354
एयंते अविते	vi 14	एआगेयसभागं	7451 ¥+9
एवं विद्यागजुत्ते	161 36	एदे अन्ते बहुगा	3531 Hea
एओ स मरह जीवो	331 20	एवं गुपञ्जनानं	21 493
एगो में सस्सदो अप्पा	331 A.	एछो पंत्रवयोगारी	२००। ५१४
एकं पंडियमरणं	£61 mm	एमेव स्थमतंते	२२२। ५८३
एकम्हि बिदियम्हि पदे	¥₹1 5₹	एसो पश्चनसाओ	२३८। ६३५
एदम्हादी एकं	A\$1 48	एयपद्मस्सिद्स्सन	3×31 543
एद पथक्साणं	YCI 104	एवं गुगो महत्यो	3491 560
एस करेमि पणामं	401 106	एको करेह कम्मं	344 555
एदम्हि देसयाचे	421 992	एवं बहुप्पदारे	2611 ade
एग पंडिदमरणं		एयविही खतु टोओ	२६२। ७११
एगस्डिय भवगद्दये	411 110	एवं बहुप्परारं	Saol afa
एवं आपुरिष्ठता •••	€01 980	एदमनदारमुत्तं •••	3691 Woo
एवं विभिष्ठवदण्डी	ats 362	एवर्ड मर्ग्वत	२८६। ७८६
एवं गुणवदिरित्तो	८३। १८५	एदाइपो सविद्वा	Seal aca
·			

गाधाः	पृ.सं. गा.सं.	। शापा	पृ.सं. गा.सं.
एवंतिन्ह वर्षता	8641 450	े पर	
एदं सरीरमगुई	\$.AI CAA	कार्वेदियगुणमस्यग	\$1 4
एदारिसे सरीरे	₹•६1 ८५•	वा देवदुगगईओ	351 63
एदे इन्दियतुरया	1141 645	वंदपमामित्रीसं	351 68
एवं चरियविद्दाणं	2951 666	वं विद्वहर्तिदभूदी	341 61
एवं संजयराणि	₹₹+1 65+	च्णयलदा चागलदा	¥+1 25
एवं मए श्रमियुदा	1201 651	कंदरपुरिणगुहादिग्र	\$\$1 12¥
एको वादि सयो बा	.३३०। ९१०	योई सन्दर्भाषी	441 144
एवं दु जीवदय्वं	TARE 202	बंटयखण्डुयप डिणी	451 958
एवं विधाणचरियं	25-13-94	रण्णं विधवं अंते	631 163
एवं सी टगुणाणं	35513+¥3	कि बहुणा भविदेण हु	ett 165
एइन्दियेगु चत्तारि	\$4-13-46	र्याम्ली छडी	581 89Y
एवं दीवसमुद्दा	20517-06	इउजोणिसम्तवादि व	461 440
एइन्दिय भेरहया	\$6019.55	कोडिसदसहरताई	551 888
एकं च तिष्णि सत्तव	25319995	बाटेज उदाएण य	1+11 444
एइन्दिय विगठिदिय	35619786	कोडिहमाग्रुरक्या	9061 840
एइन्दियवियालिदिय	25515720	काले विजये उपहा	238 1866
एवं तु सारसमए	¥131916¥	कलहादिशूमकेषू	1111 144
एइन्दियादि पाणा	¥1411165	<u>बुख्यसी</u> स्थिटूचे	11cl Rev
एइन्दियादि जीवा	¥1411144	कायकिरियाणियत्ती	1141 111
एतो अपुध्दवरणो	¥1011156	<u>कोइअवसोहरासप</u>	184 184
एइटिदशय पंचे	¥1511501	काके विणय् स्वदा	Iral Sta
एइस्टियाय जीवा	¥111190	काइय बाइयमाणशि	FUS 1748
एगणिगोद्सरीरे	4501350A	क्ति नेती वाच	144 146
एइन्द्रिश अणंता	X5013504	बन्नचरावगाओ	1451 800
ओ		की इसहे पुण दुविहे	1011 714
ओपियसामाचारो	(0) 285	<u>भोगारतचुतिगिता</u>	1441 YYE
ओरायहिमगद्यदिया	521 330	कोचेय व वायेय व	1441 841

₹#					
गःषा	पू,मै. मा मे.	N-4-	7 17	. m 4.	
fully to chita	111 171	प्रमानकी व विदय्येश	3 +1	17+47	
बाता मेला सहिन्छ	1111 415	क्रेनन्त्रीन्त्रेसः	1 .7	19-49	
बादण गरी हो	1551 442	Assimilation	144	177-1	
कीची सम्मी सम्मा	3331 376	٠٠٠ سرك نۍ ښتاسکې	15.	****	
किर्तेण किंगणिया	2291 757	इण्ड इण्ड तर द	1	17174	
किल्यमं निर्दयमं	794 1788	काबा दूरे तक भी	155	17724	
कार भोगाई की हिर्दे	110 500	कोरी मानी सारा	411	1554	
feftanift etel	3091 604	बागाणं जो द रगी	-1-	11. **	
काचन म किश्वमधं	1111 514	- 27			
किश्चमम् उत्पादिच	1111 440	यम में गुष्य रीपार्थ	11	1 17	
बाद्रानानी बाद	101 115	मही कोही मानी	33	1 54	
कापुरुवानं मोत्रम	1411 145	मेचे मदलगतार्च	**	1 277	
काभोगमं इरिया	310 113	मेनगा गरै गरर	11.	1 11+	
चःशोगमाध्द डिपी	3 441 EEX	भेनवगुगमवर्ग	313	1 400	
काउरगामिद करे	374 666	शनी महत्र भजर	3 3'4	1975	
दाउर्गमिश्वती	1411 662	संग्री मर्ड अन्य	565	13-3-	
हि केम करन करपद	2401 304	ग			
होधो माणो माया	2401 034	गामारिषु पडिताई	31	•	
दावमसम्युक्षितं	1-41 640	महित्वकरणे विगये	631	334	
कुद्रम चंद्रपाइम	2051 646	गुरुगार्थमियद्रव्यं	(11	114	
कि काहदि बणवासी	1111 521	गिहिद्य येय विद्वारी	501	114	
हि तस्स टाणमोणं	3331 23Y	ग्रहपरिवादी गुद्रवी	(5)	141	
बंडणी पीसणी चुशी	3381 586	गारविओ गिद्धीओ	551	343	
क्षं कद्मंपियरं	3341 534	मंभीरो दुद्धरियो	450	375	
कम्मस्य बंधमोक्सो		गरछं वैद्यातमं	461	700	
कोइमदमायलोहे		मंगीरो दुइरिमो, मिद	८२१	368	
कर्ष चरे क्षं चिट्ठे	34519+93	योमञ्ज्ञाये य इजने	5-1	₹•€	
कारुण णमोद्यार	35319083	गेहयचंदभवश्वग	531	२०९	
)					

नूडतिरसंधिपव्यं • • •	281 296	वंडो चवलो मंदी	2791 544
गदिटाणोग्गाहणका	1001 222	निरपव्यस्त्रवि मुणी	१४२। ९५८
गामे जगरेरण्ये	3 391 3 59	बदुरंगुला च जिन्मा	3431 565
गामं धगरं रण्यं	1891 358	चाओ य होइ दुविही	34419006
सोयरपमाणदायग	1821 244	चउथीए पुरुवीए	34819046
गुणाधिए संबन्ह्याए	1441 250	बत्तारि धग्रसदाइ	3<419+52
गेरय इरिदाउँण व	9061 ROX	चउरिदियाणमाऊ	25019905
यामेयरादिवासी	3061 004	चदस्य सदसहस्यं	35819988
गिरिकंदरं मसाणं	\$x=1 440	ਚ	
<u>र</u> ुणतीसजोदणसदा	१८५।१०९१	छादालदोससुद्धं	\$1 13
यदि सादिसम्गणाओ	¥9419966	छंदण गहिदे दन्वे	441 114
गइ इन्दिये च काये	*9419954	छञ्जीसं पणवीसं	501 388
घ		सुद्दतण्हासीउण्हा	1-41 144
घोडयखदावसंमे	3861 886	छद्वहमदसमदुवा	9441 346
षोरे गिरयसरिच्छे	2521 606	धीरदहिसपितेलं	1841 344
षोडयलदिसमाण	SAAL 28A	छमीनणिकायाणं	154 484
षिदभरिद ष ङसरित्थो	1411 559	छर्दि कारणेहि असणं	1001 Ang
ध		छञ्जीवणिकाएहिं	देश्री हेसर
चवस् भोदं घाणं	VI 94	एइडमभत्तिहै	24x1 690
विरद्धार्यमयारी	Ant 4-5	छप्पिय पळ्लीओ	えのるしるのみの
चादुव्यण्ये समे	1901 368	छहाए पुढनीए	\$ 4140
चत्तारि महावियदी	1831 141	ग्रद्रणुषद्रसमुखीर्थ	34619-63
चडरगुवतरपादी	२१८। ५७३	छहीदो पुढवीदी	****
चडवीसयमिन्दुत्ती	2951 408	জ	
चत्तार पहिन्नमणे	३२७। ६००	जीवणिबद्धा एदे	YI S
चारुम्मासे चहुरी	२४५१ ६५८	जीवाजीवसमुत्ये	९। ३१
चिरकालमञ्जदं पिय	SASI ARE	जीविद्मरणे छाहा	१०। ६१
चलववतत्रीविद्मिणं	२८२१ ७७३	ने दिचि में दुषरिये	301 35

£ 1747	वृत्यं गा.मे.	सन्ता	पू.में, सः में,
जह बानी जर्णनी	\$41 04	जन्तं गरेनी	154) 425
जे पुग पगद्वमरिया	7¢1 (.	त्रवर्ग्याकोशे	75"1 17 1
जे पुण गुरुषदिणीया	111 93	जनगणन दोनं	111: 111
जिमन्यमे अगुरहा	141 15	जनप्रभाषाम्यः	900 410
जह उपाजा दुर्ग	111 40	जारी इने व शिल्ह	9 501 800
जद रिनाययरदिया	f=1 66	जह सर्छतान पारे	1141 165
जिया वयमी गढ़ मिर्ग	ra 5*	जेनेद विद्याची	1441 1441
जा गरी अरिदंताले	451 5e4	जन्त वंगनिहाभारे	351 334
जो बोइ मग्स तक्षी	431 117	जिद्दवगम्मपाग र	4+51 43+
जिस्दिय लीगा जीवा	411 114	त्रं व गमी भणाणं	3-31 -39
जा गदी अमेडंताणं	401 335	जो जागह समरायं	4+31 cos
जं दुवरं तु मिन्छा	(3) 113	, जरुग राज्यिद्दिते अप्या	2011 124
जं दिनि महास्यं	481 335	त्रो गमो गम्पभृतेषु	3.41 435
जतेणं सम्बद्धं	491 940		200 420
जदि चाणहरणमुद्धी	941 150	जो रमेरिय कांगे य	3.41 436
जदि इदरों सी जोग्गो	451 150) जो दु अरं च दर्द प	2-41 424
जह धाऊ धम्मंती		जीवाजीय स्वा	2701 476
जोगा पयडिपदेसा	TOTE TYPE	अंदिइं स्टार्ग	3991 4Ys
जं सञ्ज जियोबदिइं	1111 354	जिद्±ोह्माणमाया	2341 469
जेण तथ विद्युज्होन	1991 240	त्रं तेहिं दु दादव्वं	₹901 454
जेण रागा विरवेज	1121 256	जम्हा थिणेदि कम्मं	3301 406
जणवदसम्मद्धवणा	1351 306	जे दन्त्रप्रच्या सह	२२२। ५८५
जणवदसमं जध ओ	1301 305	जीवो दू पढिक्रमओ	2221 534
जिद तं हवे अमुदं	111 114	जावेदु अपणो वा	२३५। ६२७
जे भरवपज्ञया सञ्ज	1401 355	जे केई उत्सामा	देश्या ६५५
जत्थेव चरदि बाटो	9341 335	जो पुण तीसदि वरिसो	२४९। ६७२
वा रायादिणियसी	१३५। ३३२	जो होदि णिसीदप्पा	२५३। ६८७
वायणसम्गुण्णम्या	1\$v1 335	जम्म वसन्दरणममा	३५७१ ६९६

		• •	
गाया	पृ.से. या सं.		पृ.सः गास.
जायंतो य मरैतो	२६९१ ७०७	जोगेसु मूलत्रोगं	३३६। ९३७
जे भोगा खतु केई	२६१। ७०८	जत्य इसायुप्पति	3341 4X4
जिणवयणस र् हाणो	२६८। ७३१	जोगविभित्तं गहणं	३४५। ९६६
वह धादू धम्मंतो	२७३। ७४६	जीदपरिणामहेदू	3841 380
जेणेइ पाविदय्वं	२७५। ७५१	बह उमुपारी उमु	3801 403
जह भग्न तम्हि काले	२८०१ ७६६	बह कोइ सहिवरिसो	3841 406
जम्मणमरणुब्दिग्गा	२८३। ७७५	जीवो अणाइगिहणो	3841 440
जोवाजावविद्यति	2501 055	जंजे जे जे जीवा	३५१। ९८६
जिणवयणमञुगर्णेता	२९२। ८०५	जि म्भो वत्यशिमित्तं	३५२। ९८८
जंहोज अध्यिक्षां	२९७। ८२१	जो पुढविकाइजीवे	३५८।१००९
जंहोब वेहिअ ते	२९७। ८२२	जो पुर, अइसहहदे	34619+9+
जं पुष्टिद मिण्णदर्द	२९८। ८२३	बदं बरे बदं विहे	34419-93
ज मुद्धनसमत्तं 🚥	2461 64X	जदं तु चरमाणस्स	₹ € •1359¥
जं हबदि अणिब्दीयं	२९९। ८२६	जोए करणे सण्या	35919090
जिणवयणमोसहमिणं	3+31 cv1	जम्हि निमाणे जादी	34919+¥5
जिणवयणगिच्छिद्मदी	3.011 CY3	जंबुदीवपरिहिओ	30619-08
जवंतं गिहवासे	3001 C49	जंबदीवो धादह	30413+08
जिणवयणभासिद्दर्यं	39-1 64-	ञावदिया उदारा	16-13-41
जहेण मइडिदंगा	1991 CEX	उंब्दीवे स्वणी	₹6019046
जइ पंचिदियदमओ	3931 646	जल यलतगरम्मु च्छिम	३८२।१०८४
जदिवि य करेंति पार्व	3931 645	वरुषरगद्भश्रपन	३८२।१०८५
जह चडो थणहत्यी	\$981 COX	ष्ट्रगञ्भवपञ्चता	१८२।१०८६
जहण चलइ निरिरायी	3961 668	जबनाटिया मसूरिश	\$<813+53
जदि पहदि दीवहरथी	३२६। ४०६	ञावदु आरणश पु द	१८७१११२
जो ठाणभोणवीस	₹₹% 5₹₹	वं च काममुद्दं छोए	**3133**
बह बोसरित्तु कार्ति	३१२। ९२५	जरि सागरोपमाळ	X+3133X4
जो भुंत्रदि श्राघाक	३३३। ५२७	षायुवरिमगेवेखं	83=1330K
जो बहु बहातई	\$\$41 454	जोबानं राजु द्यंषा	¥9613946
			,-
~			

गाया	प्र.सं. गा.सं.	। गाचा	प्र.सं. गा.सं.
जीवो कमायजुत्तो	234. 41.0. 2341933.	नावायारी एमी	9951 220
	• (•) ((•	जोदन्दियपतिचार्ण	
झ झागेहिं सवियक्तम्मा	२७९। ७६५	विक्सेवणं च गहणं	15A1 504
शायाह सावयकन्या	1011 011	ण करेदि भावणा मा	
		ण कराद मावणा मा गाणे विश्वहाद्दे गाणे	1541 585
ठवणाठविदे जह दे ठाणसयणासणेहिं	1301 310	णीयं ठाणं पीयं	4441 \$4¢
	1831 546		वेतन इ०४
ठविदं ठाविदं चावि	२१०। ५४३	विस्तेणी बहादिहि	JOSI AXS
द्वाणाणि आसणाणिय	२५६। ६५३	वेतस्संजणवुकां	3691 860
ठाणे चंकमणादा	३२८। ५१४	ण बलाउमादुअहं	9261 469
ण		गवकोडीपरिसुद्धं	9661 468
णाणुवहिं सेजसुवहिं	हा १४	गहरोमजंद अही	4641 ACA
णामादीणं छर्णं	१२। २७	णामि अधोणिरगमणं	2251 RdE
ण्हाणादिवञ्चणेण य	१४। १८	निव्याणसापए जोने	२००। ५१२
णिंदामि णिंदणियं	રબા બબ	ग वसो अवसो अवस	4-91 494
णाणम्ब दंसणम्ब य	२६। ५०	नामहुबनाद्व्वे	२०२। ५१८
णहि तम्हि देसमाछे	251 65	जामद्वरणादस्य	२०८१ ५३८
णाणं सरणं मेर्द	axi - 44	वामद्ववणंदव्यं •••	2081 489
णिम्ममो णिरहंकारी	Ral dos	वामाणि जाणि काणिचि	
णिकसायस्य दंतस्स	4cf 104	गरइयदेवमाणुस	5331 ARK
गरिय भय मरणसमे	441 995	णामह्रवणाद्वे	२१९। ५७५
नो कप्पदि विरदाणे	691 960	धाणी गध्छदि वाणी	२२३। ५८६
णय परगेइमकवे	८५१ १९२	वो वंदेख अविरई	२२४। ५९२
विरसंकिद विदंखिद	cs1 3.9	नामहबणा दब्वे	२३१। ६१२
जि चिद्धर् घादुसस्य	९७। २२६	नामहबणा दब्वे	રરૂળ દ્રેર
णाणं यंचविहंपि य	९८। २२८	नामहबना दब्वे	2851 ERC
णेहरीव्हित्यत्त	1•11 २३६	निकृद सविसेसं	३४५। ६७१
णव य प्यत्या एदे	१०५। २४८	शिकुत्ती णिकुती	३५४। ६८५
णवसत्तर्पंचगाहा	1141 305	णाऊण लोगसार	36x1 038

dief.	पृत्यं भारां	गादा	ष्ट्रणं. गाणं.
र्राताचा काग्यस्थे	1541 480	गदीगरी य श्रदणी	24419004
काणकामापदाहरी	4451 444	विविद्रशादुसम्ब	1<<111-4
िमारियसस्य य ग्रही		निश्वेदि विशादाणे	** (11161
freite Efrefin.	1091 009	विष्युरियमचे शम	¥1313161
frangungfteffei	1c11 448	कालाम इंसपरम ब	***!**
रिक्सारिक्ष्मभिका वि ।	# 4c41 000	विद् विदायस्य	***13***
र्ग क्लानगावदश	1111 c-1	निश्याक शिरियाक	***19**
नवकोदीवरितृद्धं	111 (11	. ব	
कार्य से कावित्युक्तिय	4.41 540	रिविदं अनियं मरणं	201 45
बाय दुरसका व दिहर	1 2 - 11 - 2 1	शिवदराण परियोज	231 55
वारशरकाल दाओ	1001 644	front a smit	141 40
रिश्व व भागमणः	23-1 452	मारा चंद्रदेश्य	141 64
ण व एदि विभित्तारिष्ठ	2941 446	तेहे बपुमधीए	441 111
रिष्ट्रां इस स्वाबाया	11c1 cc+	पुत्रमं पादपनाए	(41 146
जिब्दाबरी व वार्ण	1111 414	तबयुनगत्तएग	Sel 14"
भणं वदासओं तदो	1111 411	सत्य न बायह बावी	401 944
बाव बरणदिहीणे	1111 ***	ताबि प्रव प्रच्याओ	C-1 146
बद होदि नदवरीहा	3341 533	सरको सरकीए सर	col 145
ण हु सस्य हमी सीओ	2221 535	डिन्नि इयंद द सत	441 125
गवकोडी परिगुद्ध	2241 SY	<u> </u>	cel 15c
णिवदिविद्वणं खेलं	1 VOI 541	तसयावरा य दुविहा	541 880
को बन्दद विश्वाण	2×+1 +42	से पुण भम्माभम्मा	1001 828
ब्राज्य - ब्रजाचार्य प्रकारी	3741 346	शिविहा थ होई चंसा	1041 285
निष् जिलेदि निष	\$ ¥ 41 5.48	तं पश्चिमगण्याप्	7751 200
जिल्हांची जिसारी	14419	तेलि घेव वदाणं	3221 254
वानेच बहा समग्रे	246133	हेसि पंचर्श पिय	1231 256
ण सहद्वरिको एदे	14-13-57	सन्वित्रीयं भोसं	234 324
गिविससु विदियमेसं	₹(4)9+ ₹4	तम्दा चेडिदुवामी	1141 11.

गापा	ष्ट्र.मं.	गा.मं.	गाया	पृ.मं. गा.मं.
तम्हा तिविद्देण तुमं	1141	114	तस्य व गुज्याः सरियं	1251 590
वेरिविराय माणुस्खिय	9441	१५७	तह सवण मोधगपि म	3441 450
तेणिकमोससार	9901	₹5€	वम्हा पुरुषियमारंभी	34419006
तिरदणपुरगुणसहिदे	3 6 41	44.	निण्दं गुद्रमंत्रोगो	35111-16
विखतद्वल उनणोदय	1641	803	तदियाए पुरवीए	20119-40
तं होदि सयंगालं	1028	***	तिण्येय गाउआई	\$401300}
तिम्बो रागो य दोसो य	2931	44.	निज्यि दु वासगदस्या	36517900
तिविहो य होदि घम्मो	२१४।	५५७	तेऊ तेऊ तह ते	35419174
वेसि अहिसुद्दाए	२१८।	402	तिण्हं दोण्हं दोण्हं	35619936
तम्हा सब्बपयसे	2211	465	तत्तो परंतु शियमा	***19943
तिविहं त्रियरणमुद्धं	3 3<1	६ •२	वेण वरं पुरुवीय य	** \$1995 ·
तेणिदं पडिणिदं चा	17 21	4.4	निष्टं खड कायाणं	****
तेण च पढिच्छिद्व्यं	२३०।	49-	ततो वरं तु नियमा	¥1-1194¥
शह दिवसियसदियप	२४७।	 \$ \$ 4	ततो ११ तुणियमा	¥9913944,
तियरणसब्बविमुद्धो	२५३।	4 < 4	तत्तो परं तु णियमा	¥9919906
सत्य जरामरणमयं	36-1	30₺	वसी परंद्व गेव	¥1315960
तत्यगुद्दपंति जीवा	२६₹≀	414	वे अजरमस्जममर	*1×11116
तम्हा कम्मासवका	२७१।	436	तिरियगदीए चो र् स	¥9419955
तम्हा अहमयि णिचं	२७८।	७६९	तसकाइया असंचा	*5014506
ते सब्बसंगमुदा	२८५१	469	वेहितोणंतगुण	*3114406
ते जिम्ममा सरीरे	२८६१	450	वस्तो विसेसअधिया	***!9*9*
तणस्वराहरिदछेदण	3511	٠٠٦	तत्तो संसित्रगुणा	¥₹₹19 ₹ 9₹
ते सद्भागचयम्	२५५।	८२८	वेहिं भवसे वगुणा	******
ते छिण्णगेहर्बधा	३०२।	< 35.	निष्णिय दुवेय सोलस	४२६।११२७
से होति विश्वियास	₹•\$1		तिष्हं राख परमाणं	44-1924v
ते इन्दियेगु पंचगु	111	202	तत्तोरालियदेदो	४३१११२४३
सह घडो मणदरधी	३१५।		ध	,
सबेण भीरा विश्वणति पानं	\$3 81	5-1	थेरे चिरपध्यस्ये	631 969

41414		1	1111 1111
बोश हु समतमाए	¥₹919₹•\$	रम्युव्येशेत्रोशे	२१३। ५५५
बोदा तिरिया पीने	¥₹₹19 ₹ 9•	दुविहं य होह शिखं	2111 446
धोवा विमाणवासी	****	दादीपसम्बत्तम्	2981 245
द		इंस्क्याचनश्ते	2941 46-
दन्ये केत्रे काले	191 35	दंसम्यायस्त्रिते	3351 ACA
देवनिमयनियमारिषु	111 14	दंशयदावदरिते	२२५। ५९४
दुविही सामाबारी	4c1 138	दंसपणामचरिते	२२६। ५ ९६
इब्बारिवरिक्षमणं	tet tee	दोग्यदं तु अधावादं	२२७। ६०१
दिवशियरुदियपश्चित्रय	441 944	रिष्टमरिष्टं चानि य	२२४। ६-६
देससमाजवरिते	221 155	दंशययाणस्रीते	२५१। ६७८
दंशवयरणविगुद्धी	cc1 100	दम्बे क्षेत्रे हाते	\$603 A08
दुभिहा य होति जीवा	4+1 4+¥	हुग्गमदुद्धहलाभा	र६५। ७२२
दुविधा तसा य उताः	१५। ११८	दु क्सभयमीगपउरे	रहण ७२७
इंसणवरणविदण्णे	1051 351	देसकुटबम्मस्यं	१७६। ७५६
दंशणवश्चपभद्दे	11-1 353	दुदहराई सर्द	२००। ७५९
दंशवयरको एखो	111 344	दस दोय भावणाओ	२७९। ७६३
दिसदाद उदयदर्ग		दिहुपरमहुसारा	२९३। ८०७
इपिहो य तदावारी		देहे विरावयवरा .	3531 605
दंशणवाणी विषशी		देहीति दीणबद्धसे	3561 696
हुविहो य विज्ञस्मरयो		हुज्ञणक्यण चडपड	३१२। ४६७
दंसणणाथवरित		दंवेंदिया महरिसी	३१७। ८८१
देवदपासंदर्ह		दव्यं शेतं कार्य	१२१। ४९१
दिवसं पवसे मासे		दंभं परपरिवादं	३४२। ९५७
देससि व सम्बति व		दब्दे सेसे दाटे	३४८। र ७५
दायगपुरदो रिसी		द सविहमध्यंभविण	हे५४। ९९८
दव्यं चेतं दावं		दब्वं थेतं दावं	३५५१७००५
दीद्दालमयं जेतु	१९८। ५०७	देहस्स च जिम्बती	१७२।१०५०

		पशुग्गमणं किया	456 180
4 61 '	900	पडिलेहिजण सम्मं	001 300
3-1 2	१६४	पियधम्मी दिदधम्मी	c31 9c3
841 3	349	पंच छ सत्त हत्ये	641 384
4 5 1 7	884	पुरवी भाऊ तेऊ 🚥	५०। २०५
4-1 (€u¥	पुढवी य बाद्धगास	९०। २०६
401 (ÇUÇ	पुण्णस्सासवभूदा	१०१। २३५
(3)	93	पुरुषकद्कम्मसङ्ग	१०४। १४५
(¥) ×	91c	पादीसियनरितिय	1971 700
(4)	0₹0]	पिलेबंकनिसंसगरी	1941 361
441 1	υŧą	पाणिवहमुसावाद	93-1 366
(A) /	200	पणिधाणजीगञ्जलो	१२३। २९७
••1	८१ २ }	पणिधाणं पिय दुविहं	121 524
•31 4	46	पदिरायणसमिदीयि य	121 224
111 6	< 4 }	पडामिणिपत्तं व जहा	1111 184
141	600	पायच्छिलं विजयं	१४५। ३६०
२२१ ४	698]	पामच्छितं वि तत्रो	9×41 269
	1	पोराणकम्मशमणे	3461 365
₹1			1401 364
41	33	पूपावयणं दिद्या	१५१। ३७७
6 }	35	पापविद्योति भ परिचा	7471 245
१५।			1451 355
(5)	41	पंचरियकायसभी	1451 355
	201 : 201 :	21 24 24 24 24 24 24 24 24 24 24 24 24 24	विकेदिका सम्मे

प्पा १२० विशिवा पश्चिमार्ग १६४। ४९४ ५६। १२१ प्रकारमञ्ज्ञालाः १६५। ४१६

1641 ¥16

५८। १२७ पंत्रस पंत्रणा ...

पत्रमं सम्बदिचारं... वंबधि इन्दिवमुंहा दविसंदे स निसंदी

प्र.सं. गा.सं.

11411-14

14-11-YZ

34717-76

14219-55 *

प्र से. गा.सं. |

गाथा क्रिक्स स्टिक्स

पष्णकाणं उत्तर ...

पवक्लाणविञ्जली...

पाविबद्यसावाए ...

परिवाद इक्ति शका

dimen didas		पवरवरवन्मावत्य	45 \$1 036
पासंबेहिं य सर्व	9001 1755	पाणिवद्दमुसावादं	REYL CC.
पागा दु भाववाओ	Joel Afe	पब्भारवंदरेस अ	2501 068
पाहुटिहं पुण दुविहं	Just ASS	पित्रयंगिरीजगदा	8641 V84
पादुकारी दुविही	JUST ASA	पुढवीय समारंभं	2511 4.2
पिहिदं संडिद्यं वा	1011 111	पर्यणं व पायणं था	2501 635
पुष्वीपच्छा संशुद्धि	1461 446	पुरुवरदिवे लिदाई	100 648
पच्छासेधुदिदोसी	9001 846	पंचमदृष्वयथारी	1111 401
पुरुषी भाऊ य तहा	1641 848	विदं सेमं उद्धि	2361 300
पगदा अवलो जम्हा	9651 464	पोसद उदओ पहले	1241 414
पाणीए जंत्रवही	1531 450		1351 516
पदिविद्यिशंत्रविदरी	3 - 41 426	पर्यं व पार्यं वा	3311 53*
परिणाम जीव मुत्तं	29-1 484		1111 510
पंचविद्दो राह्य भनिओ	3181 44Y	पयणं पादणसञ्चाल	33Y1 533
पुष्वं चैवय विश्वभो	22+1 444	परमधियं विसोधि	151 580
पोराणयकम्भरमं	2231 460	पचवभूदा दोसा	1411 4CX
वंषमहम्बयग्रती	3841 44.	पदमं भिउलाहारं	8441 446
पासाची य इसीती	**41 442	पुरुवीकाशियजीवा	34419***
पिकमणं देवतियं	3311 613	पुत्रविद्शासमिमारद	15511-15
पहिस्माओं पहिस्मानं	3311 63Y		\$\$517-55
पविश्वभिद्दवं द्व्यं	111 614	वाविवद् सुसावादं	16111-48
पुरिमयरिमा द्व जम्हा		पुढविद्यागविमाध्य	16411-50
पश्चिमणविज्ञनी पुण		पाणादिवादनिरदे	1601-58
वषदाओं वचतार्थ		पदमं कीतपमाणं	16011-16
1400-0 14001	111	1111	******

१३८। ६३६ वदमस्यो अंतगहो १४९। ६४० वस्ता देशिय य... १४९। ६५५ वस्तीवस्ता ...

१५६। ६८५ वडमाए प्रकीए ...

गाया	पृ.मं. गा.मं.	गाथा	ष्ट्र.सं. गा.मं.
पंत्रमिए पुदवीए 🚥	30213044	बज्झक्तंतरमुबहि	1c1 Y.
यणवीसं अमुराणं 🚥	३७५।१०६२	बालमरणानि बहुसी	इंश पर्
पत्तेयसा चत्ता	70011035	बाहिरजोगनिरहिदो	¥31 64
पक्तीणं उद्धरसं	35+13331	वाबीसमस्तिनिगम	561 331
षडमादियमुद्रस्यं	35319995	बलदेवचळवडी	9-61 34-
पष्टद्वभाग पर्व 🚥	35319996	बधजायणं भताही	9001 344
पंचारी चेहिं जुदा	35319920	बत्तीसा किर कदटा	1411 340
पणयं दस सत्तिभिर्म	35413333	बारसविघम्डिय तवे	1531 405
वहाे सायर सुई	35413324	बहुपरिसाडगमुज्झिक	9201 804
वंचेदिया दु सेसा	3561333-	बारसेगं जिणक्साई	1551 511
पंचमि आणर्पाणद	***19945	बावीसं नित्वयरा	२०६१ ५१३
पणुवीस जोयणाणं	४०३।११५०	बटवीरियमाचे ज्वय	2861 660
पढमं पुढविमसण्णी	***19943	बोधीय जीवद्द्या	२७८। ७६२
यत्तेयदेशवणप्पड्	¥0613355	बहुगंपि सुदमधीदं	\$\$X 5 }\$
परिवाजगाण शियमा	४१०।११७३	बीहेदव्य णियं	528) 425
पंचय इन्दियपाणा	¥9419959	बारसविघम्हि य तवे	3×€1 400
प्रचत्तापचता	*3£1995¥	बीहेदव्वं णिर्व	३५३। ९९०
पयडिद्विदिशशुभाग	४२५।१२२१	बिदियाए पुढवीए	३७४।१०५६
पंच गव दोष्णि अङ्ग	४२५।१२२३	बंमे य छत्तवेवि य	३७६।१०६५
ক		बारस बाससहस्या	३८९।११०५
फासुयमग्गेण दिवा	41 99	बारस बासा वैइं	३९०।११०८
फा युयभू भिष ए से	૧૬ ૧૬	वेसत्तदश्चय चोद्दस	३९३।१११९
क्यण पञ्चलमं वा	1481 840	बेइन्दियादि भासा	३९५।११२७
फलकंदमूलबीयं	२९८१ ८२५	वंभे कप्पे वंभु	***! 94*
कासुगदाण कासुग	1241 S26	बारस य वेदणीए	84019448
कासे रहेय गंधे 🚥	३८६११०९६	भ	
11; T द		भूबत्येणाहियदा	for 123
•	111 75	मत्तपङ्ज्या इंगिणि	1401 554

शाधा	प्र सं. गा.स.	गाया	ष्ट्र सं. गा.स.
भत्ती तवीधियम्हि य	1841 304	मिच्छाईसणरत्ता	381 55
निश्याचरियाए प्रण	3441 843		VSI 308
भावुद्योदो पापं	२१३। ५५३	मम्भो मम्बक्तंति य	<51 3+2
भावा असचमोवा	२१७। ५६७	मूल्यपोर्बीया	531 393
भरीए जिल्बराण	२१७। ५६९	मिन्द्रसं अविरमणं	1011 234
भताषु ज्ञिष्यवराण भासाणुवित्तिछंदा •••	२२१। ५८२	निच्छतासवदार	
			१•२। २३५
भावेण अणुवजुत्ती	SEAL ESA	मिच्छताविरदीहिं य	1-1(4¥1
भावेण संपञ्जतो	२३५। ६२५	मग्युबोबुवओगा	9241 402
मत्ते पार्वे गामं	२४५। ६६०	मण्डच कायप उति	251 551
भत्ते पाचे गामं •••	5x61 665	महिलालोयणपुष्वर	SEAL SEC
भावेंति भावणरदा	2531 606	मच्छत्तवेदरागा	1631 x+0
भोत्त्व गीयरागे	2551 624	सम्बन्धंडलधादी •••	\$061 AR0
भासं विषयविदूर्ण	\$ • UI 649	भिच्छत्तवेदणीयं	२१६। ५६५
मत्तीए मए कथिदं	१२०। ८८९	भरदुब्दर्स सणोदुई	₹₹< ६ •४
निक्लं वर वस रण्ये	१२२। ८०५	मूर्गं च दद्गरं पावि	3341 600
भावुग्गमो य दुविहो	23 41 43 4	मिन्टत्तपढिद्रमणं	२३२। ६१७
निक्खं सरीरजोरगं	\$\$<1 4x\$	मञ्ज्ञिमया दिवनुद्री	2241 425
भावविरदी हु विरदी	2441 444	मुक्खही जिदलिही	2×31 449
भावसम्बा हु समणा	₹ ₹ {19++₹	मरणमयाम्ह उपगरे	2441 654
मिक्खं वर्षः हिययं	\$\$413++A	मारुपिरुसयणसंनं	2441 400
आगमसंसे व्यदिनं •••	३७७१०६९	मन्डलंगोच्छणो	१५९। ७०३
भरहेराबदमग्रुया •••	¥ ₹ ₹1 १ ₹ ¶ ¥		3531 U16
म		मंसद्विमहबसहिप	4661 ABA
मूलगुणेनु विगुद्धे ···	31 3	मोसून जिनक्यादं	१६७। ७१६
शादुमुदाभगिणीव य	¥1 6		2091 079
अमति परिवज्ञामि	301 84	निच्छत्ताविरदी <i>दिय</i>	\$451 AXS
भृटगुणे इत्तरगुणे	२२। ५∙	मुत्ताय निरावेश्या	85-1 USV
शर्गे विराधिदे दे	₹¢ ६१	मुहणदणदं तथोरण	रन्स दर्ग

गाया

पू.सं. गा.सं. गाया पू.सं. गा.सं.

मूलं छिता समणो	₹₹•1 59 6	रायाचोरारीहि य	1041 XX \$
मरणमयमीद्वआर्य	3351 535	रागहोसहसाये य	1501 40X
मा होह वासगणणा	देश्या ९६५	रागदोसी निरोहिता	२०३। ५२३
मोहरिगणा महंते	\$441 50E	रागेण व दोद्येण व	2×01 5×2
मायाए वहिणीए	3431 558	रागो दोसो मोहो	3501 036
गण वंभचेर विव वं	3441 44A	रंजेदि अमुद्रकृणपे	2641 025
मणगुत्ते सुनिवसहे	36319309	हदेमु कसायेमु अ	2011 035
मणवयणकायमेगुल	35319034	इदासबस्य एवं	3031 0XX
मस्रियकुसम्मविद्	36319005	रतिंबरसउगाणं	3661 059
मच्छाण पुष्वकोडी	35-1111-	रोगाणं आयदणं	3.41 413
माणुस विरिया य तहा	80519940	रागो दोसो मोही	3951 606
मिच्छादिही सासा	89019954	रागो, थिडीए धीरेटि	3151 660
मणुसगदीए थोवा	¥3919300	रअसेदाणमगृहणं	2301 530
निच्छादंसण अविरदि	¥3¥19395	रमणपदाए जीयण	***13942
		1	*******
मोइस्स सत्तरि खद्ध	¥3-1133c	ਫ	
मोहस्स सत्तरि खद्ध मोहस्सावरणाणं		स्र सर्दे अस्दुपुत्रं	¥41 55
मोदस्य सत्तरि खद्ध मोदस्सावरणाणं र	¥₹•11₹₹८ ¥₹113₹¥₹	रुद्धं अनद्भुवनं टोइयवेदियसामा	४५। ५५ १०७ ६५६
मोइस्स सत्तरि खद्ध मोइस्सावरणाणं र रागादीहिं असचं	\$1 ¢	स्य रुद्धं बतद्भुष्टं टोइयवेदियसामा रुद्धरियरिणं तु मनियं	वेन्त्रा स्ट्रंट बेन्त्रा हर्न्ट स्ता दट
मोहस्स सत्तरि खठ मोहस्सावरणाणं र रागाचीहिं असचं रायवंषं पदोसं च	*1****** *1***** ********	स्यं अतद्भुष्टं स्रोदयवेदियसामा स्रोदयदेदियसामा स्रोदयदेविक स्रोदयदेविक स्रोतिय स्रोदयदेविक स्रोतिय	3<11 A14 3<11 A3¢ 3<11 60¢ A41 48
मोहस्स सत्तरि खठ मोहस्सावरणाणं र रागादीहि असवं रायवंधं पदोसं च रागेण व दोसेण व	\$1 \$ \$1 \$ \$1 \$ \$0 \$8 \$0 \$6	हं अनद्भुष्टं होइयपेदियसामा हारियरिणं तु मनियं हेडपमञ्जा सम्मं होगुजीस सम्मं	5-51 A56 3-51 A56 3-51 A56 3-61 E46 A41 48
मोहस्स सत्तरि खरु मोहस्सावरणाणं र रागारीहिं असर्वं रागवंधं पदोसं च रागेण व दोसेण व रोदणकाणमोयण	\$2.013.24.2 \$1 \$ \$0 \$4 \$0 \$4 \$0 \$4 \$0 \$5	स्र सन्दपुत्रं रोहयवेदियद्यामा रुद्धियरिणं तु मनियं रेडयमञ्जल क्मां रोगुनोस पम्म स्रोदि आरोबदि प	5051 A20 5051 A56 3051 A56 3051 A56 3071 A56 3071 A56
मोहस्स सत्तरि खळ मोहस्सावरणाणं र रागाधीहिं असवं रायवंधं पदोचं च रागेण व दोडेण व रीदणण्डाणमीयण रागी बंधइ कम्मं	201 42 501 45 501 45 51 6 51 25 51 25	स्र सन्दपुत्रं रोइयवेदियशामा राइयवेदियशामा राइयदिवर्षः तु मनियं रेडयमञ्जाप कम्मं रोगुनोरा धम्म रोगुनोरा धम्म रोगुनोरा थम्म रोगुनोरा थम्म	541 446 5061 420 5051 456 5051 205 3051 256 3051 666 241 62
मोहस्स सत्तरि सञ्ज मोहस्सावरणाणं र रागाधीहिं असचं रागवंधी वरोसं च रागवंध परोसं च रागणं व रोसेण च रोराणहाणमोयण रागी वंधह कम्मं रत्ताव वर्षहरूतातावस	201 42 501 45 501 45 51 6 51 25 51 25	टः अतद्भुशं होइयवेदिवधामा हाइयवेदिवधामा हाइयवेदिवधामा क्रमं होदावोद्या एम्म होदावोद्या एम्म होदावोद्या एम्म होदावोद्या राम होदावोद्या राम होदावोद्या राम	541 Ace 541 AAc 561 AAc 561 AAc 561 AAc 561 AAc 561 AAc 561 AAc 561 AAc
मोहस्स सत्तरि खलु मोहस्सावरणार्ग र रागारीहिं मरावं रागवंधं पदोसं च रागेण व दोसेण व रोदणकाणमीयण रागी धंपह कम्मं रागकंधरातावस रिगवेदसायवेदा	\$1 \$ \$1 \$ \$0 \$7 \$0 \$6 \$0 \$7 \$0 \$6 \$1 \$2 \$1 \$2 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1 \$1	ठः व्यवस्थानं होद्दयनिदयाना होद्दयनिदयाना स्वाद्दयन्तं स्वाद्ययन्तं स्वाद्ययन्ययन्तं स्वाद्ययन्तं स्वाद्ययन्ययन्तं स्वाद्ययन्ययन्तं स्वाद्ययन्तं स्वाद्ययन्तं स्वाद्य	541 446 5061 420 5051 456 5051 205 3051 256 3051 666 241 62
मोहस्स सत्तरि खलु मोहस्सावरणार्ग र रागाचीहिं असर्च रागेण व दोसेण व रोदणण्डाणमीयण रागी बंधइ रुम्मं रस्तद्वयरगतावस रस्तद्वयरगतावस रस्तद्वयरग, संसार	**************************************	स्त्रं अनदपुनं तोदयनिदयशामा तोदयनिदयशामा द्वारियरिणं द्वा मनियं देवपमञ्चा कमां सोगुजीस पमा स्रोमदि आस्त्रोमरि व लोसप्पानीवतरा स्रोमानुनितियनभो स्रोमो अस्त्रिमां सद सदेषु व प्रदेश स	561 035 531 406 531 446 501 436 501 436 301 456 301 466 301 46
मोहस्स सत्तरि खलु मोहस्सावरणार्ग र रागारीहिं मरावं रागवंधं पदोसं च रागेण व दोसेण व रोदणकाणमीयण रागी धंपह कम्मं रागकंधरातावस रिगवेदसायवेदा	3141 406 3-61 442 3-61 443 3-61 443 401 45 501 45	स्त्रं अनदपुनं तोदयनिदयशामा तोदयनिदयशामा द्वारियरिणं द्वा मनियं देवपमञ्चा कमां सोगुजीस पमा स्रोमदि आस्त्रोमरि व लोसप्पानीवतरा स्रोमानुनितियनभो स्रोमो अस्त्रिमां सद सदेषु व प्रदेश स	5661 045 5661 045 5481 446 5481 446 5481 446 3481 446 3481 456 3481 456 3481 456

गाथा	पृ.सं. गा.सं.	गाया	ष्ट्र स. गा.सं.
स्टेस्साझाणतवेण य	३२४। ५०२	वसमञ्चामंससोतिय	३०५१ ८४५
स्रवणे बालमभुद्दे •••	3<9190<9	वीभच्छं विच्छुइयं	3-41 CYE
घ		विकहाविमी नियाण	₹-51 640
षत्थाजिणवद्देण य	931 3°	बादंसीद उण्हं	३१२। ८६६
बीरो जस्मरणरिवू	451 9=E	विसएमु प्रधार्वता	३१४। ८७३
वा यणपडिच्छणाए	631 355	वंदित्तु देवदेवं	३२१। ८५२
विस्समिदो तहिवस	41 964	वेबादुरभेसबा	₹₹41 5 ¥9
बादुन्भामो उद्गति	481 898	वबदारसोद्दणाए	3341 446
विदिगंछा विय दुविदा	१०६। २५२	वद्भदि बोही सस	\$811 44X
विजणसुद्धं सुनं	9991 264	वेधावसविहीणं	3×31 446
विषएण सुदमधीदं	1111 265	वरं गणपवसादो	३५०। ९८३
षणदाहकितिमत्तिकदे	2991 229	बदसीलगुणा जम्हा	34419003
विषएण विष्यहीण	9481 364	बरवण्णगंधरसफासा	३७३।१०५३
विणक्षो मोक्सहार	9441 356	वेगुन्दियं सरीरं	30512-48
वीहीक्राचीहिंय •••	1451 850	बादणिवर खीरवरो	16319.60
यंजणमंगं च सरं	1001 885	बाहेसु य दाढीसु य	**419946
विज्या साधिदसिद्धा	9601 840	बिन्य वेदालीसं •••	***!7**
वेयणवेळावचे	1641 YUS	स	
विगर्दियासविधूमं •••	9661 863	सविताविताणं	41 90
विरदो सञ्बसावर्व		सम्रादिजीवस दे	61 96
बाखितपराहुतं द्व	१२६। ५९७	समदाधओं य वंदण	1-1 22
बदणणिमुत्ती पुण		सब्बदुषरशपदीणार्थ	१७। १७
विषय् तहालुभासा		सन्वं राणारंभं	151 Y1
बोसरिदबाहुजुगल		सम्मं मे सध्यभूदेमु	151 YR
विज्ञाचरणमह्य्वद		धंजोयमूलं जीवेग	331 VS
बंदिन्तु जिणवराणं		सत्तमए अहमए	२३। ५२
वसदिसु अप्यदिवद्धा		सम्मद्दंशवरत्तर	331 vo
वग्रथम्मिपि विदर्शता	2501 456	सत्थग्यद्वं विसम	141 AL -
मूला• ३			1

गामा

पू.मं. गा.मं. | माथा पू.मं. मा.मं.

संगारनदशनम्	1 11	34,	र्मभारता स सर्व	354 335
गायरमी बहाइमी	4-1	.,	मेगयवयणी य तहा	1241 234
मध्यभिदं उपरेप	431	• 1	गारवजोगारपर्यः	1101 110
रामणी मेति य पदमं	4,41	* 4	गदगावाभोडरर्	1311 330
गीतेयाति मरिद्यां	154	3-1	गरपानेदि परंते .	1131 176
सम्बं पागारंभ	411	1.5	भी गाम बाहिरत्यो	3 CYL 3744
सम्मं मे गन्तभूरेयु	411	13-	सेबोस्मामगिना	1551 2*1
सम्बं भाहारविर्द	531	111	गुहुमधिनियं गत्रोगी	1511 X+4
सम्बं आहारविदि, यम	431	111	मञ्जायं कृष्यतो	1531 470
समदा सामाचारो	પ્ કા	123	विदियागाद्वद	1631 471
संजनगणुपकरणे	6+1	137	मध्यानिषदं नदुधा	3441 AA+
र्ग जमतवशुणसीला	5 (1	141	माणकिविणतिभिवाहण	1361 843
गुरादुवधे स्वयारी	641	141	गिदे पडित्रे मंते	14-1 476
सच्छंदगदागदगय	561	14-	संकिद्मक्रियद्शिक्तिक	1631 863
निस्साणुरगह्यस्तो	+11	346	मनिणिद्रण य देव	9621 YEY
संगद्दपुरगहकुमठो	उरा	146	समित पुरुषि आऊ	7631 XE4
संधारवासयाणं	961	9.02	निवित्तेण व पिहिद	96\$1 XEE
सेवारुपणसकेणग	581	294	सववद्दरण किया	१८३। ४६७
सचो गोमी ममरा	541	२१९	मूदी संदी रोगी	1631 REC
सम्मत्तेण सुदेण य	91	२३४	सजीयणा य दोसो	१८६। ४७६
संजमजोगे जुत्तो	9-31	२४१	सन्देवि पिडदोसो	1511 Yes
सज्ञाये पहुवणे	1121	२७१	सब्बोसणं च विदे	9591 ¥65
सुत्तं गणइरकथिद	1141	२७३	सूरुदयत्थमणादो	9421 844
मुत्तत्थं जपंती	1961	२८३	सदा आयारविङ्ग्हू	9441 404
साहेति जं महत्यं	9221		सामाइयचउवीस	२-११ ५१६
सद्दरसरूवगंधे	9281		सामाइयणिञ्जती	२०११ ५१७
सयइं जाणं जुग्गं	१२५।		सम्भत्तणागसजम	२०१। ५१९
सम्बंधसचमीय	9251	₹00	साबज्ञोगपरिबज्ञण है	२०५१ ५३०

र महस्राह है कहे २०६१ ०३४ | चेट्टरकारीकासकाम इ.स. था थे | यासा कामका कहे मा २०६१ ०३२ मिनाधिया सम्प्रिस्ता ष्ट्रम गाः श्रमादद रिक्रमी २०८१ ५३० | सम्प्रीति गुनदाति स गय के बसकाप tool 53: : १६। ७६४ सम्मतादी गाम ... 1701 CE7 गमण बदेज्य मधावी 71c1 ecc ३२७। ५०७ । सेयासेयां ३६ण् रापरिक्रमणी धम्मी 35-1 4-3 गर र्शव य आहारो ^{२ हेण ६२६} संबंधि है सहयान 3001 405 देश ६०० गुरुमा हु मीति पाला संबरहरमुक्तम् . ं दश ६०६ नामाविक्तिम वि अवि 3341 404 व^णगपव गियसुद्यः १६० सत्रमम्बिसको ... ₹₹JF ₹₹₹ गय्वाकामानि उत्तो .. व्याहित्य मात्राच कुत्वनी ... ₹3 st e¥• निदं समित्रिय 114 .25 सामनियदियम् ... २५०। ६९१ मुझे बहा समुन्ता .. १५६। ६०८ मृशेवममृशेष 3×61 +6+ शयणस्य परियणस्य य २५०। ६९८ चीटमुनाहरूम्द ... 3×41 509 राजोगवित्रकांगा ... ६१। ३०० चीटगुणाणं संस्था ... 3001 469 मक्कादि गार्विह कर्मा १३४ वासीच वृष्ट्यमवा... ₹€3/3+3€ मबरपंछ न जिल्हा े ४२। ०४। मगमाणीई विश्ते .. 36613+38 व्यारे भंगरेत . २०११ ४४५ संटाणितृत्व स्व ... \$ 6 317 0 3's व्यवसम्म हिन्द्रशी २ अश अ५० मनमिए पुरबीए ... \$6013.34 गार्गामगुरमे ... १ वर्ग वर्ष । सोहम्मीमाणेषु य ... \$ fc19. ** गरिस्ट भणेते . . २ जहा जन्म मादियमहस्तमेयं ... وغدداتيمؤ **अवभयमह**णी २४३। ४०८ मेस्रो दुन बारम जो \$0612-ER यणं व्यक्तिमा... १८४। ४३९ माहस्मिया हु मच्छा ₹4613.00 रंगनियता ... २८५। ७८२ | ^{राह्मस्त्रभा} ३ मध् 10019-09 देव भारतीहा ६८८। ७६३ | ध्रह्मानगादभवस रामचारमानास्मा १८८१ ७६३ | मसेनातमहस्सा 16313063 प्याणुकतिव .. 36317.66 साणजुता २८९। ७९४ | चीडुण्हा राख जोणी icallodo रणजोग्ग ... २९३। ८०० | संस्थानस्यत्रोणी ... \$<\$19.5ª वीइलं वा.. 300/11-7 ३१५। ८१४ वितर क्रमण्य 36611305

elisti.

34

15519906

बोंको अर्थात् प्रमत्तसे लेकर अयोगकेवलीपर्यंत तीन कम नी

२

करोड़ साधुकोंको तथा अनंत सिद्धपरमेष्ठियोंको मन्त्रक नमाकर वंदना करके इसलोक और परलोकमें हितके करनेपाले जैन-साधवीके मूलगुणीको में कटता है ॥ १ ॥ आगे मूलगुणीके अट्टाईस भेदोंके नाम दो गागाओंने कहते हैं:— पंचय महत्वयाइं समिदीओ पंच जिणवरोदिहा। पंचेविदियरोहा छप्पि य आवासया होचो ॥ २॥ अग्रेलकमण्हाणं सिदिसयणमदंत्रयस्मणं चेव । टिद्भोयणेयभत्तं मृतगुणा अद्ववीसा दु ॥ ३ ॥ पंच महाव्रतानि समित्यः पंच जिनवरोपदिष्टाः । पंचवेंद्रियनिरोधाः पडपि च आवश्यकानि लोचः ॥ २ ॥

मूलाभार-

आचेलक्यं अस्तानं क्षितिशयनं अदंत्वपूर्णं चैत्र । स्थितिभोजनमेकभक्तं मृलगुणा अष्टाविद्यतिस्तु ॥ ३ ॥ अर्थ-पांच महात्रत, जिनवरकर उपदेशी हुई पांच समि-तियां, पांच ही इन्द्रियोंके निरोध, छह आवस्यक, लोच, आचे-लन्य, अस्तान, पृथिवीशयन, अदंतपर्पण, सितिमोजन, एकमक-ये ही जैन साधुओंके अट्टाईस मूलगुण हैं ॥ र । र ॥ अब प्रथम ही पांच महात्रतोंको कहते हैं:--

हिंसाविरदी सबं अदत्तपरिवञ्जणं च बंभं च। संगविमुत्ती य तहा महव्यया पंच पण्णत्ता ॥ ४॥ हिंसाविरतिः सत्यं अदचपरिवर्जनं च ब्रह्म च । संगविम्रक्तिश्र तथा महात्रतानि पंच प्रज्ञप्तानि ॥ ४ ॥

अर्थ-- हिमाना स्याग, मन्य, चीरीका त्याग, अग्राचर्य और परिमद्दा त्याग-ये पांच गहायत कहे गये हैं ॥ ४ ॥

अप दिशाविरति (अर्दिशा)का रुक्षण कहते हैं;--कि बार्वेदियसुणमरगणकुलाउजोणीसु मञ्यजीवाणं । णाऊण च ठाणादिस हिंसादिवियञ्चणमहिंसा ॥ ५ ॥ फार्चेद्रियगुणमार्गणाउन्त्रायुर्येनिय सर्वजीवानाम् ।

शान्या च स्थानादिषु हिंसादिविवर्जनमहिंसा ॥ ५ ॥ अर्थ-काय, इन्द्रिय, गुणम्यान, मार्गणास्थान, कुल, आय, योनि-इनमें सब जीवीको जानकर कायोसागादि कियाओं में टिमा आदिका स्याग उमे अदिसामदायत कहते हैं ॥ ५ ॥

आगे इसरे सत्यवतका सरूप कहते हैं;---🔁 रागादीहिं अमधं घसा परतावमयवयणोर्सि ।

मुसान्धाणवि महणे अवधावयणुज्झणं सर्व ॥ ६ ॥ रागादिभिः असत्यं त्यक्त्वा परनापमत्यवचनोक्तिम् । ग्रवाधीनामपि कथने अयथावचनोज्झनं मत्यम् ॥ ६ ॥

अर्थ-रागद्वेपमोहआदि कारणींसे असत्यवचनको सथा दुसरेकी संताप (द:स) करनेवाले ऐसे सत्यवचनको छोड़ना और द्वाद-शाग शासके अर्थ कटनेमें अपेक्षारहित वचनको छोडना यह सत्य मदावत है ॥ ६ ॥

आगे तीगरे अचीर्वमतका खरूप कहते हैं:--

ा गामादिस पडिदाई अप्पप्तहर्दि परेण संगहिदं । णादाणं परद्रव्यं अदरापरियञ्जणं तं तु ॥ ७ ॥

 ग्रामादियु पतितादि अल्पप्रमृति परेण संगृहीतं । न आदानं परद्रव्यं अदत्तपरिवर्जनं तत् तु ॥ ७ ॥ अर्थ-गाम आदिकमें पड़ा हुआ, मूल हुआ, रक्सा हुआ

इत्यादिरूप अल्प भी स्थ्ल सूक्ष्म वन्तु तथा दूसरेकर इकट्टा किया हुआ पैसे परद्रव्यको महण नहीं करना (नहीं हेना) वह खद-त्त्याग अर्थात् अचौर्यमहावत है ॥ ७ ॥

आगे चौथे अक्षचर्यमतका सरूप कहते हैं:---

🖅 मादुसुदाभगिणीविय दृष्टणित्थित्तियं च पडिरूवं । इत्यिकहादिणियत्ती तिलीयपुजं हवे वंभं ॥ ८॥

मावसुताभगिनीरिव दृष्टा स्त्रीत्रिकं च प्रतिरूपम् । स्रीकथादिनिष्टत्तिः त्रिलोकपूज्यं मवेत् बद्धा ॥ ८ ॥

अर्थ-- पदा नाला योवनवाली सियोंको अथवा उनकी तसीरोंको देसकर उनको माता पुत्री वहिन समान समझ स्रीसं-

बंधी कथा, कोमल वचन, स्पर्श, रूपका देखना, इत्यादिकमें जो भनुरागका छोड़ना है वह देवअसुरमनुष्य तीनलोकोंकर पुज्य ज्ञानर्यमहावत है ॥ ८ ॥

अब परिमङ्त्याग महात्रवका सरूप कहते हैं:---टी कीषणिषद्धा यद्धा परिग्गहा जीवसंभवा चेव। तेसि सक्तवाओं इयरिन्ह य जिम्मओन्संगी ॥ ९॥ जीवनिवदा बद्धाः परिव्रहा जीवसंभवाश्यव ।

् तेषां शत्यत्यागः इतरसिन् च निर्ममोञ्संगः ॥ ९ ॥ आमित अंतरंगपरिमह तथा चेतन परिमाड

मृत्रगुणाधिकार 🕻 ।

ब्यार जीवरहित अचेतन परिम्रह अथवा जीवसे जिनकी उत्पा है ऐसे मोती संख दांत कंचल इत्यादिका शक्ति मगडकरके त्यार अथवा इनसे इतर जो संवम ज्ञान शौचके उपकरण-इनमें सम स्वका न होना वह असंग अर्थात् परिमहत्याग महावत है ॥ ९ आगे पांच समितियोंके नाम कहते हैं;---र्वेहरिया भासा एसण णिक्वेवादाणमेव समिदीओ। पंडिठावणिया य नहा उचारादीण पंचविहा ॥ १०॥ ईर्यो भाषा एपणा निशेषादानमेव समितवः। प्रतिष्ठापनिका च तथा उचारादीनां पंचविधाः॥ १०। अर्थ-ईर्थासमिति, भाषासमिति, एपणासमिति, आदान निक्षेपणसमिति, मूत्रविद्यादिकका शुद्धमूमिमें क्षेपण अर्थात् पति-शपनासमिति-ऐने पांच समितियां जानना ॥ १० ॥ अव ईर्यासमितिका सन्तर कहते हैं;--िकानुषमग्गेण दिवा जुवंतरप्पेहणा सकत्रेण। जंतुण परिहरंति इरियासमिदी हवे गमणं॥ ११॥ प्रामुकमार्गेण दिवा युगांतरप्रेक्षणा सकार्थेण । जंतन परिहरंति ईयोसमितिः मवेन् गमनम् ॥ ११ ॥ अर्ध-निर्जीय मार्गसे दिनमें चार हाथ मनाण देखकर अपने कार्यके लिये माणियोंकी पीड़ा नहीं देतेहुए संयमीका जो गमन है वह ईर्यासमिति है ॥ ११ ॥

गमन हे यह देवावागित है ॥ ११ ॥ आगे भाषावितिका सहस कहते हैं;— टे पेसुण्णहासककसम्पर्शिदाच्चप्यस्थिकहादी । चित्रता सप्रहिदं भासासमिदी हवे कहणे ॥ १२ ॥... मृलाचार-

 पैश्रुत्यहास्थककेशपरनिदात्मप्रशंसाविकयादीन् । वर्जियित्वा खपरहितं भाषासमितिः भवेत् कथनम् ॥ १२॥ अर्थ-स्ठादोपलगानेरूप पैश्न्य, व्यर्थ हैंसना, कठोर

वचन, दूसरेके दोप प्रकट करनेरूप परनिंदा, अपनी प्रशंसा,

Ę

मिति कहते हैं ॥ १२ ॥

पुषणासमिति होती है ॥ १३ ॥

स्रीकथा भोजनकथा राजकथा चौरकथा इत्यादिक वचनोंको छोड़-कर अपने और परके हित करनेवाले बचन बोलना उसे मापास-आगे एपणासमितिका सहूप बतलाते हैं;--🔏 छादालदोससुदं कारणजुत्तं विसुद्वणवकोडी । सीदादी समभुत्ती परिसुद्धा एसणा समिदी॥ १३॥ पट्चत्वारिंशदोपशुद्धं कारणयुक्तं विशुद्धनवकोटि । शीतादि समस्रकिः परिश्रद्धा एपणा समितिः ॥ १३ ॥

अर्थ-- उद्गमादि छ्यालीस दोपोंकर रहित, मूखजादि मेंटना व धर्मसाधनआदि कारण युक्त, कृतकारित आदि नी विकल्योंसे विशुद्ध (रहित), ठंडा गर्म आदि मोजनमें रागद्वेपरहित-सम-मावकर मोजनकरना ऐसे आचरन करनेवाले संयमीके निर्मेल

आगे आदाननिक्षेपणसमितिका खरूप कहते हैं;---

🗓 णाशुवहिं संजमुवहिं सौचुवहिं अण्णमप्पमुवहिं वा । पगदं गहणिक्लेवो समिदी आदाणणिक्लेवा ॥ १४॥ हानोपधि संबमोपधि शीचोपधि अन्यमप्यपधि वा । प्रयतं ग्रहनिश्चेपा समितिः आदाननिश्चेपा ॥ १४ ॥

अर्थ--- शार्व विधिष्ट पुनन्द आहि उपदरणस्य झारीपवि. यणविशादी विकृतिकाय क्षेत्रमंद विशे यीली व्यालिक स्था-शेपनि, रक्षीका साहि। देहरायने, प्रकारनरूप शीयदा इपद्रक्त

करणा कार्य की बीचीपांच कीत अन्य शांचर आदिन निविध रधवरणका अर्थापनि-इत्दा धक्युचैक(देख सोधवर) उग्रजा रमता वर आदावांनहेवणसांवति वरी बार्त है ॥ १० ॥ भव भौतरापनागीभी का स्टब्स बहते हैं।---🦈 गांने अस्ति दरे गुरे विसायमधिरोहे ।

प्रधानहिष्यको पहिलायणिया हवे ममिदी ॥ १५॥ एकाने शांपने दरे गृहे विद्याले अविनेधे । इदाराहित्यागः प्रतिहापनिका भवेत गमितिः ॥ १५ ॥ द्यर्थ--- श्रमयशीक्षत्रे समन्तित प्रशतस्थान, दरिनदाय ध-

राषायगीत स्थान, दर, तिया तुत्रा, वित्र छेदर्गात भीषा, गीर

कोर जिसदी जिंदा द जिसेच न वरे ऐसे स्थानी एव जिल्ला भादि देरवे. शतका रेपण करना (हालना) वर मनिष्ठापना-ध्यविति परी जाती है ॥ १५ ॥ थय श्रीत्वयनिरोधवनका स्ट्रास्य कटते हैं।—

थक्त मोहं घाणं जिल्ला कामं च हंदिया पंच । सगरमाविसएरिंनो जिसेरियच्या सया मुजिणा १६ चभः श्रीयं प्राणं विदा स्पर्धेध हन्द्रियाणि पंत्र । राज राज विषये भयो निरोधयितच्या गदा शनिना ॥ १६ ॥ अर्थ-चलु, बान, नाक, लाम, सार्शन-इन पांच इन्द्रियोंकी

अपने २ रूप, शब्द, गंघ, रस, ठंडा गर्मआदि स्पर्शरूप विष-

बोंसे सदाकाल (हमेशा) साधुओंको रोकना चाहिये ॥ १६॥

मुखाचार-

e

आगे चक्षुनिरोधवतका सहस्य कहते हैं;— सचित्ताचित्ताणं किरियासंटाणवण्णभेगस्य । रागादिसंगहरणं चक्खुणिरोहो हुवे मुणिणो ॥ १७ ॥

सचिताचित्तानां कियासंस्थानवर्षभेदेषु । सचिताचित्तानां कियासंस्थानवर्षभेदेषु । रागादिसंगहरणं चशुनिरोधो भवेत् सुनेः ॥ १७ ॥ अर्थ—सजीव अजीव पदार्थोके गीतगुल्लादि कियाभेद, समबतस्थादि संस्थानभेद, गोरा काळा आदि रूपभेद-इतमकार

धुंदर अधुंदर हन भेदोंने राग हेपादिका तथा आसक (हीन) होनेका त्याग वह धनिके बधुनिरीधनत है ॥ १० ॥ आगे क्षोनेन्द्रियनिरोधनतका सरुष्ट कहते हैं:— सज्ज्ञादिजीयसहे बीणादिअजीयसंभये सहे । रागादीण णिमित्ते तदकरणे सोदरोधो ह ॥ १८ ॥

रानादान जिन्म ति त्यस्य साहराय दु ॥ १८॥ पद्मादितायम् । ॥ १८॥ पद्मादी निम्तानि तदकरणं श्रीत्रोभस्तु ॥ १८॥ अर्थ---गर्न ऋगम गांधार आदि सात सररूप जीवशस् सार्थ ---गर्न ऋगम गांधार आदि सात सररूप जीवशस् सार बीणाआदिसे उत्तर वजीवशस्--ये दोनी तरहके शस् रागा-दिके निमित्तकारण दें इसस्यि इतना वर्द क्षेत्रनि-

दिके निमिषकारण हैं इसिक्ष्ये इनका नहीं सुनना बह र रोग है ॥ १८ ॥ आगे प्राणिद्वियनिरोपत्रनका सरूप कहते हैं;— पषडीयासणार्गपे जीवाजीवप्पम सुहे असुहे । रागाइसाकरणं घाणणिरोहो सुणिवरस्स ॥ १९॥ प्रवर्गित्यामनार्थयं जीवाजीवाग्यकं सुने अनुने । वाग्रदेणावरकं प्रावर्गित्रायं सुनिवत्त्वः ॥ १९ ॥ ऋषं—न्यत्रायमे अवस्य तथा अव्यवस्थादस्यकं संस्कारमे सुनेवानित्तकं ऐसे सुन सुन्तकं वान्यत्त्व सी वाजीवनक्त्य सुनेवानित्तकं ऐसे सुने सुनेवित वान्यत्वनं सी वाजीवनक्त्य

आक्तिसंध्या होता है ॥ १९ ॥ अब सम्बद्धितिसंध्यातस्य स्टब बहुते हैं,— असम्बद्धित्वसंध्यात्रे पंचरमे बासुसमिट जिस्पत्ने । इहाजिहारारे हुन्। जिल्लाकुर्जार्शनद्वी ॥ २०॥ अक्षतार्थ्यपुर्विकृत् पंचरम् प्रायुक्ते निरुष्ये ।

रत्तानिर्यातार देव जिल्लाकयो ज्युद्धिः ॥ २० ॥ अर्थ — मान आर्द्ध अरान, द्य आदि यान, बाहू आदि भाग, रणादी आदि राग-वृत्ते चार प्रकार्य तथा तिक बहु द्याप परा गीटा जारमण्य एवं चतिष्ट (अविष्) मागुक निर्मेद कारायो द्यापनाया हो । त्यापनाया परामाया परामाया विष्या मानाया विष्या मानाया विष्या मानाया विष्या मानाया विष्या मानाया विष्या परिवास देवा विद्यायश्यामा मन है ॥ २० ॥

परिणाम राना वर विदाययनामा मन है ॥ २०॥ आने वर्षानस्तियनिरीय मनका सम्हय करते हैं;—

जीवाजीवसमुन्धे बजायमजगादिशह सेदजुदे । पत्रमं सुने य असुने पत्रसणियोदा असमोहो ॥ २१ ॥ जीवाजीवसमुन्य बन्दासमुद्रमायद्यसमुन् ।

स्पर्धे सुमे वा असुसे स्पर्धनिमेषः असेमीहः ॥ २१ ॥ अर्थ — धनमधी स्वादि जीवमें बार सम्या बादि बचेत-

भने स्टरम हुआ करोर नरम आदि आठ महारका सुसहरप

व्ययवा दुःखरूप जो स्पर्श उसमें मूर्छित न होता अर्थात् हर्प विपाद नहीं करना वह स्पर्शनहन्द्रियनिरोध मत है ॥ २१ ॥

आगे साधुओंके छह आवश्यक क्रमेंके नाम कहते हैं,— समदा थओ य वंदण पाडिक्समणं तहेच णादच्यं। पश्चक्खाण विसमगो करणीयावासया छप्पि॥ २२॥

पञ्चन्नस्वाण विसममा करणायावास्या छोट्य ॥ २२ ॥ समता स्तत्रथ वंदना प्रतिक्रमणं तथेव ज्ञातव्यं । प्रत्याख्यानं विसगेः करणीया आवश्यकाः पद्धणि ॥ २२॥ अर्थ—सामायिक, चर्छास्यतिम्ब, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्या-

प्रत्याख्यानं विसंधः करणाया आवश्यकाः पदाप् ॥ २२ ॥ अर्थ—सामायिक, चहार्यसातिमाव, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्या-स्थान, कायोत्सर्गे—ये यह आवश्यक सदा करने चाहिये ॥ २२ ॥

लागे सामाधिक आवश्यकका सहस कहते हैं;— जीविदमरणे टाहाटामें संजीयविष्यओंगे य । बंधुरिसुहदुक्यादिसु समदा सामाविष्यं णाम ॥ २३॥

बहुतरबुहदुक्ताद्यं समदा सामायय णाम ॥ १२॥ जीविनमरणयोः लागालागयोः संयोगवित्रयोगे च । यंत्रतिगुखदुःशादिषु समता सामायिकं नाम ॥ २३॥ जर्थ—देह भारनेरूप जीवन, माणवियोगरूप मरण-इन

दोनोंने तथा बांछित बसुकी माष्टिर्प लाग, इंन्डिवरसुर्ती ब्यामिरूप अलाग, इसपकार आहार उपकरणादिकी माष्टि अमा-मिरूप लाग अलागमें; इट अनिष्कं संयोग विधोगों, साजन-मित्रार लाग अलागमें; इट अनिष्कं संयोग विधोगों, साजन-मित्रार तथा, ब्यादिक असि-इन दोनोंगें, साल दुःसमें वा मन्य प्यास शीत उच्च आदि साधार्थों वो साम्द्रेपारित समान

तिरूप लाग अन्यानी; इष्ट अनिष्टकं संबोग वियोगी; सजन-मित्रादिक्षेत्र, राष्ट्र दुष्टादिक अर्दि-इन दोनोमें; सुरु दुस्समं या मृत्य प्यात शीत रूप्प आदि सापाओंमें जो सागद्रश्रद्रित समान परिणाम होना उसे सामायिक बढते हैं ॥ २३॥ आगं बनुविद्यातिमनका सन्दर्भ कहते हैं;—

आग बताबरातनगरा तरन कहत हा— उसहादिज्ञिणवराणं णामणिर्मेत्तं गुणाणुक्तिर्त्तं च । ोकाञ्ज अधिदृण य तिसुद्धपणमो थओ णेओ ॥२४॥ ऋप्तमादिजिनयराणां नामनिक्तिंसं गुणानुकीर्ति च ।
कृत्वा अर्चेपित्वा च विद्युद्वप्रणामः स्तवो होयः ॥ २४ ॥
अर्थे—ऋपन अवित आदि चीचीस तीर्थकरीके नामकी
निरुक्ति कर्यात् नामके अनुसार अर्थकराना, उनके असाभारण
गुणोको प्रगट करना, उनके चरणपुगटको पूजकर मनवचनकास्तरी गुद्धताते स्ति करना उसे चतुर्विधतिस्तव कहते हैं ॥२२ ॥
आगे धंदनाहा सरूप कहते हैं;—

अरहंतसिद्धपडिमानवसुदगुणगुरुगुरूण रादीणं। किदिकम्मेणिदरेण य तियरणसंकोचणं पणमो॥२५॥

अरहंतसिद्धमतिमातपःश्वनगुणगुरुगुरुणां रापीनाम् ।
कृतकर्मणा इतरेण च विकरणसंकीयनं प्रणामः ॥ २५ ॥
अर्थम—अरहंत मतिमा, सिद्धमतिमा, अन्तरानादि बारह
बर्गकर अपिक तपगुरु, अंगर्वादिरूप आगमजानते अपिक
श्वतगुरु, आपकाण न्याच आदि ज्ञानकी विशेषनारूप गुणीकः
अपिक गुणगुरु, अपनेको दीशादेनेवाले दीशागुरु जीर महुतकालके
दीशित राभिकगुरु—इनको काबोस्तगीदिक सिद्धमणि गुरुमिक
स्प क्रियाकसंस तथा श्वतमिक आदि क्रियाके विना महाक
नामोन्दरु गुंडबंदनाकर मन बचन कावकी शुद्धिये नमस्कार
करता वह वंदना नामा मृह्युण है ॥ २५॥ ॥ २५॥

आगे प्रतिक्रमणका खरूप कहते हैं;--

द्रव्यं खेसे काले भावे प किदावराहसीहणयं। जिंदणगरहणञ्जसो मणवचकायेण पडिकमणं॥ २६॥ ŧ٦

हुन्ये क्षेत्रे कार्ते माने च कृतापगमग्रामनम् । निंद्नगर्हणमुक्ती मनीवनाकार्यन प्रतिक्रमणम् ॥ २६ ॥ अर्थ-- आशार शरीसदि हुन्यमें, बमतिका ज्ञयन आसन आदि रेजमें, प्रातःकान आदि कार्नमें, निगके व्यापारस्य माव (परिणाम)में किया गया जो मनमें दोष उसका शुन मन बचन कार्यसे गोपना, अपने दोषकी अपने आप मगटकरना, आनार्या-

(परिणाम)में किया गया जो मनमें दोष उसका शुन मन बचन कायसे जोपना, अपने दोषको अपने आप मगटकरता, आनार्या-दिकोंके ममीप आजोननापूर्वक अपने दोषोंको प्रगट करना यह श्रमिराजके मतिकमण गुण होता है ॥ २६॥ आगे प्रत्याख्यानका सरस्य कहते हैं;— णामार्टीण छण्णे अजोनगपरियञ्जणे तिकर्णेण ।

पचक्त्माणं गेयं अणागयं चागमे काले ॥ २० ॥ नामहीनां पण्णां अयोग्यपरिवर्जनं त्रिकरणः । प्रत्याख्यानं वेषं अनागतं चागमे काले ॥ २० ॥ अर्थ—नाम सापना द्वाय क्षेत्र काल भाव ६० छहें ने हाम

अर्थ-—नाम सावना द्रव्य क्षेत्र काल भाग इन छहोंने द्याम मन चनन कायसे आगामी कालक किये अयोग्यका त्याग करना अर्थात अयोग्य नाम नहीं करूंगा, न कहूंगा और न वितवन करूंगा इत्यादि त्यागको प्रत्याख्यान जानना ॥ २७ ॥ आगे कायोत्सागका सकरन कहते हैं:—

देवस्सियणियमादिमु जहुत्तमाणेण उत्तकोलम्हि । जिणगुणर्वितणजुत्तो काओसग्गो तणुविसग्गो ॥२८॥ देवसिकतियमादिषु यथोकमानून उक्तकाले ।

प्यातकान्यमाय् उपयोजनाग्य उपामार्थः जिनगुणचितनयुक्तः कायोत्सर्गः तनुविसर्गः ॥ २८ ॥ अर्थ-दिनमें होनेवासी दैवसिक आदि निध्यय कियाओंमें मृत्युणाधिकार १ । **१३** ष्ट्रीत मापित पद्मीस सत्ताहंस वा एकसी बाठ उच्छुास हत्यादि परिमाणसे कंडे हुए अपने अपने काठमें दया छमा सम्यन्दर्धन

अनंतज्ञानादिन्दाष्टम इत्यादि जिनगुणोंकी भावना सहित देहमें ममत्वका छोड़ना वह कायोत्सर्ग है ॥ २८ ॥ आगे केशबोंचका सहस्य कहते हैं;—

पिपतियचउद्धमासे होचो उद्धस्समिडिहामजहण्णो । सपिडिद्धमणे दिवसे उववासेणेव कायव्वो ॥ २९ ॥ द्वित्रिचतुष्कमासे होवः उत्कृष्टमध्यमजयन्यः ।

समिविक्रमणे दिवसे उपवासनेव कर्तव्यः ॥ २९ ॥ अर्थ-दो मदीने तीन मदीने बार मदीने वाद उत्कृष्ट मध्यम जपन्यस्य व मतिकमणसिंद दिनमें उपवाससिंदि किया गया वो जपने हामसे मदाक हादी यूंढके केंद्रीका उपाइना वह होननामा मूह्युण हुँ ॥ मावार्थ-मृतियोंके पाईमात्र भी

बहु का प्राप्ता ने दुनिया है है जा मार्थीय जिल्ला कि होने ने प्राप्त सहस्य हो है जिससे हिं हुआपत करावें जीर दिलाका कराल समझ उद्धरा नामक शब्द भी नहीं रखते और दीनहृष्टि न होनेसे हिंसीसे दीनशकर भी शीर नहीं करावकते इसल्ये संगुर्कतिक जुलां कीस आदि कॉर्बेंकी दिवाक त्यावस्य सम्पर्कतिये असिकामकर तथा उपनास्वर आप दी केउस्टोंच करते हैं। यही होचनामा गुण है।। २९॥

आगे अचेटक्पनेका सरूप कहते हैं;— धत्थाजिणवक्षण प अह्वा पत्तादिणा असंवरणं । णिनमूसण णिग्गंथं अवेटकं जगदि पूजं ॥ ३० ॥ सम्बद्धितान्त्रेय अग्रम एणदिया असंवर्णः ।

बसाजिनवर्रकेथ अथवा पत्रादिना असंवरणं । निर्भूषणं निर्मधं आचेलचयं जगति पृज्यम् ॥ ३० ॥ आदि नमें, प्रशासिकी छाजने उत्तव मन आदिके दार, जगरा पण गुण आदि-इनसे दागराज आज्ञादन नहीं करना, कड़े हार आदि आप्राणीने मृषिन न होना, नंगमके निनामक द्वर्णों हर रहिन होना-ऐमा सीन्त्रगतहर प्रथ पन्यादि-याद्यरिमरदिव अपेलक्ष्मन मृत्युण है ॥ ३० ॥ इससे हिसाज उपार्नेनर-पदीप, मशालनदीप, माननादिदीप नहीं होते।

अर्थ-क्यास रेमन रोम सीनक बने हुए बम्प, मुगलाच

आगे अजानतका सद्देष कहते हैं;— एहाणादियञ्जणेण य विलित्तज्ञद्धमद्धसेदसर्व्यं । भणहाणं घोरगुणं संजमनूगपालयं मुणिणो ॥ ३१ ॥

।ण्हाणं घोरगुणं संजमदृगपालयं मुणिणो ॥ ३१ । स्नानादिवर्जनेन च विलिप्तज्ञहमङ्खेदसर्वागम् । अस्तर्वं घोरगणं संगारिकणकरं प्रवेशः॥ ३१ ॥

अक्षानं पोरमुणं संयमदिकपालकं मुने: ॥ २१ ॥ अर्थ—जल्रहे नदानारू थान, आदिमन्से ववनना, ज्ञंन लगाना, पान राना, पंदनादिलेपन-इसतरह यानादिनि-याओंक छोड़देनेसे जहमहासंदरूप देहके मेलकर लिम्र होगया है स्व जंग विसमें पैसा अधान नामा महान् गुण मुनिके होता है । उससे कथायिमहरूप प्राप्तयंग्य तथा इन्त्यिमहरूप सामार्थिय होता है । उससे कथायिमहरूप प्राप्तयंग्य तथा इन्त्यिमहरूप सामार्थिय न करनेसे अध्यिपना होता है । उसके समाप्रान यह है कि मुनिया नतीकर सदा पवित्र है, उसके समाप्रान यह है कि मुनिया नतीकर सदा पवित्र है, यदि नतरहित होके जल-सानसे गुद्धता हो तो मच्छी मगर दुराचारी असंगमी सभी शीव सानकरनेसे गुद्ध माने जायेंगे सो पैसा नहीं है, प्रवृत्व जल्रिक सहुत बोर्योसहित है अनेकतरहरू सूक्ष्मजीवाँसे गरे है पापके सुह होत्से से स्वर्णने नहीं अस्तुत वहीं सालना योग्य है १

मृलगुणाधकरि १ । १५ आगे क्षितिशयनवतका सरूप कहते हैं;— फास्रयभृमिपएसे अप्पमसंधारिदम्हि पच्छण्णे। दंडंघणुच्य सेजं खिद्सियणं एयपासेण ॥ ३२ ॥ प्रातुकभूमिप्रदेशे अल्पासंस्तरिते प्रच्छचे । दंड घतुरिव शय्या श्वितिशयनं एकपार्थेण ॥ ३२ ॥

अर्थ-जीववाधारहित, अल्पसंखररहित, असजमीके गम-नरहित-गुप्त भूमिके प्रदेशमें दंडेके समान अथवा धनुषके समान एक पसवाड़ेसे सोना वह क्षितिशयन मूटगुण है ॥ ३२ ॥ आगे अदंतमनत्रतका सरूप कहते हैं:--अंगुलिणहावलेहणिकलीहिं पासाणछिल्लादीहिं। दंतमलासोहणपं संजमगुत्ती अदंतमणं ॥ ३३ ॥ अंगुहिनखावहेखनीकहिमिः पापाणत्वचादिमिः। दंतमलाशोधनं संयमगुप्तिरदंतमनम् ॥ ३३ ॥

अर्थ-अंगुली, नस, दातौन, तृणविशेष, पैनी कंकणी, ष्ट्रसकी छाल, (बक्तल), आदिकर दांतमलको नहीं शद्वकरना अर्थात् दांतीन नहीं करना वह इंदियसंयमकी रक्षाकरनेवाडा अदतमन मूलगुणवत है ॥ ३३ ॥ भागे स्थितिगोजनवतका सरूप घटते हैं;---अंजलिपुरेण टिचा कुट्टादिविवञ्चणेण सम्पार्य । पहिसदे भूमितिए असणं टिद्भोयणं पान ॥ ३४॥ अंजलिपुटेन स्थित्वा इड्यादिविवर्जनेन मनगद्म् ।

परिश्रद्धे भूमित्रिके अग्रनं स्थितिभोजनं नाम् ॥ ३४ ॥ अर्थ-अपने हाथरूप भावनदर मीत सादिके

24

रहित चार अंगुलके अंतररी समगाद साहै रहकर अपने मरणा म्मि, श्रुन पड़नेकी म्मि, जिमानेवालके प्रदेशकी म्मि-वेर तीन मूमियोंकी शुद्धतासे आदार मदण करना यह शितिमोज नामा मूलगुण है।। ३०॥

आगे एकभक्तका स**र**ूप कट्ते हैं;---

वदयत्थमणे काले णालीतियवज्ञियम्हि मज्झम्हि । एकम्हि दुअ तिए या मुहुत्तकालेयभत्तं तु ॥ ३५ ॥ उदयासमनयोः कालयोः नालीत्रिकवर्तिते मध्ये ।

एकसिन् इयोः त्रिषु या महर्तकाले एकमकं तु ॥ ३५। अर्थ-सूर्यके उदय और अनकाठकी तीन घड़ी छोड़क

वा मध्यकालमें एकमुहत्, दी मुहत्, तीनमुहत् कालमें एकश मोजन करना यह एकमक्त मूलगुण है ॥ ३५ ॥

आगे मूलगुर्णोका फल वर्णन करते हैं:--

एवं विहाणजुत्ते मूलगुणे पालिकण तिविहेण। होऊण जगदि पुजी अक्लयसोक्नं लहह मोक्लं ३१

एवं विधानयुक्तान् मृहगुणान् पाहयित्वा त्रिविधेन । भूत्वा जगति पूज्यः अक्षयसीख्यं लमते मोक्षम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-इसंप्रकार पूर्व कहेगये विधानकर युक्त मूल्गुणोंको मन यचनकायसे जो पालता है वह तीनलोकमें पूज्य होकर अविनार्श शुलवाले कर्मरहित जीवकी अवस्वारूप मोशको पाता है ॥ ३६।

इसपकार आचार्येशीवहकेरिनिरचितमूलाचारकी मापाटीकामें अहाईसम्लगुणींको कहनेवाला मृलगुणाधिकार समाप्त ॥ १ ॥

बृहत्प्रत्याख्यानसंस्तरस्तवाधिकार ॥ २॥

आगे मुनिराजके छह काल होते हिं उनगेंसे आत्मतंकारकाल संहित्सनाकाल उत्तमार्थकाल ये तीन काल तो आराधनामें वर्णन किये जायेंगे लोर दोर दीक्षाकाल, विक्षाकाल, गणपोपणकाल ये तीन काल आचारमें वर्णन किये आयेंगे। इनगेंसे आदिके तीन काल में जो मरणका अवसर आजाय तो ऐसा करना चारिये;~

सन्बदुक्ष्वपदीणाणं सिद्धाणं अरहदो णमो । सद्दहे जिणपणासं पश्चम्बामि यू पावयं ॥ ३७ ॥

सद्दृह जिपापणणास परान्त्यामि ये पावय ॥ ६७ ॥ सर्वदृष्ट्यास्तिनेत्या सिद्देन्या अद्देशी नमः । अवस्य जिनमञ्जसं प्रसार्व्यामि च पापकं ॥ ३७ ॥ अथ — स्व दुःसीहर रहित सिद्ध परमेग्रीको तमा नयकिय-योको मास वर्दत परमेग्रीको नमस्कार होचे, अव में जिनदेय-कियत आगमका श्रद्धान करता हूं और दुःसके कारणमूत पापोका मस्याह्यान(त्याम) करता हूं ॥ ३७ ॥

भाषाका भवाब्याना (वान) फरता हु ॥ २० ॥

आगे अफिफे प्रकृषकेलिये फिर नगरकार करते हुँ;

एमोन्छ पुद्रपावाणं सिद्धाणं च महेसिणं ।
संपर्र पडिचन्नामि जहा फैचलिदेसिपं ॥ ३८ ॥

नमोस्तु पुत्रपापेभ्यः सिद्धेभ्यः च महर्षिभ्यः ।
संसरं प्रतिपये यथा केतिलेदेशितम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—त्रिन्दोने पापकर्मं नष्ट क्रिट्ये ऐसे सिद्ध परमेष्ठी तथा
केवल ज्ञादिको मात अर्दित परमेष्ठी इन दोनोंको नगरहार होवे,

र भूता

रहित चार अंगुलके अंतरसे समपाद सहे रहकर अपने चरणकी भूमि, सटन पड़नेकी भूमि, जिमानेवालेके प्रदेशकी भूमि-ऐसी तीन भूमियोंकी शुद्धतांसे आहार प्रदण करना वह स्थितिमोजन नामा मूलगुण है॥ ३४॥

आगे एकमकका सहर कहते हैं;— उदयत्थमणे काले णालीतिययद्वियम्हि मञ्झिम्हि । एकम्हि हुअ तिए वा सुहुत्तकालेयभत्तं तु ॥ ३५॥

उदयास्तमनयोः कालयोः नालीत्रिकवर्जिते मध्ये ।

एकसिल् इयोः त्रियु वा मुहर्वकाले एकमकं तु ॥ ३५॥ अर्थ — स्वर्वे उदय और अवकालकी तीन यही छोड़कर, वा मध्यकालमें एकमहर्त, दो मुहर्व, तीनमुहर्व कालमें एकमर मोजन करना वह एकमक मृत्युण है ॥ ३५॥

वाने प्रमुणीका फल वर्णन करते हैं;---एवं विहाणजुस्ते मूलसुणे पालिऊण तिविहेण । होऊण जगदि पुद्धो अक्तयसोक्खं लहह मोक्खं ३६

एवं विघानयुक्तान् मृलगुणान् पालयित्वा त्रिविधेन । भूत्वा जगति पृज्यः अक्षयसोख्यं लमते मोक्षम् ॥ ३६ ॥

सूर्या जगात रूपम जवपताच्य रुपम मानव । र र ।।
अर्थ—हामकार पूर्व ब्हेगचे विधानकर मुक्त मूलगुणोंको मनयचनकायसे जो पानता है यह तीनलोकमें पूर्य होकर आवेतारी
सुत्याले कमरहित जीवकी अवस्थारूप गोशको पाता है ॥ २६॥
इसमकार आवार्यथीवटकेरिविर्यमतमूलाचारकी मापाटीकार्य
अर्थाद्रस्यूलगुणोंको कहनेवाला मूलगुणाधिकार समास ॥ र ॥

वृहत्पत्याख्यानसंस्तरस्तवाधिकार ॥ २॥

आगे मनिराजके छह कारू होते हैं उनमेंसे आत्मसंस्कारकार संहेखनाकाल उत्तमार्थकाल ये तीन काल तो आराधनामें वर्णन किये जायँगे ऑर दोप दीक्षाकाल, शिक्षाकाल, गणपोपणकाल ये तीन काल आचारमें वर्णन किये जायँगे। इनमेंसे आदिके तीन कालमें जो भरणका अवसर आजाय तो ऐसा करना चाहिये;-

सन्बदुक्वप्परीणाणं सिद्धाणं अरहदो णमो। सद्दे जिणपण्णनां प्रचक्त्वामि य पावयं ॥ ३७॥

सर्वदुःखप्रहीनेभ्यः सिद्धेभ्यः अईद्र्यो नमः।

श्रद्धे जिनप्रवर्तं शत्याख्यामि च पापकं ॥ ३७ ॥ अर्थ-सब इ स्वीकर रहित सिद्ध परमेष्ठीको तथा नवलविध-योंको प्राप्त अर्दत परमेष्टीको नगस्कार होवे, अब में जिनदेव-कथित आगमका श्रद्धान करता हूं और दुःखके कारणभूत

पापींका मत्याख्यान(त्याग) करता हूं ॥ ३७ ॥ जाने भक्तिके प्रकर्षकेलिये किर नमस्कार करते हैं;—

णमोत्यु धुद्रपावाणं सिद्धाणं च महेसिणं। संधरं पडिबज्ञामि जहा केविदिसियं ॥ ३८॥ नमोस्तु धुतपापेभ्यः सिद्धेभ्यः च महर्षिभ्यः ।

संस्तरं प्रतिपद्ये यथा केत्रलिदेशितम् ॥ ३८ ॥ अर्थ--जिन्होंने पापकर्म नष्ट करदिये ऐसे सिद्ध परमेष्टी तथा

केवल ऋदिको पास अर्टत परमेछी इन दोनोंको नमस्कार होने,

अब में सम्यम्दर्शन ज्ञान चारित्र तपमई अम्बंतर सैनार तथा भूमि पापाण सिन्ध तृणमई बाधसंखर (सांधरा-आसन)को जैसा कि केवलज्ञानियोंने कहा है वेसे पास दोता हूं ॥ ३८॥ पहले स्रोकमें मत्याख्यान कहनेकी मतिज्ञा व दूसरे सूत्रमें संस्तरस्व फहनेकी प्रतिज्ञा सचित की है।

मृटाचार-

आगे सामायिकके सरूपकेलिये प्रत्याख्यानकी विधि कहते हैं:---

जं किंचि में दुधरियं सच्यं तिविहेण योसरे।

सामाइयं च तिबिहं करेमि सब्वं णिरापारं॥ ३९॥ यत किंचित दुर्थरितं सर्वे त्रिविधेन व्युत्स्जामि । सामायिकं च त्रिविधं करोमि सर्व निराकारम् ॥ ३९ ॥

अर्थ-जो कुछ मेरी पापिकया है उन सबको मन बचन कायसे में त्याग करता हूं और समताभावरूप निर्विकल्प निर्दोप सब सामायिकको मन बचन काय व कृत कारित अनुमोदनासे करता है ॥ ३९ ॥

आगे दश्चरित्रके सब कारणोंको मन बचन कायकर छोड़ता हूं ऐसा कहते हैं:---

बज्झन्मंतरमुवहिं दारीराहं च भोयणं। मणेण वचि कार्येण सब्वं तिबिहेण वोसरे ॥ ४० ॥

बाह्याभ्यंतरमुपधि शरीरादींश्र मोजनम् । मनसा वचसा कायेन सर्वे त्रिविधेन न्युत्स्जामि ॥ ४० ॥

अर्थ-क्षेत्र (खेत) आदि बाद्य परिमह, मिय्यालआदि

अभ्यंतर परिमह, आहार खीर शरीरादिक इन सबका मन पचन काय कृत कारित अनुमोदनामें त्याग करता हूं अर्घात् इनसे ममत्व छोरता है ॥ ४० ॥

सर्वं पाणारंभं प्रचलनामि असीयवयणं घ । मञ्जमदत्तादाणं मेहण परिनगहं श्वेष ॥ ४१ ॥ गर्वे प्राणारंभं प्रत्याच्यामि अलीकवचनं घ । सर्वेमदत्तादानं में पुनं परिग्रहं चेव ॥ ४१ ॥ अर्थ-जीवपावेष परिणामरूप हिसा, शुरु वचन, अदचा-दान (चौरी) सीपुरुपके अभिलापरूप अमझ और माद्य आम्यं-तररूप सब परिमद-दन सब पापोंको में छोड़ता हूं ॥ ४१ ॥

थाने सामायिकका स्वरूप कहते हैं;--सम्मं मे सञ्चभदेस वेरं मर्ज्य ण केणवि । आसाए घोमरिलाण समाहि पहिचल्लये ॥ ४२ ॥ मार्म्य मे सर्वभृतेष वैरं मम न वेलापि ।

आशाः ध्युन्ग्रज्ये समाधि प्रतिपये ॥ ४२ ॥ अर्थ-- शत्र मित्र भादि सब प्राणियों में मेरी तरफसे सममाव . है किसीसे बैर नहीं है इसिटिये सब चूटणाओंको छोड़कर मैं समाधिभावको अंगीकार करता हं ॥ ४२ ॥

यटापर कोई कहे कि बैरमाव कैसे नहीं है! ऐसे प्रश्नका उत्तर कहते हैं;---म्बमामि सञ्बजीवाणं मध्ये जीवा चमंतु मे ।

मिसी में सच्यम्देस घेर मज्हां ण केणवि॥ ४३॥

₹० मूलाचार-

धमे सर्वजीवान् सर्वे जीवा धमंतां मम । मेंत्री में सर्वभृतेषु वैरं मम न केनापि॥ ४३॥ अर्थ-में कोषादि माव छोड़ शुम अशुभ परिणामोंके कार-

णरूप सब जीवोंके कपर क्षमामाव करता हूं और संब जीव मेरे कपर क्षमाभाव करो । मेरा सब प्राणियोपर मैत्रीभाव है किसीसे मेरा वैरमाव नहीं है ॥ ४३ ॥

आगे कहते हैं कि मैं केवल वैरमाव ही नहीं छोड़ता किंतु जो जो बैरके निमित्तकारण हैं उन समीको छोड़ता हूं;--रायवंधं पद्रोसं च हरिसं दीणभावयं।

उस्सगत्तं भयं सोगं रदिमर्रादं च वोसरे ॥ ४४ ॥ रागवंधं प्रदेषं च हर्षे दीनभावकम् ।

उत्सकत्वं भयं शोकं रतिमरति च न्युत्सजामि ॥ ४४॥ अर्घ--सेहबंघ, अप्रीतिरूपभावना, आनंद, करूणांके कारण याचनारूप भाव, उत्कंठा, भय, झोक, रागमाव और इष्टवस्तुकी अप्राप्तिसे अरतिभाव-ये सब बैरमावके निमित्त कारण हैं।

 इसिलेये इन सबको मैं छोड़ता हूं ॥ ४४ ॥ आगे फिर भी कहते हैं:— ममर्त्ति परिवज्ञामि णिम्मत्तिमुवहिदो।

आरंबर्ण च में आदा अवसेसाई वोसरे ॥ ४५ ॥ ममतां परिवर्ज्ञयामि निर्ममत्वग्रपस्थितः ।

आरंबनं च में आत्मा अवशेषाणि व्युत्स्वामि ॥४५॥ अर्थ-में ममतामावका त्याग करता हूं निर्ममता (परिमह रहित) भावको प्राप्त हुआ हूं । मेरे आत्मा ही आलंबन (आश्रय) है शेप सबका त्यागकरता हूं अर्थात् अनंत झानादि व रसत्रयादि आत्मगुणोंके सिवाय अन्य सबका त्याग है ॥ ४५ ॥

आगे कोई यह कहे कि तुमने सबका त्याग किया परंत आत्माका त्याग क्यों नहीं किया इसका उत्तर कहते हैं:---

आदा हु मज्झ णाणे आदा मे दंसणे चरित्ते य । आदा पंचक्लाणे आदा में संबरे जोए ॥ ४६ ॥ आत्मा हि मम झाने आत्मा मे दर्शने चरित्रे च । आत्मा प्रत्याख्याने आत्मा में संबरे योगे ॥ ४६ ॥ अर्थ-मेरा आत्मा मगटपनेसे ज्ञानमें हैं, मेरा आत्मा दर्शन (श्रद्धान-आलोकन) में है, भेरा आत्मा पापिकयाकी निवृति-रूप चारित्रमें हैं, मेरा आत्मा प्रत्याख्यानमें हैं, मेरा आत्मा आसवके निरोधरूप संवरमें तथा शुभव्यापाररूपयोगमें है-इसिलये इसका त्याग कैसे करसकते हैं! नहीं करसकते ॥ ४६॥

आगे फिर भी कहते हैं:---एओ य मरइ जीवो एओ य उवयञ्जइ। एयस्स जाइमरणं एओ सिउझइ णीरओ ॥ ४७ ॥ एकथ भियते जीव एकथ उत्पद्यते।

एकस्य जातिमरणं एकः सिध्यति नीरजाः ॥ ४७ ॥

अर्थ-यह जीव अंबेटा (सहाय रहित) मरता (शरीरका स्याग करता) है. और यह चेतनखरूप अकेटा ही उपजता है । इस अफेलेके ही जन्म मरण होते हैं तथा जब कर्मरजसे रहित 🗠 होजाता है सब अफेटा ही मिद्ध (५क) होता है ॥ मात्रार्थ— यह जीव सब कान और सब अवस्थाओंमें अफेटा ही है ॥ ४७॥ एगों) में सम्मदी अप्पा जाजर्रस्मान्टनन्त्राणे ।

एगो में सस्सदो अप्पा णाणदंमणटक्ष्मणो । सेसा में बाहिरा भावा सन्त्रे मंजोगटक्ष्मणा ॥४८॥

्रको में शाश्वत आत्मा झानदरीनलखणः । श्रेषा में बाबा मात्राः मर्वे संबोगळखणाः ॥ ४८ ॥

श्रम म बाता माबाः मब समागलश्रमाः ॥ ४८ ॥ अर्थ-मानदर्शन रशनवासः एक मेरा आरमा ही नित्य है, श्रेष सरीरादिक मेरे बाद पदार्थ हैं वे आरमाके संयोगसंबंधसे उसल हैं इसलिये निजाशीक हैं ॥ ४८ ॥

आगे कहते हैं कि संयोगलक्षणमात्रका त्याग क्यों करना चाहिये उसका उत्तर कहते हैं:---

संजोयम्हं जीवेण पत्ता दुक्खपरंपरा । तम्हा संजोगसंबंधं सब्बं तिविदेण बोसरे ॥ ४९ ॥

तम्हा सजागस्यथं सञ्च तिवहण चासर ॥ ४९ ॥ संयोगमूरुं जीवेन प्राप्त दुःखपरंपरा । तमात संयोगमंत्रथं मर्व शिविधेन व्यत्मजामि ॥ ४९ ॥

तसात् संयोगसंत्रधं सर्व त्रिविधेन व्युत्स्वज्ञामि ॥ ४९ ॥ अर्थ--इस जीवने परत्रव्यके साथ संयोगके तिमिषसे हमेशा दुःस भोगे इसट्टिये सब संयोग सवधको मन वचन काय-इन तीनोंसे छोड़ता हूं ॥ ४९ ॥

आगे फिर भी दुश्चरित्रके लागकेलिये कहते हैं;— मूलगुणडस्तरगुणे जो में णाराधिदो पमादेण ।

ी तमहं सञ्चं णिंदे पडिक्से आगमिस्साणं ॥ ५० ॥

मूलगुणीचरगुणेषु यो मया न आराधितः प्रमादेन । तमहं मर्वे निंदामि प्रतिक्रमामि आगमिप्यति ॥ ५० ॥

अर्थ—मूल्गुण (मणानगुण) जार उत्तर (बिरीप) गुण— इन दोनों पकारफ गुणोंनेंसे जिनका मैने आल्सकर आराधन (सेवन) नहीं किया उन सब अपने दोगोंकी मैं निंदा करता हूं, तथा आगामी कार्लों जो गुण आराधनेंमें न आर्थे उनके दोगोंकी मी निंदा करता हूं जार मतिकमण (स्थाग) करता हूं।। ५०॥ अरस्तं जममाणणांण मिन्छक्ते सल्यमेय य ममिला । जीयेन्द्र अजीवेन्द्र य ने णिंद तं च गारीहामि ॥ ५१॥

असंयममज्ञानं मिश्यात्वं मर्यमेव च ममत्वं । जीवेष्यजीवेषु च तत् निंदामि तथ गर्हे ॥ ५१ ॥

आगे कोई प्रक्षकरे कि ममादसे दोष लगे हैं उनका तो त्याग किया परंतु प्रमादीका त्याग क्यों नहीं किया उसका समा-धान कदने हैं---

सत्त भए अह मए सण्णा चत्तारि गारवे तिण्णि। तेत्तीसदासणाओ रापहोसं च गरिहामि॥ ५२॥ सप्त भपानि अर्था मदान् संज्ञायतस्तः गौरवाणि त्रीणि । त्रयस्त्रियदासादनां रागद्वेषां च गर्हे ॥ ५२ ॥ अर्थ-सात भय, आठमद, आहार मय भैपन परिमह-इनकी

अभिलापारूप चार संज्ञा, ऋद्विका गर्वरूप ऋद्विगैरय-रसगैरय-सात (सुल) गौरय-पेसे तीन गौरव, तेतीस पदार्थोंकी आसा-दना (परिमव), भीतिरूप राग और अभीतिरूप द्वेप-इन सब मार्वोका में आचरण नहीं करवा-त्याग करता हो॥ ५२॥

रावेंका में आचरण नहीं करता-त्याग करता हूं ॥ ५२ ॥ उनमेंते प्रथम सात भय और आठ मदीको कहते हैं;---

इह परलोयसाणं अग्रुत्तिमरणं च वेयणाकस्सि भया। विण्णाणिस्सरियाणा कुलवलतवरूवजाइ मया॥५३॥ इहपरलेका अत्राणं अग्रुप्तिमरणं वेदना आकस्थिकं मयानि।

इह्परलोकी अत्राणं अगुप्तिमेरणं वेदना आकस्मिकं मयानि । विज्ञानमेश्वर्य आज्ञा कुल्यलतपोरूपजातिः मदाः ॥ ५३ ॥ अर्थ--इसलोकमव, परलोकमव, अरलाका भय, गुत्त रहनेके

स्वान (गड-किला) न होनेका भय, गरनेका भय, शरीरादिकी पीड़ाका भयरूप वेदनाभय, विना कारण मेपगर्जनादिकसे उत्पल हुआ आक्रिसकमय-पे सात मय हैं। गणित काव्य गंपर्य संगीतादि विवाका अभिमानस्कर पेश्वानमद, भनकुंद्र आदि नावा संपदाका अभिमानस्कर ऐक्येगद, यचनके उत्तंवन न होने-रूप आद्वासपद, विता वितासदके उपम ह्वनकुं आदि वेदारें रूप आद्वासपद, विता वितासदके उपम ह्वनकुं आदि वेदारें

बाध संपदाका अभिमानरूप ऐश्वर्येगद, यचनके उछंवन न होने-रूप आज्ञामद, विता वितामहके उत्तम हश्वाकु आदि यंशमें चन्म होनेरूप कुलका मद, शरीरकी शक्तिके अभिमानरूप मद-ाद, कायको संताप देनेका अदंकारूप तपोमद, शरीरकी सुंद-ता खावण्यताका अभिमानसरूप रूपमद, माताकी पक्षकी परि- पाटी मामा नाना आदिकी उत्तमताका अभिमानरूप जातिमद— ये आठ मद हैं ॥ ५३ ॥ इन आठोंको त्यागना चाहिये, क्योंकि ये सम्यक्त तथा चारिकको गदी होने देते ।

लाग तेर्तासपदाधीक नाम फहते हैं;---

पंचेय अत्थिकाया छज्जीवणिकाय मह्यया पंच । पययणमादु पदत्था तेतीसधासणा भणिया ॥ ५४ ॥

चयणमादु पदस्या नेतीसचासणा भणिया ॥ ५४ ॥ पंचेय अस्मितायाः पद्जीवनिकाया महात्रतानि पंच । प्रयचनमात्रकाः पदार्थाः ययसिञ्दासादना भणिताः ५४

प्रयचनमातृकाः पदाधोः वयस्तिग्रदासादना अणिताः ५४ अर्थ—र्जाव आदि पाव अस्तिग्रतः, इत्तीकायदि स्वार व दे (दिवसे वंच दिवसक असकाय-इस्तरहः छह जीवनिग्रातः, अस्ति आदि पाव महिति व स्वार व दे (दिवसे वंच दिवसे अदि पाव सिति व स्वार गृक्षि आदि पाव सिति व स्वार गृक्षि आदि पाव सिति व स्वार गृक्षि आदि पाव आदि जाव आदि नी पदार्थ—हरमकार व तेतीस ब्दार्थ हैं। इनकी आसादनाके भी वे दी नाम हैं। इन पदार्थोग्र सरुप अन्याय कहना, शंकादि उत्तक इस्ता वर्ष आसादना कहने हैं। पेसा करनेसे दोष स्वार इस्ति व स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे दोष स्वार हरने हैं। इस्ति व स्वार हरने स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे दोष स्वार हरने स्वार करनेसे होष स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे दोष स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे होष स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरने हो। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरने हैं। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरने हो। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरने हो। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरने हो। पेसा करनेसे होष्ट स्वार हरनेसे स्वार हो। पेसा करनेसे हो। पेसा हो। पेसा हो। पेसा हो। पेसा हो। पेसा हो। पेसा हो। पोसा हो। पेसा हो

इसतरह आत्मसंस्कारकाङको विवाकर संन्यासकी आहोचनाके लिये कहते हैं;—

र्णिदामि र्णिदणिज्ञं गरहामि य जं च मे गरहणीयं । आरोबेमि य सन्वं सन्मंतरमाहिरं उवहिं ॥ ५५ ॥

निंदामि निंदनीयं गर्हे च यच मे गर्हणीयं । आहोचयामि च सर्वे साभ्यंतरवासं उपिं ॥ ५५ ॥ अर्थ—को अपने ही भावमें प्रमटकर निंदा करने गाँगव दोव हैं उनकी निंदा करना है अर्थान यह मैंने दोव किया था ऐसा याद कर गिरोपना है, आवार्थारिकों के समीव प्रकास करने योग्य मेरे दोच हैं उनकी आवार्थारिकों के ममीव गर्दी करना है और समन आपनेतर मस्त्वमान महित हाथ पेपन अनेतन परिसदकी आनोपना (परिदार) करता है। एप ॥

किम महार आयोजना करना यह कहते हैं;---जह पालो जप्पंतो कज्ञमकज्ञं च उज्जयं भणदि । तह आलोचेदव्यं मापा मोमं च मोत्तृण ॥ ५६॥

यथा वालो जल्पन् कार्यमकार्य न ऋतु मणति । तथा आलोचियनच्यं मायां मुशां च मुख्या ॥ ५६॥

अर्थ- जैसे बारक पूर्वापर निवेक रहित बोलता हुआ कार्य अकार्यको कृटिलतारहित सरल्युचिस कहता है, उसीतरह मन बचनकायकी कुटिलताकर छिपानेरूप माया तथा असत्ववचनोंको छोड़कर आलोचना करना योग्य है ॥ ५६॥

आगे जिस आचार्यके पास आलोबना की जाय यह कैसे गुणोबाला होना चाहिये यह कहते हैं;— णाणिन्ह दंसणिन्हि य तवे चरित्ते य चउसुवि अकंपों। घीरो आगमकुसलो अपरस्सावी रहस्साणं॥ ५७॥

ह्याने दर्शने च तपित चित्रि च चतुर्षे अपि अकंपः । धीरः आममकुरालः अपरश्राची सहस्वानाम् ॥ ५७ ॥ अर्थ—जो जानार्ये झानाचारमें, दर्शनाचारमें, तप आचा- रमें, चारिजानार्में-इसतरह नारों आरापनाओंमें अनल (इट) हो तथा पैर्यमुण सहित हो, अपने और प्रमतने ग्रास्त्रोंक विचारमें नतुर हो, और प्रकांतमें आठोचना किये गये ग्राप्त आपरणोहो किसीसे कहनेवाला न हो ऐसा आचार्य होता है। उसीके पास बालोचना करनी चाहिये ॥ ५०॥

आगे आळोवनाके बाद क्षमावना करनेका विधान कहते हैं;—

रागेण व दोसेण व जं में अकदण्हुपं पमादेण । जो में किंचिवि भणिओ तमहं सत्वं स्वमावेमि॥५८॥ रागेण वा डेपेण वा यद मवा अकृतवृत्वं प्रमादेन ।

यत् मया किंचिदापे भणितं तदहं सर्वे धमयामि ॥ ५८॥ अर्थ—माया लोभ केहरूप सगक्तर तथा कोप मान अप्रीति-रूप नेपूर्व को भैने अक्रम्बन्द्र किंगा अर्थात तस्त्रों साथ

जय — गांवा के केटलर तायहर चया करा गांव कार्य करा रूप देशकर जो भैने अकतन्त्रवाना किया अर्थात तुस्रीर साथ अयोग्य वर्ताव किया और ममादसे जो कुछ भी अनुचिन किरसिय कहा हो उसके लिये भैं सब जनोसे समा मांगता हूं तथा भैं समा करता हूं सब जीवोंकी संबुष्ट करता हूं ॥ ५८ ॥

ऐसे शमाभावकर श्रपक संन्यास करनेकी अभिव्याबाकर आवार्योको मरापके मेर पूछता है उसका उत्तर कहते हैं;—
तिविद्धं भणियं मरापं पालाणं पालपंदियाणं प।
सहसं पंडियमराणं जं कैपिडिको अञ्चानरेति ॥ ५९ ॥
त्रिविधं भणितं मरापं पालानां पालपंदियानां प।
द्विधं भणितं मरापं पालानां पालपंदियानां प।
द्विधं पंडितमराणं पर्व प्रेक्टिनो अनुमिषंते ॥ ५९ ॥

अर्थ — अर्हत महारह जीर गणवरदेव मरण तीन महारहा कहते हूँ — वालमरण १ बानपंडितमरण २ जीर तीमरा पंडिन-मरण जीकि केवरी मगवारका मरण होना है ॥ मात्रार्थ — असममी सम्पन्छींक मरणको वालमंडितमरण कहते हैं, मेरानांचन आवक्क मरणको वालमंडितमरण कहते हैं, जीर तीमरा पंडिन-मरण स्वार्यों मुनिक होना है। अन्य भंगोंमें मरणके पांच भेद कहे गये हैं उनमेंसे बालखा मरण मिन्यालीके होना है जीर पंडिन मरण केवरीके होना है और पंडिन मरण केवरीके होना है और स्वार्यालीक होना है स्वार्यालीक होना है स्वार्यालीक होना है और स्वार्यालीक होना है और स्वार्यालीक होना है और स्वार्यालीक होना है और स्वार्यालीक होना है स्वार्यालीक होना होना है स्वार्यालीक होना है स्वार्यालीक होना है स्वार्यालीक होना

आगे अञ्चानी कैसा गरण करते हैं उसका उत्तर कहते हैं;— जे पुण पणहमदिया पचलियसण्णाय वक्षमाया य । असमाहिणा मरते ण हु ते आराह्या भणिया ॥६०॥

ये पुनः प्रनष्टमतिकाः प्रचित्ततंत्राय वक्रमावाय । असमाधिना त्रियंते न हि ते आराधका मणिताः ॥ ६०॥

अर्थ-को नष्टबुद्धियाले अञ्चानी आहारादिकी बांह्यारूप संजा-याले मन वचन कायकी कुटिटनारूप परिणानवाले जीव आर्तरीद-ध्यानरूप असमापिमरणकर परलोकमें जाते हैं ये आरापक (कर्मके क्षप करनेवाले) नहीं हैं संसारको बढानेवालेही होते हैं॥ ६०॥

आगे पूछते हैं कि मरणके समय विरुद्ध परिणाम होनेसे क्या होता है उसे कहते हैं;—

यरणे विराधिदे देवदुगाई दुछहा य किर योही। पंसारो य अर्णतो होह पुणो आगमे काले॥ दर ॥ मरणे विराधिने देयदुर्गतिः दुर्लमा च किल घोषिः । संसारधानंनो भवति पुनरागिमप्यति काले ॥ ६१ ॥ अर्ध—मरणके समय जो सम्पक्तका विराधना करते (छोड़ते) हैं कथा आर्वेशिंद सहित मरते हैं उनकी भवनवासी आदि नीचकुळी देवताओं उत्पिष्ट होती है और सम्पक्त वा रहजवकी माति हुल्म है ऐमा आगमर्गे कहा है। तथा ऐसे खीबोंक आगामीकालों चारों गतिमें अमण करनेरूप संसार अनंत हो जाता है।। ६१ ॥

ऐना पूछनेपर श्राचार्य कहते हैं;— कंदरपमामिजोग्गं किञ्चिस संमोहमासुरत्तं च । ता देवहुग्गईओ मरणिम्म विराहिए होति ॥ ६३ ॥ कोदपैमामिबोग्यं केल्विप्यं संमोहं आसुरत्वं च ।

ता देवदुर्गतयो मरणे विराधिते मर्वति ॥ ६३ ॥

अर्थ — मृत्युके समय सम्यक्तका विनाग होनेसे फांदर, आमियोग्य, कैल्विय, समोह, आमुर-ये पांच देव दुर्गतियां होतीं हैं ॥ इनका सरूप ऐसा है—सीडगुणमें उपद्रवरूप परिणामको कंदर्य कहते हैं, तंत्र मंत्र इत्यादिककर रखादिककी इच्छा वह अमियोग है, प्रतिकृत आचरण वह किल्विय है, मिय्यादवाग-नामें तत्पर रहनेको संमोह कहते हैं और रीद्रपरिणाम सहित किसके आचरण हों वह असुर है—उनके धर्मोको गतियां कहते हैं ॥ ६३ ॥

अव पहले कांद्रपेदेवदुर्गतिका सरूप कहते हैं:— असत्तमुळ्ज्यांतो पण्णार्वितो य बहुज्जणं कुणहं। कंद्रप रहसमयण्णो कंद्रप्पेसु उबज्जेह ॥ ६४॥

असत्यप्रुख्यन् प्रज्ञापयन् च बहुजनं करोति । कंदर्पे रतिसमापनः कांदर्पेषु उत्पद्यते ॥ ६४ ॥

अर्थ — जो मिथ्या (झूठ) वचन बोठता हुआ और श्रस-त्यवचन बहुत प्राणियोंको सिखाता हुआ रागमावकी तीवता सहित कंदपैभावको करता है वह जीव कंदपैकर्मके योगसे नमा-चार्य कंदपै देवोंमें उत्पन्न होता है ॥ ६०॥

आगे आभियोगकर्मका खरूप और उससे उत्पिं होनेका स्थान वर्णन करते हैं:—

ŧσ

सान वर्णन करते हैं:— भिक्तेज़ह बहुभावे साह हस्साइयं च षहुवयणं। विभिज्ञोगेहिं कम्मेहिं जुत्तो बाहणेस खबजेड ॥६५॥ अभियुक्ते बहुभावान् माशुः हास्तादिकं च बहुवचनं । अभियोगः कर्माभिर्युक्तो वाहनेषु उत्पद्यते ॥ ६५ ॥

अर्थ—जो साधु स्सादिकमें आसक होके तंत्र मंत्र मृत कमीदिक पदुत भाव करता है और हास्यनेकी आधर्य उत्तत करानेकी वार्ला रहता दे और हो स्व अभियोगकर्मकर सहित हुआ बाहन जातिक हाथी घोड़े आदि सहस्वके देवता-कोमें उत्पल होता है ॥ ६५ ॥

आगे किस्विपभावनाका स्वरूप और उससे उत्पत्ति होनेका म्यान कहते हैं;—

तित्थपराणं पटिणीउ संघरस य पेइयरस सुत्तरस । अविणीदो णियडिछो किन्यिसिपेस्ववज्जेङ् ॥ ६६ ॥

विणीदा णिपिङ्कष्टा किन्यिसिपस्ववज्ञह् ॥ ६६ ॥ तीर्थकराणां प्रत्यतीकः संपस्य च चत्यस धत्रस्य । अविनीतो निकृतिवान किल्यिपुषु उत्पद्यते ॥ ६६ ॥

अर्थनाता निकृतियान् कालयपु उत्पार्थन ॥ ६४ ॥ अर्थनाता निकृतियान् कालयपु उत्पार्थन ॥ ६४ ॥ तिकृत्व होता हैं, तथा आपि यति मुले अनुसार अर्था आपि सायक अर्थिका आपिका अर्थना सम्पन्धान आन्य चारित्र तय-हस तरह चार मकारक सायका जिन्म नहीं करता है उद्धात रहता है, सर्वश देवकी मतिमाका जीर हादशान भीरहपूर्वस्त्र परामामका निजन नहीं करता तथा मायावार्य उननेने चतुर है वह किस्विन यातिक यात वानावार्य के उत्पार्थन होता है ॥ ६६ ॥

आगे संमोहभावनाका सरूप ऑर उससे उत्पित होनेका स्थान बतलाते हैं:— उम्मग्गदेसओ मग्गणासओ मग्गविवडिवण्णो य । मोहेण य मोहंतो संमोहेस्वयज्ञेदि ॥ ६७ ॥ उन्मार्गदेशकः मार्गनाशकः मार्गवित्रतिपन्नश्र । मोहेन च मोहयन् संमोहेषु उत्पद्यते ॥ ६७ ॥ अर्थ--जो मिय्यात्वादिका उपदेश करनेवाला हो, सम्याद-र्शन ज्ञान चारित्र सद्भप मोक्षमार्गका निरोधी (नाशक) हो अर्थात् मार्गसे विपरीतः अपना जुदाः मत चलाता हो-ऐसा सामु

दर्गतिमें उत्पन्न होता है ॥ ६७ ॥ आगे आसुरीमावना और उससे उत्पन्न होनेका स्थान वतलाते

मिथ्यात्व तथा मायाचारीसे जगतको मोहता हुआ खच्छंद देव-

ख़दी कोही माणी मायी तह संकिलिह तय चरिते। अणुबद्धवेररोई असुरेसुववज्रदे जीवो ॥ ६८॥ क्षुद्रः क्रीथी मानी मायावी तथा संक्रिप्टः तपसि चरित्रे ।

अनुत्रद्ववैररोची असुरेषृपपद्यते जीवः ॥ ६८ ॥ अर्थ-- द्रष्ट कोषी अभिमानी मायाचारी और तप तथा चारित्र पालनेमें क्वेशित परिणामों सहित और जिसने वैर कर-नेमें बहुत शीति की है ऐसा जीव आसुरीमावनासे असुर जातिके

अंबर अंबरीपनामा भवनवासी देवेमि उत्पन्न होता है ॥ ६८ ॥ ं यह पांचवीं असुरदेवदुर्गतिका खरूप है । जागे व्यतिरेकद्वारा बोधिको कहते हैं:--

मिच्छादंसणरत्ता सणिदाणा किण्हलेसमोगाढा । इह जे मरंति जीवा तेसिं पुण दुछहा योही ॥ ६९ ॥

मिध्यादर्धनरका सनिदाना कृष्णलेक्यामागाडाः । इह ये मियंते जीवाः तेषां पुनः दुर्लमा घोषिः ॥ ६९ ॥ अर्थ—को जीव अवत्वार्धम्यानरू मिध्यादर्धनमें हीन हैं, आगामी आकांशास्त्र निदान सहित हैं जोर अनंतानुषी स्वायसे सेनित योगकी मग्रीक्त्य कृष्णलेदयाकर सहित कृर् परिणामी हैं ऐसे जीव मरण करते हैं उनके भोषे अर्थात् सम्यक्तवादित ग्रुम परिणामी हैं ऐसे जीव मरण करते हैं उनके भोषे अर्थात् सम्यक्तवादित ग्रुम परिणाम होना दुर्लम है ॥ ६९ ॥

आरो अन्वयकर बोधिको कहते हैं;--

सम्मद्दंसणरत्ता अणियाणा सुक्छेसमोगादा । इह जे मर्रति जीवा तेसिं सुटहा हवे पोही ॥ ७० ॥ सम्यदर्धनरक्ता अनिदानाः गुरुहेरयामागादाः ।

आगे संसारफ कारणका खब्स कहते हैं;— जे पुण गुरुपहिणीया यहुमोहा संसयला कुसीला य ! असमाहिणा मरंते ते होति अणंतसंसारा ॥ ७१ ॥

ये पुत्रः गुरुतत्सनीका पहुमोदाः सञ्चवताः कृशीलाः च । असमापिना व्रिपंते ते भवंति अनंतसंसाराः (। ७१ ॥ अर्थ—जो आचार्यादिकीसे मतिकृत हैं, बहुत मोदवाले हैं

(रागद्वेपसे पीड़ित हैं), खोटे आचरणवाले हैं और खोटे ग्रीड़

3 0

(मनम्भा) बाने है एमें जीव विष्यात्तगतिन भाने गैद परि णामोंकर मरण करते हुए दीर्घ संमारी होने हैं ॥ ७१ ॥

आगे सहयमेगारवाने जीवीहा सहय बनवाने हैं;— जिणवयणे अणुरना गुरुवयणं जे करंति भावेण।

असयल असंकिलिहा ने होति परित्तसंसाम ॥ ७२॥ जिनवनने अनुरक्ताः गुरुवननं ये कृति भावेन । अञ्चल अगंकिष्टाः ने मनंति परीतसंनाताः ॥ ७२ ॥

अर्थ-जो पुरुष बहुत मापित प्रवचनमें अन्हीतरह मक्त हैं, आचार्यादि गुरुश्रीकी आज्ञाको भक्तिमे करते हैं मंत्र संत्र शास-पटनकी आकांक्षासे केवल नहीं, मिथ्यालकर रहित हैं और क्रेंग रहित शुद्धपरिणामवाले हैं वे अल्पसंसारवाले होते हैं ॥ ७२ ॥

आगे जिनयचनमें अनुराग न हो तो क्या होता है उसका उत्तर कहते हैं:---

बालमरणाणि बहुसो बहुयाणि अकामयाणि मरणाणि मरिहंति ते बराया जे जिणवयणं ण जाणंति ॥७३॥ वालमरणानि वहुदाः बहुकानि अकामकानि मरणानि ।

मरिष्यंति ते वराका ये जिनवचनं न जानंति ॥ ७३ ॥ अर्थ--जी जीव जिनदेव(सर्वज्ञ)के आगमको नहीं जानते हैं वे अनाथ बहुत प्रकारके बाउमरण अर्थात् निध्यादृष्टि अज्ञानि-

योंके शरीरत्यागरूप खोटे भरण करते हैं और अभिशायरहित अनेक प्रकारके मरण पाते हैं ॥ ७३ ॥

आगे पृछते हैं कि बालमरण कैसे होता है उसको कहते हैं;-सत्थागहणं विसभवखणं च जलणं जलप्पवेसो य ।

ष्ट्रज्ञत्यास्यानसंस्तरसवाधिकार २ । १० अणयार भंडसेवी जन्मणमरणाणयंधीणी ॥ ७४ ॥

शसग्रहणं विषमस्वणं च व्वतनं बलग्रवेशमः । अनाचारमांडसेवी जन्ममरणानुवंधीनः ॥ ७४ ॥ अर्थ—सह (बल्बार) व्यद्धिसे अपना पात(मरण)करना, विष सानेसे हुवा मरण, अभिने हुआ मरण, नरी कुवा बावडी

आदिनें इपनेरी हुआ मरण, पापकिवारूपवास्त्रिवति हुआ मरण-इसतरह अपपातरूप मरण हैं वे जन्ममरणके संतानरूप दीर्घ-संतारके कारण जानना । वे मरण समीचीन आवरण करनेवालेके नहीं होती । 90 ॥ आने पेसे मरणके भेद सुन संन्यास करनेवाला साधु संवेग

जड्ढमघो तिरियस्मिड् फदाणि यात्रमरणाणि बहुगाणि। इंसणणाणसहगदो पंडियमरणं अधुमरिस्से ॥ ७५ ॥ ऊप्यमपन्यिषु तु कुतानि यात्रमणानि बहुकानि । दशनबानसहरत्यः पंडियमणं अनुसरियामि ॥ ७५ ॥ अर्थ—ऊर्यकोक्-अपोकोकमें देवनारकोमें, तिर्यकोकमें

निवेंदर्गे तत्पर होके ऐसा चितवन करता है:---

अर्ध--- अध्यंतोक-अधोतोकमें देवनारकीमें, तिर्येग्लोकमें मनुष्यतिर्धवचोतिमें भैने बाटमरण बहुत किये। अब दर्धनज्ञान सहित हुआ पंटितमरण अर्थात् गुद्धपरिणामरूप चारित पूर्वक संन्यामसे मार्जोका स्वाग करूंगा॥ ७५॥ आगे सपक कहता है कि अकानहन्नमरणोको यादकर पंटित

जाने सपक कहता है कि अकामकृतमरणीकी यादकर पीढेत मरणसे प्राणीका त्याप करूंगा;— उच्ययमरणं जादीमरणं शिरणसु चेदणाओ प । एदाणि संभरंतो पंडियमरणं अशुमरिस्से ॥७६॥ उदेगमार्ग जातिमार्ग निरमेषु बेरनाय ।

एवानि गैमरन पेडिनमर्ग जनुमरिष्मामि ॥ ७६ ॥ अर्थ-इव्ह वियोगने यनियुक्त गैबीगमे किमी मार्ग हुआ मरण, उसल हुए बावकका मरण, वर्भमें निवे हुएका मरण

मीर नाककी सीजोदनाको बाद करना हुआ अब में वंडिन माग

कर मान लाग करेगा ॥ ७६ ॥ अब कोई पूछे कि मरणके भैरीने पंडिय मरण अच्छा वर्षी है

उसे कहते हैं:-एफं पंडिदमरणं छिव्दि जादीमदाणि बहुगाणि।

तं मरणं मरिवच्यं जेण मर्व सुम्मवं होदि ॥७०॥ एकं पंडितमरणं छिनचि जातिशतानि महनि ।

तन्मरणं मर्तय्यं येन मृतं मुमृतं भगति ॥ ०० ॥

अर्थ-एक ही पंडिल मरण बहुत जन्मीके सेंकड़ोंको छेद देता है इसलिये उस पंडित मरणसे ही मरना, जिससे वह मरण

मशंसा करनेयोग्य है ॥ अर्थात् ऐसा मरण करना कि जिससे फिर जन्म लेना न पड़े ॥ ७७ ॥

आगे यदि संन्यासके समय पीड़ा क्षमादिक उपने तो देमा करना यह कहते हैं;---जह उपज्ञह दुःखं तो दहन्यो सभावदो णिरये ।

कदमं मए ण पत्तं संसारे संसरंतेण॥ ७८॥ यदि उत्पद्यते दुःखं ततो द्रष्टच्यः खभावतो नरके ।

कतमत् मया न प्राप्तं संसारे संसरता ॥ ७८ ॥

अर्ध--जो संन्यासके समय क्षचादिक द:ख उपने तो नर-

कका खरूप चितवन करना तथा अन्य जरा मरणरूप संमारमें अमण करते हुए मैंने कीनसे दुःख नहीं पाये ऐसे दःख तो बहत पाये हैं।। ७८।।

जागे संसारमें केसे २ दू:ल पाये उनको कहते हैं;---संसारचक्कवालिम मए सब्वेपि पोग्गला बहुमी।

आहारिदा य परिणामिदा य ण य मे गदा तिसी॥७९॥ संसारचक्रवाले मया सर्वेषि प्रद्रला बहुदाः ।

आहृताथ परिणामिताथ न च मे गता तृप्तिः ॥ ७९ ॥ अर्थ-चतुर्गति जन्ममरणरूप संसारचक्रमें भ्रमण करते हुए मैंने दही खांड गुड़ चावल जल आदि सभी पुद्रल बहुत बार मक्षण किये खीर खल रसरूपकर जीर्ण किये हौशी गेरे इति (संतोप) नहीं हुई, अधिक अधिक इच्छा दी होती गई ऐसा चिंतवन करना ॥ ७९ ॥

आगे किस दृष्टांतसे तृष्ति नहीं हुई उसका उत्तर कहते हैं;— तिणक्ट्रेण व अग्गी स्वणममुद्दो णदीसहरसेहिं। ण इमो जीवो सको तिष्पेइं कामभोगेहिं ॥ ८० ॥

तुणकार्ष्टरियापिः लयणसमुद्रो नदीमहस्तः। न अयं जीवः श्रवयः हप्तं कामभोगः ॥ ८० ॥ अर्थ- जैसे तुल काठ बहुत डाडनेपर भी अधि तुस नही होती, और परिवारनदियों सहित गंगा सिंधु आदि हजारी नदि-योंसे भी छवणसमुद्र पूर्ण नहीं होता उसीतरह यह आब भी बांधितगुलके कारण जो आहार स्त्री बस्तादि कामभीग है जनसे 14 संबंध नहीं होता। अधिक मिजनेमें गुजा अधिक मही

नाती है ॥ ८० ॥ जानी परिजाममात्रमें ही बंग होता है यह कहते हैं:--

फंलिदकल्बसिदमुदो कामभोगेस सुनिष्ठदो संती। असंजनीवि य भोगे परिणामेण जियाहोड ॥ ८१ ॥

कांक्षितकलुपितभूतः काममोगेषु मृश्छितः सन् ।

अभ्रंजानीयि च भीगान् परिणामेन निषध्यते ॥ ८१ ॥ अर्थ-जो काम भोगोक्ति इच्छा करनेवाला, समद्वेपादि मलि-नमायोसे पीड़ित हुआ काम भोगोमें मुध्छित होता है बहु जीव संसार सुसके कारण भोगीको न भीगता हुआ भी निवर्क व्यापाररूप परिणामीसे आप कर्मीकर भैंघ जाता है परवश ही जाता है ॥ ८१ ॥

आगे इच्छामात्रसे ही विना भौगा पाप बंध होता है यह कहते हैं;---आहारणिमित्तं किर मर्च्छा गच्छंति संत्तमीं पुढविँ।

सचित्तो आहारो ण कप्पदि मणसावि पत्थेदुं ॥८२॥ आहारनिमित्तं किल मत्या गच्छंति सप्तमी पृथिवीं । सचित्त आहारी न कल्पते मनसापि प्रार्थयितुम् ॥ ८२ ॥

अर्थ--आगममें ऐसा कहा है कि आहारके फारण ही तंतुल मच्छ मनके दोषकर सातवें नरक आता है इसलिये जीव-घातसे उरपन्न हुआ सचित्र आहार मनसे भी याचना करने योग्य नहीं है ॥ ८२ ॥

ं आगे आचार्य 'क्षपकको कहते हैं कि यदि सावद्य आहार

मनसे भी चितवन नहीं फरने योग्य है तो तुहकी शुद्धपरिणाम ही बरना योग्य है:---पुच्चं कदपरियम्मो अणिदाणो ईहिद्ग मदिचुद्धी ।

पच्छा मलिद्रकसाओ सज्जो मरणं पडिच्छाहि ॥८३॥ पूर्व कृतपरिकर्मा अनिदानः ईहिन्या मतिवृद्धिभ्याम् । पथात् मलितकपायः मद्यो भरणं प्रतीन्छ ॥ ८३ ॥ अर्थ-दे सपक पहले तपथरण करनेवाला तथा हम लोक परलोकके सुखकी बाछा रहित हुआ तु प्रत्यक्ष परीक्ष (अनुमान) शानसे आगमका निध्य पर कपाय छोड़ता दुआ क्षमा सहित

होके समाधिमरणका आचरण कर ॥ ८३ ॥

आगे आचार्य फिर भी क्षपककी शिक्षा देते हैं;---हंदि चिरभाविदावि य जे पुरुसा मरणदेसयालस्मि । पुरुवकदकस्मगरुपराणेण परुछा परिषष्टति ॥ ८४ ॥

जानीहि चिरभाविता अपि च ये पुरुषा मरणदेशकान्दे ।

पूर्वकृतकर्मगुरकत्वेन पथात् प्रतिपतंति ॥ ८४ ॥ अर्थ-- हे क्षपक स पेगा समझ कि फुछ कम कोटि पूर्ववाल-सक भी जो तपश्चरण करते हैं-शहुत समयतक भावना भाते हें वेभी पहिले किये पापकर्मक भारने मरणसंबंधी देशकालने थीछे गिर जाते हैं समप्रयसे सहत होते हैं। इसिलिये नू सायभान हो ॥ ८४ ॥ मधा चंद्रपरेज्झस्म कारणेण उज्जदेण पुरिसेण ।

जीयो अविरहिदगुणो कादच्यो मोयग्यमग्गम्मि ॥८५॥

बसात् चंद्रकवेश्यस्य कार्येन उपतेन पुरुषेण ।

80 जीवो अविरद्तित्गुणः कर्नव्यः मोश्रमार्गे ॥ ८५ ॥ अर्थ-हे शपक जैसे चंद्रकवेष्यके निमित्त उपमी हुआ

पुरुष अपने गुणका नाम नहीं करता-सायमान रहता है उसी-तरह सम्यम्दर्शनादिरूप मोक्षमार्गमें उद्यमी हुआ जीव अपना गुण नहीं नाश करता ऐसा निश्चय कर ॥ ८५ ॥

भागे चंद्रकवेष्यकर क्या किया उसे बतलाते हैं:--कणयलदा णागलदा विज्ञलदा तहेव कुंदलदा । एदा विय तेण हदा मिथिलाणयरिए महिद्यसाण८६ सायरगो बहुहमो कुलदत्तो बहुमाणगो चेव। दिवसेणिकेण हदा मिहिलाए महिंददरोण ॥ ८७ ॥

कनकलता नागलता विद्युलता तथैव इंदलता । एता अपि च तेन हता मिथिलानगर्या महेंद्रदत्तेन ॥८६॥ सागरको बल्लमकः कुलदत्तः वर्धमानकः चैत्र । दिवसेनेकेन हता मिथिलायां महेंद्रदत्तेन ॥ ८७ ॥

अर्थ---महेंद्रदत्तने मिथिलानगरीमें एक ही दिनमें कनकलता, नागलता, विद्युलता, कुंदलता सियोंको तथा सागरक, बल्लमक, कुछदत्त, वर्धमानक इन पुरुपोंको एक साथ ही मारा । इसिलिये यतीको परमार्थ साधनमें समाधिमरणके समय

चाहिये ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ आगे यत किये विना जैसे लैकिक कार्य विगड़ता है उसी तरह यतिओंकाभी परमार्थ विगड़ जाता है यह कहते हैं;-जह जिज्जावयरहिया जावाओ वररद्णसुपुण्णाओ । पटणमासण्णाओं खु पमादमुटा णिवुड्वंति ॥ ८८ ॥

यथा निर्यापकरहिता नावी वररतसुपूर्णाः । पत्तनमासन्नाः खलु प्रमादमूला निद्युडेति ॥ ८८ ॥

अर्थे—हे सपक वैसे शेवस्त्रोंकर भरा हुआ जहात समुद्रके किगोर नगरके समीप भी पहुंच जाय परंतु ममादके काल सेव- दियासे रहित हुआ जहात समुद्रमें इव जाता है, उसीतरह सम्प्रमदेशोंकर परिपूर्ण सिद्धिके समीपमृत संन्यासरूपी नगरको मात हुआ सपकरूपी जिहात ममादके वहा सन्त्रासके साथक आवार्योस रहित हुआ संसारसमुद्रमें इवता है। इसिन्ये यस करता चाहिये॥ ८८॥

भक्त भरता चाहिय ॥ ८८ ॥
कोई कहे कि अमारकाशादि याधयोग करनेकी योग्यता न होनेपर क्या करना उसका समाधान कहते हैं—
पाहिरणोगविरहिओं अञ्मेतरजोगाझाणमास्टीणो ।

भाहरजागावराहुआ अन्मतरजागझाणमालाणा । जह तस्यि देसयाले अमृदसण्यो जहसु देहं ॥ ८९ ॥ ग्राह्मपोगविरहिनः आभ्यंतरयोगध्यानमालीनः ।

यथा तसिन् देशकाले अमृदसंग्नः जहीहि देहम् ॥ ८९ ॥ अर्थ--हे शपक अभावकाशादि बावयोगीसे रहित हुआ भी अभ्येतरिणागीमें एकामिंचाके निरोगस्य प्यानमें हीन हुआ संन्यासके देशकाल्ये आहारादि संग्ना रहित होके शरीरका स्थाग कर ॥ ८९ ॥

इसतरह शरीरके त्याग करनेसे क्या फल होता है उसे कहते हैं:— हंतृण रागदोसे छेत्त्रण प अट्टकम्मसंकलियं।

जन्मणमरणरहर्द्धं भेत्रण भवाहिं मुचहिसि ॥ ९० ॥

मुखाचार-

83

हत्वा रागर्रेग छित्वा च अष्टहर्मग्रंखलां ।
जन्मसरणारहर्ट भित्वा भवेभ्यो मोध्यसे ॥ ९० ॥
अर्थ—मीति अभीतिको नद्दहर जानावरणादि अग्डकंत्री
सोकत्का छेदकर जन्ममरणहरी अर्देट पंटीवंबको भेदकर तू
संसारसे छूट जायगा । इस सन्यासमरणका यद्दी फळ जाननायः।
ऐसे आचार्योका उपदेश सुनकर सक्क विचारता हुं—
सन्वमित्वं उचदेसं जिण्यदिष्टं सहहामि तिचिहण ।
सस्थावरस्यमकरं सारं णिञ्चाणमरगस्स ॥ ९१ ॥
सर्वमिमं उपदेशं जिन्हर्षं अद्ये विविधेन ।
असस्यावरस्यमकरं सारं निवाणमार्गस्स ॥ ९१ ॥

अर्थ—क्षपक कहता है कि सब यह उपदेश भगवान भावित आगम है उसका मनवननकायसे श्रद्धान (रुचि) करता हूं। यह आगम, दो इंदिय आदि पंच इंदियच्येत त्रस जीव तथा एकेंद्रिय आदि स्वायर जीव सबके कट्याणका करनेवाला है तथा मोशमार्थका सारम्त हैं। इसी आगमसे मोशमार्थकी प्राप्ति होती है।। ९१॥ औस उस समय द्वावसांगका श्रद्धान किया जाता है उसतरह

समक्ष धुतका चिंतवन नहीं किया जासकता देखा कहते हैं— ण हि तम्मि देसपाले सको पारसचिद्दी सुदक्खंभो । सब्बो अणुर्चितंदुं घलिणावि समस्यचित्तेण ॥ १२ ॥ नहि तसित् देशकले अपयः हादपचियः ग्रतस्था । सर्वः अनुर्चित्तितुत्ते विल्ना अपि समर्थेचित्ते ॥ १२ ॥

सर्वः अनुर्वितिपत्तं बिलेना अपि समर्थिचिचेन ॥ ९२ ॥ ं अर्थ-हे सपक । शरीरके परित्यागके समय बाह्य मकारका संपूर्ण शुत्रकृष, दारित्यन मनोयन पारण करनेवाले यतियोसे भी चित्रवन नहीं किया जासकता अर्थान् न तो अर्थका विचार धनसकता है जार न पाठ ही होसकता है॥ ९२॥ आने कहते हैं कि ऐसा है तो क्या करना!:—

एकक्ति यिदियधि पदे संवेगो वीयरागमगगिम । . चर्चित गरी अभिक्तं नं मरणेत ण मोत्तव्यं ॥ ९३ ॥ एकम्पित द्वितीये पदे संवेगो वीतरागमार्गे ।

एकामन डिताय पद सबगा बातरागमाग । बजति नरो अभीक्ष्यं तत् मरणांते न मोक्तव्यं ॥ ९३ ॥

अर्ध—ट हापक! जो सर्वज्ञक्षित आगमके 'नमोर्हेसचर' ऐसे एक पदमें तथा 'नमः सिद्धेम्बर' ऐसा दृसरा पद अथवा अर्थपद प्रमण्डाद पंचनमस्कारपद अथवा एक दीजपदमें भी जो संधेग (दर्ध) करता है यह उचनमति पाता है इस-दिये कंटगत माण होनेपर भी पदका ध्वान नहीं छोड़ना चाहिये ॥ ९३ ॥

भाग पर्वक नहीं छोडनेका कारण बतलाते हैं;— एदह्मादो एकं हि सिलोगं मरणदेसपालक्षि । आराहणज्यज्ञत्तो चिंतंतो राधओ होदि ॥ ९४॥

एतसात् एकं हि श्लोकं मरणदेशकाले । आराधनोपयुक्तः चितयन् आराधको भवति ॥ ९४ ॥

अर्थ—हे क्षपक! जो इस श्वतस्कंघसे अथवा पंचनमस्कार-मंत्रसे एक भी स्टोक (पद) टेकर मरणके समय सम्यन्दर्श-नादि जारापनाओं सहित चितवन करता है यह जारापक रक्ष; म्लाचार-

त्रयका सामी होता है । इसलिये दुझको जिनवचनका आश्रय नहीं छोडना चाहिये ॥ ९८ ॥

88

नहा छाडना चाह्य ॥ ५४ ॥ आगे मरणके समय पीडा हो तो क्रोंनसी खोपधि करना उसे

_{कहते हैं;—} जिणवयणमोसहमिणं विसयसुहविरेयणं अमिदभूदं।

जरमरणवाहिनेयण खयकरणं सव्बद्धक्खाणं ॥ ९५॥ जिनवचनमापुथमिदं विषयमुखिरेचनं अमृतभूतं ।

जिनवचनमीपधिमदं विषयसुराविरेचनं असृतभूतं । जरामरणच्याधिवेदनानां क्षयकरणं सर्वदुःखानास् ॥९५॥ अर्थ--यह जिनवचन ही जोषघ है । जो कि इंद्रिय जनित

अधे—यह जिनवचन ही जीएव है। जी कि इंद्रिय जीतेत विषयमुखोंका विरेचन करनेवाली (दूर करनेवाली) है, जर्ध-तसक्स है जीर जम मरण व्याधि वेदना जादि सब इत्योंका नाह करनेवाली हैं। मावार्ध—जैसे जीपिय रोगोंको मिटा देती हैं उसीतरह जिनवाणी भी जनमस्य जादि दःखोंको मिटाके

श्रमर पदको प्राप्त करदेती है। इसिटिये अमृतजीपि जिन-बचन ही हैं॥ ९५॥ आगे उस समय शरण क्या है यह बतलाते हैं;—

आगे उस समय शरण क्या है यह बतलाते हैं;— णाणं सरणं मेरं देसणसरणं च चरियसरणं च ! सब संजर्म च सरणं भगवं सरणो महावीरो ॥ ९६ ॥

क्षानं रारणं मम दर्शनशरणं च चारित्रशरणं च । तपः संयमथ शरणं मगवान् शरणो महावीरः ॥ ९६ ॥

अर्थ-हे सपक तुत्रे पैसी भावना करनी चाहिये हि, मेरे यमार्थ ज्ञान ही द्वारण (सहायक) है, मज्ञान संवेग अनुकंश)आस्तिवयकी मगटतारूप सम्याद्यान ही दारण है, आसव बंधनी निष्ठिक्स चारित्र ही मेरे हारण है, बारहमकार तप जीर हंद्रिय प्राण संयम ही हारण है तथा अनंत झान मुखादि सहित शी-महाचीरखामी हितोपदेशी ही हारण हैं। इनके सिवाय अन्य कृदेवादिका हारण मेरे नहीं है।। ९६॥

भागे आराधनाके फलको कहते हैं;—

आराहण उवजुत्तो कालं काऊण सुविहिओ सम्मं । उक्तस्तं तिण्णि भवे गंतृण य लह्ह णिव्वाणं॥ ९७॥

आराधनोपयुक्तः कालं कृत्वा सुविहितः सम्यक् । उत्कृष्टं त्रीन् भवान् गत्वा च लभते निर्वाणम् ॥ ९७ ॥

अर्ध—सम्यन्दर्धन आदि चार आराधनाकर उपयुक्त हुआ अतीचार रहित आचरणवाटा जो मुनि वह अच्छीतरह मरणकर उत्ह्रप्ट तीन मय पाकर निर्वाण (मोक्ष) को पाता है॥ ९७ ॥

ऐसा सुनकर क्षपक कारणपूर्वक परिणाम करनेका अभि-रुपी हुआ कहता है—

समणो मेत्ति य पद्यमं विदियं सव्यत्थ संजदो मेत्ति । सन्यं च बोस्सरामि य एदं भणिदं समासेण ॥ ९८ ॥

अमणो मम इति च प्रथमः डितीयः सर्वत्र संयतो ममेति । सर्वे च व्युत्स्रजामि च एतर् भणितं समासेन ॥ ९८ ॥ अर्थ-सपक विचारता है कि भैं प्रथम तो अमण वर्षात

अर्थ—सपक विचारता है कि में प्रथम तो अनण वर्षात् समरतीमावकर सहित हूं जोर दूसरे सब भावोमें मयगी हूं इसकारण सब अयोग्य माबोको छोडता हूं। इसतरह संक्षेपसे जाञीचना कहा ॥ ९८ ॥ भागे फिर इट परिणामोंको दिसलाते हैं;— लद्धं अलद्धपुर्वं जिणवयणसुभासिदं अमिद्रभृदं । गहिदो सुग्गइमग्गो णाहं मरणस्स बीहेमि ॥ ९९॥

त्रहर्षा सुरुष्याच्या चार्य मर्पास्त पाहास ॥ २० रुव्धमरुव्धपूर्व जिनवचनसुभाषितं अमृतभूतं । गृहीतः सुगतिमार्गः नाहं मरणाद्विमेमि ॥ ९९ ॥

अर्थ—क्षपक विचारता है कि मैंने ममाणनयसे अविरुद्ध सुसका कारण, पूर्व नहीं पाया ऐसे जिनवचनको माप्त किया और मोक्षमार्ग भी महण किया । अब में मरणसे नहीं इरता ।! मावार्थ—जवतक अज्ञान या तवतक यथार्थसरूप नहीं जानो सिलिय मरणका हर या, अब जिनवचनसे यथार्थ सरूपका महण जुआ मोक्षमार्गमें मृष्टीत हुई तब मरणका मय जाता रहा ॥९९॥ धीरिण वि मरिद्वन्वं णिद्धीरिणवि अवस्स मरिद्वन्वं । जिद्दी से मिर्स्वाणेण मरिद्वन्वं १००

पापंप विदोप करता है इसलिये मरणसमय कायर नहीं होना भारिये ॥ १०० ॥ सीलेणायि मरिद्व्यं णिस्सीलेणायि अयद्य मरिद्व्यं । जह दोहिंचि मरिद्व्यं यरंष्ट्र सीलनाणेण मरिप्य्यं १०१ शीलेनापि मर्तव्यं निःशीलेनापि अवस्यं मर्तव्यम् । यदि डाभ्यामपि मर्तव्यं वरं हि शीलत्वेन मर्तव्यम् ॥१०१॥ अर्थं — जो शील (मतकी रक्षा) वाले हैं वे भी मरेंने लोर जो म्रस्यास आदिकी पोड़ासे मरण होनेके भयसे मत शील छोड़ देते हैं वे भी नारेंने लार के ही हो को नारें के स्वयं के ता शील छोड़ देते हैं वे भी कार्य ने नार कर कार्य हों । महाशि ही भी स्वा है हो भी साम अर्थ हो । महाशि ही भी साम अर्थ हो । महाशि ही साम मरना हो पड़ेगा ही ॥ १०१ ॥ छोड़ देनेसे पार्थमं अधिक होगा मरना तो पड़ेगा ही ॥ १०१ ॥

इसलिये शिल्महित ही मरना शेष्ट है ऐसा फहते हैं;— चिरउसिदयंभयारी पप्कोडेंद्ग सेसर्य फर्मा 1

अणुपृत्वीय विसुद्धो सुद्धो सिर्द्धि गर्दि जादि ॥१०२॥ चिरोपितवृद्धचारी प्रस्कोट्य शेषं कर्म ।

आनुपूर्व्या विशुद्धः शुद्धः सिद्धिं गति याति ॥ १०२ ॥

अर्थ—बिसने बहुतहालतक व्रवाचयंत्रत सेवन किया है ऐसा म्रानि दोप ज्ञानावरणादि कमोकी निर्वेशकर कमसे अपूर्व अपूर्व विग्रद्ध परिणामीकर अथवा गुणसानके कमसे अर्पस्यावगुणभेशी निर्वेशकर कर्मकंक्ष्म रहित हुआ क्षेत्रल्लानादि ग्रद्ध भावोक्त ग्रुक्त होके परमसान मोशको मास होता है। ऐसे आरापनाका ज्याय जानना॥ १०२॥

आगे आराषक्वा सस्य कहते हैं;—
जिम्ममो जिरहंकारो जिल्लासाओ जिहिंदिओ पीते ।
अजिह्याणो दिटिसंग्लेणो मर्तनो आराहको होड़ा।(२३॥)
निर्ममः निरहंकारः निरुपयः जिलिहेयः पीरः ।
अनिदानः इहितंपमः प्रियमण आराधको मयति॥(२३॥

खुमें ममता (मोद्द) नहीं हो, अभिमान रहित हो, कोपादिक-पाय रहित हो, जितेंद्रिय हो अर्थात् विषयमुखोंसे उदासीन तथा अर्तीदियमुखों छीन हो, पराक्रम सहित हो, शिथिङ न हो, भोगोंकी बांछाकर रहित हो और सम्यादर्शनको अच्छी सरह मासहुआ हो। ऐसा जीव आराधक होसकता है॥ १०३॥

अर्थ--जो मरणकरनेवाला ऐसा हो-चेतन अचेतन परव-

आगे इसी बातको समर्थन करते हैं;—
णिकसायस्स दंतस्स स्र्रस्स वयसाइणो ।
संसारभयभीदस्स पश्चकलाणं सुहं हवे ॥ १०४॥
निष्कपायस्य दांतस्य शुरस्य व्यवसायिनः ।

अब क्यनको संकोचते हुए आराधनाक पत्न कहते हैं;— एदं पञ्चनवाणं जो काहृदि मरणदेखयालम्मि । धीरो अमूदमण्णो सो गच्छइ उत्तमं ठाणं ॥ १०५ ॥ एतर प्रत्याख्यानं यः कृषीन् मरणदेशकाले ।

मत्याग्यानकी करता है वह मोशस्थानको मान होता है। आराय-नावा फल निर्वाण है यह तार्लय जानना ॥ १०५॥ आगे अंतर्मगलपूर्वक मार्थना करते हैं;—

आगे अंतरंगरूपंक मार्थना करते हैं;— यीरो जत्मरणरिच् पीरो विण्णाणणाणसंपण्णो । स्टोगरसुद्धोपपरो जिण्यरपंदो दिसद् पोर्षि ॥ १०६॥ मीने जनागलपिपुः गीने विद्यानवानसंपनः । स्टोगस्य उद्योतकरो जिनवरसंद्री दिशतु पोधिम् ॥ १०६॥

अर्थ —बुदाय तथा भरतका राष्ट्र (तूर कानेवाला), विदोष स्द्रभीका देनेवाला, चारिल कीर शानकर सहित, भव्यान्विके निष्यात अंपवराकी निराके शानकरा मकाशका करनेवाला और सामान्य केयिल्योंने मधान चंद्रमाके सामान जानंद करनेवाला ऐसा महावीर प्रभु चौषीमचा तीर्थकर हमें समाधिकी प्राष्टि कराव । इस मकार अंतर्गणकर शायकको स्वाधिकी माधिके कराव । इस मकार अंतर्गणकर शायकको स्वाधिकी

आगे निदान नहीं करना और देसा भाव करना यह कहते हैं;— जा गदी अरिह्नाणं णिहिदद्वाण जा गदी।

जा गदी वीदमोहाणं सा मे भवद् सस्सदा ॥ १००॥ या गतिः अर्हनां निष्ठतार्थानां या गतिः । या गतिः वीतमोहानां सा मे भवतु शक्वतु ॥ १००॥

अर्थ—आचार्य कहते हैं कि मैं ऐसी याचना करता हूं कि जो गति अर्हतोंकी हैं, जो हतहत्व सिद्ध परमेष्टियोंकी है जोर जो गति श्रीणकपाय एदास (अल्पजानी) बीतरागोंकी है वही

40

गति हमेशा मेरी भी होवे (रहे)। में दूसरी कोई अभिला व याचना नहीं करता । भोगकी अभिरायाका नाम निदान ं इसिलेये यहां निदान नहीं हुआ ।। १०७ ॥ इसतरद अधिका समाप्त हुआ ।

इममकार आचार्यथीवहकेरिविरचित मुलाचारकी भाषाटीकार्मे बुद्दरप्रत्याच्यानसंस्तरस्त अधिकार समाप्त हुआ ॥ २ ॥

संक्षेपप्रत्यान्यानाधिकार ॥ ३ ॥

आगे अक्रमात निदादिके निमित्तने मरण आजाय सो बगा करना उसके जिये बह संक्षेप प्रत्यास्त्यान अधिकार कहते हैं उन सने भी पदने भग शनस्य करते हैं।---एस करेकि पणामं जिलवस्यसहरस बहुमाणस्म ।

रोसाणं य जिलाणं समलमणपराणं य सन्धेसि १०८ एतः करामि ब्रणामे जिल्लास्त्रपानस्य वर्षमानस्य ।

इंतरणो च जिनानो सम्मग्नामधामा च गर्भाम ॥१०८॥ अर्थ-- यह में भगोतन प्रयश्च बहुद्देशचार्य मुनिसनीने

बैद बीजहारास्तामाची, तथा वृति भूति वहीं। अनुगार पैपे चार बदारींद्र सपसीवत कीतमलागीको आदिशेवर सन गणप-रेको क्रीर क्षेत्र पुरानाहि पार्नेनाच तीर्वेष्टरीको आदिरेष्टर भण दे र्राट्यं के जनस्थार करता है ॥ मातार्थं—गयः पीनः परवेशिः

के हो स्थम्बार करण हो। २०८॥

आगे संक्षेप मत्यास्त्रान करनेका कम बतलाते हैं;— सन्ये प्राणारंभं पचक्त्वामि आठीपयपणं च । सन्यमदत्त्राचाराणं मेहुणण परिम्मक्तं चेव ॥ १०९ ॥ सर्व प्राणारंभं प्रत्यास्त्रामि अठीकवचनं च । सर्वमदत्त्रादानं मेशुनं परिम्रहं चेव ॥ १०९ ॥ अर्थ—सक्षेत्रत प्रत्यास्त्रान करनेवाल ऐसे प्रतिशा करता है कि पहले तो में सब हिंसाका, हाठ बोलनेका, चोरीका; मेशु-नका तथा स्व आप्येतर वादा परिमहक्त प्रत्यास्थान (लाव) करता हूं। मावार्य—प्रथम तो महावतीकी शुद्धि करनी वा-हिये ॥ १०९ ॥

जामे सामायिकजतके सहस्यका वर्षन करते हैं;—
साम्मं मे सञ्चयुद्ध वेर मज्ज्ञं ण केणवि ।
आस्तान योसारिनाणं समार्थि पडियज्ज्ञः ॥ ११० ॥
साम्मं मे सर्वयुद्ध वेर मण्ड पडियज्ज्ञः ॥ ११० ॥
आजाः ज्युत्कज्य समार्थि प्रतिषये ॥ ११० ॥
अर्थ—मेर सव जीवोमं सममार्थ हैं, मेरा क्रिसीके साथ थैर
नहीं है । इसलिये में सव आकांशाओं को छोड़ समापि (शुद्ध)
परिणायको मात्र होता है ॥ भावार्थ—सव जीवोमं सममाव
स्तना, बैरमाव क्रिसीक जगर न रस्ता, सव आवाओं को छोदमा और समाप्रियावको प्राप्त होना—स्सीका नाम सामाविक
है ॥ ११०॥

आगे परिणाम शुद्धिके लिये फिर भी कहते हैं:— सञ्घं आहारविहिं सण्णाओं आसए कसाए य । सर्वे आहारविधि संज्ञा आशाः कपायाश्र ।

५र

सर्व चेंव ममत्वं त्यजामि सर्वे धमयामि ॥ १११ ॥ अर्थ—मै सब अन्नपानादि आहारकी विधिको, आहारादि-वांछाओंको, इसलोक परलोककी सव वांछाओंको, कोघ आदि फपायोंको, और सत्र चेतन अचेतन बाह्यपरिग्रहमें ममताको छोटता हूं । इसतरह परिणामोंको शुद्ध करना चाहिये ॥१११॥ एवम्हि वेसयाले उवक्रमो जीविदरस जिट मञ्झं। एदं पचक्वाणं जित्थिण्णे पारणा होज्ञं ॥ ११२ ॥ एतसिन देशकाले उपक्रमी जीवितस यदि मम । एतत् प्रत्याच्यानं निस्तीर्णे पारणा भवेत् ॥ ११२ ॥ अर्थ-- जीवितमें संदेह होनेकी अवसामें ऐसा विचार करे कि इस देशमें इस कालमें मेरा जीनेका सद्भाव (अखित्व) रहे-गा तो ऐसा त्याग है कि जननक उपसर्ग रहेगा तनतक आहारादिका त्याग है उपसर्ग दूर होनेके बाद यदि जीवित रहा सी फिर पारणा (भोजन) करूंगा ॥ ११२ ॥ जदा निश्चय दोजाय कि इस उपसर्गादिमें में नहीं जीसकूंगा यहां ऐसा त्याग करे:---मध्यं आहारविहि पश्यम्यामी य पाणयं यज्ञ । उपहिं च घोमरामिय दुविहं तिविहेण मायर्ज्ञ॥११३॥ मर्वे आहारविधि ब्रत्साष्ट्रमामि च पानकं वर्जयित्या । उपधि च म्यूनमुजामि दिविधं त्रिनिधेन सावधम् ॥११३ ॥ अर्थ-में जरको छोड़ सब (तीन) तग्हके बाहारीको त्यागता

हुं। बाह्य आभ्यंतर दो प्रकारके परिष्ठको तथा मन यचन कायकी पापिकयाओंको छोडता हूं ॥ ११३ ॥

आगे उत्तमार्थ त्यामको कहते हैं:---जो कोइ मजझ उवधी सब्भंतरयाहिरो य हवे।

आहारं च सरीरं जावाजीवं य वोसरे ॥ ११४॥ यः कथित मम उपधिः साभ्यंतरवाराथ भवेत् ॥ आहारं च शरीरं यावजीवं च न्युत्स्त्रज्ञामि ॥ ११४ ॥ अर्थ-जो बुछ मेरे आम्यंतर बाब परिमह है उसे तथा चारों

प्रकारके आहारोंको और अपने दारीरको जनतक जीवन है तब-तक छोड़ता हूं। यही उत्तमार्थ त्याग है ॥ ११४ ॥

आगे आगमकी महिमा देखकर जिसको हुई हुआ है ऐसा क्षपक इसमकार नमस्कार करता है;---

जिन्ह्य टीणा जीवा तरंति संसारसायरमणंतं। तं सप्यजीवसरणं णंदङ जिणसासणं सुइरं ॥ ११५ ॥ यम्पिन रहीना जीवाः तरंति संसारसागरं अनंतं । तत् सर्वजीवशरणं नंदतु जिनशासनं सुचिरं ॥ ११५ ॥

अर्थ--जिस जिनशासमें ठीन हुए, जीव अपार, पंचपरावर्त-नरूपसंसार-समदको तर जाते हैं ऐसा सब जीवोंका सहायक केवलीशुतकेवलीकथित आगम सनकाल दृद्धिको माप्त होवो॥ भावार्थ-जिसके अनुष्टानसे भोग और द्वकि मिले यही नमस्कार करने योग्य होता है ॥ ११५ ॥

आगे आराधनाके फलके लिये कहते हैं;-

जा गदी अरिहंताणं णिट्टिदहाण जा गदी ।

मुलाचार-

जा गदी वीदमोहाणं सामे भवदु सञ्बदा ॥ ११६ ॥ या गतिः अईतां निष्टितार्थानां या गतिः । या गतिः वीतमीहानां सा मे भवतु सर्वदा॥ ११६॥

48

अर्थ-जो अरहंतोंकी गति है, जो सिद्धोंकी गति है, जो वीतरागछद्मस्योंकी गति है वही गति सर्वदा (हमेशा) मेरी भी हो । यही आराधनाका फल चाहता हूं अन्य नहीं ॥ ११६॥

जागे उत्तमार्थ त्यागका फल कहते हैं:--एगं पंडियमरणं छिंददि जादीसदाणि बहुगाणि। तं मरणं मरिदव्वं जेण मदं सुम्मदं होदि ॥ ११७॥

एकं पंडितमरणं छिनचि जातिशतानि बहनि । तन्मरणेन मर्तव्यं येन मृतं समृतं भवति ॥ ११७ ॥ अर्थ---एक भी पंडितमरण सैकडों जन्मोंका छेदनेवाला है, इसलिये ऐसा मरण करना चाहिये जिससे कि मरना अच्छा मरण कहलावे अर्थात् फिर जन्म नहीं धारण करना पडे ॥११७॥

आगे मरणकालमें समाधिधारणका फल कहते हैं;-एगम्हिय भवगहणे समाहिमरणं लहिज्ञ जदि जीवो।

सत्तहभवग्गहणे णिव्वाणमणुत्तरं उहदि ॥ ११८॥ एकसिन् भवब्रहणे समाधिमरणं लभते यदि जीवः । सप्ताष्टभवब्रहणे निर्वाणमञ्जूषं समते ॥ ११८ ॥

अर्थ-- जो यह जीव एक ही पर्यायमें संन्यास मरणको आस हो जाय तो सात आठ पर्यायें बीत जानेपर अवस्य मोशको पाता है ॥ ११८ ॥ यहां मावर्डिगीकेलिये ही कहागया है । थागे इसिरके होनेसे ही जन्ममरणादि दःस होते हैं

પુષ્

इसिटिये समाधि मरणकर इस शरीरका त्याग करना ऐमा कहते हैं;—

णित्य भयं भरणसमं जम्मणसमयं ण विज्ञदे दृष्यं । जम्मणमरणार्दकं छिदि ममित्त सरीरादो ॥ ११९ ॥

नानि भर्ष मरणसमं जन्मगमं न विवते दुःगं । जन्ममरणातंकं छिपि ममत्वं छरीरतः ॥ ११९ ॥ अर्थ—इस जीवके सुखुके समान क्षत्र कोर्र भव गर्दी है और जनमेक् समान कोई दुःख नहीं है इस्टिये जन्मसणस्य

महान् रोगको छेद हाल । उस रोगका मूलकारण नारीसी ममना करना है। इसलिये संन्यासाविधिकर ममता छोड्नेसे जन्मसरण-रूप महान रोग गिट जाता हैं॥ ११९॥

आगं आराधनामें फरे हुए तीन मतिक्रमण इस संक्षेत्रकान्यें ही संभवते हैं ऐसा फहते हैं:—

हा समवत ह एमा कहत ह;—

पदमं सन्यदित्यारं यिदियं तिविहं हमें परिवासणं ।

पाणस्स परिचयणं जायाजीतुलामट्टं प ॥ १९०॥

प्रथमं सर्वातिचारं दितीयं तिविधं सर्वेद प्रतिक्रमणं ।

अयम नेपानाना है होता के नाम के पद नातकना । पानस परिस्तानने पातकीयमुम्मार्भिया । १२० ॥ अर्थ—पट्टा भी मर्थातीचार मतिकमण है अर्थान् दौशा-प्रदल्ती हेकर सब नवधरणके कालतक जो दौर रागे हो उनकी द्याद करना, दूसरा विविध मनिकमण है यह अरुके विना सीन-

प्रकारके आंदारका त्याग करतेमें जो अंदीकार रूने ये उनका क्षोपन करना और तीतरा उचनार्थ प्रतिकरण है उनमें जीवन- 45

पर्यंत जलपीने हा त्याग कियाया उसके दोगों ही शुद्धि करना है। यही मतिक्रमण मोज्ञका कारण है ॥ १२० ॥

आगे योग इंद्रिय शरीर कपाय हम्न पाद इनका भी मिनिक-मण फहागया है:--

पंचिव इंदियमुंहा यचधुंहा हत्थपायमणमुंहा। तणुसुंडेण य सहिया दस सुंडा वण्णिदा समग् ॥१२१ पंचापि इंद्रियमुंडा बाग्मुंडी हम्तपादमनोगुंडाः ।

तनुमुंडेन च सहिता द्य मुंडा वर्णिता ममये ॥ १२१ ॥ अर्थ-पांची इंदियोंका मंद्रन अर्थात् अपने २ विपर्योंमें व्यापारका छुडाना, जैसे स्पर्शमें व्यापारका रोकना सर्शनेदिय मुंड हें इत्यादि; विना अवसर विना प्रयोजन यचन नहीं बोलना

वह वचन मंड, हायकी कचेष्टा नहीं करना वह हस्त्रमंड, पैरोंकी बुरीतरह संकोच व फैटानेहर न करना वह पादमुंड, मनमें सोटा र्नितवन नहीं फरना यह मनोमुंड और शरीरकी कुवेष्टा नहीं करना वह द्यरीरमुंड है--इसनकार दश मुंड जिनागममें वर्णन किये गये हैं॥ १२१॥

इसमकार आचार्यश्रीयहकेरिविरचित मृलाचारकी भाषाटीकामें संक्षेपतरप्रत्याख्याननामा तीसराअधिकार समाप्तहथा ॥ ३ ॥

समाचाराधिकार ॥ १ ॥

भागे आयु वज रहनेपर जिसके आतीचारतित मृत्युणीका निर्याद होता है उसकी महाच चतलानेक चीचा समाचार नामा अधिकार नमस्कारपूर्वक कहते हैं;—
तेल्डोकागुज्जणीए अरहेते चेंदि जण तिबिहेण ।
वोच्छे सामाचार समाचार से आणुपुरुषीए ॥ १२२ ॥
विलोकपूजनीयान् अहतः चेंदिन्या विविधन ।
वस्ये सामाचारं समाचत आगुपूर्व्या ॥ १२२ ॥
अर्थ—मयनवासीआयुर मनुष्यं देय—त तीनोकर बंदने योग्य
ऐसे अर्द्ध समावानेक मनवचनकारों स्थादन (बहतेर)

राहेषसे पूर्व अनुक्रमधर समाचार अधिकार धहुँगा ॥ १२२ ॥ आगे समाचार राज्यकी चारमकारसे निर्दोक धटते हैं;— समदा सामाचारी सम्माचारो समो य आचारो । सर्व्योम हि समार्च सामाचारो हु आचारो ॥ १२३ ॥

समना नमापारः सम्मापारः समी पा आपारः ।
सर्वेवां हि समानां समापारम् आपारः ॥ १२६ ॥
अर्थ—सम द्वेवक अभावरूप समनापर दे वह समापार है,
अथवा सम्मद्र अर्थाद्य समनापर दे वह समापार है,
अथवा सम्मद्र अर्थाद्य स्ति औ मृत्युण्योक्ष अञ्चानआपरण यह समापार है, अथवा ममनादि समस्त द्वतिचीका
समान अदिसादिक्य आवार यह समापार है, अथवा सब रेश्वीने
समाव होतादिक्य स्ति सम्मद्र स्ति समस्त अवस्य सह
समापार है। १२६ ॥

अब समाचारके भेद कहते हैं;---दुविहो सामाचारो ओघोविय पद्यविभागिओ चेव।

दसहा ओपो भणिओ अणेगहा पद्यविभागी य १२४ डिविध समाचार आधिकः पद्यमागिकथैव ।

दशघा औषिको मणित अनेकथा पद्विमागी च ॥१२४॥ अर्थ-समाचार अर्थात् सम्यक् आवरण दोडी पदार है-ऑपिक, पदविभागिक । ओधिकके दश भेद हैं और पदिना-

गिक समाचार अनेक तरहका है ॥ १२४ ॥ जीधिक समाचारके दश भेद कहते हैं:-इच्छामिच्छाकारो तथाकारो यं आसिआ णिसिही।

आपुच्छा पडिपुच्छा छंद्रण सणिमंतणा य उपसंपारेन्द इच्छामिध्याकारी तथाकारः च आसिका निपेषिका । आपृच्छा प्रतिप्रच्छा छंदनं सनिमंत्रणा च उपसंपत् ॥१२५

अर्थ-इच्छाकार, मिथ्याकार, तथाकार, आसिका, निपे-धिका, आप्रच्छा, प्रतिष्टच्छा, छंदन, सनिमंत्रणा और अपसंपन्-इसतरह ये जीधिक समाचारके दशमेद हैं॥ १२५॥

आगे इनका विषय तीन गाथाओंमें कहते हैं;— इट्टे इच्छाकारो मिच्छाकारो तहेव अवराधे। पुंडिसुणणह्मि तहत्ति य णिग्ममणे आसिया मणिया॥ पविसंते अ णिसीही आपुच्छणिया सकज्जआरंभे।

साधिमणा य गुरुणा पुन्यणिसिङ्क्षि पडिपुच्छा१२७ छंदण गहिदे दब्वे अगिहदद्बे णिमंतणा भणिदा। तुह्ममहत्ति गुरुकुले आदणिसम्गो दु उवसंपा॥ १२८

सम्पातावस्तर ४। पद् इष्टे इन्छाकारी मिश्याकारः नर्यत्र अपराधे । प्रतिअवेश नर्धनि च निर्ममने आगिका मणिता ॥१२६ ॥ प्रविद्यति च निर्मेषका आगुन्छनीयं न्यकार्यारंके । एर्यन् मुर्गोन पूर्वेनिन्नुष्टे प्रतिष्टन्छा ॥ १०० ॥ एर्यन् मुर्गोन प्रत्ये अगुरीनगुन्ये निर्मेषणा मणिता । युप्पानं अद्मिनि गुनकुने आन्यनिनर्गन्तु उपर्गयन् ॥१२८ अर्थ—सम्बद्धनीत गुनकुने आन्यनिनर्गन्तु उपर्गयन् ॥१२८

अर्थे —सम्बद्धेना है शुक्रपरिणान वा नगरिक गुम्परिणानीत दर्व होना अपनी रूक्षमें मर्बन्ता वह रूक्ष्मकार है। मनाहने अतीचार होनेह्प अगुम परिणानीमें काय चनन मनकी हिंदूत करना निष्यामध्य करना वह मिध्याकार है। एक्के अर्थ मरक करनेमें अना आमने कहा है भी ही है रायकार मीरियाहन

'तथित' कहना यह तथाकार है। रहनेथी जगहमे निकलने समय देवना गृहस्य आदिमें पृष्ठकर ममन करना अथवा पापित-यादिकसे मनको रोकना यह आदिका है। नचीन स्थाने मध्यः करते (पुगते) ममय बराकि रहनेवालीको पृष्टकर समेवा करना अथवा सम्बद्धीनादिने जियमाव यह निधिका है। अपने एटनादि कार्यके आदेश करनेनी गृह आदिकको पैटनापूर्वक क्षा

पटनादि वार्षिक आरंभ करनेमें गुर आदिवकों संदनापूर्वक प्रश्न वर आष्ट्रका है। स्थान धर्मकार साध्यों सभा दीरापुर्व आदि गुरु दन दोनीमें पटने दिने हुए पुरुवादि उपकरनेकों किर रोनेक अभिवादमें पुनना बद प्रशिक्षण है। स्टब्स दिने पुरुवादि उपवर्षों हो देनेपानेक अभिवादकों अनुकृत रसना बद प्रदेश है। तथा नदी पिने हुए अन्य दसको प्रश्नेकार होते समार पूर्वक प्राचना असन्न दिन्तकों रहता वद निर्मेवण है। Ęο'

सीर गुरुकुत्रमें (आसायमें) मैं आपका हूं ऐसा कहदर उनके

अनुकुल आवरण करना वह उपसंपन् है । ऐसे दश मकार जीपिक समाचार कदा ॥ १२६।१२७।१२८॥

कहा है ॥ १३०॥

कहते हैं;---

ओवियमामाचारो एसो भणिदो ह दसविहो लेओ।

अव पदिनागिक समानार कड़नेकी प्रतिज्ञा करते हैं:--

एत्तो य पद्रविभागी समासदो वण्णहस्सामि॥१२९॥

आधिकममाचारः एपः मणितः हि दस्रविधी जेपः ।

इतय पद्विमागी समामतः वर्णयिष्यामि ॥ १२९ ॥ अर्थ-यह अधिकसमाचार संक्षेपसे दशमकार कहा हुआ जानना, अत्र पद्विभागी समाचारको संक्षेपसे कहूंगा ॥ १२९ ॥ उग्गमसुरप्पहुदी समणाहीरत्तमंडले कसिणे। जं अगरंति सददं एसो भणिदो पद्विभागी ॥१३०॥ उद्गमस्त्रभूती श्रमणा अहीरात्रमंडले कत्स्ने । यदाचरंति सततं एप भणितः पदविभागी ॥ १३० ॥ अर्थ-- जिस समय सूर्य उदय होता है वहांसे लेकर समस्त दिनरातकी परिपाटीमें मुनिमहाराज नियमादिकोंको निरंतर आचरण करे सो यह प्रत्यक्षरूप पदविभागी समाचार जिनेंद्रदेवने

आगे औषिकके दश भेदोंका सहस्प कहते हुए इच्छाकारको

संजमणाणुवकरणे अण्णुवकरणे च जायणे अण्णे। जोगगगहणादीसु अ इच्छाकारो दु कादच्वो ॥१३१॥ संयमज्ञानीयकरणे अन्योपकरणे च याचने अन्ये ।

योगप्रहणादिपु च इच्छाकारस्तु कर्तव्यः ॥ १३१ ॥ अर्थ-संयमके पीछी आदि उपकरणोंमें तथा श्रुतशानके पुरुष आदि उपकरणोंमें और अन्य भी तप आदिके कमंडल आहारादि उपकरणोंमें, औपघादिमें, उप्णकाटादिमें आतापन आदि योगोंमें इच्छाकार करना अर्थात् मनको ही प्रवर्ताना॥१३१॥

आगे निय्यादारका सरूप दहते हैं:-जं दुक्कडं तु मिच्छा तं णेच्छदि दुक्कडं पुणी कार्दु । भावेण य पडिकंतो तस्स भवे दुधाई मिच्छा ॥१३२॥

यद दुष्कृतं तु मिथ्या तन् नेच्छति दुष्कृतं पुनः कर्तुं। भावेन च प्रतिकांतः तस्य भवेत दुष्कृते मिथ्या ॥१३२॥

अर्थ-जो नतादिकमें अतीचाररूप पाप मेने किया हो यह मिथ्या होने ऐसे मिथ्या किये हुए पापको पित करनेकी इच्छा नहीं करता और मनव्य अंतरेय भावसे प्रतिक्रमण करता है उसीके टुप्कृतमें मिथ्याकार होता है॥ १३२॥ जागे तथाकारका खरूप कहते हैं:---

यायणपडिच्छणाए उयदेसे सुराअत्थकहणाए ।

अवितहमेद्दि पुणी पटिच्छणाए तथाकारी ॥१३३॥ वाचनाप्रतिच्छायायामुपदेने ध्त्रार्थकथने ।

अवितथमेतदिति पुनः प्रतीच्छायायां तथाकारः ॥१३३॥ अर्थ-जीवादिकके व्यार्यानका मनना, सिद्धांतका अवण, परंपरासे चटा आया मंत्रतंत्रादिका उपदेश और सुत्रादिका अर्थ-इनमें जो अर्दत देवने वटा है सो सत्य है ऐसा समझना वह

तथाकार है ॥ १३३ ॥

आगे निवेधिका व आसिकाको कहते हैं;— कंदरपुष्टिणग्रहादिस्र पवेसकाले णिसिद्धिअं कुद्धा। तेहिंतो णिग्गमणे तहासिया होदि कायव्वा॥१३४॥

ताहता राजनामण तहासिया हारि कायन्वा ॥ (२४॥ कंदरपुटिनगुफादिए प्रवेशकारे नियेषिकां कुर्यात् । तेण्यो निर्ममन तथा जासका मनति कर्तन्य ॥ (२४॥ ॥

तम्या निगमन तथा आधिका मचात कृतन्या ॥ १२४ ॥
अर्थ-जनकर निदारे हुए प्रदेशरूप फंदर, जनके मध्यमे
जन्महिन मदशरूप पुलिन, प्रयेनके प्रमारेके छेदरूप गुफा
इत्यादि निजेतुक स्मानोम प्रयेग करनेके समय निपेषिका करें ॥

और निकलनेक समय आसिका करे ॥ १३४ ॥ आगे मश्र फैसे खानपर करना उसे कहते हैं;—

आदावणादिगहणे सण्णा उच्मामगादिगमणे वा । विणयेणायरियादिसु आधुच्छा होदि कायव्वा॥१३५॥ आतापनादिग्रहणे संज्ञायां उद्धामकादिगमने वा । विनयेनाचायादियु आष्ट्छा भवति कर्तव्या ॥ १३५॥

विनयनीचायाद्यु आष्ट्रच्छा भवति कतस्या ॥ १२५ ॥
अध्ये—व्रतपूर्वक उच्चका सहनारूप आतापनादि महणमें,
आधारादिकी इच्छामें तथा अन्य मागदिकको जानेमें नमस्कार
पूर्वक आवार्यादिकोंको पूछना उनके कहे अनुसार करना यह
आध्रप्टण है ॥ १३५॥ "
आगे मतिष्टच्छाडो कहते हैं;—

लं किंचि महाकल्लं करणीयं पुच्छिजण गुरुआदि। पुणरिष पुच्छिद साधुं नं जाणसु होदि परिपुच्छा?३६ यह विचित्र महाहार्य करणीयं गणा गर्वोतीत।

यत् किचित् महाकार्यं करणीयं दृष्टा गुर्वादीत् । युनरपि एच्छति साधून् तत् जानीदि मवति प्रतिपुच्छा १३६

अर्थ--जो कुछ महान कार्य हो वह गुरु भवर्तक स्थिविरा-दिक्से पछकर करना चाहिये उसकार्यके करनेलिये दसरीवार उनसे तथा अन्य साधमी साधुओंसे पृछना वह प्रतिष्टच्छा है ऐसा जानना ॥ १३६ ॥

आगे छंदनको कहते हैं:---

गहिद्वकरणे विणए वंदणसुत्तत्थपुच्छणादीसु । गणपरवसमादीणं अणुवुत्तिं छंदणिच्छाए ॥ १३७ ॥

गृहीतोपकरण विनये वंदनासूत्रार्थप्रशादित ।

गणधरवृपभादीनामनुवृत्तिः छंदनमिन्छया ॥ १३७ ॥ अर्थ-- जाचार्यादिकोंकर दिये गये पुस्तकादिक उपकरणोंने, विनयके कारुमें, बंदना—सूत्रके अर्थको पूछना इत्यादिकमें आचार्यादिकीकी इच्छाके अनुकृत आचारण वह छंदन है॥१३०॥

आगे नीमे निमंत्रणा स्त्रको फहते हैं;-

गुरुसाहस्मियद्व्वं पोत्थयमण्णं च गेणिहदुं इच्छे । तेसि विणयेण पुणो णिमंत्रणा होइ कायव्या ॥१३८॥

गुरुसाधर्मिकद्रव्यं पुस्तकमन्यच गृहीतुं इच्छेत् । तेपां विनयेन पुनर्निमंत्रणा भवति कर्तव्या ॥ १३८ ॥

अर्ध--गुरु अथवा साधर्भीके पुलक व कमंडल, आदि द्रव्यको हेना चाहे तो उनसे नम्रीमृत होकर याचना करे । उसे निमंत्रणा

कहते हैं ॥ १३८॥

अव उपसपत्के भेद कहते हैं;---उचसंपचा य णेया पंचविहा जिणवरिह णिदिहा। विणए खेती मार्गे सुहदुवले चेप सुत्ते प ॥ १३९ ॥ .

उपसंपत् च झेया पंचविधा जिनवरः निर्दिष्टा । विनये क्षेत्रे मार्गे सुखदुःखे चव सत्रे च ॥ १३९ ॥

अर्थ-गुरुजनोंके लिये में आपका हूं ऐसा आत्मसमर्पण वह उपसंपत् हैं । उसको पांचमकार विनयमें, क्षेत्रमें, मार्गिमें, मुख

दुःखर्मे, और सूत्रमें करना चाहिये ॥ १३९ ॥ आगे प्रथम विनयमें उपसंपत्को कहते हैं;—

पाहुणविणडचचारो तेसिं चावास भूमिसंपुच्छा । दाणाणुवस्तणादी विणये उवसंपया णेया ॥ १४० ॥

प्रापूर्णिकविनयोपचारी तेषां चावासभूमिसंप्रच्छा । दानानुवर्तनादयः विनये उपसंपत् झेषा ॥ १४० ॥ अर्थ—अन्यसंघके आये हुए मुनियोका अंगर्वत भियवच-नरूप विनय करना, आसनादिष्द बैठाना इत्यादि उपचार करना, गुरुके विराजनेका स्थान पूछना, आगमनका राखा पूछना, संसर

पुसक भादि उपकरणोंका देना और उनके अनुकूछ आवरणादिक करना वह विनयोपसंपत् है ॥ १४० ॥ आगे क्षेत्रोपसंपत्को कहते हैं;— संजमतवग्रणसीला जमणियमादी य जिह्य खेराछि। !

घट्टंति तक्षि वासो खेरो उवसंपया णेया ॥ १४१ ॥ संयमतपोगुणझीला यमनियमादयथ यसिन् क्षेत्रे । वर्षने तसिन् वासः क्षेत्रे उपसंपत् शेया ॥ १४१ ॥

वर्षते तसिन् वासः क्षेत्रे उपसंपत् शेषा ॥ १४१ ॥ अर्थ-संबग्ध तप उपशामादि गुण व वतरशारूप शील तथा) शीवनपर्यंत त्यागरूप यम, कालके नियमसे त्याग करनेरूप नियम इत्यादिक जिस स्वानमें रहनेसे बढें उत्हृष्ट हों उस क्षेत्रमें रहना वह क्षेत्रोपसंपत् हैं ॥ १४१ ॥

आगे मार्गोपसंपत्को फूहते हैं;---

पाहुणवत्थवाणं अण्णोण्णागमणगमणसृहपुच्छा । उयसंपदा य मग्गे संजमतवणाणजोगजुत्ताणं १४२

पादोप्णवास्तव्यानामन्योन्यागमनगमनसुराप्रश्नः । उपसंपत् च मार्गे संयमतपोज्ञानयोगयुक्तानाम् ॥ १४२ ॥

जर्ध—अन्य संपके आये हुए मृति तथा अवने स्थानसं रहनेवाले मृतियोरी आपसमं आने आनेके विषयमं कृताब्हा पूछना कि ' आनंदर्स आये व सुरारी पहुंच' रसतरह पूछना यह संयमतपद्मानयोग-पूर्णोकर सहित मृतिराज्ञीके मार्गोपरायन् दोता है।। १४२।

थागे मुखदुःसोपसंपत्को कहते हैं,—

सुरृदुषन्वे उपयारो यसहीआहारभेसजादीहि । तुद्धं अहंति ययणं सुरृदुक्ख्यमंत्रया णेया ॥ रे४३ ॥ सुरुदुःसयोः उपचारो यमतिआहारभेषजादिभिः ।

पुष्पाकं अहं इति यचनं सुमदुःशोषसंपद् सेया ॥ १४३ ॥ अर्थ—सुस दुःस सुक्त पुरुगोको बसतिका आहार जीपि आदिकर उपपार (सुक्षी) करना अर्थात् शिष्पादिका स्पा-होनेयर कांड्र आदि तेना स्वाधिक पीडिक हुए को सुक्तर्य सीनेका स्थान बेटनेवा स्थान कताना, जीपभ अस्यान निवनेका प्रकार कनाम धीन करना स्थान मुक्ता हुं आप आहा करें यह करूं मेरे पुस्तक शिष्यादि आपके ही हैं ऐसा यनन कहना यह सुलदु:सोपर्सपत् हैं ॥ १४३ ॥

आगे गुत्रोपसंपन्का सरूप कहते हैं;— उचसंपया य सुरो तिविहा सुरान्यनदुभया चेय ।

उचसप्पा य सुत्त । ताबहा सुत्तन्थ्यनुस्पा चय । एकेका वि य तिविहा छोड्य बेटे तहा समये ॥१४४॥ उपसंपत् च यते विविद्या ग्रायांवदुसपा चव । एकेकापि च विविद्या लाकिके बेटे तथा समये ॥ १४४॥

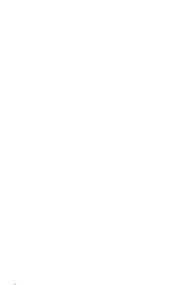
लिये यज्ञकरना सूत्रीपसंपत्, अर्थके लिये यज्ञ अर्थोपसंपत्, दो-मोके लिये यज्ञकरना बह स्वाधीपसंपत् है। यह एक एक भी तीन तरह है —शैक्कि वेदिक सामायिक। इसमकार नी भेद हैं।। व्याकरण गणित आदि लैकिक द्यास हैं, तिद्धांत शास धैदिक कहे जाते हैं, स्याह्याद्वायायास व अध्यास्यात सामायिक

अर्थ-स्त्रोपसंपन्के तीन मेद हैं सूत्र अर्थ तरुमय । सूत्रके

शास्त्र जानना ॥ १९४ ॥ आगे पदविभागिक समाचारको कहते हैं;— कोई सव्यसमत्थो सगुरुसुदं सब्य आगमित्ताण ।

विजापणुवकमित्ता पुच्छड् सगुर्क पयत्तेण ॥ १४५ ॥ कथित सर्वसमर्थः स्वगुरुशुर्त सर्वमनगम्य । विनयेनीपकम्य पुच्छति स्वगुरु प्रयत्नेन ॥ १४५ ॥

अर्थ—मीर्य भेथे विचायन उत्साह आदिसे समये कोई द्विन-राज अपने गुरुसे सीरो हुए सब शाखोंको जानकर मनवचनकाय-से विनय सहित प्रणाम करके प्रमादरहित हुआ पूछे-आज्ञा मागे वह पदिनुभाषिक समाचार है ॥ १९५ ॥



मुलाचार--

६८

एक निहारी देशांतरमें जाकर चारित्रका अनुष्ठान करता है। दूसरा अगृहीतार्थ है वह जानकर मुनिके साथ रहता है। इन

दोनोंसे अन्य तीसरा विहार जिनेंद्रदेवने नहीं कहा है ॥१४८॥

एकाकी क्यानि नहीं होसकता ॥ १५० ॥

पविआआगमयलिओ एयविहारी अणुण्णादो॥१४९॥ तपः सत्रसन्त्रेकत्वभावसंहननप्रतिसमग्रथ ।

आगे एकविहारीका सरूप कहते हैं:---

अर्थ--तप आगम शरीरवल, अपने आत्मामें ही मेम, शुभ परिणाम, उत्तम संहनन और मनका यह क्षथा आदि न होना-इन गुणोंकर संयुक्त हो तथा तपकर व आचार सिद्धातोंकर बहुवान् हो अर्थात् चतुर हो वह एक विहारी साधु कहा गया है ॥१४९॥ परंतु एकिनहारी ऐसा न हो. यह कहते हैं;--सच्छंद्रगद्रागदस्यणणिसियणादाणभित्रग्योसर्णे। मञ्जंदजंपरोचि य मा मे सत्त्वि एगागी ॥ १५० ॥ स्यच्छंदगनागतिशयननिपीदनादानिभशान्युरमर्गीः । सन्छंदतन्पर्विध मा मे शत्रुखेकाकी ॥ १५० ॥ अर्थ-मोना बेटना महण करना भोजन हेना मरुत्याग करना इत्यादि कार्योक समय जिसका सच्छंद गमन आगमन है सथा स्वेच्छाने ही जिना अवगर बोलनेमें प्रेम रमनेवाल पेगा प्रकाश (अकेटा) मेरा देश भी न हो। मावार्थ-पेगा सर्व्यं शिन

तवसुत्तसत्तरगत्तभावसंघडणधिदिसमग्गो य ।

प्रवच्यागमवली एकविहारी अनुवातः ॥ १४९ ॥

आगे ऐसा एकाकी विहार करें तो इतने दोप होते हैं ऐसा पहते हैं;─ गुरुपरिवादो सुदवोछेदो तित्थस्स मइलणा जहदा। भॅभटक्सीटपासत्थदा य उस्सारकपम्हि ॥ १५१ ॥

गुरुपरिवादः श्रुवच्युच्छेदः तीर्थस महिनत्वं बहता । विद्वलक्कशीलपार्थस्थता च उत्सारकल्पे ॥ १५१ ॥ अर्थ-गणको छोड़ अकेले विहार करनेमें इतने दोप होते

हें—दीक्षादेनेवाले गुरूकी निंदा, श्रुतका विनाश, जिनशासनर्मे फलंफ लगाना कि सब साधु पैसे ही होंगे, मूर्खता, विद्वलता, क्षतीलपना, पार्थस्पता, ये अष्ट मुनियोंके भेद हैं इनकी कहेंगे ॥ १५१ ॥

आगे कहते हैं कि ये दोष तो होते ही हैं परंतु अपनेको भी विपत्ति होती है:---कंटयम्बण्युयपडिणियसाणागेणादिसप्पमेच्छेहिं । पायह आदवियत्ती विसेण व विसहधा चेव ॥ १५२॥

कंटकत्याणुप्रत्यनीकथगवादिसपैम्लेर्डः । प्राप्तोति आत्मविपत्ति विषेण वा विद्युचिकवा चवा।१५२॥

अर्थ-जो खच्छंद बिहार करता है वह काटे, स्थाणु (इंड), क्रोपसे आमे हुए कुछे बैठ आदिकर तथा सर्प, ग्रेच्छ, त्रिप, अजीर्ण-इनकर अपने भरणको व दुःखको पाता है ॥१५२॥

बह दूसरेको भी नहीं चाहता ऐसा कहते हैं:---गारविओ गिदीओ माइहो अलसलुद्रणिद्रम्मो। गच्छेवि संवसंतो णेच्छइ संघाटयं मंदो ॥ १५३॥ गौरविको गृद्धिको मायात्री अलसङ्घ्यनिर्धर्मः । गच्छेपि संवसन् नेच्छति संघाटकं मंदः ॥ १५३ ॥

अर्थ- जो मुनि शिथिलाचारी है वह रिद्धि लादि गौरव-बाल, भोगोंकी इच्छा करनेवाला, कुटिल समावी, उदाम रहिन,

बाजा, भागाका इच्छा करनवाला, कुाटल समाया, उदाम राहर, लोमी, पापचुद्धि हुआ मुनिसमूहमें रहकर भी दूसरेको नहीं ब्याहता। तीन पुरुषेकि समूहको गण तथा सात पुरुषेके समूहको गच्छ जानना॥ १५३॥

आगे सच्छंदीके अन्य मी पापसान वतलते हैं;— आणा अणवत्या विच मिच्छत्ताराहणादणासो च । संज्यातिसङ्ख्याति स एवं ह जिल्हादम् रुख्या ॥१४४॥

संजमितराहणावि य एदे दु णिकाइया ठाणा ॥१५४॥ आज्ञाकोपः अनवस्थापि च मिथ्यात्वाराधनात्मनाग्नथ ।

संयमिवराधनापि च एते तु णिकाचितानि स्थानानि॥१५४ अर्थ-- नो एकाकी सच्छंद विहार करता है उसके आज्ञाकोप, जतिप्रसंग, गिय्यालकी आरापना, अपने सन्यग्दर्स-

नादिगुणोंका वा कार्यका घात, संयमका घात-ये पांच पापस्थान अवस्य होते हैं ॥ १५४ ॥ आने कहते हैं कि जहां आधारमृत आचार्यादि न हों वहां

न ठहरे;— तत्थ ण कप्पइ वासो जत्थ इमे णत्थि पंच आघारा । आइरियउवज्झाया पवत्त्रथेरा गणधरा य ॥ १५५ ॥

जाहार विचयन विकास क्यों न संति पंच आधाराः । जाचार्वीपाच्याचाः प्रवर्षेक् स्वितः गणधाराः ॥ १५५ ॥ अर्थ—ऐसे गुरुकुर्लो रहना टीक नहीं है कि वहां साधारी गणपर-चे पांच गुनिसब संपक्ते आधारम्बन महीं ॥ २५६ ॥ आसे इन पांचीका लक्षण कहने हैं— सिरस्साणुरमहणुरसकी धम्सुबहेसी य संस्थवहण्यों ।

ातरसातुर्वारकु.स्टा यन्ध्रवट्टमा य संगवट्टमा १ मञ्जादुर्वदेसीवि य गणपरित्रवन्त्रो गुणेग्रव्दी ॥ १८६॥ चिप्यानुप्रस्कुणनः पर्मापदेशक्य संपन्नवर्ततः । मुर्वादीपदेशकोपि य गणपरित्रः ज्ञानव्दः ॥ १८६॥

मर्यादीपदेशकीयि च गायपिनका झानव्या श १०६ ॥ अर्थ-जो बीलादिका शास्त्रोक उपवार व नेते में बतुर हो वह आधार्य है, जो धर्मवा उपवेश दे शास्त्र वहांवे वह उपयापक है, जो पर्या आदिव संपादा उपवार कर प्रकारिक है जो संपत्री विकास मार्थिक प्रवेश है जो संपत्री स्था विकास मार्थिक प्रवेश है जो संपत्री स्था वर्ष कर सम्पर जानवा ॥ १५६ ॥

जानना ॥ १५६ ॥ आने कटते हैं कि चटते हुए मार्गमें जो गिले उसे अन्य यंके पास रिजाय:—

को नेजंतररुद्धं गयिसाथिसमिस्सर्यं दृष्यं । नस्स प को आहरिजो जस्मिद् एदेगुको सोवि १५५ यद् नेनोतररुपं गयिसादिचमिश्रकं हुग्यं ।

यत् नेतानगरान्यं सदिवासियानिभक्तं हार्यं । नायं य न आयायं अर्दातं एवंगुणारं सोदि ॥ १५० ॥ अप्तेनत् पुन्तकं नायं नायीं विष्यादेव पेतन्तं १८०० ॥ अप्तेनत् पुन्तकं सदितं विषयोदे पर्दायं तिक अप्तातं से अप्ते वृद्धे आरोदे गुणीरणः कार्यायं है। उत्तरान्यं में मेण्य हैं अप्तेव दुनावे आयादेदे नागैद रिजावे ॥ १५० ॥ છર

अब आचार्यके गुणोंको कहते हैं:---संगहणुग्गहकुसलो सत्तत्थविसारओ पहिचकित्ती । किरिआचरणसुजुत्तो गाह्यआदेजवयणो य ॥ १५८॥ संप्रहानुप्रहकुशलः स्त्रार्थविशारदः प्रथितकीर्तिः ।

कियाचरणसुयुक्तो ग्राह्मादेयवचनश्च ॥ १५८ ॥ अर्थ-दीशदेकर अपना करनारूप संग्रह य शासादिसे संस्काररूप अनुमह इन दोनोंमें चतुर हो, सिद्धांतके अर्थ जाननेमें

अतिमयीण हो, जिसकी कीर्ति (गुण) सब जगह फैल रही हो, पंच नमस्कार छह आवश्यक आसिका निपेधिका रूप तेरहिकिया तथा महात्रतादि तेरहपकार चारित्रकर युक्त हो जोर जिसका वचन सुनने मात्र ही सब महण करें-ऐसे गुणौबाला आचार्य कहा है ॥ १५८॥

लिदिससिमायरसरिमो कमेण तं सो दु संपत्तो १५९ गंमीरो दुर्धर्षः घरः धर्मत्रभावनाज्ञीलः । थिनिश्वशियागरमद्याः क्रमेण तं म त संप्राप्तः ॥ १५९ ॥ अर्थे—ओ क्षोमरहित अयाह गुणीयाना हो, जिनका अनारर

गंभीरो दुद्धरिमो सूरो धम्मप्पभावणासीलो।

परवादी न करसकें, कार्य करनेमें समर्थ हो, दानतपादिक अति-शयमें धर्म प्रभावना करनेवाला हो, क्षमा शांति निर्मेलपनेमे प्रतीनंद्रमासमुद्रकीक समान हो-ऐसे गुणोबाहे आचार्यके पाम शिष्य जाते॥ १५९॥

थाने आये हुए शिष्यपुनिको देशकर दूतरे संपर्क क्या करें यह कहते हैं;—

आएमे एक्संत सहसा दहण मंजहा सन्य ।
यच्छाहाणासंग्रहणामणोहं सामुहंति ॥ १६० ॥
यापावेन आपर्यंत महमा रष्टा संवताः मर्वे ।
यापाव्यातासंग्रहणपानहेताः महाप्ति ॥ १६० ॥
यापाव्यातासंग्रहणपानहेताः महापृष्टि ॥ १६० ॥
यर्थ—विश्वन्दर अन्य संवते आवे हुए वहुणे द्वतिको
देशकर पीम ही गव संवती वागन्य (भेग), गर्वशाहा याच्न,
विश्वनिको अवना कृता, जार नगण्डार बन्गा—रम भवीजनोके निमिव उटकर महे होताय ॥ १६० ॥
पहुगमार्था दिन्या मस्पादं अपण्यापणपाम स ।
पाहुणवार्योगियादे तिरस्यामंतुष्टाणं कु.जा ॥ १६९ ॥

प्रस्कृतमनं कृत्या गारापदं अन्योग्यमणामं प । वादोष्णकरणीयकृते निरमसंग्रधं बुयान् ॥ १६१ ॥ अर्थे—सात घेट सम्प्रस्त जाकर वस्त्यर नगकाः वस्त्रं पादोष्ण निया करते हुए गुनि आये गुनिशं सम्यादोगादं त्रत्रकः यद्या मध्य करे आयोद् गुमारं स्वत्रय गुद्ध वस्त्रं है ॥ १६९ ॥ आयुरसस्य निर्मां जिपस्मा संचादकोतु व्याद्यस्य । जिरियासंभारादिस्त स्वत्यसम्परिवश्यणारेषु ॥ १६६ ॥ आयतस्य विरायं नियमान् संचादकृत् दानस्यः ।

शियागंत्रासादिय महवागयरीक्षणाहेतोः ॥ १६२ ॥ अर्थ—आर्थ हुए अन्य गंध्ये होन्छे साध्याय संतर्भ विका आदिवा स्थान बरुणांसेक्षिये साधा उनकी हुद्धणका स्परीका बरोबेक्षिये निधानी सहायक हुनि साध्ये स्टोनेको सीच दिस्स सरावक देवा बाहिये ॥ १६२ ॥

षागे परीक्षा करनेका अन्य उपाय भी बतलाते हैं:---आगंतुयवत्थव्या पडिलेहाहिं तु अण्णमण्णेहिं। अण्णोण्णकरणचरणं जाणणहेर्दुं परिक्खंति॥ १६३॥ आगंतुकवास्तव्याः प्रतिलेखनामिस्तु अन्योन्यामिः ।

अन्योन्यकरणचरणं ज्ञानहेतुं परीक्षंते ॥ १६३ ॥

अर्थ-अन्य संघके आये हुए मुनि तथा उसीसंघके रहनेवाले सनि आपसमें पीछी आदिसे की गई प्रतिलेखना किया, तेरह प्रकार करण चारित्रके जाननेके लिये परस्पर एक दूसरेको देसकर परीक्षा करें ॥ १६३ ॥

कीन २ स्थानोंने परीक्षाकरें यह कहते हैं;---आवासयठाणादिसु पहिलेहणवयणगहणणिवखेवे । सज्झाएम्मविहारे भिक्कमाहणे परिच्छंति ॥ १६४॥

आवस्यकस्थानादिष प्रतिलेखनवचनग्रहणनिक्षेपेष । स्वाध्याये एकविहारे भिक्षाग्रहणे परीक्षंते ॥ १६४ ॥ अर्थ-छह आवश्यक व कायोत्सर्गक्रियाओंने, पीठी शादिसे

शोधन किया, मापा बोलनेकी किया, पुसकादिके उठाने रखनेकी किया, साध्याय, एकाकी जानेआनेकी किया, निशामहणार्थ चर्मामार्गमें-इन सब स्थानोंमें परस्पर परीक्षा करें ॥ १६७ ॥ व्यव आये हुए मुनि भी परीक्षा कैसे करें उसकी रीति

वतराते हैं:---विस्मिमदो तदिवसं मीमंसित्ता जिवेदपदि गणिणे। विणएणागमकः विदिए तदिए व दिवसम्मि॥१६६॥ विश्रांतः तदिवसं मीमांगित्वा निवेदयति गणिने ।

विनयेनागमकार्य द्वितीये स्त्रीये या दिवसे ॥ १६५ ॥ अयं — आगंतुक मृति आनेके दिन मार्गका सेद छोड विधान है, उसके वाद आवार्यों प्रीशा कर वर्षात् उनका अद्यान ग्रान कावरण गुद्ध जान विनयसे दृतरे दिन व तीकरे दिन अपने आनेका प्रयोजन आजार्यको निवेदन करे अपवा आवार्यके शिन्य आगंतुक मृतिकी परीवाकर आजार्यको निवेदन करे अपवा आवार्यके शिन्य आगंतुक मृतिकी परीवाकर आजार्यको तिया उनके मयोजनको कहें ॥ १६५ ॥

आगे ऐसा निवेदन करनेसे आचार्य क्या करे उसे कहते हैं;-आगंतुकणामकुलं गुरुदिक्यामाणवरस्रवासं च । आगमणदिसासिक्यापदिकमणादी य गुरुपुच्छा १६६

अागंतुकनामकुछं गुरुदीक्षामानवर्षावासं च । अागंतुकनामकुछं गुरुदीक्षामानवर्षावासं च ।

आगतुकनामकुळं गुरुदीक्षामानवर्षावासं च । आगमनदिद्याशिक्षाप्रतिक्रमणादयथ गुरुपुच्छा ॥ १६६ ॥

आर्थ—आचाराधात्रक्रमणाद्वय गुरुपुरुष्ठा । द्वर ।।
आर्थ—आचार्य अन्यसंघसे आये हुए मुनिसे ये बात पूछे कि
दुमारा नाम व गुरुकी संतान वचा है, दीक्षांके देनेवारे आचार्य
कैसे हैं, दीक्षाको किये हुए कितना समय हुआ, वर्षाकाल (चीमासा) कहां विवासा, कौनसी दिशासे आये, कौन र से
शास पदे दी कौन र से सुने हैं, मतिक्रमण क्तिने हुए हैं।
आदि शबसे गुनको क्या पदना है कितनी दूरसे आये हो
इतादि जानना॥ १६६॥

उसका उत्तर वह भ्रानि देवे उसका सहस्य अच्छी तरह जान-कर आचार्य वया करे यह कहते हैं;—

जदि चरणकरणसुद्धो जियुजुत्तो विणीद मेघावी। तस्सिटं कथिदव्यं सगसुदसत्तीए भणिकण॥१६७॥ यदि चरणकरणशुद्धी निस्योयुक्ती विनीतो मेघानी । तस्येष्टं कथितव्यं स्वक्युतराक्या मणित्वा ॥ १६७ ॥ अर्थ---जो वह गुनि तेरह मकार चारित्र तेरह मकार करणकर शुद्ध हो, नित्य उथमी हो-अतीबार न टगावे, विनयबान् हो, युद्धिमान हो तो अपनी श्वतज्ञानकी शक्ति कहकर उसके बांडितको

यह आचार्य करे ॥ १६७ ॥

यदि आगंतुक ऐसा न हो तो आचार्यको कैसा करना उसे

सतलाते हैं:—

जिद्द इदरों सोऽजोरगो छेद्द्यवद्वावणं च कादव्यं। जिद्द णेच्छिद छेदेजो अह गेह्वादि सोवि छेद्दिहो १६८ यदि इतरः स अयोग्यः छेदः उपस्थापनं च कर्तव्यः। यदि नेच्छित स्वेत् अय गृह्वाति सोपि छेदाईः ॥१६८॥

अर्थ—जी वह आगंतुक द्यनि चरणकरणसे बगुद्ध हो देव-वंदनाकर अयोग्य हो तो प्राथिष्ठव द्यासको देखकर छेद सथा उपस्थापना करना । जो वह छेदोपस्थापना स्रीकार न करे तो उसे छोड़ दे। जीर जो अयोग्यको भी मोहसे महण करे उसे प्राथिष्ठ न दे तो वह आवार्य भी मायथिषठके योग्य है। १९६८॥

उसके बाद क्या करना चाहिये यह कहते हैं;— एवं विधिणुववण्णो एवं विधिणेव सोवि संगहिदो । सुत्तत्यं सिक्संतो एवं कुज्ञा प्यत्तेण ॥ १६९ ॥

एवं विधिना उपपन्नः एवविधिनैव सोपि संगृहीतः । सत्रार्थे शिक्षमाणः एवं कृषीत् प्रयत्नेन ॥ १६९ ॥

अर्थ-- पृत्रेकथित विधिकर युक्त वह आगंतुक सनि पूर्वोक्त

विधानकर ही आचार्योसे आचरणकी शुद्धता करे और आचार्योसे यज्ञाचारपूर्वक स्त्रार्ध्व सीखे ॥ १६९ ॥

आगे यज्ञाचार कैसे करे यह कहते हैं;—
पिटलेट्टिकण सम्मं दृष्ये जेक्सं च कालभावे च ।
विणयीचयारज्ञाचेण्डलेट्ट्यं पयसेणा ॥ १७० ॥
प्रतालेख्य सम्मक् द्रन्ये धेत्रं च कालभावी च ।
विनयीपचारखुक्तेनाध्येतन्यं प्रयमेन ॥ १७० ॥

विनयापचारपुक्तनाप्येतच्यं प्रयम्त ॥ १७० ॥
अर्थ—सरिस होनेवालं मुग्डे पाव तथा मूमियत वर्म हृद्द्वी
मृत्त पुरीप आदिको पीडी आदिते होपन करना द्वय शुद्धि हैं।
मृत्तिको सी हामात्र सोपना केशशुद्धि है। संध्यका मेपगर्ननकार
विज्ञती चनकनेका अन्य उत्तरावादिका काल छोड़ना कालशुद्धि है।
कोषादि छोड़ना भावशुद्धि है। इसमकार द्रष्ट क्षेत्र काल भाव हन
सर्विकी शुद्धिको अच्छीतरह देस विनय उपचारकर सहित होके
यज्ञाचारकर वह मुनि अध्ययन करें (वर्षे)॥ १७० ॥

जो ह्रव्यादिकी शुद्धि न करे तो क्या हो यह करते हैं;— दृष्यादियदिषक्षमणं करेदि सुस्तत्थसिक्यलोहेण । असमाहिमसज्हागं करुहं चाहि वियोगं च ॥ १७१॥ हृज्यादिव्यतिक्रमणं करोति स्त्रार्थशिक्षालोमेन ।

द्रव्यादित्यतिकमण करति युत्राधात्रशास्त्रमन । असमाधिरस्त्राच्याचः करही व्याधिः वियोगधः ॥ १७१ ॥ अर्थ—ओ बह आर्गतुक ग्रुनि तृत्र अर्थक सीसनेके होमते (आसकतासे) द्रव्यादिकी गुद्धताद्वा उत्तंपन करे अर्थात् ग्रास्त्रक अविनय करे वी असमाधि अस्ताच्या करू ते से वियोग—ये देश दृति हैं ॥ १०१ ॥

95

यह शुद्धि केवल पठननिर्मित नहीं है जीवदयाके निर्मित्त भी हैं;---संधारवासचाणं पाणीलेहाहिं दंसजुज्जीये।

स्थारवासयाण पाणालहााह् द्संखुज्ञाव । जत्तेखुभये काले पडिलेहा होदि कायच्या ॥ १७२ ॥ संलाराकाद्यानां पाणिरेखामिः दर्गनोद्योने । यनेनोमयोः काल्योः प्रतिलेखा मयति कर्तव्या ॥ १७२॥

यसेनोमयोः कालयोः प्रतिलेखा भवति कर्तव्या ॥१७२॥ अर्थ-छद्ध मृत्रि शिला काठ तृणसमृद्धल्प चार प्रकार संकर ज़ीर संवरका प्रदेश (जगह) इनके प्रहण्या व छोड़नेका प्रातः सार्थ (सवेर सांक्ष) दोनों कालोंने हायकी रेसा दीले ऐसा नेत्रोंका प्रकाश होनेपर यसावारसे सोपन करना ॥१७२॥

वह आगंतुक दूसरे संघमें स्वेच्छाचारी नहीं मर्वते;— उब्जामगादिगमणे उत्तरजोगे सकञ्चयारंभे । इच्छाकारणिख्नते आपुच्छा होइ कायव्या ॥ १७३ ॥ उद्धामकादिगमने उत्तरयोगे स्कार्यारंभे । इच्छाकारनियुक्ता आपुच्छा भवति कर्तव्या ॥ १७३ ॥

ह्व ॥ १७६ ॥ आगे कहते हैं कि वैयाइन्य भी वैसे ही करे;— गच्छे वेज्ञावयं गिलाणग्रुरुयालग्रुहसेहाणं । जहजोगं कादर्व्यं सगसत्तीए पयत्तेण ॥ १७४ ॥ गच्छे वैयाइन्यं स्त्रानग्रुह्यदर्शसाणां ।

यथायोग्यं कर्तव्यं स्वकशक्या प्रयत्नेन ॥ १७४ ॥ ' अर्थ--अपियोंके समुदायमें रोगादिकर पीड़ित शक्तिवाले. दीक्षागुरु आदि गुरु, नये दीक्षित, बुढापेसे जीण वा दीक्षासे अधिक, शास्त्र पदनेमें उद्यमी वा सार्थपर निर्मुणी-इन संबदी यथायोग्य अपनी दाकिको नहीं छिपाके यहाचारसे दारीरकी सेवा (टहल) फरना चाहिये ॥ १७४ ॥

आगे परगणमें बंदनादि किया भी अकेटा न करे मिलके करे ऐसा फटते हैं:--दिवसियरादियपिग्वयचाउम्मासियवरिस्सकिरियासु

रिसिदेववंदणादिसु सहजोगो होदि कादच्यो॥१७५॥ देवसिकीरात्रिकीपाक्षिकीचातुर्मासिकीवार्षिकीकियास ।

ऋषिदेववंदनादिषु सहयोगो भवति कर्तव्यः ॥ १७५ ॥

अर्थ-दिनमें होनेवाली, रात्रिकी, पश मंबंधी, चीमासेकी, वर्षसंबंधी कियाओंको तथा साधवंदना देववंदना आदि कियाओंको साथ (मिलकर) ही करना चाहिये ॥ १७५ ॥

कोई दोपलगे सो उसका प्राथश्चित भी यहां ही करे:-मणवयणकायजोगेणुष्पण्णवराध जस्स गच्छिमा। मिच्छाकारं किचा णियत्तणं होदि कायव्यं ॥ १७६॥

मनीवचनकाययोगः उत्पद्मापराधः यस गच्छे । मिध्याकारं कृत्वा निवर्तनं भवति कर्तव्यम् ॥ १७६ ॥ अर्ध-मनवचनकायकी कियाओं कर विसके गण्डमें अतीचा-रहरप दोष लगे उसे उसीके गच्छमें किथ्यादारहरप पश्चादाप हरके दर बरदेना चाहिये ॥ १७६॥

आगे उस गच्छमें आगंतुक मुनि आर्थिकाओंके साथ कैसे वर्ते यह कहते हैं:—

अज्ञागमणे काले ण अन्धिद्द्यं तहेव एकेण। ताहि पुण सहायो ण य कायच्यो अकज्ञेण॥ १७०॥

आर्यागमने काले न स्वातव्यं तथेवकेन ।

ताभिः पुनः संलापो न च कर्तव्योऽकार्येण ॥ १७७ ॥ अर्थ—आर्या आदि खियोंके आनेके समय मुनिको ननमें अकेला नहीं रहना चाहिये और उनके साथ धर्मकार्यादि प्रयो-जनके विना बोले नहीं । धर्मके निमित्त यदि कोईसमय बोलना हो तो संक्षेपवचन कहे ॥ १७७ ॥

तासि पुण पुच्छाओ एकस्से णय कहेज एको हु। गणिणीं परओ किया जदि पुच्छइ नो कहेद्व्यं १७८

तासां प्रनः पृच्छा एकसा नैव कथवेत एकस्तु ।

गणिनीं पुरतः कृत्वा यदि पृच्छति ततः कथयितव्यं १७८ अर्थ-उन आर्याओंमेंसे फिर एक आर्या कुछ पूछे तो निंदाके भयसे अकेटा न कहे । यदि प्रधान अर्जिकाको अगाड़ी करके पुछे तो उसका उत्तर कहदेना चाहिये॥ १७८॥ तरुणो तरुणीए सह कहा व सञ्चावणं च जदि कुजा।

आणाकोवादीया पंचवि दोसा कदा तेण ॥ १७९ ॥ तरुणः तरुण्या सह कथां वा संलापं च यदि छुर्यात । आज्ञाकोपादयः पंचापि दोषाः कृताः तेन ॥ १७९ ॥

अर्थ-युवावस्थावाला मुनि जवान स्त्रीके साथ कथा व

हास्यादिमिश्रत वार्वाव्य करे तो उसने आशाकोप आदि पांची ही दोष (याप) किये पेसा आनना ॥ १७९ ॥ णो कप्पदि विरदाणं विरदीणसुवासम्पत्ति थिद्वेष्ट्वं।

अर्थ —संयमी प्रानियोंको आर्थिकाओंकी बातिकार्ने टहरना योग्य नहीं है। और बहां बैठना, सोना, श्वाप्यायकरना, व्याहार व भिशा प्रदण करना तथा मतिकमणादि व मलका स्वान हस्वादि क्रियार्थ भी नहीं करनी चाहिये॥ १८०॥ आर्थाओंकर बनाया

कियारों भी नहीं करनी चाहिये ॥ १८०॥ आयोशीकर बनाया भोजन आहार व स्मायिकाओंकर बनाया हुआ भोजन मिशा भोजन बहराता है।

आगे करते हैं कि स्विवस्थन आदि ग्राण्याला भी स्वीतंग तिसे थिगड़ जाता है;—— थेरे चिर्यण्यहर्य आग्रारियं यहत्तुर्वं युनवर्षि या ।

ण गणिहि पासमितिको कुरुमिष संप्रको विभारेत् १८१ श्राविरे सिरममिति आसार्य पहुत्रुतं च तप्रसितं या । स गणपति काममितिका कुरुमिष भाषाः विनासपनि॥१८१ अप—कामबागनासे मेते विद्यात गुले आसार्व गरव्यत् । सरवालती हीत्राकी, अपनी आसर्ववद्यीको, जणसार्व (सर

बहुतकालको दीकाको, अपनी आचार्यपदरीको, उदाण्याद (सब प्राप्तीका जानकर) प्लेको, देना तेला ब्यादि तपसे दुए सापती-पनको, तथा अपनी दुलप्रदेशको नदी गिनता है सबको नह कर देता है लोट अपने सम्बन्धादि गुलोका भी नाय करना है।। • मुख्य- 63 यदि आत्माके गुणोंका नाश न करे परंतु निंदाको अवस्य

पाता है;— कण्णं विधवं अंतेउरियं तह सहरिणी सर्लिगं वा। अचिरेणछियमाणी अववादं तत्थ पप्पोदि ॥ १८२ ॥

कन्यां विधवां आंतःपुरिकां तथा स्वैरिणीं सर्लिगिनीं वा। अचिरेणालाप्यमानः अपवादं तत्र प्राप्नोति ॥ १८२ ॥ अर्थ-कन्या, विषवा, रानी वा विलासिनी, स्वेच्छाचारिणी, दीक्षा घारण करनेवाली ऐसी क्षियोंसे क्षणमात्र भी वार्तालाप करता हुआ मुनिराज है वह लोकनिंदाको पाता है ॥ १८२ ॥

आर्थाओंकी संगति छोड़नेसे उनके प्रतिक्रमणादि कैसे होसकते हैं उसे कहते हैं:— पियधम्मो दृढधम्मो संविग्गोऽवज्ञभीरु परिसुद्धो ।

संगहणुगगहकुसलो सददं सारक्खणाजुत्तो ॥ १८३॥ त्रियधर्मा दृढधर्मा संवित्रः अवद्यभीरुः परिशुद्धः । संग्रहानुग्रहकुशलः सववं साररक्षणायुक्तः ॥ १८३ ॥ 😁 अर्थ--आर्यकाओंका गणधर ऐसा होना चाहिये कि, उत्तम क्षमादि घर्म जिसको प्रिय हो, इढ धर्मवाला हो, धर्ममें हर्ष करनेवाला

हो पापसे डरता हो, सनतरहसे शुद्ध हो अर्थात् असंडित आचरण-वाला हो. दीक्षाशिक्षादि उपकारकर नया शिप्य बनाने व उसका पालन करनेमें चतुर हो और हमेशा शुमकियायुक्त हो हितोपदेशी हो ॥ १८३ ॥ गंभीरो दुद्धरिसो मिदवादी अप्पकोदुह्छो य। चिरपव्वइ गिहिद्त्थो अज्ञाणं गणघरो होदि ॥१८४॥

गंभीरो दुर्पेगें मिनवादी अन्यकुतृहरूख । चिरम्मतिवरः गृहीतार्थः आयोणां गणपारो मविता।१८४॥ अर्थ---गुणोहर लगाप हो, परवादियोगे दवनेवाला न हो, बोहा चीलनेवाल हो, बदव विमाय निगके हो, बहुतहाल्या दीक्षित हो और लाचार मायश्चिणादि मंथोक आगनेवाला हो। ऐसा लाचार्य आयोगीको उपदेश देसकत है॥ १८४॥ पृथंगुणपादिरिक्तो जादि गणपरिनं बरेरिंद आजाणां । परापादि सारदाग में गच्छादि विसाहणा होना ॥१८५॥ पर्यगुणप्याविदिक्तः पदि गणपरिनं बरेरीत आर्याणाय्।

पत्यतरः कालकाः तस्य गण्डादयः विगापिता भवेषुः १८५ अर्थ— इन पूर्वकथित गुणीते ११६त ग्रानि जो आर्थिकाभीका गण्यस्त्रा करता है उसके गण्यस्त्रा करता है उसके गण्यस्त्रा करता है उसके गण्यस्त्रा करता है उसके गण्यस्त्रा करा कालका निकास कर गण्यस्त्रा करा कालका । कालका है पहुंचा भणिते जा हु का हल्या गण्यस्त्र कर नालका । बाद्यस्त्रा नेण अर्थे एसंस्य किसी हु केस्त्राणं ॥ १८६॥ विवास करा भण्यस्त्र करा नालका । विवास करा भण्यस्त्र करा नालका ।

કર્ય વધુના માગતા છું વા દ્વારા મુખ્યત્વન માં ત્યા ક જતિયા તેને મધેનુ વધુન વિતિસ્તુ દોષાચાદ !! ફેંદર !! બ્રાર્થ—નદુત વદનેને વયા ભાગ, હતી બાયાર્થની દ્વારા દો વૈતે દો બાગે ક છિલ્લે વસ્તા ચારિયે ! હોંદ દોવ છીન્યોએ મી ભર્ચાનું ભાગને તામને દદનેવાલીથી બી દેવા દો વસ્તા ચારિયે !! ફેંદર !! આવે આપીએ!! તામાયત વદતે દેં:—

प्रावे अञ्चालंपि अ शामाचारो जथाविश्रो पुरुषं !

सन्वधिः अहोरत्ते विभासिद्वन्वो जघाजीगां ॥१८७॥ एप आर्याणामपि च समाचारः ययाख्यातः पूर्वम् । सर्वसिन् अहोरात्रे विभागितन्त्रो प्रथायोग्यं ॥ १८७॥

सर्वेसिन् अहोरात्रे विभाषितच्यो यथायोग्यं ॥ १८७ ॥ अर्थ-जैसे पूर्व छनिराजीका समाचार कहागया है वही सम रातदिनका आवरण आर्याजींका भी यथायोग्य जानना । वृद्यमू-

रातादनका भाचरण जायाआका मा ययाया लादियोग आर्याओंके नहीं होते ॥ १८७ ॥

वसतिकामें आर्थिकाओंका वर्ताव कहते हैं:— अण्णोण्णणुक्ताओं अण्णोण्णहिरक्ष्यणाभिञ्जताओ। गयरोसवेरमाया सलज्जमज्ञादिकिरियाओ ॥ १८८॥

अन्योन्यातुकुलाः अन्योन्यामिरक्षणाभियुक्ताः । भवरोपवैरमायाः सलज्ञामयोदाकियाः ॥ १८८ ॥ अर्थे—आर्थिका व्यवसमें अनुकुल रहती है ईर्यमाव नहीं कार्यो व्यवसमें प्रति प्रकारों कार्य रहती है कोश्वीय मणावारी

अर्थः—आर्थिका जायसमें अनुकुछ रहती हूँ इंपामान नहीं करतीं, आपसमें मित पाठनमें तत्तर रहती हैं, कोष वेर मायाचारी इन तीनोंसे रहित होतीं हैं। लेकापवादसे मयरूप लज्जापरिणाम, न्यायमार्गिमें पतर्तेनरूप मर्योदा, दोनों कुल्के योग्य आनरण-इन गुणांकर सहित होती हैं॥ १८८॥

अज्झयणे परियद्धे सवणे कहणे तहाणुपेहाए । तबविणयसंज्ञमेसु य अविरहिदुपओगजुत्ताओ॥१८९॥

अध्ययने परिवर्ते श्रवणे कथने तथानुप्रेक्षासु । तपोविनयसंयमेषु च अविरहिता उपयोगयुक्ताः ॥ १८९ ॥ अर्थ—शास पदनेमें, पदे शासके पाठ करनेमें, शास सन-

अर्थ-शास्त्र पडनेमें, पढे शासके पाठ करनेमें, शास्त्र सुन-नेमें, श्रुतके वितवनमें अथवा अनित्यादि भावनाओंमें, और तप विनय संयम इन सबमें आर्थिकार्य तत्सर रहती है तथा ज्ञान-म्यास ग्रमयोगमें युक्त रहतीं हैं ॥ १८९॥ अविकारयत्थवेसा जास्त्रमध्यविस्तरमचत्त्रहाओ । यम्मकुष्टकित्तिदिकम्यापडिस्पविसुद्धचरियाओ १९०

अविकारपरविधाः जल्लमञ्जितिस्तरफादेहाः । धर्मकुलकीर्विद्याक्षामतिरुपिशुद्धचर्याः ॥ १९० ॥ अर्थ- जिनके वस्त विकारदित होते हैं, धरीरका आकार भी विकार रहित होता है, धरीर पत्तेव म मक्कर कि है तथा धंस्कार (बजावट) रहित है । शमादि पर्मे, गुरू आदिनी संता-नरुर कुल, बदा, मत इनके समान जिनका शुद्ध आवरण है ऐसी

नस्य कुल, यरा, मत ६५७ सभान विनद्य श्रद्ध भाषस्य हुम्सा आधिकार्ये होती हैं॥ १९०॥ अगिहत्यमिस्सणित्ये असण्णियाण् विसुद्धसंचारे। दो तिण्ण व अज्ञाओ पहुनीओ वा सहस्यंति॥१९१॥

अगृहस्यमिश्रनिक्ये असंनिभाते विद्यहसंघारे । हे तिसोचा आयो पहची या सह तिष्टति ॥ १९१ ॥ असंक्रिक्त असंक्षी च रहें ऐसे स्थानमें, भाषादित स्थानमें हेशरित चान योग्य स्थानमें हो तीन अथया बहुत ऑधिहा एक साथ रहमनती हैं ॥ १९१ ॥

साय रहशकता द्वा १९८ ॥ ण य परगेहमकक्के गच्छे कक्के अपस्य गमणिक्रे । गणिजीमापुन्धिच्या संपादेणेय गच्छेक्क ॥ १९२ ॥ न च परोद्रमकार्ये गच्छेषुः कार्ये अवस्यं गमनीयं ।

गणिनीमापृच्छच संपाटेनव यच्छेतुः ॥ १९२ ॥ अर्थ-अर्थिकाओंको विवा प्रयोजन परावे स्वानवर नहीं

जाना चाहिये । यदि अवस्य जाना हो तो भिन्ना आदि काल जाना चाहिये ॥ १९२ ॥

बड़ी आर्थिकाको पूछकर अन्य आर्थिकाओंको साथ लेकर ह

आगे अर्जिकाओंको इतनी कियायें नहीं करनी चाहिये;--रोदणण्हाणभोयणपयणं सुत्तं च छव्विहारंभे। विरदाण पादमक्खणघोषण गेयं च ण य कुजा १९३ रोदनस्रपनभोजनपचनं स्त्रं च पर्विधारंमात् । विस्तानां पादमृश्णधावनं गीतं च न च कुर्युः ॥ १९३। अर्थ--- आर्थिकाओंको अपनी वसतिकामें तथा अन्यके परा रोना नहीं चाहिये, यालकादिकोंको सान नहीं कराना । बालका दिकाँको जिमाना, रसोई करना, सूत कातना, सीना, असि मा मादि छह कर्म करना, संयमीतनोंके पैर घोना साफ करन रामपूर्वक गीत, इत्यादि कियाएं नहीं करना चाहिये ॥ १९३ । तिष्णि य पंत्र य सत्त्र य अञ्चाओ अण्णमण्णरक्ताओ धेरीहि सहतरिदा भिरुणाय समोदरंति सदा॥१९४॥ तिसी वा दंच वा सप्त वा आयों अन्योन्यरक्षाः । स्यविग्निः महांतरिता मिश्चार्य समनतरंति सदा ॥१९४॥ अर्थ-अधिकार्ये निशाकेतिये अथवा आवार्यादिकोती पंर-नाकेठिये तीन व पांच व सात गिलकर जार्ने । भागमी एक दमरेकी रक्षा करे तथा बद्धा अर्थिहाके साम आर्थे ॥ १९४ ॥ आगे बंदना करने ही रीति बनयाने हैं:-पंच छ सत्त हत्ये सूरी अन्हायमो य साधू य । परिहरिकणज्ञाओं गयामणेणेय बंदंति ॥ १९५॥

पंच पद् सप्त हुलान् स्र्रि अध्यापकं च सार्थश्च । परिहृत्य आर्याः गवासनेनव वंदेते ॥ १९५ ॥ अर्थ-आर्थिकार्ये आचार्योको पांच हाथ दूरसे उपाध्यायको छहहाय दूरसे और साधुओं को सात हाथ दूरसे गीके आसनसे बैटकर वंदना करती हैं। आलोचना अध्ययन मुति भी करती हैं॥१९५॥ आगे समाचारका फल कहते हैं:— एवंविहाणचरियं चरंति जे साधवो य अझाओ। ते जगपुञ्जं किर्त्ति सुहं च सद्धृण सिज्झंति ॥ १९६॥ एवंविधानचर्या चरंति ये साधवध आर्याः। वे जगत्पूजां कीर्वि सुखं च रुम्ध्या सिध्यंति ॥ १९६ ॥ अर्थ-जो साधु अथवा आर्थिका इसमकार आवरण करते हैं वे जगतमें पूजा यश व सुलको पाकर मोक्षको पाते हैं ॥ १९६॥ आगे भंगकार अपनी रुपुता दिसलाते हैं;-एवं सामाचारो पहुभेदो बण्जिदो समासेण । विज्यारसमायण्णो वित्यरिदच्यो युह्जणेहि ॥१९७॥ एवं समाचारः पहुमेदो वर्णितः समारोन । विस्तारसमापद्मी विस्तारयितच्यो पुधवनः ॥ १९७ ॥ अर्थ-इसमकार मैने संक्षेपसे बहुत भेदबाला समाचार अर्थात् आगमप्रसिद्ध अनुष्ठान वर्णन किया है, इसका निस्तारकथन ' बुद्धिमानोंको विस्तारित करना चाहिये ॥ १९७ ॥

इसम्बार आचार्यभीबद्दकेरिविरवित् मृटाचारफी ट्रिनाबा-टीकार्ने समाचारोंको कटनेवारा श्रीश समाचाराधिकार समाप्त हुआ ॥ ४ ॥

पंचाचाराधिकार ॥ ५ ॥

आगे पंचाचारोंको कहते हुए मंगलाचरण करते हैं;— तिहुयणमंदिरमहिदे तिलोयबुद्धे तिलोगमत्थत्थे। तेलोकविदिववीरे तिविहेण य पणमिदे सिद्धे ॥१९८॥ त्रिश्चनमंदिरमहितान् त्रिलोकचुद्धान् त्रिलोकमलकस्यान्। त्रेलोक्यविदितवीरान् त्रिविधेन च प्रणिपतामि सिद्धान्१९८ अर्थ-तीन छोकके सामी इंदादिकर पूजित, तीनछोकके जाननेयाले, तीनलोकके मखक सिद्धक्षेत्रपर विराजमान तीन-लोकमें पसिद्ध पराक्रमवाले पेसे सिद्धोंको में नमस्कार करता £ 11 29 C 11 दंसणणाणचरित्ते तब्वे विरियाचरिद्य पंचविहे । बोच्छं अदिचारेऽहं फारिद अणुमोदिदे अ कदे॥१९९॥ दर्शनज्ञानचारित्रे तपसि वीर्याचारे पंचविधे । बक्ष्ये अतीचारान् अहं कारितान् अनुमोदितान् च कृतान् ॥ अर्थ:-सम्यग्दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपआचार थीर्याचार-इस तरह पंच आचारोंमें कृत कारित अनुमोदनासे होनेवाले अतीचारोंको (दोपोंको) में कहता हूं ॥ १९९ ॥ आगे दर्शनाचारके अतीचार कहते हैं;-

दंसणवर्षानिस्द्वी अहिबिहा जिणवरिहिं णिहिंदा।
 दंसणमलसोहणपं बोछ तं सुणह एगमणा ॥ २०० ॥
 दर्शनपरणिशुद्धिः अष्टविधा जिनवरैः निर्दिधा ।
 दर्शनमलशोधनकं वस्ये तत् मृशुन एकमनसः ॥ २०० ॥

अर्थ-दर्शनाचारकी निर्मलता जिनेंद्रभगवानने अष्टपदारकी कही है वह सम्यवस्वके मछ (अतीचार) को दर करनेवारी है। इसे में कहता है सी है शिष्यजनी ! एक विच होकर लग

सनो ॥ २००॥ 'णिस्संकिद णिफंखिद णिव्विद्यगिच्छा अभद्रदिही य । उपगृहण टिविकरणं यच्छछ पहायणा य ते अहर०१ निःशंकिवा निष्कांधिता निर्विचिकित्सवा अमृटर्राष्टः च । उपगृहनं स्थितिकरणं वात्सरूपं प्रभावना घ एते अर्धा२०१ अर्थ--निःशंकित, निष्कांक्षित, निविविकित्सा, अगुटर्टाष्ट्र, उपगृहन, स्थितीकरण, बारसस्य और ममावना ये आठ सम्बद्धक

गुण जानना ॥ २०१ ॥

मानो मानपालं ति य द्विवहं जिलासासणे समयन्तादं। मानो चल सम्मत्तं मानपतं होह णिप्याणं ॥ २०२॥ मार्गः मार्गफलं इति च डिविधं जिनशायने समाख्याते ! मार्गः खद सम्यनत्वं मार्गप्रतं भवति निर्वाणं ॥ २०२ ॥ अर्ध-जिन्हासनमें भाग और भागपत ये दो कहे हैं। उन्मेंसे मार्ग सो सम्यवत्व है जीर मार्गफल मोश है ॥ २०२ ॥ आगे सम्यक्तका शहर कहते हैं:--

भयरथेणाहिमदा जीवाजीया च पुण्णपार्व च १ भागवसंवरिणक्ररपंपी मोपलो च सामलं ॥ ६०३ ॥ भवार्षेनाभिगवा जीवाजीमा प प्रव्यपारं प ।

आगवर्गवरिर्दरावंभी मोशय सम्यवन्वं ॥ २०३ ॥ अर्थ-अपने अपने सरूपते जानेगरे जीव अर्थाव प्राप

90

जामा मंतर निर्देश बंध मोत में नीएरार्थ है अर्थात् इनका गमार्थमदान करना सम्पक्त है ॥ २०३ ॥ द्विहा य होति जीवा संसारत्या य णिल्ह्या नेत्र। गदा मेमारत्या मिद्रिगदा णिल्युदा जीया ॥ २०४॥

विविधाः च मांति जीयाः गंगारकाः च निर्मेश ग्रेस । पदमा संमारकाः निद्विमना निर्देता जीताः ॥ २०४ ॥ अर्थ-जीतों के तो भेर है संमारी गुक्त । संमारी जीव छह महारके हैं जीर जो सिद्धगतिहो मास है वे गुक्तजीन है ॥२०४॥ भव संगारी जीवों के छह भेद बतवाते हैं;-

पुढवी आक लेक बाक व बणफदी बहा व तमा। छत्तीसविहा पुरुषी तिस्मे भेदा इमे णेया॥ २०५॥ पृथिव्यापस्तेजोपायुभ वनस्पतिस्तया च श्रमाः । पर्टात्रंज्ञद्विया पृथित्री तस्या मेदा इमे तेयाः ॥ २०५ ॥

अर्थे--पृथिती जल अपि वायु वनस्पतिकाय ये पांच स्यावर, जीर द्वीद्रियादि पंचेद्रियतक श्रम इसतरह संसारी जीवोंके छद्द भेद हैं। उनमेंसे प्रथियोंके छत्तीस भेद आगे कहे हुए जानना ॥ २०५॥

षागे प्रथिवीके छतीस मेदींको कहते हैं;-पुढवी य बालुगा सकरा य उवले सिला य होणे य। अय तंव तउ य सीसय रूप सुवर्णी य वहरे य२०६ हरिदाले हिंगुलए मणोसिला संस्सगंजण पवाले य। अन्मपडलन्भवालु य षादरकाया मणिविधीया २०७

गोमज्झमे य रूजमे अंके फलहे य लोहिर्दके य ।

चंद्रप्पभ वेकलिए जलकंते स्रकंते य ॥ २०८ ॥ गेरुच चंद्रण वव्वग वगमोए तह मसारगल्लो य । ते जाण पुढविजीया जाणित्ता परिहरेदव्या ॥ २०९ ॥

जाण पुढावजाया जाणिका पारहरदच्या ॥ २०६॥
पृथियो च साइका श्रकेरा च उपलानि शिला च श्रकणं च ।
अप्रतालां अप्रूप च सीतकं रूप्यं सुवर्णानि च वजं न२०६
हरितालं हिंगुरुकं मनःश्विता ससकं अंजनं प्रवालं च ।
अभ्रयटलं अभ्रवाहुका च बादरकाया मणिविधयः॥२०॥।
गोमध्यक्ष कृषकः अंकः स्कृटिकव लोहितांक्य ।

गामध्यकश्च रुचकः अकः स्काटकथ लाहिताकथ् चंद्रप्रमः वंद्वयः जलकांतः सर्यकांतथ ॥ २०८ ॥ गैरिकं चंदनवप्यकवकमोगः तथा मसाराग्रहथ ।

गैरिकं चंदनवप्यकवकमोधाः तथा मसारगञ्जश्र । तान् जानीहि पृथिवीजीवान् झात्वा परिहर्तच्याः ॥२०९॥

जर्य-मटी आदि प्रियी, बाङ, तिकोन चौकॉनरूप सकेरा, गोठ पत्यर, बद्दा, पत्यर, समुदादिका रुपण (नित्रक), ठोटा, सांबा, जाता, सीसा, चांदी, सोना, दीश १२। हरिताल, इंगुल, भैनतिल, हरारीगवाल सत्यक, सुरमा, गूंगा, भोडक (अवरस), चमकती रेती २१।गोरीचनवर्णवाटी कर्वेतनमणि, अल-

(अवरख), चमकती रेती २१। गोरोचनवर्णवाटी कर्षेतनमि, अल-सीपुप्पवर्ण राजवर्तकमिल, पुरुष्वर्णमिल, रफ्टिकमिल, प्रवासमिल, चंद्रकांतमिल, वेह्रयं (नील) मिल, जलकांतमिल, स्पर्यकांतमिल २०। मेह्रवर्ण हिपाशमिल, चंदरगंपमिल, विवायके नेत्रवमान मरक-समिल, पुसराज, नीलमिल, वथा विह्नमवर्णवाटी मिल २६ इस मक्तार प्रियोक्ट एवीस नेद हैं। इनमें आवेकि वानकर सर्वावका स्वाग करे ॥ २०६–२०९॥ जांगे जलकायके जीवोंका वर्णन करते हैं;— ओसाय हिमम महिगा हरदणु सुद्धोदगे घणुदगे या

ते जाण आउजीया जाणिसा परिहरेद्दव्या ॥ २१०। अवश्यापं हिमं महिकां हरत् अणुं शुद्धोदकं घनोदकं च । तान् जानीहि अपूजीबान् हात्या परिहर्तव्याः ॥ २१०। अर्थ-ओस, वर्ष, धुशके समान वाला, स्पूजींदु रूप बल्, स्ट्यॉवंट्ररूप जल, बंदकांत मणिते उत्पत्त शुद्धवल, झरनासे

सूक्ष्मचिद्गरूप जल, चंद्रकांत मणिसे उत्पन्न शुद्धजल, झरनासे उत्पन्न जल, मेपका जल वा पनोद्रिषवातजल—ये सन जलका विक जीव हैं। इनको जानकर इनकी हिंसाका स्याग करना चाहिये॥ २१०॥

चाहिये ॥ २१० ॥ आगे अमिकायिक जीवोंके भेद कहते हैं;——

ईंगाल जाल अबी सुम्सर सुद्धागणीय अगणी य । ते जाण मेउजीया जाणिसा परिहरेदच्या ॥ २११ ॥ अंगारं ज्वाला अर्विर्धुर्धर सुद्धाविः अप्रिय ।

वान् वानीहि वेबोजीवान् द्वात्वा परिहतेन्याः ॥ २११ ॥ अर्थ-पुआंहित अंगा, ज्वाजा, वीषककी ही, फंडाकी आग जीर वजापि विनदी जादिते उत्तल शुद्ध जाि, सामान्य अप्र---ये तेबहायिक बांव हैं इनको जानहर इनकी हिंसाका

त्याग करना चाहिये ॥ २११ ॥ लागे बायुकायिक जीवोंके भेद कहते हैं;— बादुच्यामो उद्घालि मेहलि गुंजा महा घणु मण् य ।

ने जाण याउजीया जाणिसा परिहरेदय्या ॥ २१२ ॥ । यावोद्धामो उत्कलिः मंडलिः गुंजा महान् पनव्यतुम । तान् जानीहि पायुजीयान् झात्या परिहर्तन्याः ॥ २१२॥ अर्थ--- सामान्य परन, असता हुआ देजा जानेशान्य १९६०, शहत रत्तविह आवाजगरा परन, प्रत्योगे त्याता हुआ परन सहत रत्तविह आवाजगरा परन, प्रत्योगे त्याता हुआ परन सामान्य परन, गृहता प्रत्या परन महास्वया परन महास्वया परन सामान्य तत्त्रवात-ये यायुकाधिक जीव हैं। इनको जानकर इनकी हिसाका स्वाग करना पाहिये॥ २१२॥

हिंसाका त्याग करना चाहिय ॥ २१२ ॥ आगे वनस्पतिकायिक जीवोंको कहते हैं;—

मूलगापोरपीजा कंदा तह कंपपीजपीजरूहा। संमुक्तिमा य भणिया परोपाणंतकाया य ॥ ११६॥ महापर्वरीजाः कंदाः तथा कंदरीजरीजरूहाः।

संशुष्टिमा य भागाया पर्यायाणाया या ॥ ५१६ ॥
मृद्याप्रपर्वेताचाः कंदाः तथा कंदपीवयीजरहाः ।
सम्मृष्टिमाम मिणाः मर्थेका अनंतकायाम ॥ ११६ ॥
अर्थ—पनास्तिष् दो भेद हैं—मर्थेक साधारण । एक शरीरों
एक जीव हो यह मर्थेक वनरपति है और एक शरीरों अनंत-जीव हो यह साधारण है, साधारणको ही निभीद कहते हैं और अनंतकाय भी बहते हैं। गुरुबीज हलदी आहि, मिणां जादि जमवीज, हैरत येत आदि पर्वेचांज, विशाब आदि कंदबीज, सहसी जमदी कंपचीज, मृह आदि योजवीज और सुपारी नारियल आदि संपूर्वन जीव ये सब मर्थेक और स्वतंत्रवाद दो सरहों होते

है।। २१६।। आगे शेपूर्वन बनापतिका सरूप करते हैं;— कंदा सूखा छाड़ी नंगें पत्तां प्रयास पुष्पपारें। ग्रन्था गुरमा षाड़ी नणाणि नह पथ्य काया य २१४

पदी मूलं स्वतः स्वंथः पत्रं पट्टवे ग्रुप्पफरी।

९४

गुच्छः गुल्मं वही रुणानि तथा पर्व कायथ ॥ २१४ ॥ अर्थ—सूरण जादि कंद, अदरस आदि मूल, छालि, स्तंप, पता, कींपल, पुष्प, फल, गुच्छा, करंजा आदि गुल्म, बेल, तिनका स्रोर वेत आदि ये संमूर्छन परयेक अथवा अनंतकायिक

है।। २१८।।

सेवाल पणय केणम कवमो कुहणो य बादरा काया। सन्वेवि सुहमकाया सन्वत्य जठत्यलागासे ॥२१५॥

रीवालं पनकं कृष्णकं कवकः कुइनय बादराः कायाः। सर्वेपि सक्ष्मकायाः सर्वत्र जलखलाकाशे ॥ २१५ ॥

अर्थ-जलकी काई, ईंट आदिकी काई, कुड़ेसे उत्पन्त हरानीलारूप, जटाकार, आहार कांजी आदिसे उत्पन्न काई-ये सब वादरकाय जानने । जल खड आकाश सब जगह सूक्ष्मकाय भरे हुएे जानना ॥ २१५ ॥

आगे साधारण जीवोंका स्वरूप कहते हैं;— गृहसिरसंधिपत्र्वं समभंगमहीरुहं च छिण्णरुहं। साहारणं सरीरं तब्बिवरीयं च पत्तेयं ॥ २१६ ॥ गुढसिरासंधिपर्व समभंगमहीरुई च छिनरुई । सोघारणं शरीरं तद्विपरीतं च प्रत्येकं ॥ २१६ ॥

अर्थ-जिनकी नरें नहीं दीखतीं, बंधन व गांठि नहीं , दीसतीं जिनके दुकटे समान होजाते हैं बिल रहित (सीधे)

और भिन्न किया गया भी ऊंगे देसे सब साधारण शरीर कहे जाते हैं। इनसे जो विपरीत होने मत्येक शरीर कहेजाते

े हैं। २१६॥

होदि वणप्फिदि बाही स्वन्तनणादी तहेव एहंदी।
ते जाण हरितजीवा जाणिशा परिहरेदच्या॥ २१७॥
मवित वनस्पतिः वही ष्टबत्पादीन तथेव एकेंद्रियाः ।
तान् जानीहि हरितजीवान् झाला परिहर्तच्याः॥ २१०॥
अर्थे—वनस्पति के इश हण हलादिक लक्ष्य है। ये एकेंद्रियाः
दिव हैं। ये सब अलेक सामारण हरितकाय हैं ऐसा जानना और
जानक हनकी हिसाका लाग फरना चाहिये॥ २१०॥
अस असके भेद फहते हैं।—

दुविभा तसा य उत्ता विगला सगलेंदिया मुणेयव्या। वितित्वजॉदिय विगला सेसा सगलेंदिया जीवार१८ दियाजीवारा सामलेंदिया जीवार१८ दियाजीवारा का विकलाः सकलेंद्रिया जीवार१८८ विविच्याजीर्गिद्रिया विकलाः देणाः सकलेंद्रिया जीवार११८८ व्यर्स—प्रसक्तिक दो मकार कटे हैं विकलेद्रिय, सकलेंद्रिय दोहिय वेहिय चतुर्गिद्रिय हन तीनोंको विकलेद्रिय जानना और प्रेम विविद्ध जीवेको सकलेद्रिय जानना ॥ २१८ ॥ संजी गोभी भमरादिका दु विकलिद्रिया मुणेयव्या। संकलिद्रिया प जाल्यक्वया सुरणार्स्यणार या।११९

सफलेंद्रियाय जरुखरुएचराः गुरनारकनराय ॥ २१९ ॥ जर्थ—संस लादि, गोपारिका चीटी लादि, भौरा जादि, जीव दोइंद्रिय तेईदिय चीर्धदियरूप विकटीद्रय जानता । तथा सिंह लादि स्वरूपर, मच्छ भादि जरूपर, इंस लादि लाकाग्रचर तिर्यंच लोर देव नारकी मनुष्य—ये सब पंचेद्रिय हैं ॥ २१९ ॥

शंखः गोपालिका अमरादिकाः त विकलेंद्रिया ज्ञातन्याः।

मूलाचार--

कुलजोाणमगगणा विच णाद्या सन्वजीवाणं । णाज्जा सन्वजीवे णिरसंका होदि काद्या ॥ २२०॥ कुलगोनिमार्गणा अपि वात्याः सर्वेनीवातं ।

९६

कुरुयोनिमार्गणा अपि ज्ञातन्याः सर्वजीवानां । ज्ञात्वा सर्वजीवान् निःशंका मवति कर्तन्या ॥ २२० ॥

अर्थ—सन जीवोंके कुछ योनि मार्गणायें भी जानने योग्य हैं, इनमें सन जीवोंको जानकर संदेह रहित श्रद्धान करना चाहिये ॥ यादीस सन्त तिरिण अ सन्त्रप कलकोडि सदसदस्याई

याबीस सत्त तिण्णि अ सत्तय कुलकोडि सदसहस्साई णेया पुढविदगागणियाऊकायाण परिसंग्वा ॥ २२१ ॥ बार्विग्रतिः सप्त त्रीणि च सप्त च कुलकोटिग्रतसहस्राणि ।

होया प्रथिन्युदकाशिवायुकायानां परिसंख्या ॥ २२१ ॥ अर्थ-प्रथिनीकाय जलकाय अभिकाय और बायुकायिक जीवांके कुळ कमसे बाईसलासकोटि, सत्तलासकोटि, तीनलास-

क्रोड़ हैं ऐसा जानना । जतिमेदको कुछ क्हते हैं ॥ २२१ ॥ कोडिसक्सहस्साई सत्तद्घ व णव य अट्टवीसं च । वेइदियतेइदियचउरिंदियहरिदकायाणं ॥ २२२ ॥ .

कोटिशतसहस्राणि सप्ताष्टी च नव चाष्टाविशतिय । द्वीद्रियत्रीद्वियचतुर्रिद्रियहरितकायानाम् ॥ २२२ ॥

अर्थ--दोइंद्रियके सातलासकोटि, तेइंद्रियके आठलासकोटि, चौइंद्रियजीवोके नौलासकोड़ और वनस्पतीकायिकजीवोंके अडाईस लासकोड़ कुल हैं॥ २२२॥ अद्तेरस यारस दसर्य कुलकोडिसदसहस्साई।

श्रद्भारस भारस दसमं कुलकोडिसदसहस्साई । जल्लपरपक्तिवज्जप्यग्रपरिसप्पेस णय हाँति २२३ अर्थनयोदग्र दादग्र दग्रकं कुलकोटिशवसहस्ताणि ।

अर्थ--तिर्थेच मत्स्यादि जरुचरोंके कुरु साढे भारह सास करोड़ कुछ हैं। इंस आदि पिधयोंके बारह टाल करोड़ तथा सिंह आदि चौपायोंके दशलाख करोड़ और गोह सर्प आदि जीवोंके नव लाल करोड़ कुल हैं ॥ २२३ ॥ छन्वीसं पणवीसं चउदस फुलकोडिसदसहस्साई। सुरणेरइयणराणं जहाकमं होइ णायव्वं ॥ २२४॥ पद्विंगतिः पंचविंशं चतुर्दश कुलकोटिशवसहसाणि ।

मुर्रनरियकनराणां यथाक्रमं भवति झातव्यम् ॥ २२४ ॥ अर्थ-देवोंके छन्तीसलालकरोड़, नारकियोंके पंचीस लाल करोड़ जार मनुष्योंके चीदहलाल करोड़ कुल जानना ॥ २२७ ॥ आगे संवका जोड़ कहते हैं:---

एया य कोडिकोडी णवणवदीकोडिसदमहस्साई। पण्णासं च सहस्सा संबन्गीणं कुलाणकोडीओ२२५ एका च कोटिकोटिः नवनवतिकोटिशतसहसाणि । पंचाश्च सहस्राणि संबर्गेण कुलानां कोट्यः ॥ २२५ ॥

अर्थ-- एककोडाकोडि निन्यानवै लाख पचास हजार करोड़ प्रमाण सब मिलकर सब जीवेंकि कुलैंका प्रमाण है।। २२५ ॥ आगे जीवोंके योनि भेद कहते हैं;—

णिचिदरभाइ सत्त य तर दस विगर्छिदिएस छचेष । सुरणस्वतिरिय चउरो चउदस मणुए मदसहरसा २२६ नित्येतरघातुनां सप्त च तरूणां दश विकलेन्द्रियेषु पट चव ।

गुरनरकतिरथां चत्वारि चतुर्दश मनुष्ये शवसहसाणि २२

अर्थ—नित्यनिगोद जीवोंकी, इतर (चतुर्गति) निगोदिया जीवोंकी सात सात लाल योनि हैं। प्रन्ती जल तेज वायु कायके जीवोंकी सात सात लाल योनि हैं। वनस्पति कायके जीवोंकी दरालत, दो इंदिय ने इंदिय जीवोंकी छह लाल, देव गारकी 'वेदियतिवेंबोंकी चार बार लाल योनि हैं। मनुव्योंकी चीद हाल योनि हैं। सन मिलकर चीरासी लाल योनि हैं। उत्पित्तका जो कारण वह योनि हैं। त्रद्ध । सस्यावरा य द्विहा जोगगङ्कसायइंदियविधीं हिं।

तसयावरा य दुविहा जोगगइकसायइदियविधीहि। यहुविघ भन्वाभन्वा एस गदी जीवणिहेसे ॥२९०॥ त्रसस्रावराः च द्विविधा योगगतिकपार्वेद्विविधिभः।

त्रसस्यावराः च द्विविधा योगगतिकपार्येद्रियविधिभिः । गहुविधा मस्याभन्या एपा गतिः जीवनिर्देशे ॥ २२७ ॥ अर्थ-कायमार्गणासे त्रसः स्थावर-कायरूपः दोप्रकारके जीव हैं। योग गति कषाय इंदियके भेदीसे तथा मध्य अमय्यके भेदसे

हैं। योग गति कपाय इंदियके भेदोंसे तथा मध्य अमध्यक भेदते भी जीव बहुत मकारके होते हैं॥ २२०॥ इनका विशेष कपन गोंमदसार जीयकांडसे जानना। आगे जीवका स्थाण कहते हैं:—

आगे जीवहा उद्देश कहते हैं;— णाणं पंचविषं पिञ्ज अण्णाणतिमं च सामस्यओगो। चदुदंसणमणगारो सब्ये तहुवन्वणा जीवा ॥ २२८॥

शानं पंचविधं अपि अज्ञानविकं च साकारोपयोगः ।

चतुर्दर्शनमनाकारः सर्वे तहश्रणा जीवाः ॥ २२८ ॥ अर्थ—ज्ञान पांच प्रकारका हे अज्ञानके तीन भेद हैं इसत्तर्ह ग्रानोपयोगके आठ भेद हैं वह ज्ञान साहार होता है । दुर्शन भुष्ठदर्शनादिकं भेदसे चार प्रकार है वह अनाकार होता है। क्षान जीर दर्शन ये दोनों स्थणवाले सभी जीव होते हैं ॥२२८॥ एवं जीयविभागा पहुमेदा विष्णिया समासेण । एवंविधभावरहियमजीवदच्येत्ति विष्णोयं ॥ २२९ ॥

एवं जीवविभागा बहुभेदा वर्णिता समासेन ।

एवंविधमावरहित्तमजीवद्रव्यमिति विदेषे ॥ २२९ ॥ अर्थ—इसतरह जीवोंके बहुत भेद संक्षेपसे वर्णन किये । ऐसे जीवके ज्ञानादिधर्मीसे जो रहित हैं उसे श्रनीवद्रव्य जानना चाहिये ॥ २२९ ॥

आगो अजीवदव्यके नेद कहते हैं;—
आज्ञीया विष दुविद्दा रूवास्वा य रूविणो चद्दुषा !
खंघा य संघदेसा संघपदेसा आण् य तहा ॥ २३० ॥
अजीवा अपि दिविषा स्पिणोऽस्पिणय रूपिणा पतुर्णा ।
स्कंपय संवपदेसा संघपदेसा अण्य तथा ॥ २३० ॥
अर्थ—अवीवपदार्थके दो भेद हैं रूपी बीत अरुती । रूपते
स्कंपय मंत्रेयता । रूपी पदार्थके वार भेद हैं—संग, संवपदेय
संवपदेय (सण्या) ॥ २३० ॥
खंधं सयलसमस्य तस्स हु अन्तं भणंति देसोस्ति ।
अद्धन्तं च पदेसो पताण् चेय अविभागी ॥ २३१ ॥

स्कंचा सकलसमर्थः तस्य तु अर्थ भणंति देश इति । अर्थार्थ च प्रदेशा प्रसाणुः चेव अविभागी ॥ २३१ ॥ अर्थ—स्व भेदीका समहत्त्वा विष्ठको स्कंच कहते हैं, उसके आपेको देश कहते हैं। उसके आपेको स्कंच मदेश तथा निर्दे-शको परमाणु जानता ॥ २३१ ॥ म्लाचार−

200

खंघा देस पदेसा अणुत्ति विय पोग्गला स्वी॥२३२॥
ते पुनःधर्माधर्माजाशानि च अरुपीणि च तथा कालः ।
स्कंधः देशः प्रदेशः अणुरिति अपि च पुद्रला रुपिणः२३२
अर्थ---अरुपी अजीवद्रव्यके चार भेद हैं--पर्म, अपर्म,
आकाश, काल । स्टंप देश भदेश परमाणुरूप पुद्रलद्रव्य रुपी
है ॥ २३२ ॥
गादिवाणोग्गाहणकारणाणि कमसो चु बद्दणगुणो य ।
स्वरसायेषकासादि कारणं कम्मयंधरस ॥ २३३ ॥
गतिसानावगाहनकारणानि कमयः त वर्तनागुणश्र !

ते पुण घम्माथम्मागासा य अरूविणो य तह कालो।

गाद्गापागाहणकारणााण कमसा दु वहुणगुणा य । स्वरसगंघफासादि कारणं कम्मयंघस्स ॥ २३३ ॥ गतिसानावगाहनकारणानि क्रमयः तु वर्तनगुणकः । स्परसगंघस्यादि कारणं कमंत्रंघस ॥ २३२ ॥ अर्थ—गमन करनेका, उहरानेका, जगह देनेका निभित्त कारणं पर्मद्रव्य, अपर्मद्रव्य, आकाराद्रव्य कमते हैं। काल्द्रव्यका वर्तना गुण है। बार रूप रस गंघ स्पर्शादिक कर्मवंघके कारण हैं॥ २३३॥ सम्मत्तेण सुद्रेण य विरदीए कसायणिगगहगुणोहिं।

जो परिणदो स पुण्णो तिब्बचरीदेण पावं तु ॥२३४॥
सम्यन्त्वेन श्रुतेन च विरत्या कपायिनप्रहगुणैः ।
यः परिणतस्तत्पुण्यं तद्विपरीतेन पापं तु ॥ २३४॥
अर्थ—सम्यक्त्वरी, शुतज्ञानसे, पाण त्व विरुपरिणामसे,
कपायिनीरोक्त्य उत्तम समादिगुणींकर परिणत हुए जीवके जो
कर्मवंग है वह पुष्य है और उससे उद्दा वर्षात् विष्यात्वादिसे
परिणतके कर्मवंव है वह पाप है ॥ २३४॥

पुण्णस्सासवभूदा अग्रुकंपा सुद्ध एव उवओगो । विवरीदं पायस्स दु आसयहेउं विपाणाहि ॥ २३५॥ पुण्यसासवभूता अनुकंपा ग्रुद्ध एव उपयोगः ।

पुण्यसास्वभूता जनुक्या शृद्ध एवं उपयागः । विपरीतः पापस तु आस्वहेतुं विज्ञानीहि ॥ २३५ ॥ अर्थ—जीवेगर दया, श्रुद्ध मन वचन कायकी किया गुद्ध

दरीन झानरूप उपयोग ने पुन्यकर्मके आसव (आने) के कारण हैं जार इससे विपरीत निर्देयपना मिय्याझानदर्शनरूप उपयोग पापकर्मके आसवके कारण जानना ॥ २३५ ॥

अमृत्रिका मृत्रीकि साथ येप कैसे हुआ उसका उत्तर वहते हैं:-णेहोडप्पिद्गस्स रेणुओ छग्मदे जथा अंगे!

णेहोडप्पिदमत्तस्स रेणुओ लग्गदे जघा अंगे। तह रागदोससिपिटोखिदस्स कम्मं मुणेयव्यं ॥२३६॥ स्रेहार्षितगात्रस रेणये। लगेति यथा अंगे। तथा रागदेपस्रेहालिप्तस कर्मं ग्रावच्यं ॥ २३६॥

तथा रागदेपरोहालिप्तस कमें ग्रातव्ये ॥ २२६ ॥ अर्थ—वैसे पी शादि विक्वाईसे लिग्न धरीरको पूली विषट आर्ती है वैसे ही रागदेपरूपी विक्वाईसे भीगे हुए जीवफे ही कमें पुद्रत्व वंपते हैं ॥ २२६ ॥

ही कम पुद्रल कंपते हैं ॥ २३६ ॥
अब आवरके भेद कहते हैं;—
भिन्छनं अविरमणं कसायजोगा य आसवा होति ।

अरिहंतगुत्तअत्येसु विमोहो होह मिटछत्तं ॥ २१७ ॥ मिथ्यात्वं अविरमणं कपाययोगी च आसवा मर्वति । अर्हदुक्तार्थेषु विमोहः भवति मिथ्यात्वं ॥ २१७ ॥ अर्थ—मिथ्यात्व अविरति कषाय योग-ये श्वासव सर्योव १०र

कर्मोंके आगमनके कारण होते हैं। उनमेंसे अईतकथित पदार्थीमें

मूलाचार-

अविरमणं हिंसादयः पंचापि दोपा मत्रंति ज्ञातन्याः । क्रोधादयः क्याया योगः जीवस चेष्टा तु ॥ २१८ ॥ अर्थ-हिंसा आदि पांच दोपोंको अविरति जानना । क्रोधादि चार कपाय हैं और जीवकी कियाको योग कहते हैं ॥ २३८॥

मिच्छत्तासवदारं रुंभइ सम्मत्तददकवाडेण। हिंसादिद्वाराणिवि द्ववद्रफलिहेहिं रुग्मंति॥ २३९॥ मिथ्यात्वासवद्वारं रुघंति सम्बक्तद्वदक्रपाटेन । हिंसादिद्वाराण्यपि दृढवतफलकैः रुंघंति ॥ २३९ ॥ अर्थ-संवर करनेवाले जीव मिथ्यात्वरूप आसवद्वारको सम्यक्तक्त इड कपाटसे रोकदेते हैं और हिंसादि आधनदारको

आसवदि जं तु कम्मं कोघादीहिं तु अयदजीवाणं । तप्पडिवक्योहें विदु मंधंति तमप्पमत्ता दु ॥ २४० ॥ आस्वति यतु कर्म कोधादिनिस्तु अयतजीवानाम् । तत्प्रतिपक्षेः विद्वांसो रुधंति तमप्रमचास्त ॥ २४० ॥ अर्थ-यताचार रहित जीवींके कोधआदिकर जो कर्म आते हैं उनको ममादरहित ज्ञानी जीव कोघादिके मतिपशी उत्तमक्षमादि

अविरमणं हिंसादी पंचवि दोसा हवंति णादव्या।

कोघाडीय कसाया जोगो जीवस्स चिट्टा हु ॥२३८॥

आगे संवरको कहते हैं;---

दृढ पंचन्नतरूप पट्टेसे रोकते हैं॥ २३९ ॥

धमोंसे रोक देते हैं ॥ २४० ॥

संशयादि करना मिथ्यात्व है ॥ २३७ ॥

संजमजोगे जुन्तो जो सबसा चेट्टदे अणेगवियं। स्रो पत्म्मणिज्ञराण विडलाण बहदे जीवो॥ २४२॥ संयमपोगेन युक्तः यः वयसा चेप्टते अनेकवियं। म फर्मनिकरायां वियुतायां वर्तते जीवः॥ २४२॥ अर्थ—इंद्रियादिसवम और योगकर सहित हुआ जो अनेक

(भारह) भेद रूप तर्षों मवर्तता है वह जीव बहुतसे कमेंकी निर्भर फरता है ॥ २५२ ॥ जामे हद्यांतरे जीवकी गुद्धता बतलते हैं;—

जह घाऊ घम्मतो सुउद्दादि सो अनिगणो दु संतत्तो। तवसा तथा विसुज्झदि जीयो सम्मेहि फणपं घारभ्रः यथा पातुः घम्यमानः शुध्यति स अमिना तु संतम्।। तपसा तथा विशुध्यति जीवः फर्ममिः धनकं इवारथ्रे॥

अर्थे—विसे मञ्जादित सोना भातु श्रीसे तपायागया ताइ-नादि किया गया शुद्ध होजाता है उसीतरह यह जीव भी तपसे तपाया हुआ कर्मरूपी मैन्से रहित हुआ शुद्ध होजाता है॥२९२॥ म्लाचार-

जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागं कसायदो कुणदि। अपरिणदुच्छिण्णेसु य वंघट्टिदिकारणं णत्थि ॥२४४॥ योगात प्रकृतिप्रदेशी स्थित्यनुमागा कषायतः करोति ।

१०४

अपरिणतोच्छिनेपु च बंधिसितिकारणं नास्ति ॥ २४४ ॥ अर्थ--योगसे मकृतिबंध और मदेशबंध होते हैं तथा कपायसे स्थिति और अनुमागवंघ होते हैं, यह म्यारवें गुणस्थान तक जानना । सयोगीगुणस्यान जोर क्षीणकपाय गुणस्यानवालोंके बंध स्यितिका कारण नहीं है-कुछ कर नहीं सकता ॥ २८८ ॥ पुञ्वकदकम्मसङ्गं तु णिज्ञरा सा पुणो हवे दुविहा । पढमा विवागजादा विदिया अविवागजादा य॥२४५॥ पूर्वकृतकर्मसंडनं तु निर्जरा सा पुनः भवेत द्विविधा । प्रथमा विपाकजाता द्वितीया अविपाकजाता च ॥ २४५॥ अर्थ--पूर्व (पहले) किये हुए, फर्मोंका जो झड़जाना वह निर्जरा है उसके दो भेद हैं। पहली विपाकजा दूसरी अबि-पाकजा 1) २८५ ॥ कालेण उवाएण य पद्यंति जधा वणप्कदिफलाणि । तध कालेण उवाएण य पर्चति कदा कम्मा ॥ २४६ ॥ कालेन उपायेन च पच्यंते यथा वनस्पतिफलानि । तथा कालेन उपायेन च पच्येते कृतानि कर्माणि ॥२४६॥ अर्थ-जैसे गेंह आदि वनस्पतिके फल अपने अपने समयसे

तया उपायकर आमादिफल जल्दी पकजाते हैं उसीतरह किये हुए कर्मःअपने २ समयपर अथवा तप आदिक उपायके प्रमावसे

शीम ही फल देकर झड़जाते हैं ॥ २४६ ॥

जाने मोक्ष पदार्थका वर्णन करते हैं;—
रागी पंघह कम्मं छुचह जीचो विरागसंपण्णो ।
एसो जिणोवएसो समासदो यंघमोवस्वाणं ॥ २४०॥
रागी पमाति कमीण सुंचित जीवः विरागसंपन्नः ।
एप जिनोपदेशः समासतः यंघमोत्तयोः ॥ २४०॥
अर्थ—रागी जीव कर्नोको नापता है वैरागको प्राप्त हुआ
कर्मोते हृद जाता है यह धै उपदेश यंघ मोक्षका संवेषसे जिनेंद्रदेवने दिया है ॥ २४०॥

अय सम्यक्षके शंकादि आठ रोषोंको कहते हैं;—
(१),णय य पदस्था एदे जिणदिहा यिण्णदा मए तथा ।
तत्थ भये जा संका दंसणपादी हयदि एसो ॥ २४८॥
नय च पदार्था एते जिनदिश वर्णिता मया तच्याः ।
तत्र भयेत् या शंका दर्शनपाती भवति एएः ॥ २४८॥
अर्थ—जिनभगवानकः उपदेश किये ये नी पदार्थ यथार्थसक्त्यसे मैंने वर्णन किये हैं। इनमें जो शंका होना यह दर्शन
(अद्धान) को पातनेवाला पहला दोष है। १४८॥
११ तिविहा य होड़ कंत्वा हह परहोए सथा कुमम्मे य ।

/ तिबिहा य होइ फंखा इह परलोए सथा कुपम्मे य । तिबिहं पि जो ण कुच्चा इंसणसुद्धीसुपगदो सो २४९ त्रिविधा प भवति कांद्रा इह परलोके तथा कुप्पें प । त्रिविधापि यः न कुपीत् इर्धनसुद्धिपगतः सः॥२४९॥ अर्थ—अभिज्ञय तीनक्कार होती है इस्लोक्नें केंद्रा पिठनेकी, परलोक्नें संबदा पिठनेकी और कुपमंत्री (क्षीकिक १०६ मृताचार-

धर्मकी) अभिलापा । जो इन तीनों अभिलापाओंको नहीं करता यही सम्यग्दर्शनकी शुद्धिको पाता है ॥ २४९ ॥ यलदेवचक्रवहीसेहीरायत्तणादिअहिलासो।

इह परलोगे देवत्तपत्थणा इंसणाभिघाडी सो ॥२५०॥ बलदेवचकवर्तिश्रेष्टिराज्यत्वाद्यमिलापः ।

इह परलोके देवत्वप्रार्थना दर्शनामिधाती सः ॥ २५० ॥ अर्थ—इस लोकर्ने बलमद चकवर्ती होना राजसेठ होना

इत्यादिक संपितकी इच्छा और परलोकमें इंद्र होनेकी देव होनेकी जभिलापा करना वह दर्शनको घातनेवाला कांक्षा दोप है ॥२५०॥ रत्तवङचरगतावसपरिहत्तादीणमण्णतित्थीणं ।

धम्मक्षि य अहिलासो कुधम्मकंखा हबदि एसा २५१ रक्तपटचरकतापसपरिवाजादीनामन्यतैर्थिकानां ।

धर्मे च अभिलापः कुधर्मकांक्षा भवति एपा ॥ २५१ ॥ अर्थ-वैभाषिकादि चार भेदवाले बौद्ध, नैयायिक वैदोषिक, जटाघारी वैनयिक, सांख्यमती आदि अन्य धर्मियोंके धर्ममें अभि-

लापा करना वह कुधर्मकांक्षा नामा दोप है ॥ २५१ ॥ विदिगिच्छा वि य दुविहा दच्वे भावे य होड़ णायन्या। बचारादिसु दब्वे खुधादिए भावविदिमिछा ॥२५२॥

विचिकित्सापि च द्विविधा द्रव्ये भावे च मवति शावव्या । उचारादियु द्रव्येषु क्षुघादिके मानविचिकित्सा ॥ २५२ ॥ अर्थ--विचिकित्सा (ग्लानि) दोप्रकार है-द्रव्य और माव।

प्रनिराजके मुत्र विष्ठा छार आदिको देखकर म्लानि करना वह

इय्यविनिकित्सा है जीर भूख प्यास आदि सहन करना टीक नहीं है ऐसा विकल्प करना वह भावविकित्सा जानना ॥२५२॥ ११ उचारं परसवणं श्वेतं सिंघाणपं च चम्मद्री ।

पूर्वं च मंससोणिद्यंतं जहादि सापूर्णं ॥ २५६ ॥ टचारं प्रस्वणं शेष्मा सिंघानकं च चर्माव्य । पृति च मौनद्योणिनवानं जहादि साधनाम् ॥ २५१ ॥ अर्ध-मापुओं दे शरीरके विद्यागल, गृत, गुन, गावदा गर, चाम, हाड, राधि, मांग, होडी, बगन, शब अंगरा मण, ला-इत्यादि महीको देखकर ग्लानि परना यह हथ्यविधिवत्या है ॥ 🕖 ह्यहरूणहा सीउण्हा दंशमसयमचेष्टभाषो प 🛚 अरदिश्दी इत्थिषरिया णिसिडिया रोज अहोसी ६५४ वपजावणं अलाहो रोग नणप्तास जाह सवारो ।

तह चेव पण्णपरिमह अण्णाणसद्दरणं समणं ॥५५५ शत्रुणा शीनोर्णा देशमश्रुकमपेलभावय । अरिनरती सीचर्या निषद्या धार्या आक्रोद्यः ॥ २५४ ॥ ष्ययापने अलाभी रोगस्त्रणस्पर्धः कर्त सत्यतः । तथा चेर प्रहापरीपटः अज्ञानमदर्शने शगणे ॥ २५५ ॥ अर्थ-भूम स्थात शीत उच्च देशपशक नगपरीक्ष आहे. रि कीपरीषद चर्या निष्धा शरमा आकोश वध बाबना अलाब होग तुणस्परी गल सासार प्रशायशिषद अञ्चल अदर्शतपरीषद-इत

बार्रस परीष्ट्रीय बाह्रेश परिणाम करना बहु आक्ष्मित्रिसा है। १५४। १५५॥ 🥬 सोरपवेदिय सामारुएस नर अण्यादेवम्हार्व ।

णचा दंसणचादी ण य कायञ्चं सससीए ॥ २५६ ॥ लीकिकवैदिकसामापिकेषु तथा अन्यदेवमुदस्यं । द्वात्या दर्शनपाती न च कर्तव्यं सदावस्या ॥ २५६ ॥ अर्थ-मृदताके चार भेद हॅ-लीकिकमृदता मैदिकमृदता सामापिकमृदता अन्यदेवमृदता । इन चारोको दर्शनपातक जानकर

मुलाचार-

सामायिकमृदता अन्यदेवपृदता । इन चारोंको दर्शनयातक जानकर अपनी सक्तिकर नहीं करना चाहिये ॥ २५६ ॥ कोडिछमासुरक्त्वा भारहरामायणादि जे घम्मा । होज्ञु च तेसु विसोती छोइयमृढो हवदि पृसो २५७

होज्ज व तेसु विस्ताती छोइयमुदी हविंद एसी २५० कीटिल्यमासुरक्षः मारतरामायणादयी ये धर्माः । भवेत् वा तेषु विद्युतिः लांकिकमूदः भवति एषः ॥२५०॥ अर्थ—इटिल्ता प्रयोजनवाले चार्षक व चाणिक्यनीति आदिक उपदेश, यहाहिंगामें धर्म माननेवाले बेदिकमंकि सास, महान पुरुषोको असत्य दोष लगानेवाले महाभारत रागायणआदि शास-इनमें धर्म समझना वह लेकिकमूदता है॥ २५०॥

आगे वैदिकमृदताको षहते हैं;— ऋगयेदसामयेदा बागणुवादादियेदसत्थाई । तुच्छाणित्ति ण गेण्हइ वेदियमूटो हयदि एसो॥२५८ ऋग्वेदसामवेदौ वाग्तुवादादि वेदशासाणि ।

त्राच्यान इति न गृह्णाति विदिक्षमुद्रो भवति एपः ॥२५८॥ अर्थ-—ऋवेद सागवेद गायश्चिताद वाङ्, मनुस्यति आदि अनुवाङ् आदिग्रन्दसे यनुर्वेद अयर्वेद-ने सम हिसाके उपदेशक हैं अग्रिहोम आदि ऋवोंके फहनेवाले हैं. इसलिये पर्मरहित निर-

र्थक हैं। ऐसा न समझकर जो महण करता है वह वैदिकमूढ है॥ ११ रसवडचर्गतावसपरिहत्तादीय अण्णपासंदा ।

मंसारतारगत्तिय जदि गेण्हड् समयमृढो सो॥२५९॥ रक्तपटचरकतापमपरित्राजकाद्यः अन्यपापंडाः ।

संसारतारका इति च यदि गृह्णाति समयमृढः सः ॥२५९॥ अर्थ- भौद्ध नैयायिक वैशेषिक जटाधारी साख्य, आदिश-ब्दसे शेव पाञ्चपत कापालिक आदि अन्यरूगी हैं वे संसारसे तारनेवाले हैं-इनका आचरण अच्छा है ऐसा महण करना बढ सामायिकमूढता दोप है ॥ २५९ ॥

अब देवमृहताका स्वरूप कहते हैं;---

🤈 ईसरपंभाविण्हअज्ञाखंदादिया य जे देवा । ते देवभावहीणा देवत्तणभावणे मृदो ॥ २६० ॥ ईसरव्रद्धाविष्णुआर्यास्कंदादयथ ये देवाः । ते देवभावहीना देवत्वमावने मृदः ॥ २६० ॥ अर्थ-ईश्वर (महादेव) ब्रह्मा विष्णु पार्वती खानिकार्तिकेय इत्यादिक देव देवपनेसे रहित हैं परमार्थदेवपना भी नहीं है। इनमें देवपनेकी भावना फरना वह देवमूढता है ॥ २६० ॥

अब उपगृहनगुणका सरूप कहते हैं;---1) इंसणचरणविवण्णे जीवे दृष्टण घम्मभत्तीए । उपगृहणं करंतो दंसणसुद्धो हवदि एसो ॥ २६१ ॥ दर्शनचरणविषमान् जीवान् दृष्टा धर्ममक्या ।

उपगहनं कुर्वन् दर्शनशुद्धो भवति एपः ॥ २६१ ॥ अर्थ-सम्पद्धीनज्ञानचारित्रमें म्लानि सहित जीबोंको देशकर

११० म्लावार-धर्मकी मक्तिकर उनके दोवोंकी दूर करता है यह शुद्ध सम्यन्द-धनवाला होता है ॥ २२१ ॥

दंसणचरणुवभहे जीवे दहण घम्मवुदीए ! हिदमिदमयग्रहिप ते विष्णं तमो जिपसेह ॥ २६२ ॥

हिंद्रामदस्यग्रह्य त खिप्प तस्ता गणयसह ॥ २२२ ॥ दर्शनचरणप्रश्रष्टान् जीवान् रष्ट्रा धर्मजुद्ध्या । हितमितमवगृब तान् विग्नं ततः निवर्तयति ॥ २६२ ॥ अर्थे—सम्पर्दर्शनज्ञानचारित्रसे प्रष्ट हुए जीवोज्ञे देश पर्गन

अर्थ — सम्पर्दर्शनज्ञानचारित्रते प्रष्ट हुए जीवोको देल पा-सुद्धिकर ग्रुसके निमिण हितमितवचनीसे उनके दोषोंको दूरकर सम्पन्दर्शनादि धर्ममें दर करता है वह गुद्धसम्पनस्वी स्थितिकरण पुणवाला कहाजाता है ॥ २६२ ॥ चारुव्याणों संगे चन्नादिसंस्तरणित्यरणासरे ।

चादुञ्चण्णे संघे चदुगदिसंसारणित्यरणमृदे । वच्छळ्ळं कादञ्चं वच्छे गांथी जहा गिद्धी ॥ २६३ ॥ चतुर्वेणे संघे चतुर्गतिसंसारनितरणभूते । वासस्यं कर्तृत्यं वस्से गाः यद्या गृद्धिः ॥ २६३ ॥

दानकर वडहम नावक प्रातका तरह मात करना चाहर । यह बात्तरुगुण है ॥ २६३ ॥ धम्मकहाकहणेण य चाहिरजोगेहिं चावि जवजेहिं । धम्मो पहाविद्व्यो जीवेसु द्याणुक्रंचाए ॥ २६४ ॥ धर्मक्रयाक्यनेन च बात्योगंधापि जनवदा । धर्मः प्रभाविदिक्यः जीवेसु द्यानुक्रंपया ॥ २६४ ॥

ं अर्थ-महापुराणादि धर्मकथाके व्याख्यान करनेसे, हिंसादि

दोषरित राधाणकर, जीवोडी दया व अनुकंपाकर केन समेडी प्रभावना करनी चाहिये । आदिसान्दर्व परवादियोको जीवना अध्यानीनिष्ठज्ञान पूजा दान आदि समप्रमा, इनसे भी पर्मेडी प्रभावना करनी चाहिये ॥ २६७॥ जं च्यु जिणोयदिष्टं तमेय सन्धियि भायदो गहुणं ।

सम्मद्देशपानायो तिन्वयरी है च मिन्छलं ॥ २६६ ॥ यद् गृद्ध जिनोपदिष्टं तदंव वय्यमिति भावतो श्रद्धं । सम्भाद्धंनमावः विदेषसीतं च मिन्यात्वं ॥ २६५ ॥ अर्थ—को अर्वेद्र भगवाने च्हार्यं रणदेश किवा है बती सक्त है सेता सबसे महण्ड करता वही सम्मद्दंनमाव है बतेत हिसा सबसे महण्ड करता वही सम्मद्दंनमाव है बतेत हिसा सबसे किवा है से सक्त है सेता सबसे किवा है से सक्त है सेता सबसे स्वान नहीं होना वह निर्मा मिन्छाव है ॥ २६५ ॥ १ हिस्स पाचरणो एसी जाणानारं च बोधमहविहं ।

अहिवहबारमध्ये जो जा य जीवो लहड़ सिर्द्धि ॥२६६॥ दर्धनवाण एप झानाचारं च वस्ये अहिवधं । अहिवपकर्मष्टकः येन च जीवः लगते सिद्धिम्॥२६६ ॥ अस्य मह दर्धनाचार सेक्षेयरे मेंने कहा । अब आदमकार झानाचारको कहता हूं जिससे कि यह चीव आट महारके झाना-बलादिकर्मोकर रहित हुआ मोशको पाता है ॥ २६६ ॥

आगं शनाचारका संस्प बतछाते हैं;— जिंग तथं वियुज्जेज जेंग चित्तं गिकज्ज्ञदि । जिंग क्षत्ता विसुज्ज्जेज तें णाणं जिंगसासणे ॥१६७॥

येन तत्त्वं विवुध्यते येन चित्तं निरुध्यते ।

म्लानार-

११२

येन आत्मा विशुध्यते तत् झानं जिनग्रासने ॥ २६७ ॥ अर्थ—जिससे बत्युका ययार्थ सरूप जान सकें, जिससे मनका व्यापार रुकजाय वर्षातं अपने वर्गाते विश्व हो, जिससे मनका व्यापार रुकजाय वर्षातं अपने वर्गातं विश्व हो नहीं झान बैनमतमें उत्प्रत कहा गया है ॥ जेण रागा चिरस्त्रेज्ञ जेण सेगस्त र्ज्ञादि । जेण मेन्सी पमायेज्ञ नं णाणं जिणसासणे ॥ २६८ ॥ येन रागात् विरुच्यते येन श्रेषित रुच्यते । येन मंत्री प्रमाययेत्र त् झानं जिनग्रासने ॥ २६८ ॥ अर्थ—जिससे कामकोषादिकर गरामे जिरक (परान्युल) हो, जिससे यह जीव सब माणियोंने करनावरू करे वहीं जिनमतमें झान माना गया है॥ २६८॥

काले विणए उपहाणे बहुमाणे तहेच णिणह्यणे। यंजण अत्य तहुभयं णाणाचारो हु अद्वविहो ॥ २६९॥ काले विनये उपघाने बहुमाने तयैव निहवने। व्यंजनमर्थस्तदुमयं द्वानाचारस्तु अष्टवियः ॥ २६९॥ अर्थ—साध्यायद्वा काल, मनवनकायसे साकका विनय, स्वत्कताम् वृद्धासकाराहिसे पाठादिक करना, अपने पदानेवाले सुरुक्त तथा पहे हुए शासका नाम मगट करना लिपाना नहीं, वर्णपदवावयकी शुद्धिसे पदना, अनेकांतसरूप अर्थकी शुद्धि

थर्घ सहित पाठादिककी शुद्धि होना । इसतरह ज्ञानाचारके आठ

भेद हैं ॥ २६९ ॥ अब काराबारको विखारसे कहते हैं;— । पादोसियवेरत्तियगोसगिगयकारुमेव गेण्हित्ता । . जभये कालक्षि पुणो सरकाओ होदि कायव्यो ॥२००
प्रादोपिकवराविकगांसर्गिककालमेव गृहीत्या।
उभये काले पुनः स्वाच्यायः भवति कर्तन्यः ॥२००॥
अर्थ—मारोपिकक्ष, वैराविक, गोसर्गकाल-इन नारों
कालोंमेंसे दिनरातके पूर्यकाल अपस्ताल इन दोकालोंमें साज्याय
परता नाहिते ॥ मादार्थ—विक्ते रातका भाग है वह मरोपकाल
है अर्थात् रातके पूर्यनागके समीप दिनका पश्चिमभाग वह सुबह
साम दोनों कालोंमें प्रदोषकाल जानना। आधीरात के बाद दो
पट्टी गीतजानेपर बहासे लेकर दो पट्टी रात रहे त्यकर कालको
स्रेशिककाल कहते हैं । दो पट्टी दिन पडनेके बादसे लेकर
मजाइकाल में दो पट्टी क्षा रहें दलने कालको नोस्थिककाल

करना चाहिये ॥ २७० ॥

2 सन्द्रसाथे पहचणे संघच्छायं वियाण सत्तर्पयं ।
पुष्टवण्टे अपरण्टे तायदियं चेच णिहचणे ॥ २०१ ॥
सांभ्याये अस्थानने वंप्रचणां विज्ञानीहि सहपदां ।
पूर्वाहे अपराहि नायन्तं चेच निष्ठापने ॥ २०१ ॥
अर्थ—साध्यायके आरंग करनेमें स्पेके उदय होनेपर दोनों
वांचोंके छाया सात विरुच प्रमाण जानना । कोर सुचैके अन्त
होनेके हालमें सी सात विरुच प्रमाण चानना । कार सुचैके अन्त
होनेके हालमें सी सात विरुच प्रमाण चानना । कार सुचैके अन्त
होनेके हालमें सी सात विरुच प्रमाण चानना । कार सुचैके अन्त
होनेके हालमें सी सात विरुच प्रमाण कारना साहिये ॥ २०१,॥

कहते हैं। इनमेंसे पदोपकालको छोटकर दोकालोंमें पटनपाटन

आसादे दुपदा छाया पुस्समासे चरुप्पदा । घट्टदे हीयदे चावि मासे मासे दुअंग्रन्ता ॥ २७२ ॥ * मुल* अतादे द्विपदा छावा पुष्पमाने चतुष्पदा ।

212

वर्षने द्वीयने नानि मासे मासे द्वयंगुला ॥ २७२ ॥

अर्थ-आषाड महीने के अंतरियताने पूर्वांद्र के समय दी पहर

परने जंग हाया दी निज्य अर्थात् बारइ अंगुल प्रमाण होती है

जीर पीतमानमें अपने दिनमें भीतीम अंतुल प्रमाण जैपालाया

होती है। बीर किर महीने महीनेमें दो वो अंगुण बहती बहती

रप्ति है। मन संभाओंने आदि अंत्रही को तो पड़ी छोड़

मान्यापका र है ॥ २७२ ॥

बानादि रोति है.-

गपमकांचगाजावरिमाणं दिसिविभागगोधीतः। नवन्दे अनुमद्दे नहीसकाले य सम्झाए ॥ ६०३ ॥ नवन्यं नगानावरिमाणं दिशाविमाणशह्या । नुभारे अपनारे प्रदोगाता है व साम्याने ॥ २०३ ॥ वर्ष दिलालीक पृत्रिवादि नेदीकी शुद्धिके जिने पात कारों नी माना नीका, तीयरे वहर साव मानाजीका, मानेकान है मनव पाव माथा वीका लाभ्याव (पाड म जाप) करे ॥ २७३ ॥ नाने दियागर आदिक दोतेको वत्यो है उनके सनावी

हिमहार उद्देशको दिल् बहुकामणिहभगुर्ग च । कुमीयमञ्जान्दिणभेद्रमहत्त्रस्याहृतुःशी भ ॥ ३ १४ ॥ हिलाहः उन्हातन्ते शित्र गडलागावरीक्षत् । दुर्गे। वं सद्धिनंदवरणमादृष् दे ॥ २०४ ॥ अर्थ — १००नं दिएका चामके (२००) श्रीना, मार्थ भावान शुरुषा बहुना, विकरिया मतल्या, मिरिस संदर्शि

म्यानार-

उत्पन्न वज्ञपात, ओले बरसना, पनुषये आकार पंचवर्ष पुटलोहा दीराना, दुर्गथ, लाल्पीलोवर्षये आकार सांशका समय, बादका-ओसे आच्छादित दिन, पंदमा मह सूर्य राहुके विमानीका आप-सर्गे दकराना ॥ २०४॥

77 कलहादिभूमकेड्र परणीकंपं च अन्यमाझं च ।
इपेयमाइयहाया मजराग यिखदा होना ॥ २०४. ॥
फलहादिभूमकेट्रः परणीकंपय अभावं च ।
इसेयमादियहुका माध्यावे पित्रेता होचाः ॥ २०५ ॥
अर्थ—लङ्गादेव पचन, लक्ष्मी आदिसे तगहा, लाकावर्ते
पुजति आकाद देताका दीसना, पाती चंत्र, वाहर्गेका गर्जना,
महा पवनका चल्ला अधिवाद-हरायदि बहुनसे होव स्तथ्यावर्थे
पतित किये गये दें जर्मात् पुरे होवोक होनेवर नर्यात पठन नही करना थारिया ॥ २०५ ॥

अप द्रव्य क्षेत्र यावगुदिको पहते हैं:—

2 महिरादिग्रयमंसं होय घोणो सदहरूथपरिमाणं ।

कीभादिगरिकोरका भायविमोही पहणकार्ष ॥ ५०६ ॥

कीभादिगरिकोरका भायविमोही पहणकार्ष ॥ ५०६ ॥

कीभादिकोर्गो भारविद्यादि र ठटकार्क ॥ २०६ ॥

अर्थ-कोही मट एवं वीर्ष हाड पीव (ताि) यांत रूप
द्रव्यवा गरिसों तर्वय गरी करता । उस व्याहते करी दियाकोम की की हाव्यवान त्यान छोडता । कीम काद मामा होम

कीम की की हाव्यवान त्यान छोडता । कीम काद मामा होम

कीम की करता वस्त वस्त करते द्रव्यादि केमग्रदि माव

ग्रीद पटनवालके समय करीगरे हैं ॥ २०६ ॥ २०६

११६ मूलाचार-अब पढे जानेवाले सुर्जोको कहते हैं:--

सुत्तं गणधरकघिदं तहेव पत्तेययुद्धिकधिदं च । सुदक्षेविष्ठणा कघिदं अभिण्णदसपुट्वकघिदं च २७७ सत्रं गणधरकधितं तथेव प्रत्येकयुद्धिकधितं च । श्रुतकेविष्ठमा कथितं अभिन्नद्वपूर्वकथितं च ॥ २७७ ॥

अर्थ—अंग पूर्व वसु प्रामृतस्य तुत्र गणपरक्षयत क्षुतके वर्रोकिषत अभिजदशपूर्वकथित होता है ॥ २७७ ॥
तं पढिदुमस्ज्झार्य णो करपदि विरद्ध हरियवग्गस्स ।
एस्रो अण्णो गंभी करपदि पढिदुंअसज्झार् ॥ २७८ ॥
तत पढितमस्यास्याये नी करपदि विरत्ने हीवर्गास्य

तत् पठितुमस्वाध्यावे नी करणाते विरते सीवर्गसः । इतः अन्यः ग्रंथः करणाते पठितुं असाध्याये ॥ २७८ ॥ अर्थ—वे चार मकारके सूत्र काट्युद्धि आदिके विना संय-मियोंको तथा आर्थिकाओंको नहीं पढने चाहिये । इनसे अन्य ग्रंथ काट्युद्धि आदिके न होनेपर भी पढने योग्य माने गये हैं ॥ २७८ ॥

शा २०० ॥ अव उन भव्यमंग्रीको बतलते हैं:--आराहणणिज्जनी मरणविभत्ती य संगहत्युदिओ । पद्यक्याणावासुयथम्मकहाओ य एरिसओ ॥ २०९ ॥

आराधनानिर्पुत्तिः मरणविभक्तिः संग्रदः स्तृतयः । प्रसाल्यानावरमकपर्यक्रयाय ईट्यः ॥ २०९ ॥ अर्थ—सम्याद्यंतारि चार आराधनाओंका सक्त ष्टने-याय भंग, सत्रद प्रदार्थे भरणको वर्षेन फरनेवाला भंग, पंग-संग्रद्रमंग, सात्रप्र, आहार आदिक स्वागका उपदेश फरनेवाला, सामायिक बादि छह आवस्यकको कहनेवाला, महानुकरीके बारि-प्रकी वर्णनकरनेवाला प्रथ-हमनरहके प्रथीको काल छुडि बादि न होनेपरभी पडना बाहिये॥ २०९॥

. उद्देस समुद्रेसे अनुष्पापणण अ होति पंगेष । अंगमुद्रक्षेपछोनुवर्दसा विष पदविभागी प २८० उदेगे ममुद्रेसे अनुवार्षणायां प मंदीत पंगेष । अंगमुत्तक्षेप्रामुन्त्रदेशा अवि पद्विमाणी प ॥ २८० ॥ अर्थ—साद अंग चीद्रदपूर्व बन्नु मामृत मामृत्वागृत दत्तवे. पादिभागते पार्रमर्थे वा सामाणिये या गुरुओंदी जावण होनेया पांच पांच उपवास अथवा मायांचि व थया दायोगार्थ बहे गते हैं ॥ २८० ॥

अब विनयमुद्धिको कहते हैं:—

ग पित्रपंत्राणिसंज्ञमहो पटिलहियअंजलीकद्रपणामो।
सुप्तम्यज्ञामसुष्तो पटिल्हियअंजलीकद्रपणामो।
सुप्तम्यज्ञामसुष्तो पटिल्हिय

पर्वतन्त्रपाताः सनिकेष्य अंजहित्तव्यामः।

सर्वार्यस्थानस्यामाः
स्वर्यस्थानस्य

धवार्थयोगानुकः परितत्याः आग्यस्यत्या ॥ ६८६ ॥ अर्थ—कर्यकः आग्या अथवा वीसस्यादिकः देश हुनः, पुरावत्री देसकर वीशीते श्रीको शोपकः हावस्य अनुसीते स्थापन करोदाना, अंबादि संधीको अर्थका निरोध रोडकर अवशी शिक्त अनुसाद देश ॥ ६८६ ॥

भागे उत्पान छुड़िको बहुते हैं।— ?'आपंचित्र लिदियारी अर्ज्य या होदि जस्स बाइर्ज्य ! में मस्स बहेसाची उपहापाड़दो हर्याद गुरो ॥ १८४॥

मृत्राचार-आचाम्लं निर्विकृतिः अन्यत् वा मत्रति यस कर्तव्यं ।

तत् तस्य कुर्याणः उपधानयुतो मर्याते एपः ॥ २८२ ॥ अर्थ-कांजीका आहार (आचान्छ) अथवा नीरस निर्धि-कार अन्नादिका आहार (निर्विकृतितप) तथा और भी जिस

288

शासके योग्य जो किया कही हो उसका नियम करना वह उप-धान है इससे भी शासका आदर होता है ॥ २८२ ॥ आगे बहुमानका सरूप कहते हैं;---

🤈 सुत्तत्थं जप्पंतो वायंतो चावि णिज्ञराहेद्रं । आसादणं ण कुजा तेण किदं होदि बहुमाणं ॥२८३॥ स्त्रार्थे जलपयन् वाचयंश्वापि निर्नेराहेतोः ।

आसादनां न कुर्यात् तेन कृतं भवति बहुमानं ॥ २८३ ॥ अर्थ--अंगपूर्वीदिका सम्यक् अर्थ उचारण करता वा पढता पदाता हुआ जो मव्य कर्मनिर्जराके लिये अन्य आनार्योका या

शास्त्रोंका अपमान (अनादर) नहीं करता है नहीं बहुमान गुणको पालता है ॥ २८३ ॥

आगे निद्दवका सहस्य कहते हैं;---कुलवयसीलविहुणे सुत्तत्थं सन्मगागमित्ताणं।

क्कलवयसीलमहरू ि णिण्हवदोस्रो द्व जप्पंतो ॥ २८४ ॥ कुलवतशीलविहीनाः स्त्रार्थे सम्यगवगम्य । कुलवतशीलमहतो निइवदोपस्तु जन्पंतः ॥ २८४ ॥

अर्थ-गुरूका संवान, व्यहिंसादित्रत, जीर ब्रवकी रक्षारूप शीज-इनकर रहित (मलिन) मठादिकका सेवनकर कुलमत

शीलसे महान् गुरुके पास अच्छीतरह पदकर कहे कि भैंने जैन-

गुरूसे जैनमंथ एक भी नहीं पदा । मुझे तो अन्यमतके साखींस इतना शान हुआ है-इसतरह शास और गुरुका नाम छिपाना वह निह्व दोप है उसे न कर शासका अभ्यास करना चाहिये नहीं तो ज्ञानावरणकर्मका तीवबंध होगा ॥ २८८ ॥ विंजणसुद्धं सुत्तं अत्थविसुद्धं च तदुभवविसुद्धं । पपदेण प जप्पंती णाणविसुद्धी हवह एसी॥ २८५॥ प्यंजनशृद्धं सत्रं अर्थविशृद्धं च तदुभपविशृद्धं। प्रयत्नेन च जल्पन ज्ञानविश्रद्धी भवति एपः ॥ २८५ ॥ अर्थ-जो सुत्रको लक्षरशुद्ध लयंशुद्ध लयंया दोनींकर शुद्ध सायथानीसे पदता पदाता है उसीफे शुद्धशन होता है ॥२८५॥ आगे विनयकरनेका फल दिखलाते हैं:— विणएण सुद्रमधीदं जिद्वि पमादेण होदि विस्सरिदं। तमुध्द्रादि परभवे केवलणाणं च आवहदि ॥ २८६ ॥ विनयेन शुत्रमधीवं यद्यपि प्रमादेन भवति विस्मृतं । तदुपतिष्ठते परभवे केवलज्ञानं च आवहति ॥ २८६ ॥ अर्थ--विनयसे पदा हुआ द्यास किसी समय प्रमादसे बिस्पृत हो जाय (याद न देन) तीभी यह अन्यबन्ममें सारण (याद) जाजाता है संस्कार कहता है जीर कमसे फेवलज्ञानकी मात कराता है ॥ २८६ ॥

आगे चारियाचार षहनेकी प्रतिष्ठा करते हैं;— णाणाचारी एसी णाणगुणसमिणिदो मण् युसो । एसो चरणाचार चरणगुणसमिणिदं घोच्छं॥ २८७ शासाचारः एषः शासगुणसमिन्तो मया उक्तः।

मूलाचार-इतः चरणाचारं चरणगुणसमन्त्रितं वक्ष्ये ॥ २८७ ॥ अर्थ-ज्ञानगुणसहित यह ज्ञानाचार मैंने कहा । अन

१२०

यहांसे आचरण गुणसहित चारित्राचारको कहता हूं ॥ २८७॥ ३) पाणिवहमुसावादअदत्तमेहुणपरिग्गहा विरदी ।

एस चारित्ताचारो पंचविही होदि णाद्व्यो ॥ २८८ ॥ प्राणिवधमृषावादादत्तमेथुनपरिग्रहाणां विरतपर । एप चारित्राचारः पंचिवयो भवति ज्ञातव्यः ॥ २८८ ॥ अर्थ-प्राणियोंकी हिंसा, झुटबोलना, चौरी, मैशुनसेवन, परिमह-इनका त्यागकरना वह अहिंसा आदि पांचपकारका चारि-

त्राचार जानना ॥ २८८ ॥ अब अहिंसा आदिका सरूप कहते हैं;— के एइंदियादिपाणा पंचविधावज्ञभीरुणा सम्मं ।

ते खलु ण हिंसिदच्या मणवचिकायेण सञ्यत्थ २८९ एकेंद्रियादिप्राणाः पंचविधावद्यमीरुणा सम्यरु । ते राख न हिंसिवच्याः मनोत्राकार्यः सर्वत्र ॥ २८९ ॥

अर्थ-सब देश और सब कालमें मन बचन कायसे एकें-दियमे लेकर पंचेंदिय पाणियोंके हुन्न पांचपकारके पापेंसे डर-नेवाटेको नहीं पातने चाहिये अर्था जीवोंकी रक्षा करना अहिं-,

सात्रन है ॥ २८९ ॥ र्ते हस्सभयकोहलोहा मणिवचिकापेण सव्यकालन्मि ।

मोमं ण य भासिजो पर्ययघादी ह्वदि एसी ॥२९०॥ हासमयकोयलोभैः मनोवादायैः सर्वेठाले । ग्रुपां न च भाषयेत् प्रत्यपपाती भनति एषः ॥ २९० ॥

१२१

अर्थ-हाससे, भवसे, कोधसे, लोभसे मन धवन कायकर किसी समयमें भी विश्वासघातक दूसरेको पीडा करनेवाला झुठ वचन न बोले । वह सत्यवत है ॥ २९० ॥

रा गामे णगरेरण्णे धृट सचित्तं वहु सपडिवक्लं । तिविहेण विज्ञद्वयं अदिण्णगहणं च तिणाचं ॥ १९१

प्रामे नगरेऽरण्ये स्पृतं सचित्तं बहु सप्रतिपक्षं। त्रिविधेन वर्जितव्यं अदस्त्रहणं च तन्नित्वं ॥ २९१॥ अर्थ--गाम नगर वन आदिमें स्थूल अथवा सूक्ष्म सचित

अथवा अचित्त बहुत अथवा थोड़ा भी सुवर्णादि धन धान्य द्विपद चतुष्पदादि परिमद्द विना दिया मिल जाय तो उसे मन बचन कायसे हमेशा त्याग करना (छोड़ना) चाहिये । यह अर्थार्थ-वत है ॥ २९१ ॥

वि अधिसदेवमाणुसतिरिक्खजारं च मेहुणं चरुपा I तिविहेण तं ण सेवदि णिचं पि मुणी हि पयदमणी॥

अधिचदेवमानपतिर्यग्जातं च मैथनं चतर्धा । त्रिविधेन तत न सेवते नित्यं अपि मुनिहिं प्रयतमनाः २९२ अर्थ-चित्र हेप आदिकी बनीहुई अरोतन तथा देवी

मानपी तिर्वेचिनी सचेतन सी ऐसी चार मकार सीको मन वचन कायसे जी ध्यान खाध्यायमें लगा हुआ मुनि है वह हमेशा किसी समय भी नहीं सेवन करता है । सबको माता ्ट्र्यटिन पुत्रीके समान समझता है। यही महाचर्यमत है॥ २९२॥ साम् वामान समान सम्हाता है। यही महाचर्यमत है॥ २९२॥ गामं णगरं रण्णं थूलं सचित पहु सपडियक्तं। अज्हारप पाहिरत्यं तिविहेण परिग्गहं बल्ले ॥ २९६ ॥

आगे महानत सन्दर्भ खुत्यति (असरार्थ) करते हैं;— साहंति जें महत्यं आचरिदाणी अ जं महद्धेति । जं च महद्धाणि तदो महच्यदाई भये ताइ ॥ २९४ सायपंति यद् महार्थ आचरितानि च यद् महद्दिर । यच महांति ततः महानतानि नवेति तानि ॥ २९४ ॥ अर्थ—जिसकारण महान् नोक्षरण अर्थको तिद्ध करते लाँर महान् तीर्थकरादि पुरुषोने जिनका पाठन हिना है र पापयोगोका त्याग होनेसे सतः ही पूज्य हैं इसठिये इनका ना

महानत है ॥ २९२ ॥

ि तेसि चेव बदाणं रक्लहं रादिभोषणणिपत्ती ।

अहुप प्वपणमादा प भावणाओं य स्व्वाओ॥२९५

तेषां भैप बतानां रक्षार्थ रात्रिभोजनिन्द्रिकः । अर्धा च प्रवननमातर्थ भावनाध सर्वोः ॥ २९५ ॥ अर्धा च प्रवन्तमातर्थ भावनाध सर्वोः ॥ २९५ ॥ अप्रज्ञ क्रिये रातमं भीवनक स्वाग, समिति आदि आद अप्रवचन माता और पचीस भावना है ऐसा जानना ॥ २९५ ॥

३) तेर्सि पंचण्हंपि य वयाणमावञ्चणं च संका वा । आद्विवत्ती अ हथे रादीभत्तप्पसंगेण ॥ २९६ ॥ तेषां पंचानामपि च व्रतानामावर्जनं च अंका वा !

आत्मविपत्तिय भवेत् रात्रिभक्तप्रसंगेन ॥ २९६ ॥ अर्थ--- उन मुनियोंके रात्रिमोजनके लिये गमन करनेसे पांच वरोंका मंग अथवा मलिनता, चोर आदिकी शंका और कोतवाल आदिसे बंधने आदिकी विपत्ति अपने उपर आपइती है। इस-लिये रात्रिभोजनका त्याग अवस्य करना ॥ २९६ ॥ आगे आठ मवचनमाताओं से आठ भेद चारित्रके होते हैं:---र्जे पिणिघाणजोगजुत्तो पंचस समिदीस तीस गुंतीस । एस चरिसाचारी अट्टविधी होइ णायच्यो ॥ २९७ ॥ प्रणिधानयोगपुक्तो पंचसु समितिषु त्रिप गृतिषु । एप चरित्राचारः अष्टविधो भवति ज्ञातव्यः ॥ २९७ ॥ अर्थ-परिणामक संयोगसे पांच समिति तीन गुप्तियों में न्यायरूप प्रवृत्ति वट आठ भेदवाला चारित्राचार है पेसा जानना ॥ २९७ ॥ ॥ ५६० १) पणिघाणंपि य दुविहं पसत्थ तह अपसत्थं च । समिदीस प गुलीस प सत्यं सेसमप्पसत्यं त २९८ प्रणिपानमपि च दिविधं प्रशसं तथा अप्रशसं च। समितिषु च गुप्तिषु च ग्रसं शेषमप्रशसं हु ॥ २९८ ॥ अर्ध-परिणामके भी दो भेद हैं-शभ और अशम। पांच समिति और तीन गुसियोंने जो परिणाम वे शम होते हैं और दोप इन्द्रियनिषयोंमें जो परिणाम है वह ब्राप्त है ॥ २९८ ॥

77 सहरसरूवगंधे फासे य मणोहरे य इट्रे य । जं रागदोसगमणं पंचविहं होइ पणिवाणं ॥ २९९ ॥ शब्दरसरूपांधे सर्वे च मनोहरे च इट्रेर च ।

यत् रागद्वेपगमनं पंचविधं मचित ग्रागियानं ॥ २९९ ॥ अर्थ—शन्द स्त रूप गंध स्वर्श इन पांचोंके शोमन अशोमन सरूपमें जो राग द्वेपका होना वह इन्द्रियमणियान पांचमका रका है ॥ २९९ ॥

सरूपमें जो राग द्वेगका होना वह इन्द्रियमणियान पांचमका राज्यका है ॥ २९९ ॥

७१ णोइंदियपणियाणं कोहे माणे तहेब मायाणः ।

छोहे य गोकसाण मणपणियाणं तु त्यं बज्जे ॥ ३०० ॥

नोइन्द्रियमणियानं क्रोधे माने वर्षय मायायां ।

छोमें च नोकपाये मनःप्रणियानं तु तत् वर्षयेत् ॥ २०० ॥

लोमें च नोकपाये मन:प्रणिधानं तु तत् वर्जयंत् ॥ २०० ॥ अर्थ — कोधमें, मानमें, मानमें, लोममें इसी प्रकार व्यनंता- वर्जभी कोध आदि कपायोंमें तथा हासादि नव नोकपायोंमें नक व्यापरको करना वह मन:प्रणिधान है, उसको छोड़ना चाहिये ॥ २०० ॥

णिक्ष्वेवणं च गहणं इरियाभासेसणा य समिदीओ। पद्गिवार्वणयं च तहा उचारादीण पंचविहा॥ ३०१॥

निहेपणं च तहा उद्याराहाण पचावहा ॥ २०१॥ निहेपणं च ग्रहणं ईर्यामार्थपणात्र समितवः । प्रतिष्ठापनं च तवा उचारादीनां पंचविद्या ॥ २०१॥ अर्थ—पुत्तकादिका सक्युपेक देशकर रक्षता उदाना स्वरूप भादानिक्षेपण समिति, ईर्या, भाषा, एपणासमिति और मूत-विद्या आदिका माद्यक जगहमें क्षेपण करने रूप प्रतिष्ठापना

समिति-इस तरह समितियोंके पांच भेद हैं ॥ ३०१ ॥

र्मिन्युञ्जोबपओगाउंयणसुद्धीहि इस्पिदो सुणिलो । सुनाणुयीचि भणिया इरियामिदी प्रयमिदि १०६ मार्गोद्योतोषयोगालंबनहादिमिः ईर्यतो हुनैः।

स्यानुवीरया भणिता ईयोगिमितिः प्रवचने ॥ ३०२ ॥

अर्थ-मार्ग, नेत्र सूर्यका मकाल, आनादिने यह, देवन, व्यदि आरुवन-इनकी शुद्धनामे तथा भागविष्णादि सूत्रेवि अनु-सारमे गमन करते ग्रानिक देवांगविति होती है ऐसा बालकी पटा देश १०२ ॥

? हरियायहपश्चिषण्णेणयर्शेमंत्रेण होदि गंतस्य । प्रस्तो जुगप्यमाणं समाप्यमंत्रण संशेण ॥ १०१ ॥

ईयोपधप्रतिपद्मेनायलीयत्यता भवति शंतच्ये । प्रकाः प्राव्याणं गदा अग्रगतिन शता ॥ ३०३ ॥

अर्थ--धेलाश विश्वार आदि यात्रावे बारण शवन बश्ता हो तो ईर्याप्रसं व्यागवा चार हाथ प्रमाण गुर्भको सर्वेत प्रका-शमें देखता ग्रनि शावधानीसे द्वेशा गमन वरे ॥ १०१ ॥

/समर्थं जाणं कुम्मं वा रही या एवमादिया । - बहुमी जेण सम्प्रीत की मम्मी पतसुको अवेशहरूआ

शक्ट याने धार्य वा रथी वा एवसादिकाः । यहारी येन गण्डति स मार्गः प्रायुक्तः भदेतु ॥ १०४ ॥ अर्थ-वन्तारी आदि गारी, राष्ट्रीरी अंश्ति, होती अत्य,

धीश आदिषर शरित स्थ स्थादिक स्युल्यात किए कार्यस चलते हो बह मार्ग बागुक (पविष्र) है ॥ १०४ ॥ 'हरपी आसी खरोटो या गोर्माहरातप्रेक्षण ।

बहुसो जेण गच्छंति सो मग्गो फासुओ भवे ॥३०५

१२६

हस्ती अद्यः खर उष्ट्रो वा गोमहिषगवेलकाः ।

बहुदाः येन गच्छंति स मार्गः प्राप्तुको मवेद् ॥ ३०५ ॥

अर्थ-हाथी घोडा गघा ऊंट गाय भेंस वकरी आदि जी बहुत बार जिस राखेसे गये हों वह मार्ग प्रामुक है ॥ ३०५ ॥ इच्छी पुंसादिगच्छंति आदावेण य जं हदं।

सत्थपरिणदो चेव सो मग्गो फासुओ हवे ॥ ३०५।

मूलाचार--

स्तियः प्ररुपा अतिगच्छंति आतापेन च यो हतः। शसपरिणतथैव स मार्गः शामुकः भवेत् ॥ २०६ ॥

अर्थ-सी पुरुष जिस मार्गमें तेजीसे गमन करें और जो

सूर्य आदिके आतापसे व्याप्त हो तथा हरू आदिसे जोता गया हो

वह मार्ग पासुक है। ऐसे मार्गसे चलना योग्य है॥ ३०६॥

ट सर्च असचमोसं अलियादीदोसवज्ञमणवज्ञं। वदमाणस्सणुवीची भासासमिदी हवे सुद्धा ॥३०७॥

सत्यं असत्यमुषा अलीकादिदोपवर्ग्यमनवद्यं । वदतः अनुवीच्या मापासमितिः भवेत् शुद्धा ॥ ३०७ ॥

अर्थ-द्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा सत्यवचन, सामान्यवचन, मृपावादादि दोप रहित, पापोंसे रहित आगमके अनुसार बोडने-वाले मुनिके शुद्ध मापा समिति होती है ॥ ३०७ ॥ आगे सत्यवचनके भेद वतलाते हैं;—

जणवदसम्मद्रवणा णामे रूपे पटुचसचे य । संभावणववहारे भावे ओपम्मसर्चे व ॥ ३०८ ॥ जनपदसम्मतस्थापनायां नाहि रूपे प्रतीत्यसत्ये च ।

संभावनाव्यवहारे भावे औपम्यमत्ये च ॥ ३०८ ॥ अर्थ-सत्यवचनके दस भेद हैं-जनपदसत्य, संमतसत्य. स्वापनासत्य, नामसत्य, रूपसत्य, मतीत्यसत्य, समावनासत्य, व्यवहारसत्व, भावसत्व, उपमासन्य ॥ २०८ ॥

जणपदसर्वं जघ औदणादि रुचिदे य सञ्चमासाए । यहजणसम्मदमयि होदि जं तु लोए नहा देपी ३०९

जनपदमत्वं यथा औदनादिगैनित्ये च सर्वभाषया । यहजनसम्मतमपि भवति यत्त लोके तथा देवी ॥ ३०९॥ अर्घ-देशसत्य यह है कि जो सब गापाओंसे भातचे नाम जुदेर मोले जाते हैं जैसे चोरू कुछ भक्त । और महुतजनीकर माना गया जो नाम यह समलसत्य है जैसे खोकमें राजाकी सीको देवी फहना ॥ ३०९ ॥

ठपणा ठविदं जह देवदादि णामं च देवदत्तादि । उफ्रडदरोसि पण्णे रूवे सेओ जघ परापा ॥ ११० ॥ म्यापना स्थापितं यथा देवतादि नाम च देवदत्तादि ।

उत्पटनर इति वर्णेन रूपे थेता यथा बटाका ॥ ३१० ॥ अर्थ-जो अर्दत आदिकी पापाण आदिने स्थापना दट स्थापनासत्य है। जो गुणकी अपेक्षा न रसकर व्यवहारके िये देयदर्च आदि नाम रखना यह नाम सत्य है और जो रूपके

बहतपनेसे कहना कि बगलाओंकी पंक्ति सकेद होती है यह रूपसत्य है ॥ ३१० ॥ अण्णं अपेन्छसिदं परुचसत्वं जहा हबदि दिग्धं। यवहारेण य सर्व रञ्झदि कृरी जहा होए ॥ ३११ ॥ अन्यद्पेक्ष्यसिद्धं प्रतीलसत्यं यथा भवति दीर्घ । व्यवहारेण च सत्वं रध्यते ऋरो यथा लोके ॥ ३११ ॥

अर्थ-अन्यकी अपेक्षासे जो कहा जाय वह प्रतीत्यसत्य है जैसे यह दीर्घ (बडा) है यहां इसकी अपेक्षासे है । जो होकर्मे भात पकता है ऐसा बचन कहा जाता है वह व्यवहारसत्य है ३११

संभावणा प सर्च जिंद णामेच्छेज एव कुर्ज्ञति। जदि सको इच्छेजो जंबूदीयं हि पहत्ये ॥ ३१२॥

संभावना च सत्यं यदि नाम इच्छ्रेत् एवं कुर्यात् । यदि शकः इच्छेत् जंबूदीपं हि परिवर्तयेत् ॥ ३१२ ॥ अर्थ-जेसी इच्छा रखे बेसा ही करसके वह संमायनासत्य

है जैसे इंद्र इच्छा करे तो जंबूद्वीपको पलटा सकता है ॥ ११२॥ हिंसादिदोसविजुदं संगमकप्पियवि भावदो भावं ।

ओवम्मेण हु सत्यं जाणसु पलिदोवमादीया ॥ ३१३॥ हिंसादिदोपवियुनं सत्यमकत्पितमपि भावतो भावं । औपम्येन त सत्यं जानीहि पल्योपमादिकं ॥ २१२ ॥

अर्थ-जो हिंसादि दोप रहित अयोग्य वचन भी हो यह भावसत्य है जैसे किसीने पूछा कि चोर देखा उसने कहा कि नहीं देखा । जो उपमा सहित हो वह पचन उपमासत्य है जैसे

पत्योपम गागरोपम आदि कहना ॥ ३१३ ॥ अब असऱ्यादिवचनको कहते हैं;—

तव्यवरीदं मोमं तं उभयं जन्य राघमोमं तं।

तव्यवरीदा भामा असचमोमा हवदि दिहा ॥३१४॥

तिक्षिति मृपा तर्मपं यत्र मत्यगुरा तर्।

तद्विपरीता मापा असत्यमृपा भवति दृष्टा ॥ ३१४ ॥ अर्थ-दस सत्योंने उलटा जी यचन वह असत्यवचन है. जहां दोनों हैं वह सन्यमृपा है और जो इसमे विपरीत है वह असत्यमुपा भाषा है ॥ ३१४ ॥

अम असत्यमुपावचनके भेद कहते हैं:---आमंत्रणि आणवणी जायणि संपुच्छणी य पण्णवणी। पचक्याणी भासा छट्टी इच्छाणुलोमा य ॥ ३१५॥ संसपवयणी य तहा असरामीमा य अहमी भामा। णवमी अणक्त्ररगया असचमोमा हवदि दिहा ३१६

आमंत्रणी आज्ञापनी याचनी संप्रच्छनी च प्रज्ञापनी । प्रत्याख्यानी मापा पष्टी इच्छानुलोमा च ॥ ३१५ ॥ संज्ञयवचनी च तथा अमत्यमृपा च अष्टमी भाषा । नवमी अनक्षरगता असत्यमुपा भवति दृष्टा ॥ ११६ ॥

अर्थ-- हे देवदत्त ऐसा बोलकर संगुलकरना बह आमंत्रणी मापा, आज्ञा करनेरूप आज्ञापनी, याचनीभाषा, प्रछनेरूप प्रच्छनी भाषा, जतलानेरूप महापनी भाषा, त्याग हैनेरूप मत्यारूपानी भाषा, इच्छाके अनुकुल बोलनेरूप इच्छानुलोमा छठी भाषा । संदायरूप अर्थको बहनेवाली संदाययचनी भाषा, भैस आदिका शब्द सरूप आठमी असत्यमुपा है । और अनक्षरी दिब्बध्वनि-रूप वाणी यह नौमी अनक्षरगता असत्यग्रमा कही है। इन भाषाओं में विशेषका जानना न होनेसे सन्य भी नहीं कहसकते ब्लार सामान्य ज्ञान होनेसे असत्य भी नहीं चहसकते. इसलिये ये नी असत्यम्पा भाषा कटलातीं हैं ॥ २१५ ॥ ३१६ ॥

९ मुला•

ट सायज्ञजोग्गवयणं यज्ञंतोऽयज्ञभीरु गुणकंखी।

सावज्ञवज्ञवयणं णिचं भासेज्ञ भासंतो ॥ ३१७॥

सावद्यायोग्यवचनं वर्जयन् अवद्यभीरः गुणकांक्षी ।

मुलाचार--

सावद्यवर्ज्यवचनं नित्यं भाषयेत भाषयन् ॥ ३१७ ॥

अर्थ-जो पापासे डरता है गुणांको चाहता है पापसहि

अयोग्य यचनोंको छोडना चाहता है वह पापरहित वचनोंक

हमेशा बोले यह भी सत्यवचन है ॥ ३१७ ॥

आगे एपणा समितिको कहते हैं:--

🔏 उगमउप्पादणएसणेहिं पिंहं च उवधि सर्ज्ञं च ।

सोधंतरस य मुणिणो परिसुद्धाइ एसणासमिदी ३१८

उद्गमोत्पादनैपणैः पिंडं च उपधि शस्यां च ।

ज्ञोधयत्रथं मुनेः परिञद्भवति एपणाममितिः ॥ ३१८ ॥ अर्थ-- उद्गम उत्पादन अशन दोशोंसे आहार, पुस्तकादि

उपि, वसतिकाको शोधनेवाले सुनिके शुद्ध एपणा समिति होती है। इन दोपीका शरूप आगे कहा जायमा ॥ ३१८ ॥

भागे आदाननिक्षेपण समितिको कहते हैं:-

🗸 आदाणे णियम्बेये पहिलेहिय चक्खुणा पमझेजी ।

द्वयं च द्वयाणं संजमलद्वीए सी भिषम् ॥ ३१९॥ आदाने निश्चेषे प्रतिलेख्य चशुपा प्रमार्जपेत ।

द्रव्यं च द्रव्यव्यानं संयमलस्थ्या स मिश्वः ॥ ३१९ ॥ अर्थ-महण धार रसनेमें पीछी कमंडल भादि बलुकी सथा बधुके सानको पशुमे अच्छीताह देखकर पीछीरी को शोधन

पचाचासाधकार प्रा रदर करता है वह संयमकी माप्तिसे साधु कहलाता है। यदी षादा-ननिक्षेपण समिति है ॥ ३१९ ॥ ^१९ सहसाणाभोइददुष्पमज्जिदअपघुचेक्खणा दोसा । परिहरमाणस्स हुवे समिदी आदाणणिकखेवा॥३२०॥ सहसानाभोगितदुष्प्रमार्जिताप्रत्युपेक्षणान् दोपान् । परिहरतः भवेत् समितिः आदाननिक्षेपा ॥ ३२० ॥ अर्थ-शीमतासे, विनादेखे, अनादरसे, बहुतकालसे उप-करणीका उठाना रखना सरूप दोषीका जो त्याग करता है उसके षादाननिक्षेपण समिति होती है । भावार्थ-समाविसे द्रव्य व दव्यस्मानको नेत्रोंसे देख कोमलपीश्रीसे पुस्तकादिको उठान रराना वही आदाननिक्षेपण समिति है ॥ ३२० ॥

💯 यणदाहकिसिमसिकदे धंडिहेनुपरोधे वित्थिणी । अवगद्दजंत विवित्तं उचारादी विसन्नेन्नो ॥ ३२१ ॥ वनदाहकुपिमपिकृते स्थंडिलेनुपरोधे विस्तीर्णे । अपगतनंता विविक्त उचारादीन् विसर्वयेत् ॥ ३२१ ॥ अर्थ-दावामिसे जला हुआ मदेश, इलकर जुता हुआ स्थान, मसानम्भिका प्रदेश, सारसहित भूमि, छोग जहां रोकें नहीं ऐसी जगह, विशालस्थान, त्रस जीवौरहित स्थान, जन रहित-ऐसी जगहमें मल मूत्रादिका स्याग करे ॥ ६२१ ॥ १/ उचारं परसवणं खेलं सिंघाणपादियं दृष्वं। अधिसभूमिदेसे परिहेहिसा विसम्बन्धी ॥ ३२२॥ उचारं प्रथमणं खेलं सिपाणकादिकं द्रव्यं । अचित्तभूमिदेशे प्रतिहेख्य विसर्वयेत् ॥ ३२२ ॥

१३२

करे ॥ ३२२ ॥

उस धर्मात्मा साधुको बड़ा प्रायश्चित न दे ॥ ३२४ ॥ पदिठवणासमिदीवि य तेणेव कमेण विष्णदा होदि। वोसरणिज्ञं दुव्वं कुथंडिले वोसरत्तस्स ॥ ३२५ ॥ शतिष्ठापनासमितिरापि च तैनेव क्रमेण वर्णिता भवति । न्युत्सर्जनीयं द्रव्यं क्रस्थंडिले व्यत्स्वतः ॥ ३२५ ॥

मुजानार-

अर्थ-तिहा, म्य, कक, नाकका मैल, लादि इयही हो

तुम आदिने रहित प्रामुक्तम्निने अच्छीतरह देसहर विशेषा

१) रादो र पमिलना पण्णसमणवेतिनदम्मि जोगामे। आमंकविसुद्वीए अपहृत्यगकासणं कुल्ला ॥ ३२३ ॥

रात्री त प्रमार्जेपित्या प्रजाश्रमणप्रेक्षिते अपकारे । आर्गकाविशुद्धये अपहन्तकम्पर्शनं कुर्यान् ॥ ३२३ ॥

अर्थ - रात्रिमें संपद्यो पालनेवाले अनार्थमें देशे हुए सानकी भाग भी देश भाठकर मल मुतादि क्षेत्रण करें । जो बड़ां मूहन-

जीवकी आर्शका हो तो उस आरहाकी शुद्धिकेलिये कोमण पीछीको लेकर हथेनीमे उम जगहको देरो ॥ ३२३ ॥

११ जदि तं ह्ये असुद्धं विदियं तदियं अणुण्णये साह । लघुए अणिद्यापारे ण देज साधम्मिए गुरूपो ॥३२४॥

यदि तत् भवेत् अगुद्धं दितीयं तृतीयं अनुमन्येत साधुः । लघु अनिच्छाकारे न देवं संघमिणि गुरु अवः ॥३२४॥

अर्थ—जो पहला स्थान अगुद्ध हो तो दूमरा यदि वह भी

अशुद्ध हो तो वह साधु तीसरा स्थान देखे । कोई समय रोगसे

पीडित होके अथवा शीयतासे अशुद्ध प्रदेशमें मल छूट जाय ती

अर्थ — उसी फहे हुए कमसे मतिष्टापना समिति भी वर्णन की गई है उसीक्रमसे त्यागने बोग्य गरुम्बादिको उक संदिष्ठ स्थानमें निश्चेषण करे । उसीके मतिष्ठापना समिति शुद्ध होती है। १२५॥ जिल्हा स्था अस्तो समिदीहिं महिं विहरमाणोवि।

हिंसादीहिं ण खिल्पइ जीवणिकाआंडले साह ॥३२६॥ एताभिः मदा युक्तः समितिभिः सत्तां विहरमाणोपि । हिंसादिमिनं खिल्पते जीवनिकायाङ्कायां साधुः ॥३२६॥ अर्थे—दन पान समितियोते हमेगा युक्त साधु जीयोके सम्-हसे मरी हुई कुर्णमें विहार करता हुआ भी हिसादि पाणेसे

हसे गरी हुई दृष्योमें विहार करता हुआ भी हिसादि पार्पेसे लिस नहीं होता ॥ २२६ ॥ पडमिणिपत्तं च जहा उदएण ण लिप्पदि सिणेहगुणसुत्तं तह समिदीहिं ण लिप्पदि साधु का एसु इरियंसो ॥३२७

पिप्रनीपत्रं वा यथा उदकेन ने लिप्पते स्नेहगुणयुक्तं । तथा समितीभिः न लिप्पते साधुः कावेषु ईर्यन् ॥ ३२०॥ अर्थ—विसे फमलिनीका पत्र जलमें बढा है तीभी खेहगुण (विकाई) से युक्त हुआ जलसे लिस नहीं होता, उसीतरह

समितियोक्त वरित सापु भी और समृहीमें विद्यार करता हुआ पापसे लिस नहीं होता ॥ १२७ ॥ १९ सरवासिह पर्देतहि जह दिडकवयो ण मिझदि सरेहिं। तह समिदीहिं ण टिप्पह साहू काएसु हरिप्तेनो॥ १२८॥ प्रायुं: वृतदिः यथा दहकवयो ग मिसते ग्रेरं:।

शरवपः पताद्भः यथा रहकवचा न मियत शरः । वथा समितिमिः न लिप्यते साधुः कार्येषु ईर्यन् ॥३२८॥ १३४ म्लानार⊸

अर्थ—जैमे लहाईके सानमें बाजोंकि बर्गांगे बहुते हुए तीक्षणवाणीसे इद बगतंत्रवाजा पुरुत भेदको माम नहीं होता उसीततह छद जीवजातिमयहीमें निहार करता हुआ सानु समितियोंकर बावसे लिस नहीं होता ॥ ३२८ ॥ जन्येय परिद्व यात्रो परिहारणहृदि चरित् सन्येय । चर्मय परिद्व यात्रो परिहारणहृदिसुचिद्व स्तो॥३२९॥ युवेव परित बात्रः पिहरमणोपि परित नवेव ।

बच्चने चुनः स बालः परिहरमाणी विमुच्यते सः ॥३२९॥ अर्थ-अदांतर बाच (अज्ञानी) अगण करता है आचरण फरता है वहां ही त्याणी साधु भी आचरण बृज्ञमण करता है।

परंतु अज्ञानी लिस होनेसे वंधता है और स्थान करनेवाला सायु यहाचारमें लीन होनेसे कर्मोसे मुक्त होता है ॥ ३२९ ॥ तम्हा चेट्टियुकामो जङ्या तझ्या भवाहि तं समिदो । समिदो हु अण्ण णदियदि खयेदि पोराणमं कम्मं॥ ३३० तसात् चेटियुकामो यदा तदा मत्र समितः।

समिदो हु अपण णिदियदि स्वयेदि पोराणमं कम्मं ॥ ३३० तसात् पेधितुकामो यदा तदा मव त्वं समितः । सितः । सितः सखु अन्यत् नाददाति ध्रपति पुराणं कमं ॥३३०॥ अर्थ--हसकारण हे सितः । वव गमनकरनेक इच्छा है वव तु समितिये परिणत हो, बगोंकि जो सित समितिये परिणत होता है वह नवीन कमोंको तो महण नहीं करना और पुराने कमोंको स्वयं करता है। ३३०/॥ ०५% अव ग्रसिका सहस्य कहते हैं;—

्रमण्डाका सर्वे कहा हा— मण्डविकायपंउत्ती भिक्खू सावज्ञकज्ञसंज्ञता । स्टिप्पं णिवारयंतो तीहिं दु गुत्तो हवदि एसो॥३३१॥ ११ मनोबाबायप्रवृत्तिं मिश्रुः साबद्यकार्यसंयुक्तां ।

क्षिप्रं निवारयन त्रिभिम्तु गुमो भवति एषः ॥ ३३१ ॥ अर्थ-हिंसादिकायोंने मिलीहुई मन यचन कायकी प्रकृतिकी बीप ही दूर करता हुआ साथु है यह तीन गृशिका धारक

होता है ॥ ३३१ ॥ (१) जा रायादिणियत्ती मणस्म जाणाहि मं मणोग्रणी ।

अठियादिणियसी पा मोर्ण पा होदि पचिगुसी॥१६२॥ या रागादिनिकृषिः मनगः जानीहि तां मनोगुर्वि । अलीकादिनिवृत्तिः या मीनं वा भवति वचायुप्तिः॥११२॥ अर्थ-- जो मनकी रागडेप आदिसे निवृत्ति (स्याग) दे उसे मनोगुप्ति समझो, जीर जो असत्य बचनोदा स्थान अथवा

भीनकर ध्यान आदि वह बचनगुप्ति है ॥ ६६२ ॥

भ कायकिरियाणियनी काउरमामो गरीमं गुनी । हिंसादिणियशी था सरीरगुशी हचदि एमा ॥ ३३३॥ कायकियानिवृत्तिः कायोत्मर्गः शरीरके गुप्तिः । हिंसादिनिक्वियां धरीरगुप्तिर्भवति एषा ॥ १११ ॥

अर्थ-शरीरतंबंधी चेष्टाकी अप्रवृति वट शरीरमुसि है अथवा कायोत्मर्भ अथवा दिगादिमें प्रवृत्ति न होना वह भी दारीरगुभि दें ॥ १११ ॥

🎶 रोसास पहें जबसम स्वाह्या अहब होह पावारों। तह पापस्य णिरोही नाओं गुलीओ साहस्या। ३६४॥ धेयस प्रतिः नगरस्य सातिका अथवा भवति प्रावारः । तथा पापस निरोपः ताः ग्रुप्तयः साधीः ॥ ३३४ ॥

अर्थ-जैसे अनाजके खेतकी रक्षके लिये बाहि होती है अथवा नगरकी रसारूप साई तथा कोट होता है उमीनरह पाकी रोकनेके लिये संयगी साधुके ये मुतियां होतीं हैं ॥ ३३४ ॥ तम्हा तिविहेण तुमं णिचं मणवयणकायज्ञोगेहिं। होहिस समाहिदमई णिरंतरं झाण सज्झाए ॥ ३३५॥

तसात त्रिविधेन त्वं नित्यं मनोत्रचनकाययोगः। मव समाहितमतिः निरंतरं ध्याने साध्याये ॥ ३३५ ॥

अर्थ-इसकारण हे साधु तू कृत कारित अनुमोदना सहित मनयचनकायके योगों (प्रवृत्ति) से हमेशा ध्यान और स्वाध्यायमं सावधानीसे चित्रको छगा ॥ ३३५ ॥

िं एताओ अद्वयवयणमादाओं णाणदंसणवरित्तं । 🦙 रक्लंति सदा मुणिणो मादा पुत्तं व पयदाओ॥३३५॥

एता अष्टप्रयचनमातरः ज्ञानदर्शनचारित्रं । रक्षंति सदा मुनेः माता पुत्रमिव प्रयताः ॥ ३३६ ॥

अर्थ--ये पांच समिति तीन गुप्तिरूप आठ प्रवचनमातायें मनिके ज्ञान दर्शन चारित्रकी सदा ऐसे रक्षा करती हैं कि जैसे सावधान माता पुत्रकी रक्षा करती हो ॥ ३३६ ॥

आगे ब्रतोंकी मावनाओंको कहते हैं;—

🕽 एसणणिवसेवादाणिरियासमिदी तहा मणोगुत्ती । आलोयभोयणंपि य आहिंसाए भावणा पंच ॥३३७॥ एपणानिक्षेपादानेर्यासमितयः तथा मनोगृष्टिः ।

आलोक्यमोजनमपि च अहिंसाया भावनाः पंच ॥३३७॥ अर्थ--एपणासमिति, निक्षेपादानसमिति, ईर्यासमिति, मनी-

बोलना-ये पाच सत्यवतर्रः जननार्वे हैं ॥ ६६८ ॥

त्रिज्ञायणसमणुण्णमणा अणण्णभायोथि यशायिस्मधीय
मापिमओवकरणस्सणुर्थानीसेवणं शावि ॥ ११९ ॥
यात्रा समनुज्ञापना अनन्यभावीपि त्यक्तप्रतिसेवी ।
साधर्मिकोपकरणस्तानुर्विचित्रंवनं शावि ॥ ११९ ॥
अर्थ—आधार्थादिसे पार्थनाकर पुमकादि केता, तितके
उपकरण हैं उसके जताकर तेना, तुष्टमाक कर्यान् परकी बलुनै
आसपुद्धि न ा. निर्देष पर्योवकरण करण करना अववा
विवन (आधार्थ) को स्त्रु, करना, त्यावण्यवाकोक पुमक्त
वीती आदि उपकरणोको आवाक अनुतार सेवना-पेसे ये

अर्थायंगदानतको पात्र भारताये हैं ॥ ११९ ॥ री) महिलालोपण पुण्यदिसणं संसम्पधनपियिवत्तार्हि । पणिदरसिहिं य विरदी य भारतणा पंयत्नात्रिता।१४०॥ महिलालोकतं पूर्वरिकसणं संगत्त्रयात्रित्वक्याभ्यः । मजीवरसभ्ययं विरतिय भारताः पंय महाणि ॥ २४० ॥ अर्थ—दुष्ट परिलालीते सिलोको देसता, परते महस्य भर-

स्याके भोगोंको याद करना, द्रव्यसहित अथवा रागसहित वस तिका होना, संयमके विरुद्ध दुष्ट रागकथा करना, इष्टरूप पुष्टि फरनेवाला मद फरनेवाला आहार-इन पांचोंसे विशक्त होना

त्याग करना वे पांच ब्रह्मचर्य महावतकी भावनायें हैं ॥ ३४० ॥ र्) अपरिग्गहस्स मुणिणो सहप्करिसरसरूवगंधेसु । रागद्दीसादीणं परिहारी भावणा पंच ॥ ३४१ ॥

अपरिग्रहस्य मुनेः शब्दस्पर्शरसरूपगंधेषु । रागद्वेपादीनां परिहारः भवनतः दंग ॥ ३४१ ॥

अर्थ-परिमहरहित मुनिके शब्द स्पर्श रस रूप गंप इन पांच विषयोमें राग द्वेष न होना-ये पांच, भावना परिप्रहत्याग-

महायतकी है ॥ ३४१ ॥ र्रो 'ण करेदि भावणाभाविदो हु पीलं बदाण मध्ये(स)

सापू पासुसो स मणागवि किं दाणि वेदंनी । रिश्सी ने करोति भावनाभावितो हि पीडां व्रतानां सर्वे गीरा सापुः प्रमुप्तः स मनागपि किमिदानी वेदयद् । ३६ ॥२॥ अर्थ--पंगीम भावनाओं हो। भग्नता सनि सोताहुआ भी रा मनोंकी निराधना नहीं करना तो जामन अवसाधी यथा यान

है। समर्गे भी उन भावनाओं हो। देखना है मनौकी निरापना महीं देमना ॥ ३७२ ॥ 🕽 एदाहि भावणाहिं दु तम्हा भावहि अप्पमत्ती तुं। अच्छिदाणि अग्रंडाणि ते भविरमंति हु यदाणि॥३४३॥ एतानिः मापनाभिन्तु तसात् भाषय अवमणस्यं ।

अच्छिद्राणि अरोडानि ते मविष्येति स्ट्राः ब्रतानि ॥३४३॥

अर्थ—इसिटिये प्रमादरहित हुआ तू इन सावनाओंसे आत्माका चितवन कर क्योंकि इनके भावनेसे निश्चयकर निर्देश संपूर्ण वत तेरे होंगे॥ ३४३॥

अव तपाचार कहनेकी प्रतिज्ञा करते हैं;—

एसी चरणाचारो पंचविघो विण्यदो समासेण ।

एसी य तवाचार समासदो वण्णविस्सामि॥ ३४४॥

तो य तवाचारं समासदो वण्णविस्सामि॥ ३४४ एप घरणाचारः पंचविषो वर्णितः समासेन ।

इतम्र तप आचारं समामतो वर्णपिप्यामि ॥ ३४४ ॥ अर्थ—इसतरह ये पांच मकारका चारित्राचार संशेपरे कहा यहाँसे आगे तपाचारको सक्षेपरे छहता हूँ ॥ ३४४ ॥ द्वितहो प तपाचारो पाहिर अञ्चलरो सुणेयच्यो ।

पुषेको विष छद्धा जघाकमं तं परुषेमो ॥ ३४५ ॥ द्विषिध्य तप् आचारः शास आन्यंतगे झातच्यः । एककोषि च पोद्धा ययाकमं तं प्ररूपयामि ॥ ३४५ ॥

अर्थ---तपाचारके दो भेद हैं-बादा, आम्यंतर । उनमेंसे भी एक एकके छह छह भेद जानना । उनकी भै कमसे फहता ही ॥ १९५ ॥

आगे बाद्यतपदा वर्णन करते हैं;---

जाग बादराज्ञ वर्षण स्ता हु, अज्ञासण अवस्थानित्रियं समारित्याओं य द्वासिपरिसंखा। कायस्म च परितायो विवित्तासपणासणं छट्टं ॥३४६॥ अन्तरानं अवनीदर्यं समारित्यामय प्रतिपरिसंख्या ॥ कायस्य च परितायो विविक्तायनासनं पर्छे ॥ ३५६ ॥ अर्थं—अन्तरान, अवनीदर्यं, सवारित्यान, इविडी परिसंख्या, मुलाबार-

\$80

कायमारन, जीर छठा-निविक्तसम्बासन-इस्तरह शद्धवरहे छर भेर हैं॥ २४६॥ इतिरियं जायजीयं दुविहं पुण अणसणं सुणेद्वयं। इतिरियं साकनं णिरायकेलं हवे पिटियं॥ २४७॥

इतिरियं मारजीं विविधं पुनः अनुसर्ने मानच्यं। इतिरियं साक्षेत्रं निराक्तिं भवेन दिनीयं॥ २४०॥ अर्थ--अनुसन्तर्वाके दो भेर हिन्दितिष्, सावसीर। कानकी मर्योग्रोगे इतिरिय होता है और दूसरा भाकांसरि। होता है। २४०॥

ए३इमर्गम्यायगेहि मामदमामगमणाणि । कर्णमेमायन्त्रभारी सयोजिहालाणि लाहारे ॥ ३४८॥ पहाहमरगमजर्जाः माग्रोमायशमणानि ।

पहाहमद्दानजाद्दानं मागाभामाभागानी ।
कर्ना करान्याद्दीनि नयेनिधानानि जनाद्दारे ॥ ३४८ ॥
कर्ना करान्याद्दीनि नयेनिधानानि जनाद्दारे ॥ ३४८ ॥
ये वर्षा न्यान जर्म भूषे अवना ज्यान कर्दा है, एद भीवन्
वे राषा त्यान वर वो जनाय कर्दा जाने है इसी क्षेत्र करा करी
है। तत्र भया वर्षा वाद्या, चंद्रहे, एकमाग साम, कमहाय शै
व्याद्धार मुग्न समामान्यांकि सिंदिनिकीटिंग द्यारि नयेनि करार से मुग्न समामान्यांकि सिंदिनिकीटिंग द्यारि नयेनि

कर निरुद्धार अन्यानवाद्यं करते हैं।— अस्त्रकृतमा क्रेनिया पाठवसमयानि ज्ञापि सरणाणि है अस्त्रोति सुबसाही बीजस्या निरुवर्षणाणि ॥ ३४९ ॥

क्षणनेति एकमादी घोषस्या निरूषकेणानि ॥ ३४९, मन्दर्यतना रीमनी प्राणेतनपत्राति गाति मण्याणि ।

अन्यान्यपि एवमादीनि बोद्धव्यानि निरवकांक्षाणि॥३४९॥ अर्थ-मरणपर्यंत चारी मकारके आहारका त्याग करना बह निराकांक्ष अनुमनतप है। उसके मुख्य तीन भेद हैं-भक्तप्रतिहा. इंगिनीमरण, प्रायोपगमनमरण । जिसमें दोसे हेकर अहताहीस सक निर्यापक्षमुनि जिसकी दारीरसेवा करें तथा आप भी अपने अंगोंसे दारीरकी टटल करे ऐसे गुनिक आहारका स्थान बह भक्तमतिला है । जिसमें परके उपकारका अपेक्षा न हो वह इंतिनीमरण है, और जिसमें आप पर दोनोंकी अपेक्षा न हो यह प्रायोपगमनमरणत्याग है। इत्यादि अन्य भी निराकांश त्यागमे रेकर सर्व निराकांश अनशनतप जानना ॥ ३४९ ॥ अब अवगीदर्यतपका सरूप कहते हैं:---

षशीसा किर कवला पुरिसस्य दू होदि पपदि आहारो । एगक्यलादिहिं ततो अणियगहणं उमोदरियं॥१५०॥ द्राविश्वत् फिल कवलाः पुरुपस्य तु भवति प्रहत्या आहारः। एकप्रवलादिमिम्नत ऊनितप्रहणं अवमीदर्यम् ॥ १५० ॥ अर्थ-पुरुषका साभाविक आहार बतीस मास होते हैं उनमेंसे एक गरसा आदि कमती करके हेना वह अवधीदर्य

सप है ॥ ३५० ॥

थम्मायासयजोगे णाणादीये उचरगरं कुणदि । ण प इंदियप्पदोसयरी उमोहरितबोयुक्ती ॥ १५१ ॥ धर्मावस्यक्योगेषु ज्ञानादिके उपव्रद्दं करोति । म प इंद्रियप्रदेवकरी अवसादर्यत्वोद्दत्तिः ॥ ३५१ ॥

अर्थ-क्षमादि धर्मोंने, सागायिकादि व्यावस्थकोने, क्ष्म-

मूबायार-

१४२

म्यारि बोनोंने तथा साध्याय आदिने मह अस्मीदर्भ तरही हु? उपकार करती है और इंद्रियोको होन्यायारी नहीं होने देतीहरूहें आगे सम्परिताम तपका सहद कहते हैं;—

भागं सम्परिताम तम्बा सहर हर्त है;— मीरवृहिमप्पिलेलगुडलयणाणी या जी परिष्यणी । निसमसूकमार्गपिलमपुरस्माणीया जी स्पर्णी ॥ १५१॥ धीररिमिर्गिलगुडररणानी या गुपरितानी ।

तिकका क्रायामान प्रस्तान । या प्राट्सन । विक्रका क्रायामान प्रस्तान । १५२॥ वर्षे — ए रही भी तेल भुद्र लगा (भीत) इन हर्र रहेका लगा भागा करिय क्षामा करिया कार्य भीता इन्हेरे रहत वह स्थापियान तम ते ॥ १५५२॥

त्यात वह स्वयास्त्यात तम् द्व ॥ इत्तर् ॥ चनो वार महानिकृतियोंको करते हैं।—— चन्नारि सर्वातियादी च सीति यावणीत्मनमीतमञ्जू

के नामकोगयामां जामकाशिओं एक्सों ॥ १८१ ॥ नाका महारिष्ठमान गति नातिमामां पापि । कोन्समेग्द्रामेनमारिण एनाः ॥ १५१ ॥ व रे---कोरी, भारत, शंभ, शहन वे चार महारिष्टीं

है र पन मर (मानमान व नहां) और दियाओं करीं है । १५५ म कल्मा जिसेलियायळचीरला लवरामानिकामेंगा ! लस्मी जानचीन पिट्युइस्मी पुरा पेन ॥ ३५४ ॥

सरकोर जानचीन जिल्लाहरको पूरा पेन ॥ ४८४ ॥ ब्राजानिकालिका नायनीतमा स्वाममाधिकापेन । नाः नायनीर्वे दिल्लोहा पूरा पेर ॥ ४५४ ॥ बर्वे स्पर्यकालकार वास्त्र दर्गनेवारी बीट नपकी कियामें सायधान रहनेवाले मध्यजीयको इन चारोंका मरणपर्यंत सबसे पहले त्याग करदेना चाहिये॥ ३५४॥

आगे श्विपरिसंस्यानतपको कहते हैं;— गोयरपमाण दायगनायणणाणविधाण जं गहणं। तह एसणस्स गहणं विविधस्स युशिपरिमंचा॥१५५॥

गोचरप्रमाणं दायकमाजननानाविधानं यद्वहणं । तथा अधनस्य ग्रहणं विविधस्य षृत्तिवरिसंग्य्या ॥ ३५५ ॥

अर्थ---गृहोंका प्रमाण, भोजनदाताका विदीव, कांगे आदि-पात्रका विदोव, जीर मींड सण् आदि भोजनका विदेश-राजे अनेकताहक विकल्प कर भोजन प्रदण करना वह शृष्यिसिं स्वावव हैं। जैसे आज हम कांसेक पात्रों अथवा सण् मिलेगा तभी आहार लेंगे नहीं तो न लेंगे स्वादि कटिन प्रतिशार्ये

अंतरायकर्मकी परीक्षार्थ साधुजन करते हैं ॥ ३५५ ॥ आगे कायक्रेशतवको कहते हैं:—

टाणमयणासणेहिं च विविहेहिं च बन्मवेहिं बहुगेहिं। अणुवीचीपरिताओं कापिकिटेसी हबदि एसी॥१५६॥

स्थानश्चयनामन्थं विविधेधावष्ठहेः पहुनिः । अनुगीविपरितापः कायत्रेद्धाः भवति एपः ॥ ३५

अनुपीचिषरितापः कायन्रेयः भवति एपः ॥ २५६ ॥ अर्थ-सहा रहना, पक्षार्थ मृतक्षी तरह तीना, बीरात-नादिसे वैठना ह्वादि अनेक तरहकं कारणीते सामके अनुमार आतापन आदि योगीकर सरिग्रेस देना वह कायहे-सत्तर है। १५६॥ \$88

न्यागे विविक्तशय्यासनका सरूप कहते हैं;— तेरिक्त्वी माणुस्सिय सविकारिणिदेविगेहिसंसत्ते । वर्जेति अप्पमत्ता णिलग् सर्वणासण्डाणे ॥ ३५७।

वज्ञात अप्पमत्ता णिलए संघणासणहाण ॥ ३५७। तिरश्री मानुषी सविकारणीदेवीगेहिसंसकान् । वज्यति अप्रमत्ता निल्यान् ग्रयनासनम्यानेगु ॥ ३५७।

अर्ध—गायआदि तिर्थिवनी, कुशील सी, मवनवासी व्यंतर्र देवी, अर्थवमी गृहस्थ-इनके रहनेके निवासीको बनाचारी सुन् शयन आसन सङ्गाहना इन तीन कार्योमें छोड़े अर्थत बहुं शयनादि न करे॥ ३५७॥ उत्तीके विविक्तस्यासन तर

होता है। सी णाम बाहिरतवो जेण मणो दुषडं ण उद्देदि। जेण य सदा जायदि जेण य जोगा ण हीयंते॥३५८॥

ात व सद्धा जावाद जाग व जागा ज हावताद का तत् नाम ग्राह्मत्यः येन मनः दुष्कृतं न उचिष्ठति । येन च श्रद्धा जायते येन च योगा न हीयंते ॥ १५८॥

अर्थ-हे शिष्य ! वही बाबतप है जिससे कि जिपने हैंग (खेद) न हो, जिससे पर्ममें प्रीति बढे जार जिससे मूळगुणीनें कमी न हो॥ ३५८॥

एसी हु याहिरतवी याहिरज्ञणपायडो परम घोरो । अञ्मतरज्ञणणादं वोच्छं अञ्मतरं वि तयं ॥ ३५९ ॥ एतन वार्षं तुरो बाहानुसम्बद्धाः एतम् होरं ।

एततु बाद्धं तपो बाद्धजनप्रकटं परमं घोरं । अभ्यंतरजनज्ञातं वस्ये अभ्यंतरमपि तपः ॥ ३५९ ॥ अर्थ—यह एह प्रकारका तप बाद्ध मिध्यादृष्टियोंके भी ग

अभ्यत्रजनञ्जात बस्य अभ्यत्रमाय तथः ॥ २२८ ॥ अर्थ- यह छह मकारका तथ बाह्य मिध्यादृष्टियोंके भी भगट अर्लत दुर्भर हो सकता है इसलिये बाह्यतय कहाजाता है । जीर जो कागमर्ने प्रयेश करनेवाले ज्ञानी वर्नोकर जाना गया ऐसा अंतरंगतप है उसे भी मैं कहता हूं ॥ ३५९ ॥ . अब अंतरंगतपरे भेदोंको कहते हैं;—

पापच्छित्तं विणयं वैज्ञावयं तहेय सन्झायं । झाणं च विउरसागो अन्भंतरुओ तयो एसो ॥३६०॥ प्रायक्षितं विनयो वैवाइत्त्वं तथेव साध्यायः ।

प्रायश्चितं विनयो वैपाइन्तं तथैय खाध्यायः । ध्यानं च ब्युत्सर्गः अभ्यंतरं तपः एतत् ॥ १६० ॥ अर्थ----प्रायश्चित विनय वैयाइन्य खाध्याय ध्यान ब्युत्सर्ग-ये एट भेद अंतरंग तपके हैं ॥ १६० ॥

कामे मायध्यिष्ठपका सरूप करते हैं;— पायन्टिए सं ति तयो जेण विसुडसदि हु पुज्यकपपार्य ! पायन्टिए सं पत्तोस्ति तेण सुसं इसविषं तु ॥ ३६१ ॥ प्रायक्ष्तिं इति तपो येन विद्युश्यति हि पूर्वकृतपायात् । प्रायक्षितं प्राप्त इति नेन उक्तं द्यविषं तु ॥ ३६१ ॥

आर्थाचन प्रशास हात नन उक्त द्वायय हा। रूर ।।
आर्थ—सर्वां क्योड्य दोगेंको प्राप्त हुआ यति जिससे पूर्वं
किये पायोसे निर्देश होजाय बहु प्रायध्यितव हैं उसके दस भेद हैं ॥ ३६१ ॥

आहोयणपडिकमणं उभय विवेगो तहा विउस्सन्गो। तव छेदो मूर्ल विप परिहारो चेव सहहणा ॥ ३६२॥

आलोचना प्रतिक्रमणं उमयं विवेकं तथां ब्युत्मर्गः । तथः छेदो मुलमयि च परिहारः चैव धदानं ॥ ३६२ ॥ अर्थ—आलोचना, प्रतिक्रमण, होनी, विवेक, व्युत्तरं, तथ, छेद, मुल, परिहार, अद्वान–ये दश्च भेद प्रायधिषके हैं ॥ १ मुलस् १४६

प्रतिक्रमण है, आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करना वह उमय है, गणविवेक सानविवेक ऐसे दो प्रकारका विवेक है, कायो स्तर्गको व्युत्सर्ग कहते हैं, अनशनादि तप हैं, दीक्षाका पक्ष मास दिसे घटाना वह छेद है, फिर उस समयसे लेकर वतधारण दरना वह मूल है, परिहारके दो मेद हैं गणप्रतिबद्ध अगणप्रतिबद्ध। उनमेंसे जहां गणमें बैठकर किया करना कि जहां मुनिजन मुत्रादि करते हों वहां वैठ पीछी जगाडीकर यतिओंको वंदना करे उसको यति पतिवंदना न करे वह गणपतिबद्ध है। तथा जिस देशमें धर्म नहीं जाने वहां जाके मौनधारण करके तपश्चरण करना वह अगण-मतिबद्ध है। तत्त्वींमें रुचि होनेरूप परिणाम अथवा क्रोघादिका त्याग वह श्रद्धान है। इसतरह प्रायश्चित्तके दश भेद जानना॥३६२

मुठाचार—

वह आलोचना है, रात्रिमोजनत्यागत्रतके साथ महावर्तोकी भावना करना दिवस प्रतिक्रम पाक्षिकआदि प्रतिक्रमण करना वह

पोराणकम्मलमणं खिवणं णिज्ञरण सोघणं धुभणं। प्रव्छणमुख्यिण छिदणं ति पायचित्तस्स णामाइं३६३ प्रराणकर्मक्षपणं क्षेपणं निर्जरणं शोधनं धावनं । प्रच्छनं उत्क्षेपणं छेदनमिति प्रायथिचस्य नामानि ॥३६३॥ अर्थ-पुराने कर्मीका नाश, क्षेपण, निर्झरा, शोधन, धावन, पुच्छन (निराकरण) उरक्षेपण, छेदन (द्वैधीकरण)-ये सब मायश्चित्तके नाम हैं ॥ ३६३ ॥

भागे विनयका सरूप कहते हैं:---दंसणणाणे विषाओ चरित्ततव ओवचारिओ विणओ। पंचविषः सद्ध विनयः पंचमगतिनायको मणितः ॥३६४॥

अर्थ-दर्शनविनय, ज्ञानितन्य, सर्गविनय, लाग्नितिय उपचारविनय-इसतरह विनयक पाच भेद है । यह विनय मोक्ष (सिद्ध)यतिको पास परानेवाला कहा गया है ॥ ६६४ ॥ उचग्रहणादिआ पुरुषुना मह भिनाआदिआ च गुणा । संकादियञ्चणं विय इंसणविणओ समासण ॥ १६५ ॥ उपगृहनादिवाः पूर्वीता मथा भत्तयादयथ गुणाः । धंकादिपर्जनमपि च दर्धनविनयः गमासन ॥ ३६५ ॥ अर्थ-उपगृहन आदि पटते वर्दे हुए गुज, वंबपरगेशीरी भिक्त आदि, बार दांकादि दोधीका त्याग होना यह सहीपमें दर्श-निवित्तय वटा गया है ॥ ३६५ ॥ जे अरधपञ्चया चग्दु उपदिहा जिणयरेहि गुद्रणाणे । ले तर रोपेटि णरी दंगणविष्यों स्वर्ट गुग्री १६६ ये अर्थपर्यायाः गाउ उपदिएा जिनवरः शुक्ताने । तान तथा रोचयति नरः दर्शनविनयः भवति एषः १६६ अर्थ-- जो जिनबरदेवने हांद्रशाय शत शान्ती स्थव सहस जीव अजीवादिद्रव्योके पूर्वाय कहे हैं उसी प्रकार प्रतीति करना बट भव्यजीवके दर्शनिविषय होता है ॥ १६६ ॥

कारे दिणम् उपराणे पर्माणे नरेष जिल्ह्या । पंजनशरथनद्वसर्थ दिणओ जाणीर अहबिरी ३६७ बारे रिनये उपधाने बहुमाने वर्धेय अनिरवे ।

र्व्यजनार्थतदुमयं विनयो झाने अष्टविघः ॥ ३६७ ॥ अर्थ--कारुशृद्धि, इस्तुशृद्धि विनय, सावधानीसे पाठको वाद रसना, गुरु आदिका सरकार, ज्ञानको गर्ही छिपाना, सन्द् शुद्धि, अर्थ शुद्धि, दोनोंकी शुद्धि-इसतरह ज्ञानकी विनयके आठ

वध शुद्ध, दोनोक्ष शुद्ध-इसतरह द्यानकी विनयके बाढ भेद हैं ॥ १६० ॥ णाणं सिक्स्विद णाणं गुणेदि णाणं परस्स उधिदसिदे। णाणेण ऋणदि णागं णाणविणीदो हचिद एसो १५८

ाणेण क्रुणदि णायं णाणचिणीदो हचदि एसो ३६८ ज्ञानं शिक्षते ज्ञानं गुणयति ज्ञानं परस उपदिशति । ज्ञानेन करोति न्यायं ज्ञानविनीतो मवति एपः ॥ ३६८॥

अर्थ—जो ज्ञानको सीसता है ज्ञानका ही जिंतवन करता है, दूसरेको भी ज्ञानका ही उपदेश करता है, ज्ञानसे ही न्यायपद्वि

करता है वह जीव ज्ञानविनयवाल होता है॥ ३६८॥ इंदियकसायपणिहाणंपि घ गुत्तीओ चेव समिदीओ। एसो चरित्तविणओ समासदो होइ णायच्यो॥३६९॥

इन्द्रियक्तपायप्रणिधानमपि च गुप्तथः चैव समितवः। एप पारित्रविनयः समासतो भवति शातव्यः॥ ३६९॥ अर्ध—इद्रियेकि व्यापारका रोकना, कोभादिकपायोक प्रवास्के

रोकना, गुप्ति, सनिति-ये सब संक्षेत्रसे चारित्र विनय है ऐसा जानना ॥ २६९ ॥ उत्तरसुणउद्योगो सम्मं अहियासणा य सद्धा य ।

आयासयाणस्चिदाण अपरिहाणीयसुरमेहो ॥ ३७०॥ उत्तरमुणोयोगः सम्यगभ्यासनं च भद्धा च । आरस्यकानामुचिनानां अपरिहाणिरसुरसेषः ॥ २७०॥ अर्थ---आतापनादि उत्तर गुणोंमें उरसाइ, श्रमको निरा-कुलतासे सहना, प्रीति जीर छह आवश्यकोंमेंसे कमती बदती नहीं करना !! ३७० ॥

भत्ती तवोधियम्हि य तवम्हि अहीलणा य सेमाणं। एसो तवम्हि विणओ जहत्तचरित्तसाहस्स ॥ ३७१॥

सा तथान्ह विणेजा जहुराचारसासाहृस्स ॥ ३७१ मिकः तपोधिके च तपसि अहेटनां च श्रेपाणां । एप तपसि विनयः ययोक्तचारित्रमाधोः ॥ ३७१ ॥

अर्थ---वचसे अधिक द्वनियोंने जीर भारह प्रकार तपने भाकि करना-सेवा करना तथा इनसे बाकीफे उच्छट वच नहीं पाउनेवाले द्वनियोंका तिरस्कार नहीं करना अर्थात् सब संविधियोंको नगस्कार करना यह द्यासकवित चारिकको पाउनेवाले द्वानियोंक तपने चिनय होता हैं ॥ ३०१ ॥

काह्यवाह्यमाणसिओिलाअ तिविहो हु पंचमो विणओ स्रो पुण सच्यो दुविहो पपक्लो नह परोक्लो य १७२ कापिक्लाचिकमानसिक इति च त्रिविपस्तु पश्चमो विनयः । स प्रनः सर्वो डिविपः प्रत्यस्त्या परोक्ष्य ॥ १७२ ॥

परोक्ष ॥ ६७२ ॥ अब कायिकविनयको चारगायाओसे कहते हैं;—

अन्मुट्टाणं किदिअम्मं णवण अंजलीय मुंटाणं । प्रमुख्यणमेदे पछिदस्सणुसायणं येव ॥ १७३ ॥

अभ्युत्थानं कृतिकर्म नमनं अंत्रहिना गुंडानां ।

प्रत्युद्धमनमायानस्य प्रस्थिनस्यानुगाघनं नीव ॥ ३७३ ॥ अर्थ-सापुओंको आते हुए देरी बहुते ही आसन्ते दः सड़े होजाना, तिद्धमार्क आदि करके कार्यास्तर्य करना, हाक जोड़कर नमस्कार करना, आते हुए क्राधिसंके सामने जाना जानेवालोंको एहुंचानेके लिये साथ जाना-इन तरह कार्यसे आदर

करना॥ ३७३॥

णीचं ठाणं जीचं गमणं जीचं च आसणं सयणं। आसणदाणं उचगरणदाणं ओग्गासदाणं च॥३७४॥

नीचं स्थानं नीचं गमनं नीचं च आसतं श्रयनं । आसनदानं उपकरणदानं अबकाशदानं च ॥ ३७१

आसनदानं उपकरणदानं अवकाशदानं च ॥ ३७४ ॥ अर्थ--- शुरु आदिके पीछे सड्डे रहना, पीछे गमन करना,

अथं--गुरु आदिके पीछे खड़े रहना, पीछे गमन करना, नीचे बैठना, नीचे सोना, गुरुऑंको आसन देना, पुसक आदि धर्मोपकरण देना, प्राप्तुक वसतिका बतादेना-इत्यादि कायत्रिनय

है ॥ ३७४ ॥ पुडिरूवकायसुंकासणदा पुडिरूपकालुकिरिया य ।

पाडस्वकायसफासणदा पाडस्पकाराकारया य । पोसणकरणं संथरकरणं उवकरणपडिलिहणं ॥ ३७५ ॥ श्रतिस्पकायसंस्पर्धनता श्रतिस्पकालक्रिया च ।

प्रेप्पकरणं संस्तरकरणं उपकरणं प्रतिलेखनं ॥ रे७५ ॥ अर्थ-वलके अनुसार द्यारका स्पर्धन मर्दन, कालके अनु-सार क्रिया करना अर्थात् उप्पकालमें द्यीतक्रिया द्यीतकालमें

सार किया करना अर्थात् उप्णकारुमें शीतकिया शीतकारुमें उप्णकिया, शाज्ञाके अनुसार करना, सथारा करदेना, युलकादिका सोधदेना ॥ २७५ ॥

समदना । २७५ ॥ इचेवमादिओ जो उवयारो कीरदे सरीरेण । एसो काइयविणओ जहारिहं साधुवग्गस्स ॥ ३७६ ॥ इत्येवमादिको यः उपकारः कियते शरीरेण । एपः कायिकविनयः यथाई साधुवर्गस्य ॥ ३७६ ॥ अर्थ-इत्यदि गुरुओंका तथा अन्य साधुओंका जो अरीरसे यथायोग्य उपकार हे वह सब कायिक विनय जानना ॥ ३७६ ॥ आगे वाचिकविनयका सरूप कहते हैं:---पूर्वावयणं हिद्रभासणं च मिद्रभासणं च मधुरं च । सत्ताणुवीचिवयणं अणिद्वरमकक्षसं वयणं ॥ ३७०॥ पृजावचनं हितभाषणं च मितभाषणं च मधुरं च । ग्रेत्रानुषीचित्रचनं अनिप्ररमकर्कशं वचनं ॥ ३७७ ॥ अर्थ-ऊंचे (पूज्य) वचनोंसे बोलना, हितस्रप बोलना, थोड़ा बोलना, मिष्ट बोलना, आगमके अनुसार बोलना, फटोरता रहित वचन बोलना. ॥ ३७७ ॥ उवसंतवयणमगिद्दत्थवयणमकिरियमहीलणं चयणं। एसी वाइयविणओं जहारिहं होदि कादच्यो ॥३७८॥ उपगांतवयनं अगृहस्ववयनं अक्रियमहीलनं वयनं । एप वाचिकविनयः यथाई भवति कर्तव्यः ॥ ३७८ ॥ अर्थ-कोपादिरहित वचन, बंधन आदि रहित वचन, असि आदि किया रहित बचन, अभिमानरहित बचन, बोलना-बह याचिकविनय है उसे यथायोग्य करना चाहिये ॥ ३७८ ॥ आगे मानसिफ विनयको कहते हैं:-पापविस्रोतिअपरिणामवञ्जणं पियहिदे य परिणामो ।

णादच्यो संखेवेणसो माणसिओ विणओ ॥ ३७९ ॥

१५२

पापविश्वतिपरिणामार्जनं न्नियहिने च परिणामः । धातव्यः गंशेपेणपः मानगिको विनयः ॥ ३७९ ॥ अर्थ-हिमादिमें ब मध्यान्त्रकी विराधनामें जो परिणान

गुलानार-

उमका त्याम करना, मर्मोपकारमें य मध्यात्वजानादिमें परिणान होना-बद मानसीक जिनय मंधेपने कहा गया है ॥ ३७० ॥ इय एमी प्रात्स्वी विणशो पारीतिओवि जं गुरुणी। विरहम्मिव बहिज्ञदि आणाणिहिस्सचरिआए ३८०

इति एषः प्रत्यक्षः त्रिनयः पारोक्षिकोपि यत् गुरोः । विम्हेपि वर्तने आजानिर्देशचर्यायाः ॥ ३८० ॥ अर्थ-इसतरह यह प्रत्यक्ष विनय कहा । और जो गुरुओंके विरह होनेपर अर्थात परोक्ष होनेपर उनको हाय जोडना, अर-

हतादिकर उपदेश किये हुए जीयादिपदार्थींने श्रद्धान करना और उनके कहे अनुमार प्रवर्तना-वह परोक्ष जिनय है ॥ ३८० ॥ अह ओपचारिओ ख़द्ध विणओ तिविहो समासदो

भणिओं। सत्त चउद्यिह दुविहो योघव्यो आणुपुर्व्यीए ॥३८१॥ अथ औपचारिकः खलु विनयः त्रिविधः समासतो मणितः।

सप्त चतुर्विधः द्विविधः बोद्धन्यः आनुपूर्व्यो ॥ ३८१ ॥ अर्थ-वह जीपचारिकविनय तीनप्रकार वाला भी कमसे सात चार दो भेदवाला जानना चाहिये। अर्थात् कायिकविनयके सात, वचनविनयके चार, मानसीकविनयके दो भेद हैं ॥ ३८१॥ अन्भुट्टाणं सण्णदि आसणदाणं अणुप्पदाणं च । किदियम्मं पहिरूपं आसणचाओ य अणुन्वजणं ३८२

अध्युत्यानं समितिः आमनदानं अनुमदानं च ।

कृतिकर्म प्रतिरूपे आमनदानाथ अनुमतनं ॥ ३८२ ॥

अर्थ —आदर्शे उठता, मानक नागके नागका, आगत्त्र देता, पुराकादि देता, यदायोग्य शुत्रमणि आदि पूर्वक काको-त्याकृत्या अध्या तीत्र आदि भागात मेटना, पुरामोक लाने कंचा आता तोइको बैठना, आते हुएके पुरा दुग्यक साथ आता। ये सात काविकवित्यके मेद हैं ॥ ३८२ ॥ हिद्यमिद्यासिम्द्रमासा अणुपीचीमामाणं च चोचकरं ।

विद्यालयाराम्य सार्वा अञ्चलायाराम्य च चायः व अकुतरायराम्यान्य कोर्या गुरुतायरामणायायाको चेव ॥ १८६ दिनमितपरिमितमाषा अनुर्विचिभाषणं च बोहस्य ॥ अकुश्चलमनमो होषः वृद्यालमनःवर्यतर्वक्षय ॥ २८३ ॥

अर्थ — हित्तस्य (पर्मातित) बचन धीतना, भारत्य अपूर अर्थमितिताली बचन धीतना, बारत् धारित बचन धीतना, बायके अनुसार्व बचन धीतना चेत्रा चार्य भेद बचनवित्तयं है। बीर जो वायके महत्त्व बसनेवाले चित्रको रीवना, धरीने उत्तरी दुष मनत्रो मनतीना-वे दो भेद मार्गात्व वित्तयं है। हुट ॥ साद्धिएए उज्जासादिलाम् कु अञ्चलस्य चेत्र वित्तयं है। साद्धिए कु सामान्य कु अञ्चलस्य चेत्रस्य साद्यान्य स्थापित कु साद्यान्य स्थापित स्थापित स्थापित साद्यानिक जनसम्बन्धित प्रभाषान्य साद्यानिक जनसम्बन्धित प्रभाषान्य स्थापित स्यापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्याप स्थापित स्थाप स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित स्थापित

दिन्यः प्यार्टः स वर्तस्यः अप्रत्येतः ॥ १८७ ॥ अर्थ--दीशापुर सुत्तुरः तथेविक तथा रुगते तयक्र प्राते मुर्वोक्त परते अक्ष्याक्त परते साधुक्रीते, अर्थिकाठीते, क्षय-कक्षेत्रीने वथा कोष दिसक अप्रमादी साधुकी करता वर्षिते १८० 148

अब विनयका फल दिखलाते हैं:--

मुलाचार--

यका फल स्वर्गमोक्षका मिलना है ॥ ३८५ ॥

सब संबकी सेवा होसकती है ॥ ३८६ ॥

आयारजीदकप्पगुणदीवणां अत्तसोधि णिज्ञंजा। अज्ञवमद्दवलाहवभत्तीपल्लाद्करणं च ॥ ३८७॥ आचारजीदकल्पगुणदीपनां आत्मशुद्धिः निर्देदः । आर्जवमार्दवलायवभक्तिप्रहादकरणानि च ॥ ३८७ ॥ अर्थ-आचारके, जीदमायश्चित्तके, कल्पप्रायश्चित्तके गुणींका मगट होना; आत्माको कर्मोंसे छूटनेरूप शुद्धि, कलहादि रहित होना, आर्जव, मार्दव, लोमका त्याग, गुरुओंकी सेवा, सबकी सुली करना-ये सब विनयके गुण हैं ॥ ३८७ ॥

अर्थ-विनय मोक्षका द्वार (प्रवेशमार्ग) है, विनयसे ही संयम तप और ज्ञान होता है, जार विनयसे ही आचार्य और

विणएणाराहिद्यदि आइरिओ सब्बसंघो य ॥ ३८५ ॥ विनयः मोक्षद्वारं विनयात् संयमस्तपो ज्ञानं । विनयेनाराध्यते आचार्ययं सर्वसंघयः ॥ ३८६ ॥

निप्फल है। क्योंकि विद्या पढनेका फल वितय है सीर विन-विणओं मोक्खदारं विणयादो संजमो तवो णाणं।

विनयेन विप्रहीनस भवति शिक्षा निर्धिका सर्वा । विनयः शिक्षायाः फलं विनयफलं सर्वकल्याणं ॥ ३८५॥ अर्थ-जो विनयकर हीन है उसका शास्त्र पढना सर

विणएण विष्पहीणस्स हवदि सिक्खा णिरत्थिया सवा। विणओ सिक्ताए फलं विणयफलं सञ्चकछाणं ३८५

केनी मेरी माणस्य भंजणं गुरुजणे य बहुमाणं। तित्थयराणं आणा गुणाणुमोदो य विणयगुणा ६८८ फीर्तिः मेत्री मानस्य भंजनं गुरुजने च बहुमानं । तीर्धकराणां आज्ञा गुणानुमोदध विनयगुणाः ॥ १८८ ॥ अर्थ-सब जगह मिनिद्धि, सबरी विश्वता, गर्वश स्याग, आचार्यादिकोंने बहुमानका पाना, तीर्धकरोदी आशाका पालन, गुणींसे प्रेम धरना इतने गुण जिनय धरने बाठेके प्रवट होते हैं ॥ आगे वैयावृत्यतपदा गरूप वटने हैं,— आइरियादिस पंचस मयारवृद्धाउरेस गर्धस्य । षेखायमं पुरां कादच्यं सञ्चमशीए ॥ १८९ ॥ आचार्यादिषु पंचमु मचालष्ट्रदाङ्गलेषु गर्न्हेषु । वयाष्ट्रस्यं उसं: कर्नप्यं गर्यद्रातया ॥ ३८९ ॥ अर्ध---आवार्य उपाध्याय स्मायिश प्रवर्तनः गणधर इन पाचीरी मदीनदीक्षित सथा गुण अवस्था आदिसे बड़े ऐसे गुलियोड़े रागुरमें अपनी शक्तिक अनुसार कीपिय आदिने उत्रकार सेवा

तारात करना जानक अनुमार जानाव जादार उत्तर स्वा इति पारिय ॥ १८९ ॥ ग्रुजिमित ववडसाए लबस्मि सिस्से च दुस्वते । साहुगणे दुस्ते संघे समयुष्णे च व्यविद् ॥ १९० ॥ मुजापित उपाध्यांत सर्विति दिस्से व दुस्ते । सापुण्ये दुस्ते संघे सम्बोते च व्यविद् ॥ १९० ॥ वर्षे—गुण्येतं करिक्ते, सुन्तुरुकोर्ने, क्ष्येतं व्यवस्थान्त्रम् वारोग्ने, स्वित्रेने, सेतर्वे वीदिनोर्ने, क्ष्ये दुस्ते धनि करणस्क्य सायुत्पहर्में, गुरुकुर्ह्में, चातुवर्णसंघमें, सुसी उपद्रवरहितमें खेत उपद्रव होनेपर, वैवाहस्व (टहरू) करना योग्य है ॥ ३९० ॥ सेज्ञोग्गासणिसज्ञा सहोबहिपडिलेहणाहि उपग्राहो । आहारोसहयायणणिकिंचणं घंदणादीहि ॥ ३९१ ॥ इप्यावकाशनिपया तथा उपयिप्रतिलेशनामिः उपग्रहः ।

आहारसिह्वायणाणाकचण चद्यणाद्वाह ॥ ३५१ ॥ व्यय्याक्ताशिक्या तथा उपियाक्तिश्रतामिः उपगृहः । आहारीप्याचनापिक्तिम्तर्वेदनादिभिः ॥ ३९१ ॥ अर्थ—चय्या, वसतिका, आत्रत, कर्मडेट्राशीर, शीर्ण आर्द हुनकर तथा भिश्रावर्षा, सेंड आदि जीवप, शामणास्यान,

मनका त्याग जीर बंदना आदि-इन सन उपायीसे उपकार करना चाहिये॥ ३९१॥ अद्धाणनेणसायदरायणदीरोधणासिये जोमे। येष्टाययं युर्च संगहसारकत्यणीयदं॥ १९२॥ अध्यनेत्रभापदराजनीरीयनाविये जोमे।

वाताचय सुरा मगारमारक्काणायद ॥ १९६ ॥
अध्यमनभागदराजनदीरोपमाशिये जीमे ।
विवाहणे उक्तं संब्रद्रमारमाणियम् ॥ १९२ ॥
अर्थ—जो गानु माणि रोदतुक हो, चोर नाहर वपेश नदीः
रोप मगरेगारिक उपद्रयो सहित हो तथा तुर्विश्वसे पीटित हो
उपना विवाहस्य करना कहा गया है । यह पेरे करना-आरे
सुद्रका संगद करना (स्मान) संगदार्थ करना चाहिते १९१
आरो साध्यावनका सम्म कहती हो;—

परिषद्याय बायण पहिच्छणाणुपेहणा य यममका। युद्धिमण्डमंत्रको पंगविहो होह सङ्ग्राओ ॥ ३९३ ॥ परितर्वेत वापते रूप्छता अनुवेशा व पर्यक्षा । स्तुतिर्वपण्डमंत्रकः पंगक्षित वापति साध्यायः ॥ ३९३ ॥ अर्थ-पटे हुए भंधका पाठकरना, शासका व्याख्यान करना, शासीफे अर्थको दूसरेसे पूछना, बारंबार शासका मनन करना, नेस्तर शासका पुरुषेका निरंत्र पदना-ने पांच प्रकारका साव्याव है। इसे प्रनिदेवर्यना मंगठ सहित करना चाहिये॥ ३९२॥ अर्हे च इस्तरिहर्य दोणियाचि झाणाणि आप्यसस्भाणि। १ धम्मं सुक्षं च दुवे पसस्यक्षाणाणि भेषाणि॥ १९४॥

आर्त च राष्ट्रसहितं हे अपि ध्याने अप्रशस्ते ।
धर्म ग्रुष्ठं च हे प्रश्नसध्याने झातच्यानि ॥ १९४ ॥
अर्थ —आर्तस्यान रीदच्यान चे दो ध्यान अग्रुम है नरकादिइ:खाँको मात करते है तथा पर्मध्यान ग्रुक्तप्यान ये दो ध्यान
प्रमु है मोशादिक सुसौको मात कराते हैं । ऐसा आनना
चाहिये ॥ १९४ ॥

आगे इन चारीका सरूप कहते हैं;--

अमणुण्णजोगदृद्दविओगपरीसहणिदाणकरणेसु । अष्टं फसायसहिपं झाणं भणिदं समासेण ॥ ३९५ ॥ अमनीक्ष्योगदृष्टवियोगपरीपदृतिदानकरणेषु ।

अमनासवागद्दाववाग्यरायद्वानदानदरायु ।
आर्त कपायसदितं प्यानं भणितं समायेत ॥ ३९५ ॥
अर्थ—व्यर गृह गृषु आदि अपिय बलुका संबंध होना,
पुत्र पुत्री माता शिष्य आदि भिववनुका विनास होना, हुआ
(भूग) आदि परिष्टोवी काम होना, परलोक्सवेशी भौगौकी
बांद्य होना-दनकं होनेपर औ क्यायसदिक मनको क्रेस होना
बह सभेपो आर्थ्यान कहा गया है ॥ ३९५ ॥
तिणिक्सोसस्सारमक्लोस्त सम्पेय प्रियदारंभे।

१५८

रुद्दं कसायसहिदं झाणं भणियं समासेण ॥ ३९६॥

स्तैन्यमृपासारक्षणेषु तथा चैत्र पड़िघारंभे ।

रौद्रं कपायसहितं ध्यानं भणितं समासेन ॥ ३९६ ॥

अर्थ-दूसरेके द्रव्य हेनेका अभिप्राय, झुठ बोहनेमें आनंव

मुलाचार-

मानना, दूसरेके मारनेका अभिप्राय, छहकायके जीवोंकी विस-

धना अथवा असिमसि आदि परिग्रहके आरंग व संग्रह करनेने

थानंद मानना-इनमें जो कपाय सहित मनको करना वह संक्षेपसे

रीद्रध्यान कहागया है ॥ ३९६ ॥

अपहृत्य आर्तरीद्रे महाभये सुगतिप्रत्यृहे । धर्मे वा शक्के वा भव समन्त्रागतमतिः ॥ ३९७ ॥

एकाग्रेण मनो निरुध्य धर्म चतुर्विधं ध्याय !

आदर बुद्धि कर ॥ ३९७ ॥

अपहट अट्टर महाभए सुग्गदीयपर्हे ।

धम्मे वा सुके वा होहि समण्णागदमदीओ ॥ ३९७॥

एयरगेण मणं णिर्मभिजण धम्मं चडव्विहं झाहि। आणापायविवायविज्ञओ संठाणविचयं च ॥ ३९८ ॥ आज्ञापायविपाकविचयः संस्थानविचयश्च ॥ ३९८ ॥ अर्थ-एकामतासे इन्द्रियोंका व्यापार तथा मनका व्यापार रोककर अर्थात् अपने बरामें कर है भव्य तू चारमकारके धर्म-

अर्थ---आर्तध्यान रीद्रध्यान ये दो ध्यान संसारके भयके दैने-ं वाले हैं, देवगति मोक्षगतिके रोकनेवाले हैं इसलिये इन दोनींका त्याग करके हे भव्य तृ धर्मध्यान शुक्रध्यान इन दो ध्यातींमें

ध्यानका चितवनकर । उसके आजाविचय अवायविचय विवाकः विचय संस्थानविचय ऐसे चार भेर हैं ॥ २९८ ॥ पंचित्प्यकार्यक्रमीयणिकार्य मारुद्द्व्यमण्या य । आणागोज्ञेस भाषे आणाविच्योण विचिणाहि ॥३०९॥ पंचानिकायपर्जीतिकायान् कालद्रव्यमन्यत् च । आजामातान् मारान् आणाविच्येन विचिनोति ॥ ३९९ ॥ अर्थ—जीवादि पंच अस्तिकाय, श्रियीकाय आदि छह जीव-काय, कालद्रव्य,—ये गव गर्यक्रमी आजापमाण महण करते योग्य

है स्तरनद आज्ञामात्रसे अहान करना विचारना वद आज्ञाविषय
पर्मण्यान है ॥ १९९ ॥
काह्याणपायमाओं पाओ विचिणोदि जिणमदामुविष ।
विचिणादि या अपागे जीवाण सुहै य असुहै य ४००
कल्याणपायमा ज्यापान् विचिनोति निममत्तुमेल पिचिनोति या अपागन् जीवानी ग्रामन् य अञ्चमान् प ४००
अर्थ-कल्याणी माम करानेवार्ज गम्यस्थानाद उपायां से

नारा कैमे हो ऐसा विचारना बह अवाबविषय पर्मध्यान है ४०० एआणियभयनार्य जीवार्ण पुण्णपायकम्परूर्ण । उद्योदिरणसंदासपंद मोक्तं च विविधादि ॥४०१॥ एकानेक्रमयार्ग जीवार्ना पुण्यपायक्रम्यूर्ण _ उदयोद्दीरणार्सक्रमर्थ मोधे च विचिनोति ॥ ४०१॥

जिनमत्त्रा आध्यतेकर ध्यावे अथवा जीवोके शुभ अशुभ मर्गोशा

अर्थ-एक भागी माप्त तथा अनेवभवीने माप्त जीवीके पुण्य-कर्म पापकर्मीके फळको विचारना तथा वर्मीका उदय अपक- १६०

पाचनरूप उदीरणा, अन्यमकृतिरूपपरिणमन, बंध इनका तथा कर्मों के छूटनेका विचार करना बह विपाकविचयनामा धर्मध्यान हु॥ ८०६॥

मुलाचार--

बहुमहतिरियलोए विचिणादि सपञ्चए ससंठाणे। एरथेय अधुगदाओ अधुपेक्साओ य विचिणादि ४०२

ऊर्ध्वाधित्विंग्लोकान् विचिनोति सपर्यायान् ससंस्थानान्। अत्रवानुगता अनुप्रेक्षाथ विचिनोति ॥ ४०२ ॥ अर्थ-पटल इंदक श्रेणीयद्ध मकीर्णकादि पर्यापीसहित

विकीन नतुष्कीण गोल आयत मृदंगाकाररूप आकारींसित कर्धनोक अधीलोक तथा मध्यलोकका चितवनकरे तथा इसीने माप्त नारह भावनाओंका चितवनकरे यह संस्थाननिवय धर्मध्यान है।। ४०२॥

अद्भयममर्गमेगत्तमण्णसंसारलोगमसुचित्तं ॥ ज्ञासयमंत्ररणिक्ररथम्मं योषि च चितिक्रो ॥ ४०३ ॥

अध्यमग्ररणमे कृत्वमन्यत्यसंसारहीकमग्रुचित्यं । आमर्यंतरनिर्देशायमें बोधिय वित्यः ॥ ४०३ ॥ अर्थ-अनित्य अग्ररण एइत्य अन्यत्य मेगार होइ आ चित्र आयव संवर निर्जेग धर्म बोचि (सम्पक्त्यमहित) भाषना÷

इन बारहमावनाओं हा चितवन करना चाहिये ॥ ४०३ ॥ उचमंत्री तु गृहसे झायदि झाणं वित्रवरीचारं । सीणकमाओ झायदि गुयसवित्रवरीचारं ॥ ४०४ ॥ उपरांतन्त प्रयस्त्रं ध्यायति ध्यानं विवर्गगीयारं । थीणक्याची ध्यापति एकत्वितिकीचारे ॥ ४०४ ॥

अर्थे—उपदांतकपारगुणसानवाला जीव प्रशस्त्रवित्तर्कतीचार माम छक्रम्यानको ध्याता है और क्षीणक्षमयगुणसानवाला एक-स्वितर्कर्षचार माम दूसरे शुक्रप्यानका वितवन करता है।।३००॥ सुद्धुमितिरियं संजोगी झायदि झाणं च त्तरियसुर्धं तु । जं केयली अजोगी झायदि झाणं सष्टुल्क्ष्टणं ४०५

सस्मित्रयं सयोगी ध्यायति ध्यानं च तृतीयग्रुकं तु । यत् केनली अयोगी ध्यायति ध्यानं समुच्छिनं ॥ ४०५ ॥ अ—स्दम्बायिक्यायतिशाति नामक तीसरे एक्कप्यानको सयोग केनली ध्याते हैं बाँग सम्बच्छनक्रिय नामके चौगे शुक्र-ध्यानको अयोगकेनली ध्याते हैं ॥ ४०५ ॥

आगे खुसर्गातपका निरूपण करते हैं;— दुविहो य विजस्सगो अञ्मंतर थाहिरो सुणेयच्यो । अञ्मंतर कोहादी थाहिर खेसादियं दुव्यं ॥ ४०५ ॥

द्विविधन च्युत्समीः आभ्येतरी वाहाः झातच्यः । अभ्येतरः क्षोपादिः वाहाः क्षेत्रादिकं द्रव्यं ॥ ४०६ ॥ अर्थ — परिष्ठद्यागरूप खुसमीत्र दो मकारका है एक अभ्येत तर दूसरा बाद्य । क्षोपादिका त्याग होना अभ्येत ॥ १५०६ ॥ विरुद्ध साध्य स्थाग वह वाह्य खुसमी है ॥ १५०६ ॥ मिन्छत्त्रवेदरागा तहेच हस्सादिया य छद्दोसा । चत्तारि सह कासाया चोहस अन्येतरा गंगा॥४०॥॥

मिध्यात्ववेदरामा तथेव हासादिकाश्र पद्दोषाः । चत्वारः तथा कपावाः चतुरेश आभ्यंतरा श्रंयाः ॥४०॥। अर्थे—मिथात्व, तीन वेद (सी आदि), राग, हास जादि ११ मुखा

परिमह हैं। इनका त्याग वह अभ्यंतरब्युत्सर्ग है।। ४०७॥

छह दोप स्रोर कोष आदि चार कपाय-इसमकार चौदह अम्पंत

मुलाचार--

क्षेत्रं वास्त धनधान्यगतं द्विपदचतुष्पदगतं च । यानशयनासनानि च कुप्ये मांडेपु दश भवंति ॥ ४०८ अर्थ- खेत, पर, सोना आदि धन, गेंहू आदि धान्य, दार दास, गाय आदि, सवारी, पछंग, चीकी पटा आदि आस कपास आदि, द्वींग आदि अयवा भाजन (वर्तन) आदि-ये व बाद्मपरिगृह है । इनका त्याग यह बाद्मज्युरसर्ग है ॥ ४०८ ॥ आगे शरहतवीमेंसे साध्यायकी अधिकता दिशजाते हैं:--षारसविधितावि तये सन्मंतरपाहिरे कुसलदिहै। णवि अन्धि णवि य होही सञ्झापसमी तयोकम्मं द्वादश्विधेपि तपसि साभ्यंतरबाबे कुशलहरे । नाप्यन्ति नापि च मविष्यति स्थाध्यायसमं सपःकर्म ४० अर्थ-- सर्वज्ञदेवकर उपदेशे हुए अभ्यंतर और गाय मे सदित बारद प्रकारके तपमेंसे साध्यायतपके समान अन्य (दूसरा)

कोई भी न तो है और न होगा ॥ ४०९ ॥ मज्जापं कृष्यंतो पंचेदियसंयुद्दो तिगुसो य । हबदि य गुअग्रमणो विणाएण समाहिओ निवन्तु ॥ माध्यापं कृतेन पंचेडियमंत्रतः विगुप्तय । मवति च एकाप्रमनाः रिनयेन समाहितो मिश्वः ॥४१०॥ अर्थ-जो साथ माध्याय करता है बह पांची हर्दिवीं

सेत्तं वत्यु धणघण्णगदं दुपद्चदुष्पद्गदं च । जाणसयणासणाणि य कुप्पे अंडेसु दस होति ४० हैं और एकामिच हुआ विनयहर संयुक्त होता है ॥ ११०॥ हैं और एकामिच हुआ विनयहर संयुक्त होता है ॥ ११०॥ सिद्धिरपासादयदंसपरस करणं चदुव्यिहो होदि । द्वच्ये खेत्ते काले भावेवि य आणुपुन्तीए॥ ४११॥ सिद्धिमासादायतंकस्य करणं चतुर्विधं भवति । द्वयं क्षेत्रं कालं भावमिष च आनुपूर्व्या॥ ४११॥

ट्रव्यं सूत्र काल भारमाप च जातुष्व्यो ॥ १११ ॥
जर्ष — प्रकल्प महरूक जानुष्वल जो यह वारहमकारका
तर उसका अनुष्ठान करने हृद्य दोन का गरुरू चारहफर वारहफरकारका
है। जाहार शरीर जादि हृद्य; बहुत जनवालेदेश, निर्वेलदेश,
जांगलदेश जादि क्षेत्र अषवा दिग्यरुखावत जादिक जावय;
शीत उच्च वर्षो जादि काल और विषक्त सङ्केशपरिमानुरूर भाव
जानना। विसत्तरह वाजादिका विकार न हो ऐसे क्रमसे तर
करना।। १२१ ॥
जरुभंतरसीहणाओं एसो अनुभंतरी तुओ भणिओ।

अभ्यंतरग्रोपनकं एतत् अभ्यंतरं तपो मणितं ।
इतो यीर्याचारं समासवः वर्णयिष्यामि ॥ ४१२ ॥
अर्थ — अंतरंगको द्वादः करतेवाला यहः अभ्यंतरः तप कहा,
इससे लागे यार्थावारको संक्षेत्रसे वर्णकरता हं ॥ ४१२ ॥
आगे यीर्थाचारका सत्तप कहते हैं ;—
अगियाहिष्यलविरिओ परकामदि जो जहुलामाउत्तो ।
जुजादि य जहायाणं विरियाचारोति णादुल्यो ॥४१३॥

अनिगृहितवलवीर्यः पराऋमते यः यथोक्तमात्मनः ।

एत्तो विरियाचारं समासओ वण्णइस्सामि ॥ ४१२ ॥

युनक्ति च यथानानं वीर्याचार इति ज्ञालम्यः ॥ ४१३

अर्थ-नहीं रियाम है सहार आदिने उसक बात

सर्व शक्ति जिसने पेसा साचु अधोक्तनारियमें सीन अकार मह

बरण है वह वीयोनार जानना ॥ ४१३ ॥

मजापार-

पडिसेचा पडिसुणणे संवासी गेंव अणुमदी तिविहा चरित्रं जी भुंजी भोगी य होरि पहिसेवा ॥४१ प्रतियेश प्रतिश्वाणं संशामः भैर अनुप्रतिः विशिषा । उद्यो परि अंके मोगवति च मत्ति प्रतिगेता ॥ ४१४। अर्थ - पनिया पनियक्त मंत्राम ये तीन भेद अनुपति है भी पायका नाम है पायके अभिपायने आहारादिका भीतन कर कीर भाव करे तो उस बावक बालिया अनुमतिका भेर होता है। वरित्रं जोद् विकादि पृथ्वं परात न होदि पहिलाणी मावज्ञमंत्रिः विद्रो समिन्ताया व संवामी ॥ ४१५॥ उदि पदि विकास पूर्व प्रमान का मनति प्रतिकाणी । भारतमी हुने भगताना सन्त मेरायः ॥ ४१५॥ असे जाना मांड महाको पह दे बहुत कि गुणारे निधि। मारण १९६ व मुख नवार कर स्था है अभवा आहागीई में है रीप्र कट ना अनुकर मार्गु आवार मरात कर है मना मीतिका देखि का स्मार प्रश्निवाल नामा मनुष्यांका मेर बीता है में को सम्प्रांद्र व्यक्ति वया सम्पत्नात को कि वे गुरम हैंक इन्छ है कर मराम कृता गीतम अनुमतिका नेत्र है । इमस्^{तर} कर्त कर करनक रहा के तीत होत साहरते मार्डशी क्रेड़ी

मति रहित सपह प्रकार संयमिशानकरनेकेछित्रे आसाक्षेत्र प्र

पुढविदगतेउवाजवणप्पदीसंजमो य योघव्वो । विगतिचदुपंचंदियअजीवकायेसु संजमणं ॥ ४१६ ॥ अप्पहिलेहं दुप्पहिलेहमुचेन्वयहरूणदु संजमो चेय। मणवयणकायसंजम सत्तरसविधो दु णाद्व्यो ॥४१७ पृथिन्युदक्तेजोवायुवनस्पतिसंयमथ बोद्धन्यः । द्वित्रिचतःपंचेद्रियाजीवकायेषु संयमनं ॥ ४१६ ॥ अप्रतिलेखं दुष्प्रतिलेखं उपेक्षा अपहरणस्तु संयमश्रव । मनोवचनकायसंयमः सप्तदश्विधस्तु ज्ञातन्यः ॥ ४१७ ॥ अर्थ-पृथिवीकायिक जलकाय अभिकाय बायुकाय वनस्प-तिकाय-इन पाचीमकारके जीबोंकी रक्षाकरना वह पाचमकारका संयम है। स्रोर दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय पंचेद्रिय जीबोंकी रक्षा इसतरह चार भेद ये हुए । तथा सुकेतृण आदिका छेदन न करनेरूप अजीवकाय रक्षा इसका एक भेद-इसमकार दस भेद हुए । अप्रतिलेख दुप्पतिलेख उपेक्षा अपहरणसयम मनःसयम वचनसंयम कायसंयम-इन सात भेदोंको मिलानेसे संयमके सन्नह भेद होते हैं ॥ पीठीसे द्रष्यका शोधन वह अप्रतिलेखसंयम है । यनपूर्वक ममाद रहित शोधन वह दुष्प्रतिलेखसंयम है। उपकर-णादिको प्रतिदिन देखलेना कि इसमें जीव सो नहीं है वह उपे-क्षासयम है। उपकरणोंनेंसे द्वीदियादि जीवोंको दर करदेना वह अपहरण संयम है । ये सन्नहमकारका संयम धीर्याचारकी रहा परता है ॥ ४१६।४१७ ॥

पंचरस पंचवण्णा दो गंधे अह फास सत्तसरा । मणसा चोइसजीवा इन्दियपाणा य संजमो णेओ ॥ प्राष्ट्रप्यं परिवर्तकं अभिषटं उद्धिकं मालारोहं । अच्छेयं अनिरुष्टं उद्धमदोपास्तु पोडश्र हमे ॥ ४२३ ॥ अर्थे—गृहसके जावित बळी आदि आरंगस्त्र कर्म बह

अध-म्हुहस्स जोशत चर्चा जाद जात्र कर अध्यक्ष है। अध्यक्ष है। अध्यक्ष है। अध्यक्ष है। स्था उद्गमदोषके सोल्ड्मेद कहते हैं-लोहेशकदोष, अध्यक्षित्र है। स्था उद्गमदोषके सोल्ड्मेद कहते हैं-लोहेशकदोष, आध्यक्षित्र है। स्थापतदोष, मिश्रदोष, मार्थातंत्रदोष,

भाविष्करणदोष, कीतदोष, भाष्ट्यदोष, परिवर्तकदोष, अभिषर-दोष, उद्धिश्रदोष, मालारोहदोष, अच्छेबदोष, अनिसप्टदोष॥ आगे मृहसाशित अपःकर्मको कहते हैं;— इस्क्रीविणिकासाणं विराहरणोहावयारिकिष्यरणं।

छजीवणिकाचाणं विराहणोदावणादिणिप्पणं। आघाकम्मं णेयं स्वपरकदमादसंपण्णं॥ ४२४॥ पदनीवनिकायानां विराधनोदावादिनिप्पतं।

अधःकर्म त्रेयं स्वपरकृतमात्मसंपन्नं ॥ ४२४ ॥ अर्थ---पृथ्वीकाय आदि छह कायके जीवीको दुःख देना गारमा इससे उत्पन वो आहारादि बखु बहु अधःकर्म है । वह

पापिकया आपकर की गई दूसरेकर कीगई आपकर अनुमीदना कीगई जानना ॥ १२४ ॥ देवदपासंडट्टं कि विणट्टं चावि जं तु उदिसियं।

कदमण्णसम्बद्धेसं चद्वविचर्यं वा समासेण ॥ ४२५ ॥ देवतापाखंडार्थे कपणार्थं चापि यह औदेशिकं । कृतमन्नं सम्बदेगं चतुर्विषं वा समासेन ॥ ४२५ ॥

अर्थ--नागयक्षादिदेवताके लिये, अन्यमतीपासंडियोंकेलिये, दीनजनक्रपणजनोंके निमित्त उनके नामसे बनाया गया मोजन यह बोहेनिक है। अथवा संक्षेपसे समीदेनिकके कहे जानेवाले चार भेद हैं॥ ४२५॥ जावटियं उद्देमी पामंद्रीलि य हुवे समुद्रेमी।

जावदियं उद्देमी पामंदोलि य हुवं ममुहेमी। समणीलि य आदेसी णिगंगीलि य हुवं ममादेमी॥ यावानु उदेशः पापंड इति च मवेतु ममुदेशः।

यावान् उदेशः पापंड इति च भवेन् समृदेशः । श्रमण इति च आदेशो निर्मेश इति च भवेन् समादेशः ॥

अर्थ—ओ कोई लायेगा सबकी देंग एमे टर्टरामें किया अस यावानुदेश १ हैं, वावंडी अव्यक्तिमिंक निमित्यमें बना हुआ अस समुदेश है २, साचस परिमाणक आदिके दनावा भोजन आदेश है २, निर्मय (दिगवर) साधुओंक निमित्त दनावा मार्थ समादेश दोष सहित है ४ ॥ ये चार लोदेशिक में मेर हैं ॥४९६

आगे अध्यधिदोवका स्थमप बहते हैं;---

जारुतंत्रुरुपयन्वेयो दाणष्टं संजदाण सम्प्रपणे । अज्होपोज्हां णेगं अहया पागं तु जाब रोहो था ॥ जरुतंत्रप्रशेषो दानार्थ संपतानां न्यपने।

जार्याक से अपया पाने हु मानद रोगों मा ॥ धरण ॥
अर्थ—संवमी सायुको भाता देश उनको देनेव जिये
अपने तिमित्र भानकेत्विय पुस्टेपर रखे हुए अब ऑह दास्त्रीमें
जल और पानक निकास किर पकार्य भाषा श्रव तह सोअन
तथार न हो सननक धर्म मसके बहानेते उस साधुको शेष्ट
रखे बह अध्यापित है ॥ धरण ॥
अध्यास्तरण निस्सं पासुष्युष्टार्य नु पुदिवस्मं नं ॥

श्रुद्धी उपन्यति द्वन्यी भाषणगंपश्चि पंचिदहं ॥४२८॥

अप्रासुकेन मिश्रं प्रासुकद्रव्यं तु पृतिकर्म तद् । चुछी उद्खलः दर्भी माजनं गंघ इति पञ्चविषं ॥ ४२८ ॥ अर्थ-पासुक चाहारादिक वस्तु सचिचादिवन्तुसे मिश्रित हो वह पूतिदोप है। प्रामुकद्रव्य भी पूतिकर्मसे मिला पूतिकर्म कहलाता है उसके पांच मेद हैं-चूलि ओख़ली कड़छी पकानेके बासन गंधयुक्त द्रव्य । इन पांचीमें संकरप करना कि चूठि आदिसे पका हुआ मोजन जनतक साधुको न देदें तबनक किसीको नहीं देंगे । ये ही पांच आरंम दोप हूं ॥ ४२८ ॥

थागे मिश्रदोपको कहते हैं;—

पासंडेहिं य सद्धं सागारेहिं य जदण्णमुहिसियं। दादुमिदि संजदाणं सिद्धं मिस्सं विघाणाहि ॥ ४२९॥

पाखण्डेः सार्थे सागारेश्च यदनं उद्दिष्टं । दातुमिति संयतानां सिद्धं मिश्रं विजानीहि ॥ ४२९ ॥

अर्थ-पासुक तथार हुआ मोजन अन्य भेपधारियोंके साध तथा गृहस्थोंके साथ संयमी साधुओंको देनेका उद्देश करें तो मिश्रदोष जानना ॥ ४२९ ॥

पागादु भायणाओ अण्णिह्य य भायणिह्य पत्रखविय। सघरे व परघरे चा णिहिदं ठविदं विद्याणाहि ॥४३०॥

याकात् भाजनात् अन्यस्मिन् च भाजने प्रक्षिप्य । खगृहे वा परगृहे वा निहितं सापितं विजानीहि ॥४३०॥ अर्थ--जिस वासनमें पकाया या उससे दूसरे भाजनमें पके मोजनको रखकर अपने धरमें तथा दूसरेके धरमें जाकर उस अनको रख दे उसे सापित दोप जानना ॥ ४३० ॥

जपन्त्रपणागादीणं यठिसेसं स पठिशि पण्णनं । संजद्भागमण्हं यठियम्मं या यठि जाणे ॥ ४११ ॥ यधनागादीनां पठिशेषं स पठितित व्रवसः ।

पाहृदिहं पुण दृषिहं पादर गुरुमं च दृषिहमेत्रः। ओवरमणमुखरम्यमह कालोषहणावद्दी ॥ ४१६ ॥ प्रामृतकं पुनर्दिषिषं षादरयरमं च द्विविषमेर्यकः। अपनर्यणमुखर्यणमध कालायर्यनप्रद्वी ॥ ४१९ ॥

अर्थ-मागुनकरोपक दी भेद हैं बादर है सुद्दम है। इत दोनोंक भी दो दो भेद हैं अपवर्षण उत्पर्षण । बादर्स हाजिदर गाम अपवर्षण है और अज़ब्दा बुद्धिको उत्पर्षण करते हैं कहे दियमे पपन्ये सामें यास परस्वीय बादर दुर्विह । सुन्यपदमञ्जावने पहित्यले दुविह सुनुसे स्वा । ४३३ ॥

दिवसे पर्ध मार्ग वर्ष पराष्ट्रपे पाइरे हैं दिवसे । पूर्वोपरमध्यवेले प्रावतिते दिविसे शहसे च ॥ ४६६ ॥ अर्थे—दिन पर्छ गरीला वर्ष रक्तके वदक्कर को कार्यस्यक देना वर बादर मार्थन दोष हैं वर टक्कर्यन (बहाल) कवन चैन (बहान) कार्यने प्रावतिक हो ॥ एक्सरकर्यन

षण (पराना) वानमं स्यूबराव दो सवास्त्र है-पूर्वहास्त्र राजा-सदोव भी दो सवास्त्र है वह इसताह है-पूर्वहास्त्र राजा- इसमय अपराहसमय इनको पल्टनेसे कालका बढाना व घटाना-रूप है ॥ ४३३ ॥

रूप है। ७२२ ॥ पाडुकारो दुविहो संकमण पयासणा य मोचच्यो । भायणभोयणदीणं मंडवविरलादियं कमसो ॥४३४॥ प्रादुष्कारो द्विविधा संक्रमणं प्रकाशनं च बोद्धव्यं ।

भाजनभोजनादीनां मंडपबिरठनादिकं क्रमशः ॥ ४२४ ॥ अर्थ-मादुरकारदोपके दो भेद हैं संक्रमण मकाशन । साधुको पर आनेपर मोजन माजन लादिको एक स्थानसे दूगरे स्थानमें ठेजाना वह संक्रमण है तथा भाजनको मांजना दीपकका मकाश करना अथवा मंडपका उद्योतनकरना आदि मकाशनदोप

है ॥ १२४ ॥ कीदगर्ड पुण दुविहं दृव्वं भावं च सगपरं दुविहं । संचित्तादी दृव्वं विज्ञामंतादि भावं च ॥ ४३५ ॥ कीततरं पुनः द्विविषं द्रव्यं भावश्र स्वपं द्विविषं ।

नारापर जुना राज्य प्रत्य पायम साथ साथ हाथ में सचिचादि द्रव्य विद्यामंत्रादि मात्रश्च ॥ ४३५ ॥ अर्थ — कीततर दोषके दो भेद हैं द्रव्य बोर मात्र । हरफके दो भेद हैं स बार पर । सवमीको भिक्षाकेलिये प्रवेश करनेपर गाय आदि देकर यदलेंगें भोजन लेकर साधुको देना वह द्रव्य-

क्षीत है । पत्रप्ति आदि विषा चेटकादिमंत्रीके बदलेमें आहार लेके सामुको देना वह भावकीतदोष है ॥ १३५ ॥ छहरिप रिणं तु भणियं पामिच्छे ओदणादि अण्णदरं। मं पुण दुविहं भणिदं सविष्ठियमविष्ठयं चावि ॥४३६॥

🥄 रुपु ऋषे हु मणितं प्रामृष्यं ओदनादि अन्यतरं ।

तत् प्रनः द्विविषं भणितं सष्टद्विकमष्टद्विकं चापि ॥४३६॥ अर्थ-सापुर्ओको आहार करानेके लिये दूसरेसे उपार भातआदि भोजनसामग्री लाकर आहार देना वह पामृष्यदोप है। उसके दो भेद हैं एक सबृद्धिक दूसरा अबृद्धिक । कर्जसे अधिक देना सबुद्धिक है जितना कर्जिलिया उतना ही देना अबुद्धिक है। ४३६॥

पीहीक़रादीहिं य सालीक़रादियं तु जं गहिदं। दातुमिति संजदाणं परियदं होदि णायव्यं ॥ ४३७ ॥ बीहिक्सदिभिः शालिक्सदिकं त यत बहीतं।

दातुमिति संयतेभ्यः परिवर्त भवति शावव्यम् ॥ ४३७ ॥ अर्थ-सापुर्भोको आहार देनेकेलिये अपने साटीके चावल आदि देकर दूसरेसे नदिया चावल आदि नदल्फे साभुको आहार

दे वह परिवर्त दोप जानना ॥ ४३७ ॥

देसिन प सन्वत्ति प दुविहं पुण अभिहरं विपाणाहि। आचिष्णमणाचिष्णं देसाबिहर्ड हवे दुविहं ॥ ४६८ ॥ देश इति च सर्वे इति च हिविधे पुनः अमिपटं विजानीहि।

आचिममनाचिमं देशामिपटं भवेत् द्विविपं ॥ ४३८ ॥ अर्थ-अभिपट दोषके दो भेद हैं एकदेश सर्व । देशामि-पटके दो भेद हैं आचित अनाचित ॥ ४३८ ॥

बज्ज तिहिं सत्ति वा घरेहिं जिद आगदं दु आविण्णं। परदी या तेहिं भवे तव्विवशीदं अणाचिण्णं ॥ ४३९॥ ऋजु त्रिभ्यः सप्तभ्यो वा गृहेभ्यो यदि जागतं तु आचिम्नं । परतो वा तेभ्यो भवेत तदिपरीतं अनाचिषं ॥ ४३९ ॥

\$08

षादि अन्न आचित्र अर्घात् महणकरने योग्य है । स्रोर इससे उल्टे सीचे घर न हो ऐसे सातघरोंसे लाया हुआ भी अन्न अयवा माठवां आदि घरसे भाया हुआ ओदनादि मोजन अनानित्र अर्थात् भ्रहण करने योग्य नहीं है ॥ ४३९ ॥ सब्बाभिवर्ड चडुघा सयपरगामे सदेसपरदेसे। पुन्वपरपाडणयडं पढमं सेसंपि णादव्यं ॥ ४४० ॥ सर्वाभिषटं चतुर्घा खपर्यामे खदेशपरदेशे । पूर्वपरपाटनयनं प्रथमं शेपमपि ज्ञातन्यं ॥ ४४० ॥ अर्थ-सर्वामिधटदोषके चार मेद हैं-स्वमाम परमाम सदेश परदेश । पूर्वदिशाके मौहलेसे पश्चिमदिशाके मौहलेमें मोजन लेजाना वह स्वयामाभिघटदोष है । इसीतरह शेप तीन भी भेद जान लेना । इसमें ईर्यापथका दोष लगता है ॥ ४४० ॥ पिहिदं छंछिदयं वा ओसहघिदसकरादि जं दब्वं। उन्भिष्णिकण देयं उन्भिष्णं होदि णादव्वं ॥४४१॥ पिहितं लांछितं वा औपघष्टतशर्करादि यत् द्रन्यं । उद्भिद्य देवं उद्भिन्नं भवति ज्ञातव्यम् ॥ ४४१ ॥ अर्थ-मट्टी ठाल आदिसे दका हुआ अथवा नामकी मीहर-

मूलाचार--अर्थ--पंक्तित्रंघ सीघे तीन अथवा सात परोंसे आया मात

कर चिहित जो सोपध धी शकर आदि द्रव्य है उसे उमाइकर देना वह उद्गिलदीप है ऐसा जानना । इसमें चीटी आदिका मवेश होनेसे दोप है ॥ ४४१ ॥ आगे माहारोहणदोपको कहते हैं:-णिस्सेणीकडादिहि णिहिदं प्रवादियं तु घित्तृणं।

निःश्रेणीकाष्टादिमिः निहितं प्रपादिकं त गृहीत्वा । मालारोहं कृत्वा देयं मालारोहणं नाम ॥ ४४२ ॥ अर्थ-नाष्ठ आदिकी वनी सीदी अथवा पैडी (जीना) से परके कपरके सन (माले) पर चढके वहां रखे हुए पूआ लड्ड आदि अलको ठाकर साधुको देना वह माठारोहण दोप है। यहां दाताको विम होना दीखता है ॥ ४४२ ॥ रापाचोरादीहिं य संजद्भिक्खासमं तु दहुणं। धीहेदूण णिजुझं अच्छिझं होदि णाद्व्यं ॥ ४४३ ॥ राजचारादिमिथ संयत्निक्षाश्रमं तु दृष्टा । भीपयित्वा नियुक्तं आछेषं भवति झातव्यम् ॥ ४४३ ॥ अर्ध-सयमी साधुओं के भिक्षा के परिश्रमको देख राजा चौर आदि गृहस्तियोंको ऐसा टर दिसाकर कहें कि जो तुम इन साधु-ओं को भिक्षा नहीं दोगे तो हम तुम्हारा द्रव्य छीन लेंगे गामसे निकारुदेंगे ऐसा डर दिखाकर दिया गया जो दान वह आछेघ-

दोष है ऐसा बानना ॥ ९४२ ॥

बाग बनीवार्ध दोषको बहते हैं;—

अणिसहं पुण दृषिहं हस्सरमह गिस्सरं चदुषियप्पं।

पद्यमिस्सर सारवर्ष्ण वस्तावर्ष च संघादं ॥ ४४४ ॥

अनीवार्थः पुनर्दिषिधः ईबरोधानीयरः चतुर्विकत्यः।

प्रथम ईसरः सारकः व्यक्तीऽव्यक्तव संघाटः ॥ ४४४ ॥

अर्थ-अनीवार्थवेष्णे वो नेद हैं देश वनीयर। इन
दोनोंके भी निरुद्ध चार नेद हैं पहला भेद ईसर सारक्ष तथा

अनीधरके तीन भेद व्यक्त अब्बक्त संपाद। वानका सामी देनेकी इच्छा करे क्षेर मंत्री आदि मना करें तो दिया हुआ भी भोजन ईश्वर अनीमार्थ हैं। सामीसे अन्यजनेंकर निषेष किया अनी-धर कहरूता है वह व्यक्त (इद्ध) अव्यक्त (बाल) संपाद (दोनों) के भेदसे तीन प्रकार है।। ४४४॥

आगे उत्पादन दोषोंको कहते हैं;—
धादीनृद्णिमिन्ते आजीवे यिपायगे य तेनिंछे !
कोधी माणी मायीजोभी य हवंति दस एदे ॥४४५॥
पुच्ची पच्छा संग्रुदि विद्धामंते य चुण्णजोगे य ।
उप्पादणा य दोसो सोलसभी मुलक्षमे य ॥४४६॥
धादीद्विमिनाति आजीवः यतीषक्ष चिकित्सा ।
कोधी मानी सायी लोगी च मवंति दश एवे ॥ ४४५॥
पूर्व पथात् संस्तुतिः विद्यामंत्रथ नृण्णेगमा ।
उत्पादनम दोषः पोडड मुलक्षमं च ॥ ४४६॥
अर्थ—धाशीदोव, दत, निमिन, आभीव, वनीवक, विकिसा,
कोधी, मानी, मायानी, लोगी, ये दस दोष । तथा पूर्विमाती,

वधात् मंत्रुति, विद्या, भंत्र, वृष्येगेग, मूनकर्मदोष-मे सप् मिलं कर सोनद उत्पादनदोष हैं ॥ १४५/१४१६ ॥ मञ्चणमंद्रणभादी स्वद्वायगानीरअंषपादी च । पंपविपपादिकम्मेंबुष्यादो घादिदोसो दु ॥ ४४० ॥ मार्जनमंद्रनपापी कीडन्यंसियपायी च । पञ्चविपपादिकर्मणा उत्पादी घायदिषस्तु ॥ ४४७ ॥ वर्ष-मोशन की बहु भाव बहुलती है बहु पांचमहारी है सानकरानेवाहीभाव, आन्वजणहरानेवाही पाव, वसेको रमाने-बाही भाव, दूभिकानेवाही पाव, मादाफ समान अपने पाम सुलानेवाही अंक्षाय। इनका वो उपदेश करके साथु भोजन हे बहां पानेदिव होता है। इसमें साध्यायका नाश साथुमानेनें दूबण लगता है। १९००।।

जल्यलभाषासगदं सपपरगामे सदेसपरदेसे। संयंभिवपणणपणं दृदीदोसो हबदि एसो ॥ ४४८॥

जलम्यलाकाश्चगतं स्वपन्यामे स्वदेशपरदेशे। संबंधियचननयनं द्तदोषः भवति एषः ॥ ४४८ ॥

अर्थ-कोई साधु अपने गामसे व अपने देशसे दृगरे गाममें व दूसरे देशमें अरुके मार्ग नायमें भेटहर व अरुमार्ग व आफ़ाशमार्ग होफर जाव वहां पहुंचकर क्लिकि मेट्रेसेको उसके संबंधीर कहदे फिर मोजन के सो बहा दुनरोग होता हो। १४८। पंजापानंगं च सर्र छिण्णं भूमं च अंतरियन्तं च । उसक्कण मुख्यों च सहा अट्टविट्ट होड़ णेमिक्शा।४४९॥

लक्ष्यण सुविणं च तहा अङ्घविहं होई णेमिसं॥४ व्यंजनमंगं च स्वरः छिन्नः भूमिय अंवरिधं च ।

स्थापं स्वारः च तथा अष्टिषये अवित निमित्तं ॥ ४४९ ॥
अर्थ---निनिचनानकं आठ भेद हैं--मता तिल आदि ब्लंबन,
समक आदि अंग, सदस्य स्तर, बसादिका छेद या सल्यार आदिका प्रदार, भिनियमा, सूर्यादिकरोंका उदय अच्छ रोगा,
पत्र आदिकान, सोते समय हाभी दिमान आदिका दौराना-हन अष्टांनिनिचीये गुमागुन क्टकर भोजन के बरां निमित्त्रोंब होता है ॥ ४४९॥ १७८ म्हानार-जादी कुलं च सिप्पं तवकम्मं ईसरत्त आजीवं । तेहिं पुण उप्पादो आजीव दोसो हवदि एसी॥४५० जातिः कुलं च शिल्पं तपःकर्म ईयरत्वं आजीवं ।

तः पुनः उत्पादः आजीवदोषो भवति एषः ॥ ४५०॥

पुण्यं नवा इति पृष्टे पुण्यमिति वनीपकं वचनं ॥ ४५१॥

अर्थ—जाति, कुल, निजजादि शिल्प, तपभरणकी किया अपनेको महान प्रमट करना इत्यादि आजीनिका करनेके वचन गृहस्योको कह आहार हेना वह आजीनदोप होता है। इसने बल्हीनपना व दीनवाचा दोप होता है। ४५०॥ साणिकिविणतिथामांहणपासंडियसवणकामगदाणादी। पुण्णं णयेति पुढे पुण्णेत्ति वणीवयं वपणं॥ ४२९॥ श्राकृषणातिथिमाहणपापंडिश्रमणकाकदानाहिः।

अर्थ — कोई दाता ऐसे पृष्ठे कि कुता क्रमण भिसारी अम-दाचारी आक्षण भेषी साषु तथा त्रिदंडी आदि साषु जाँर कीआ-इनकी आहारादि देनेमें पुण्य होता है या नहीं! ऐसा पूछनेश उसकी रुचिक अनुकृत्र ऐसा कहे कि पुण्य ही होता है वहीं भोजन केनेमें बनीपक दोप जानना इसमें दीन्ता दोण ही।४५॥ कोमारनणुतिगिद्धारसायणविसम्द्रसारतंत च । सालंकियं च सक्त हिंगिच्दोसो हु अह्विहो ॥४५२॥ कीमारनजुपिकित्सारसायनविप्नृतकारतंत्रं च । यालंकिकं च शब्दं चिकित्सादीपस्त अष्टिवशः ॥४५२॥ अर्थ—विकित्सा शासके आठभेद हैं—वालंबिकत्सा, शरीर-

चिकित्सा, रसायन, विपतंत्र, मृततंत्र, क्षारतंत्र, शलकाकिया,

शस्त्रविक्तिसा । इनका उपदेश देकर बाहार हेना वहां विकित्मादीय होता है ॥ १५२ ॥ कोधेण प माणेण य मापालो भेण चावि उप्पादो ।

कार्यण य माणण य मायालानेण चाव उप्पादा । उप्पादणा य दोमो चदुविहो होदि णायच्यो ॥४५३॥ क्रोपेन च मानेन च मायालोनेन चापि उत्पद्धः।

क्रीपेन च मानन च मायालोभेन चार्ष उत्पद्धः। उत्पद्धनब दोपः चतुर्विषो भागति ग्रातव्यः। ४५३ ॥ अर्थ—कोषसे मिश्रा लेगा मानसे जादार लेगा गायासे जादार लेगा लोगसे जादार लेगा—दसम्बद्धार कोण मान माया

लोभरूप उत्पादनदोप होता है पेया जानना ॥ ४५३ ॥ कोधो य हत्थिकच्चे माणो घेणायहम्मि णयरस्मि। माया बाणारसिए छोमो रासीयणयरम्मि ॥ ४५४ ॥ श्रीयथ इस्तिकल्पे मानी वेणातटे नगरे । माया वाराणस्वां लोमो रासीयनगरे ॥ ४५४ ॥ अर्ध--किसी साधने हिलकल्यनगरी कोप करके भिक्षा महण की, किसीने येणातट नगरमें मान फरके आहार लिया. किसी साधने मायाचारीसे बनारसमें आहार हिया और किसीने लोभसे सक्षियाननगरमें भिक्षा स्टी ॥ ४५४ ॥ दायगपुरदो किसी मं दाणपदी जसोघरो चेति । प्रव्वीमंपुदि होमी विस्सरिदे पोपणं चावि ॥ ४५५॥ दायकपुरतः कीर्विस्त्वं दानपतिः यशोधरो वा इति । वृर्वसंस्तृतिदोषो विस्तृते षोधनं चापि ॥ ४५५ ॥ अर्थ--दान देनेबाटेके आगे यदि शाधु उसकी महांसा करे कि हाम बानपति हो यहाेथर हो द्यमारी बीर्जि होकमें बजिद्व है

१८०

इसमकार आहार टेनेके पहले पशंसा करना वह पूर्वसंस्तृति दोष है। तथा दानी यदि मूलजाय तो उसे याद दिलाना कि पहले तो तुम बड़े दानी थे अब कैसे देना मूल गये-ये भी पूर्वसंनु-तिदोप जानना ॥ ४५५ ॥ पच्छा संबुदिदोसो दाणं गहिदृण तं पुणो कित्तिं।

मुलाचार-

विक्लादो दाणवदी तुज्झ जसो विस्सुदो विति॥४५६॥ पश्चात संस्तुतिदोपः दानं गृहीत्वा तत् पुनः कीर्ति । विख्यातः दानपतिः तव यद्मः विश्वतं वृते ॥ ४५६ ॥ अर्थ-- आहार लेकर पीछे जो साधु दाताकी प्रशंसा करे कि तुम प्रसिद्ध दानपति हो तुमारा यश प्रसिद्ध है ऐसा कहनेसे पश्चात् संखुति दोप होता है ॥ ४५६ ॥ विज्ञा साधितसिद्धा तिस्से आसापदाणकरणेहिं।

तस्से माहप्पेण य विज्ञादोस्रो दु उप्पादो ॥ ४५७ ॥ विद्या साधितसिद्धा तस्याः आशाप्रदानकरणैः । तसा माहात्म्येन च विद्यादीपस्तु उत्पादः ॥ ४५७ ॥ अर्थ-जो साधनेसे सिद्ध हो वह विद्या है उस विद्याकी आज्ञा देनेसे कि हम तमको विद्या देंगे तथा उस विद्याकी महिमा वर्णन करनेसे जो आहार हे उस साधुके विद्यादी। होता है ॥ ४५७ ॥ सिद्धे पढिदे मंते तस्स य आसापदाणकरणेण। तस्स य माहप्पेण य उप्पादो मंतदोसो दु ॥ ४५८ ॥

सिद्धे पठिते मंत्रे तस च आञ्चाप्रदानकरणेन । वस च माहात्म्येन च उत्पादो मंत्रदोपस्तु ॥ ४५८ ॥

अर्थ—पढनेमात्रसे जो मंत्र सिद्ध हो यह पठित सिद्ध मंत्र होता है जस मंत्रकी आशा (होम) देकर कीर उमकी महिमा ष्टकर जो साझ आहार महण करना है उसके मंत्रदीय होता है।। ४५८।। आहारदायनार्ण विज्ञामंत्रिह देवदाणंतु।

आहर्त्य साधिदव्या विज्ञामंत्री हवे दोसो ॥ ४५९ ॥ आहर्त्य साधिदव्या विज्ञामंत्री हवे दोसो ॥ ४५९ ॥ आहारदायकानां विद्यामंत्रः देवनानां तु ।

आर्य साधितच्या विद्यामंत्रः मवेत् दोषः ॥ ४५९ ॥ अर्थे —आहारके देनेवाठे व्यंतरादिदेशोडी विद्या सधा मंत्रने मुटाकर साधन करे वह विद्यापंत्र दोष है। अधवा आहार देनेवाठे गृहसाधि ठिये देवताडी मुटाकर साधना वह भी

दनवारु गृहसाक १८४४ दवताश बुरुकर सामना वह भा विचानंत्रदोष है ॥ ४५९ ॥ णेत्तस्युंजणसुष्णं भूसणसुरुणं च गत्तासोभूयरं ।

शुक्तं तेणुष्पादो शुक्तपदोस्रो हवदि एसो ॥ ४६० ॥ नेत्रपोरंजनवृक्तं भूषणवृक्तं प गात्रशोमाकरं ।

न्यस्तिनपूर्ण सूर्यपूर्ण य गावजानाकर । पूर्ण नेनोत्पादः पूर्णदोषो भवति एपः ॥ ४६० ॥ अर्थ-नित्रोंका अंवन, मूचल साम करनेका पूर्ण, धारीरका

होभा बदाने बाहा वूर्ण-इन वूर्णोरी विधि बनलाइर आहार हे वहां बूर्णदेश होता है ॥ ४६० ॥ अयसार्ण वसियरण संजीजवर्ण च विष्वजुलाणं । भणिबं तु मूळकम्म एदे उत्पादणा दोस्स ॥ ४६१ ॥

अवशानां वेशीकरणं संयोजनं च दिशयुकानां । भणितं तु मुन्तकर्म एते उत्पादना दोषाः ॥ ४६१ ॥ १८२

िर्द्रक है उनका संबोध करता-ऐसे मंत्र संतादि उसार वर्ष इस्त्रोमें आहार लेना वर मुख्यमें दीन हैं। इसारद से सीट उत्तरका बोग हैं।। ४६१।। आसे असनोत्तरों करते हैं:—

अर्थ-- वे बगमें नहीं हैं उनको बगमें करना, भी भी प्र

मंकिरमिरिन्यपिक्तितं वक्तश्यायमुम्मिस्ते । भविष्यपुर्वन्ययोद्धितं वक्तश्यायमुम्मिस्ते । भविष्यपुर्वनिक्षित्रित्तर्यम्यादस्यक्षित्राः।

सारुपाननामामा । भारित्यानिम्यानसः भागतेमा द्वा एते ॥ ४६२ ॥ भर्य-नामा , सीता, निर्मात, विदेश, संव्याद्रस्य, स्वयं अंत्रेय, प्रमंत्रता, भिर्मात, सामाने द्वा अवस्था है ॥ ४६१।

अन्तर्गं च पाणपं वा साहित्याच नाहिपं च अन्तर्थाः च लिपासक्तिपार्शंच व गेरिट्रं मंहित्यं जाणे ॥४९३॥ अन्तरं च पातके पा सार्थं अप मार्थं च अप्याप्तकि ॥ के पत्तरक्षां नतिक्षीं च गेरियो मेरिकं जातीरि ॥४९३॥

वर्ष भार, त्र, ८४, ६४, ६४, इस्तामी स्वीत आदि वर्ष वर्षक भारत भागवत अनुसार मेरे तेन वेशन दें या नरी १० भारत भारत भागवती त्यावरी बाहर तेन दीत दें। १६६४ इस्ट्रिनि देण सुद्ध प्रस्तिस संभागतीय स्राप्तीस ।

स्त १८०० इ.स. १९ इ.स. १८ व्या स्तारण व क्षाण व क्षाण । सम्बोध महिला इत्तेसी परित्र व्यासी सहा सुविधामा।।१९६१ स्तिकीय व इ.स. इत्यास स्वारीत हथा। । सम्बोध वर्ष करेगा व्यक्तिया सन्य स्विता ।। ५६५ ॥

मनः मृद्धितरेताः गरिततेत्वाः महा मृतिवाः॥ ४६४॥ सर्वे १०८१ रावः चः ए र त्वाः वहरेतः आः नार आदि भोजन देना वहां मुक्षितदोप होता है उसे हमेशा त्याग करे॥ ४६४ ॥ सचित पुढविआक्रेनकहरिदं च वीयतस्जीवा। जं तेसिमुवरि ठविदं णिविखतं होदि छव्भेयं॥४६५॥ सचित्ताः पृथिव्यप्तेजोहरितानि च बीजत्रसजीवाः । यत्तेपामुपरि स्थापितं निश्चिप्तं भवति पड्मेदं ॥ ४६५ ॥ अर्थ--अमासुक सचित पृथियी वल तेज हरितकाय बीज-काय त्रसकाय जीवोंके ऊपर रसा हुआ आहार वह छहमेदवाला निक्षिप्त है ऐसे आहारको लेनेसे निक्षिप्तदोव होता है ॥ १६५ ॥ सचित्रेण व पिहिदं अथवा अचित्तगुरूगपिहिदं च। तं छंडिय जं देयं पिहिदं तं होदि योघव्वं ॥ ४६६ ॥ सचित्तेन वा पिहितं अथवा अचित्तगुरुकपिहितं च। तं त्यवत्वा यद्देयं पिहितं तत् भवति बोद्धव्यं ॥ ४६६ ॥ अर्थ--- जो आहार अमामुक बस्तुसे दका हो। अथवा मामुक-भारीवस्तुसे दका हो उसे उघाइकर जो दे ऐसे आहारको है उसके पिहितवीय होता है पेसा जानना ॥ ४६६ ॥ मंचयहरणं किया पदाइमिदि चेल भायणादीणं। असमिक्लप जं देवं संववहरणो ह्यदि दोसो॥४६७॥ संव्यवहरणं कृत्वा प्रदातुमिति चेत् भाजनादीनां । असमीक्ष्य यहेर्य संध्यवहरणी भवति दोषः ॥ ४६७ ॥ अर्थ-भाजन (बासन) आदिका देन छेन शीप्रनासे कर विना देखे भोजन पान दे उसे जो साधु है सो उसके संव्यव-हरण दोष होता है ॥ ४६७ ॥

गैरुव हरिवालेण व सोहीय मणोसिलामपिट्रेण। सक्कानोद्रणानेचे वा व देवे करभाववा निशं ॥४७४॥ यैतिकवा इतिवालेन वासेटिकवा मनःशिष्ठया आमधित। महाराजीहरू हेवे न वा देवे करभावते जिल्ला ॥ ४०४ ॥ अर्थ-रोक, दरपाय, महिया, मैनशिय, मारा आहेश नुरे कचा साफ-इनमें थिए दाध तथा यात अपता अपता

पार्थ भीता हाचा एत पान इन रोनोंने भीतन हे तो थिए हो। ទី២និធនភាគ

बन् परिचात्रणमुच्यित्र भातामे परिमर्तन दिलंते। होर्रेट्स अंजनमहत्त्वा होदियहोसी सर्व ने भी ॥ ४४५॥ बह परिवातनमध्यात्वाचा चाहारे परिवर्तने रीपवाने र

लारता बेत्रामधा। लाहरीयी बात्रामधः ॥ ४०५॥

व र -- न के भारत हो भारत करे, छाड़ नारि बरा रुष्ट्र पन नारत कर नवस हरता एक भारास्की होते. 🕶 माल ४४ इत्र अध्यक्षित बुला है गुला जावना । ४ ४६ है

छ हेवका व बीसी की मैतीयदि सम्वाणे मु वर्षान्य अवदाने प्रयाणनामी सर्वाह मनी ॥४०६। में हे इने च रहत. या नेपा प्रवृति नकताने या ।

बर्रेन्यान बाराम प्रशासनाथा नवति स्वाः ॥ प्रश्ने ॥

को है देर करत गरा रहा असला नवस देश reme want nort the netter treate \$1

PAR HER STORE HAR BY IT SHE BUT THE

तं होदि सर्यगाटं जं आहारेदि छुच्छिदो संनो। तं पुण होदि सघूमं जं आहारेदि जिदिदो॥ ४५०॥ तद् भवति संगारं यत् आहरेति मृष्टितः सन्। तद् पुनः भवति सपूमं यत्र आहरति निदितः॥ ४५०॥ अर्थ—को मृष्टित हुआ अति तृष्णासे आहार महत्त करता

अर्थ-—जो मृध्ति हुआ अति तृष्णासे आहार महण करता है उसके अंगर दोप होता है। और जो निंदा (स्टानि) करता हुआ भोजन करता है उसके घूम दोप दोता है।। ४७०॥ यहांतक भोजन करनेके छचातीस दोप कहे।

यहातक भाजन करनक छघाटास दाप कहा आगे भोजन लेनेके कारण आदिको बतलाते हैं;—

छहिं कारणेहिं असणं आहारंनो वि आयरिद धम्मं । छहिं चेव कारणेहिं हु णिज्जहवंनो वि आयरिद्व॥४७८॥

पड्मिः कार्रणः अग्रनं आहरमपि आचरति धर्म । पडमिः चैव कार्रणः तु उज्ज्ञसपि आचरति ॥ ४७८ ॥

अर्थ-- छट कारणोसे आहार प्रदल करता हुआ भी धर्मका पालन करता है। और छट कारणोसे भोजन त्यागता हुआ भी धर्मका पालन करता है॥ ४०८॥

वेजपवेजावये किरिपाटाणे य संजमहाए । तथ पाणधम्मर्जिता कुजा एदेहि आहारं ॥ ४७९ ॥ वेदनार्वपारुचे कियार्थ प संपमार्थ ।

तथा प्राणधर्मार्थिता क्रयोत् स्वैः आहारं ॥ ४७९ ॥ अर्थ-शुधारी येदनाके उपधानारं, वैवाहत्त्वकरनेकेटिये, एट आवर्यकरियाके अर्थ, तेरट्यकार चारिककेटिये, माण 125 मुलाचार-

गेरुय हरिदालेण च संडीय मणोसिलामपिट्रेण। सपपालोदणलेवे ण व देवं करभावणे लितां ॥४०४॥ गैरिकया हरिवालेन वा सेटिकया मनःशिलया आम्पिटेन। सप्रवालोदनलेपं न वा देयं करमाजने लिप्तम् ॥ ४०४ ॥

अर्थ-गेरू, हरतान, साहिया, मैनशिन, चारण आरिश पूर्व कचा बाक-इनसे िप्त द्वाप तथा पत्र अथवा अवदृष्ट जाने भीगा हाथ तथा पात इन दोनोंने भोजन दे सो जिस की होता है ॥ ४०४ ॥ पह परिमारणगुज्ञिञ आहारो परिगलंत दिल्लंगं।

छंडिय भुजणमहत्या छंडियदोसी हये णेशी ॥ ४०५॥ षद् परिमाननमुज्यात्रा आहारं परिगर्तनं दीपमानं । रास्या क्रानमध्या त्यकदीयो भवेत् सेषः ॥ ४७५ ॥ प्रयं-वद्न मीतनको भोड़ा भोतन करे, छाछ आरिने

शरो हुए हाथने भी 1न करे अथरा हिमी एक भारतकी छी। पर भारत करें उसके त्यकतीय हीता है ऐसा जानना ॥ ४०५ ॥ संजोपणा य दोसो जी संजोएदि भरापणं सु । अहिमको बाहारी पमाणदीमी हवदि एमी ॥४०औ

मंद्रीजने भ द्रीयः यः मंद्रीजयति सक्तवाने ह । अतिमात जाडारः बमाणदोत्री नवति एतः ॥ ४०५ ॥ अर्थ-में दश न रन नम्म मर्ग विश्वना वर्गा है!

द्रकारन ने उन्ते विश्व अवद्या ग्वीप्रता दीप दी ग्राहित होते ही जापादी उरावर मोजन करें तो उसके समापरी^प

87 8 11 205 11

तं होदि सम्मेगाटं जं आहारेदि छुच्छिद्दो संनी। तं पुण होदि सम्मं जं आहारेदि णिदिदो ॥ ४७७ ॥ तद् भवित सांगां यत्र आहरेदि मृष्टितः गत् । वत् पुनः भवित सभूमं यत्र आहरेदि तिदितः ॥ ४७७ ॥ अर्थ-चो गृष्टित हुआ श्रीत एटापी शाहर हृदय

तत् पुनः भवात सपुन यत् आहरात निहतः ॥ १९०० ॥
अर्थ——ने मुद्धित हुआ अति हुएआसे आहार महण करना
हुँ उसके अंगर दोष दोता हैं। और जो निंदा (स्वानि)
फ्रत्ता हुआ भोजन करना हूँ उसके पुन दोश दोना हैं॥ ४००॥
यहांतक भोजन करनेके छधानीस दोष कहें।

आगे भीजन टेनेके काल आदिको बत्यते हैं;— छहिं कारणहिं अमणें आहारंनो वि आधरदि धन्में ! छहिं चेव कारणहिं दु णिज्जहयंनो वि आधरदि॥४७८॥

परिमः फार्गः अग्रनं आहरप्रदि आचरित धर्म । पर्हिमः चैव कार्गः तु उन्झप्रि आचरित ॥ ४७८ ॥

अर्थ—एट फारणीसे आहार मदल बरला हुआ भी धर्मण पालन करता है। जीर एद बारणीसे भोजन त्यागता हुआ भी धर्मका पालन करता है। ४७८॥

वेजपवेद्धायये किरियाठाणे य संजमहाए । तथ पाजधम्मचिता बुद्धा एटेहि आहारे ॥ ४७९ ॥ वेदर्जावयाद्वाचे कियार्थ प संयमार्थ ।

तथा प्राणमानिका क्योंत् एतीः आहारे ॥ ५७९ ॥ अर्थ-शुभाका वेदनाके उपरामाने, वेपाहरवकानेनेकिते, एट आवश्यनक्रियाके अर्थ, तेरट्यनार चारिकोतिये, मान कार है जिल्ला समादि भर्म के बारते हैं भी भी रह कार कार से साथ अप सा

आर्के उपमध्ये तिरम्पणे पंथपेरमुनीभी। पाणिक्यापर्वेक सरीरपरिवार वेक्क्षेत्रे॥ ४८०॥

नारि उपनर्गे विश्वामं सम्मर्थापुरः । मानिहत्तानारेची मानिगरियरे स्पृत्येदः ॥ ५८० ॥ पर्वः सारिके परुवारः वीगरीयः, देवः स्वत्यारः

अर्थ जाधिके अरुवार तीमनेशर, देव सनुपारि रामन कोमर मननामा भाग्य करनेक समय, अस्वर्यम करोड पंत्रोत, पर्वाधीनी द्या पाननेके निर्वान, अन्य कर्ड पंत्रोत, सरियों गुरा कीमनेक निर्वान दन हुद् कार्य

र्चन वश्वकः सम्बद्धाना भीषा है॥ २८०॥ क मत्ता दसाद भई का सरीरसम्बद्धानाद्व सेनाई।

काणह सेजबर्ड झाणडे चेव भौतेको ॥ ४८१ ॥ - व बरापु खाजावे व धरीसर्वापववार्व वे सेर्रिस

तातार्व मेरवाने त्याना है भेर चूं विचार पटते ॥ चर्च महत्रकरण, नार व्यानहरूपी, नार में

ना सर्वाच्छाता, बार्याना है जिसे वासी है। सराव्छा र्रायाना हिसे संस्था हेन बहुत है है। वासी जाता अरा छिन् है जाने रिलासाय रूपांचा स्वर्णां

भण क्षत्र किन्द्र है जन र लास्माप) केर्य समस्य पनी ४ च म राज केर्य मोजन करते हैं। अन्ते हैं

करको स्विष्टिम् हे असमी बाडान्त्रोसस्टिती । असे अवस्य काम बसामसन्ति विक्रिम् रिर्मास्ट े अर्दिका रुपिस्स सकारवस्य एर्ड कमीनम् है ।

ामा राज्यक नारमान्त्रक मेत्र ॥ ४४६ ॥

नवकीटिपरिशुद्धं अग्रनं डाचरवारिंग्ररोपपरिद्विनं । संयोजनया हीनं प्रमाणनिर्दितं विषिश्च दर्च ॥ ४८२ ॥ सम्याणनिर्दितं विषिश्च दर्च ॥ ४८२ ॥ सम्याणनिर्द्धां न मानिर्द्धां । स्वयं वात्रासापनमात्रं चतुर्द्धमन्दर्याजेतं कृता ॥ ४८३ ॥ अर्थ—ऐसे आहारको हेना चाहिये—जो नवकीटि अर्यात् मन चपन काय इत कारित अर्थानिर्द्धां हो, मात्रा माना हो, विषिसे अर्थात् नच्या भीन तात्रावे रहित हो, मात्रा माना हो, विषिसे अर्थात् नच्या भीन तात्रावे सात्राणसिंहत निर्माते रहत हो, एद कारणो सहित हो, क्यासिर्द्धां हो, माणोंक पालपो हिन्दे हो, एद कारणो सहित हो, क्यासिर्द्धां हो, माणोंक पालपो हिन्दे हो, क्यासिर्द्धां सार्थां सार्यां सार्यां सार्थां सार्थां सार्यां सार्थां सार्थां सार्थां सार्थां सार्थां सार्यां सार्था

आगे श्रीदर मधोक नाम कहते हैं;---णहरोमजंतुअट्टीकणग्रुंडयपूर्वियम्मकहिरमंसाणि । सीयफलकंदमूला छिण्णाणि मला चत्रहसा होति॥४८४

न त्ररोमजंत्यध्यिकणकुंडपूतिवर्मध्यितमांसाति । धीजफलबंदमुलानि छिचानि मलानि चतुरंद्य मवंतिष्ठ८४ अर्थ—नगर रोम (मान्) माणरितसरीर, द्राप्त, गेंट्र आर्याः कण, घावत्वा चण, साया कोटी (रापि), घाम, कोटी, मांस, अंदुर टोने योग्य गेंट्र आरि, धाम आदि पत्न, कंट्र मृत्र—ये बीदद मन हैं। इनको देखके आहार त्याग देश चारिये॥ ४८४॥

पगदा असओ जह्या नह्यादी दम्पदीसि नं दम्बं।

फार्यमिति सिदेशि य अध्यक्तर्रं असुद्रे तृ॥४४५ पर्मा असरी यथार् गयार् द्राया द्री तर् द्रापं । पर्मुक्तिति सिदेशि च आमार्थहर्तं अगुद्रे तु ॥४८५

पानुकानंत विदेश च आमाधका धनुत हु । धनि भने नाम् इत्य गीर मार रेजीर प्राप्त क्या मा करें। मिनोरे गुक्ति गीर निकर गरी नह यूथ गा। (राह) है। भीर से पापुक भागार नोनेश भी भीरे दिन हैं। मेना दिना करें कर नामर्थ भागूड भागना। विश् रिकर हैं। मेना दिना करें कर नामर्थ भागूड भागना। विश्

त्रक सर्वात्याण भवते अपूर्णवृत्ये स्वत्याया हि सक्ति।

क कि सेक्सा कर्न परमञ्जूकते जाहि विष्यु के ॥ ४८५॥

क मान कार्या प्रजो मह्योजके संभाव हि महित्र ।

क हि सेक्स कर्न वरमार्थको सामार्थिक एक्स हिन्दु ॥ ४८५॥

क हि सेक्स कर मनोक विकित्त न्याव्याल कर महित्र

पह । मार्गां प्रकार (सातम् स्वयद्भाष्यः कर्षः स्वरः) ८० १ जनस्य करा है तेन्द्रीते जारी स्वीतास्त दूसरे १ जनस्य तत्र जानन्त । तत्र स्वयूक्त बारी दीता स्वर्ते १ ८० हे । अ

स्व पात्र स्मानियावतः कार्यावन्ति विकासः सरिम सर्वे क्ष्रः स्थान नामसः पात्राक्तनितः सर्वे स्वर्ते ॥ १४४०॥ क्षर्य स्टेन्ट स्व च्यापकार्ति स्वर्ते स्थितः ।

्तु अनेप्रस्य व्याप्त विश्वया श्रुति शिव्हारी व्यक्ति क्षेत्र काल्या राज्यात विश्ववत् व्याप्त व्यक्तिकार स्थाप्त व्यक्ति है। तह काल्या के स्थाप्त वर्षात् के स्थापित है। तह काल्या के स्थाप्त काल्या कुल्या सापु आरंगरूप अपःकर्मने उत्पन्न हुन् भी आहारको महन करता है तीनी यह मुद्ध है क्षेत्रय नहीं होना ॥ ४८० ॥ सन्वयोवि विव्हानेत ब्लेच साथ समामनो हुनिहो । स्वयाहो पुण ब्लेच सायगढो अप्पत्तिमानो ॥१४८॥ नवें: अपि विद्दीपः इत्ये माये गमाननो हिनिधा ।

मर्चः अपि (वंटरोपः द्रष्ये भावे समामनी द्विविषः । द्रष्यमती पुनः इत्ये भावमनी आत्मपरिचामः ॥ १८८ ॥ अ—सभी (वंदर्ये भावमनी अत्मपरिचामः ॥ १८८ ॥ द्रष्यों जो रहता दे बद्द द्रष्यमत है और अपने परिचामीमें जो महिनना है बद भावमन है ॥ ४८८ ॥

क्षांगे द्रव्यका भेद कहते हैं;— सम्प्रेमणं च विदेमणं च सुद्धालणं च ने कससो । एसणसमिदिविसुद्धं जिदियहमर्वजणं जाणे ॥४८९॥

सर्वपणं च विदेषणं च श्रद्धाःमनं च ने त्रमशः । मुपलाममितिविश्रद्धं निर्विकृतमन्यंत्रनं जानीदि ॥ ४८९ ॥

प्रणामितिविश्वद्धं निर्विकृतम्ब्यंत्रने जानीहि ॥ ४८९ ॥ अर्थ- सर्वेषण विद्धंवण शुद्धासन स्वरूप तीन मनार दृष्य है वह कमसे हन स्वरूप है कि जो प्रणासितिति पनित्र हो, विकृतियोग रहित हो रहा हम्म सामुक्त भोजन होना है ॥ ४८९ ॥

भावन दला ६ ॥ ४८५ ॥ क्ष्म्यं पेर्स कार्स्ट भागं चल्पवीरियं च णाऊण । क्षुत्रा एचणममिदि जानेचिदिई जिजमदिम ॥ ४९० ॥ - हुट्यं क्षेत्रं कार्यं भागं चल्पीयं च शास्त्र ।

हर्षात् गुप्तासमिति यथोपदिएां जिल्लाने ॥ ४९० ॥ अर्थ-आशागदि हला, अनुष आदि शेष, शीत आदि सात.

जानकर तैसी जिनमत्त्री उत्तरेश कीगई है नैसी ब्राला शनिती

बद्धा आदि भाव, शरीरका बन, शर्व शावध्ये,-इन श

सकती है। ४९०॥

Trans 27 188 \$ 11 5711

र्र भन्ना करियान पूच मुक्तिगुणसीलशे त्रभावीचे ह execute with individual the death in the bit

भागे भी रवतिभाग व सीरवकात्र दिख्याते हैं।---अजमस्यास्य सर्विज्ञास्य प्रदेशस्य तक्षिप्रपृष्ण बाक संबरणई बाउरधावरोसपे भिवला ॥ ४९१ ॥ पर्व प्रधानेन मध्येत्रनेन उद्दरण मुनीये उद्देश । वट्योः संवारकार्य चलर्पस्वश्चेषयेत्र विश्वः ॥ ४८१ ॥ चर्च-- मार्च १३१६ चार गार्गिनेन ती भाग तो और ण[े] र मो रुप्त संदे, सीपता साम जलने पूर्ण **करे** और भी ब म बरवह अबरवह रिके मार्ग स्वाम हुन ॥ सरत्यस्थानमायां मालीतिययश्चितं आगमताले । नियनगणमञ्ज्य महण्याविद्यारमञ्जूती ॥ ५५३॥ य रहित्रास्तानेवाना शिक्षित्र स्थिता भूतानाहरू । । रिक्टी: केक्स्यर्काः जपन्यम् वर्षोरक्रयाः ॥ ४५२ ॥ बर्ग मुक्त रहतन शन गरी बाहत लेक्ट गुर्वेक बर्व के नहें एक प्रदेश पर राष्ट्र की रूप भी रूप बाले भी सामग्री है। रान्य हरने भारतन करताने नीत सहाविष्य ज्याना कर साराय न कर है, के मूह कर करता पर में मन अहमान है, यक

पारम करे। को उल्टाकरे तो बाप पित कक्की उल्ली

मिखाचर्यापां चुनः मुतिगुणशीलसंयमादीनां । रखन् चरति मुनिनिवदिकः च प्रक्ष्ममाणः ॥ ४९३ ॥ अधे—सिशाचरांमं भवेग करता हुआ मृति मुति मृत्याण शील मृत्याण शील सादिको जालना तथा शरीर परिमद्द संतार इन तालिति मात्र थेराग्यको अपेशा करता हुआ विदार करता है ॥ ४९३ ॥ आजाा अणयस्थायि च मिलास्थाराहणादणास्यो च ।

आणा अणवत्थावि च मिन्छशाराहणादणानी च । शंजामविराघणावि च चरियाए परिहरेदच्या ॥ ४९४॥ आज्ञा अनुस्मापि च मिष्यात्वारामतासमाद्यक्ष ॥ संयमविरापनापि च चर्षाचा परिवर्तव्याः ॥ ४९४ ॥ अर्थ-न्यापु वीरामकी माज्ञाको पानन करता हुआ भोजन-चर्याने समय स्वेच्छा मद्यवि विष्यात्वासण अपना मतिपात

र्धयमकी विराधना-रून सबको त्याग दे ॥ ४९४ ॥ आगे भोजनके अंतरायोंको बतत्यते हैं;----कतमा भेजकार छटी रोहण कहिरं च अस्सर्य

कामा मेज्झा छरी रोहण कहिरं च अरसुवादं च।
जणहहिद्दामरियं जण्डूपरि वदिव्यमो वेव ॥ ४९६ ॥
णाभिकापोणिममणं प्रविश्वयानंत्रवणा च जंतुबहो ।
कामादिविष्टरणं पाणीत्रो विष्टपटणं च ॥ ४९६ ॥
पाणीए जंतुबहो मंसादीदंगणं च व्यासमा ।
णादंतरिम जीवोमंग्रदो भागणाणं च ॥ ४९७ ॥
ज्वारं प्रस्तवणं अभोजनिह्यवेदाणं तरा परणं।
व्यवेदाणं सर्दंगं मुमीमंप्ताम जिह्नवं॥ ४९८ ॥
वदरिविणिसमाणं अदनगहणं वहारामाहाहो।

पादेण किंचि गहणं करेण वा जं च मूमीए॥ ४९९॥

१९४

नाभ्यधोनिर्गमनं प्रत्याख्यातसेवना च जंतवधः । काकादिपिंडहरणं पाणितः पिंडपतनं च ॥ ४९६ ॥ पाणो जंतवधः मांसादिदर्शनं च उपसर्गः । पादांतरे जीवसंपातो भाजनानां च ॥ ४९७ ॥ उचारः प्रस्रवणं अमोज्यगृहप्रवेशनं तथा पतनं । उपवेशनं सदंशः भूमिसंस्पर्शः निष्टीवनं ॥ ४९८ ॥ उदरक्रमिनिर्गमनं अदत्तप्रहणं प्रहारो ग्रामदाहश्च । पादेन किंचिद्यहणं करेण वा यच भूमी॥ ४९९ ॥ एते अने बहुबः कारणभूता अभोजनस्येह । मयलोकजुगुप्सा संयमनिर्वेदनार्थ च ॥ ५०० ॥ कीआ आदि बीट करें तो वह काक नामा मोजनका अंतराय है। षशुचि वसुसे चरण लिस होजाना वह अमेध्य अंतराय है। बमन होना छदिँ है। मोजनका निषेध करना रोध है। अपने या दूसरेके छोड़ी निकलता देखना रुपिर है। दुःससे बांग्र निकलते देखना अञ्चपात है ६ रूदन होते गोड़के नीचे हामी सर्च करना आन्वपः परामर्श है ७ तथा गोहके मगाण काठके

क्ष्मर उर्द्रंघ जाना यह जानुपरि व्यतिकम अंतराय **दे ८** ॥नाभिसे

बीहणलोगदुर्गछणसंजमणिव्वेदणहं च ॥ ५०० ॥ काकोऽमेध्यं छुर्दिः रोधनं रुधिरं चाश्रुपातश्र । जान्वधः आमर्शः जानूपरि व्यतिक्रमञ्जेव ॥ ४९५ ॥ अर्थ-साधुके चलते समय वा खड़े रहते समय ऊपर औ

मुलाचार-

एदे अण्णे बहुगा कारणमुदा अभोयणस्सेह।

नीचा मखककर निकलना वह नाम्यधीनिर्गमन है ९ स्याग दी गई बराका महाण करना मत्याय्यावसेवना है १० जीववच होता जैतमप है ११ कीमा भादि माम हे जाय वह काकादिविहहुरण है १२ पाणिपात्रमे विंटका विश्नाना पाणित. विंदपतन है १६ ॥ पाणिपात्रमें हिसी जीवका मरजाना पाणिनंत्रवथ है १४ गांगका दीलना मांगादिवर्धन है १५ देवादिहन उपदर होना उपनर्ग है १६ दोनों पैरोंके बीचमें कोई जीव गिरजाय वह जीवरायान है १७ मोजन देनेवालेवं दाधते भोजन गिर जाना भाजनतवान है १८ ॥ अपने उदरमें मल निकल जाय यह उचार है १९ गुन्नादि निकलना मस्तवण है २० भादालादि अभीज्यके धर्म प्रवेश ही जाना अभोज्यगृहमयेश है २१ मुहादिने आप निर आमा पतन है २२ बैठ जाना उपवेशन है २६ कुछा आदिका बाटना सदेश है २४ हाथते गृशिको हुना गृशिसन्दर्श है ६५ कर. आदि गलका पेकना निष्ठीवन है २६ ॥ पेटले श्रृति (बांटी) का निकलना एडरकामिनिर्मणन है २७ विना दिया विकित भट्टण बरना अन्तप्रमुटण है २८ अपने व अन्यके सनवार आहिते महार ही तो महार है १९ शाम की तो मानदाद है १० पांबते भूमिरी चठाकर बुछ लेना वह पादेन विवित् शहल है ११ शाधवर धृतिसे भुछ उठाना बह करेण किचित् भहण है १९ ॥ ये बाबादि बतीस अंतराय सथा इसरे भी बाहावादिल्ला कब्द रष्टमरण ब्यादि बहतारी शोधनत्यागके कारण बानना । सब्द श्वादिका भय होनेसे लोकनिया होनेसे संबंधके ठिये बैहाम्बहे िये बाह्मका साम बरना बादिये ॥ ४९५ से बन्द हर ॥

ते पित्तानुष्याते शितानुष्ट्रि सम्म विशेषा प्रवर्ते ॥ वर्षा भारते का शितानुष्ट्रि सम्म विशेषा दे स्तीर जिल्ले कर्म मण्डेराज भागम की देने भागीय सम्मानुष्यक सन्ते ती सम्मानुष्ट्रिक मण्डेराज्य सम्मानुष्ट्रिकी स्तीत् वर्ष

का है जर्दर किरोज में की प्रचार में में स्वरकार अध्यानियंत्र देविदिशिव में मानासार्दर्ग व्यापन वार्तकारी आधार्मां के के क्रावस व जार विराहर्मित विभाग संस्थान कृतन में के मा

पराज्यकाविकार ॥ ५५ ॥

क. २.० वर्ष्यकारी कार्यवाधी गुरुष विकासी । क.४९५ व्याच्या संघातिक मत्यवाकुर्व ॥ ५.००॥ - इ.स. बल्ब्यूट गरेर्य कीर विद्याती ।

क महार महाराष्ट्र व हा महेता पुत्राम् । या - 1 में क्रिया हा ने हा कार्य के क्रिया हुताम् । या - 1 में क्रिया हा ने हा कार्य के क्रिया है कार्य है का

- अस् - १००१ हा व्याप्त है है जा करे हैं हा पर है के 1 हर हा है दर प्रवाह सरस्य घर वा विकास आवासयणिमुत्ती पोच्छामि जघारुमं समासेण । आयरिपरंपराए जहागदा आशुक्रवीए ॥ ५०३ ॥ आवश्यक्रित्रुक्ति वस्ये यवाक्ष्मं समासेन । आवायपरंपराय वयागवातुरुको ॥ ५०३ ॥

अर्थ-आवारकरिवृक्तिः । अर्थ-आवारकरिवृक्तिः । परंपरासे आगमकी परिपारीक अनुमार संक्षेपरे कहता हूं॥५०१॥ रागहोसकसाये य इंदियाणि य पंप य । परीसहे उचमम्मे णामयंती णामीरिहा ॥ ५०४ ॥

रागडेपक्रपायात्र इंद्रियाणि च पंच च । परीपदान् उपसर्गान् नाग्रयत्रो नमः अर्द्धाः ॥ ५०४ ॥ अर्थ—देह अवीति केशादि क्याय नेवादि पांच इंद्रिय ह्या आदि बाईस परीयद देवादिकृत संक्रेस—त्न सबको नारा

शुभा आदि माईस परीषट देवादिष्टत संक्रेश—इन सबको नाश करनेवाले अरहंत देवोंको मेरा नमस्कार हो ॥ ५०४ ॥ आगे अरहंत आदिका राज्यार्थ कहते हैं;—

आर अरहत आरक्ष घडाय करत हा— आरहेति णमोधारं अरिहा पूजा खुरुसमा स्रोप । रजहंता अरिहेति य अरहेता तेण खबेदे ॥ ५०५ ॥ अहित नमस्कारं अही यूजायाः मुरोषमा स्रोके।

अहिति नमस्तारं अही पूजायाः सुरोषमा लोके । रजोदंतारः अरिदंतारथ अहितासन उत्पंते ॥ ५०५ ॥ अर्थ—यो नमस्तार करने योग्य हैं, पूजाके योग्य हैं लोकों रेवोने उत्पन्त हैं, और अरिके अर्थात् भेटकमें अंतरायसमें इत

देवीमें उपम हैं, और व्यक्ति अर्थात् भीटकमें अंतरायकमें हन दोनों के हननेवारे हैं तथा रखके अर्थात् झानावरण दर्धनावरण इन दोनोंके नास करनेवारे हैं इस्तिये व्यक्ति आदि अरह अ और रखका आदि असर कहन दोनोंको निसांके अर हुआ

उनके नातक है इसिंदिने वर्त है ॥ ५०५ ॥

133

वर्त्त्रपाकारं वार्तेत च वः क्रोति वननवतिः ।

मो सन्तर्पनारोवन वाची मनिरेण क्रिलाशिका

वराने माने कार्र प्राचेन व को कीरी वयुवारी।

... F + + a + 1

क्षेत्रकारमाने नेक वशिको अवस्थानि । मिन व वथ मिन्तक स ति इकात्वसम्बद्ध ॥ ५०४॥ हैं । बर रमने ने हर इतिना जगहाँ सु । कर वस्ते किन्ते व विक्तालगण्यति ॥ ५ छ ॥ अने का और मनान्दान्य भागकाति वस स्टा er to refin a many age aftern grafte week! " f. de beit mit Reigin untrettigt if if ib 458. 侧顶 表板 医工厂时 化体套环复接性干净接 भःवनः ।) सहित् देशिय ने से भगा व भागरियों । बार्क र ज्या और बार्का सामी सामी धारत भी विकास में राष्ट्र र में प्रति । शहन सहित्र सहित भारत था अवस्थित ware Beret pitytyttellein Here H 41 - rene fine fine B. Britan B. teriff norte ficht 出版片表 细生斑 多性菌物之后的复数形式 孤大 形类双 (19) 配管 解解:据9959

म मर्नेट्रामधीने बालीति अधिक का रेत ॥ ५०६ ॥ भूके - , के हे भारतीकों को मानवाद हो देन महत्ती क्ष्मक बल्क है नह कोड़े ही समयों सब हुआते है

अभिकर कर्म बंधके नारा होनेपर तपाने योग्य होके शुद्ध धातरूप सिद्धपनेको प्राप्त होता है ॥ ५०८ ॥ सदा आयारविद्दण्ह सदा आयरियं चरे । आयारमायारवंती आयरिओ तेण उच्चदे ॥ ५०९॥ सदा आचारविद् सदा आचरितं चरः । आचारमाचारवन् आचार्यः तेन उच्यते ॥ ५०९ ॥ अर्थ---जो सर्वकाल संबंधी आचारको जाने, हमेशा आचरण योग्यको आचरण करता हो और अन्य साधुओंको आचरण कराता हो इसलिये वह आचार्य कहा जाता है ॥ ५०९ ॥ जम्हा पंचविहाचारं आचरंतो पभासदि । आयरियाणि देसंतो आयरिओ तेण उचदे ॥ ५१०॥ यस्मात पंचविधाचारं आचरन प्रभासते । आचरितानि दर्शयन् आचार्यः तेन उच्यते ॥ ५१० ॥ अर्थ-जिसकारण पांच मकारके आचरणोंको पालता हुआ शोभता है और आपकर किये आचरण दूसरोंको भी दिखाता है उपदेश करता है इसलिये वह आचार्य कहा जाता है ॥ ५१० ॥ यारसंगं जिणवसादं सज्झायं कथितं वर्षे । उबदेसह सज्झापं तेणुवज्झाउ उचदि ॥ ५११ ॥ द्वादशांगानि जिनाख्यातानि खाध्यायः कथितो पुषेः ।

मूलाबार-

300

निज्यानसापण जोगे सदा जंत्रीत सापयो । समा मन्त्रेस प्रदेस तथा ते सञ्चापयो॥ ५१२ निग्निमापकान् योगान् महा पुंजीत सापाः।

समाः मर्देषु भूतेषु तथात् ते सर्देषाघरः ॥ ५१२ ॥ अर्थ - योशकी पति करानेगाने प्रशुणादिक साधारी हो साह स्वीता कराने साह स्वीता हो स्वीत स्वाता है स्वीत स्वाता है स्वीत स्वाता स्वीता स्वीता स्वाता स्वीता स्वाता स

सम्भारको पात बुद हो इस्तिते थे सांसापु कर्याते देशपार्थ एकं गुणापुरुषाणे पंचयुक्तमे विराह्यकारणेति । जो कुणारि जामोकारं को पार्थार गिणापुर्ति निर्म्पादर्थेश एकं गुणापुत्रकारों पंचयुक्तमों रिश्वकर्णेश । वा करोति नगणकारं स नामोति निर्मेति शीर्थे ॥ १९२४ ॥

वार काम में नगरकार करना है यह भीम की भीभागणी वाग दें। पर्दे ॥ मुस्तेर मेच मासीमारी संस्मामयमास्यामी । क्रेसर्टस्ट म सार्वस्य मुद्दार्थ अमार्ट ॥ पर्देश ॥

भर्ष - ऐस पूर्वेकापूर्वी सहित बंद प्रशिक्षिकी निर्मेत्र अर

मन' पेन्यस्परातः सर्वपायकाराद्यः । मेर्नाटेषु च सर्वेषु प्रचले मचित्र ग्रीपर्दे ॥ ५१४ ॥ अर्वे ===== वर्षः स्वरंतिक स्वरंतिक स्वरंतिक स्वरंतिक

. ज्यों क्यार वह नाव्या मेंच गांच गांधीस भाष करवेणची हे क्रीर राज महादों नह चेहतारकार गुराव नेतान है हे में की रूप इंच्छा भाड़े क्या बीर मध्या गयु की गुरा इपका वै . यह साल करा है इ. रहेन है. जागे जावरयककी निर्देखि (राज्यामें) कहते हैं;—
ण वस्तो अवस्तो अवसस्त फरममानासर्ग्याचि पोपप्या।
खुल्तिसि उवायसि य णिरसप्या मुहि िणुकुत्ती ॥११६
म वराः जवराः जवरास्य कर्म आवश्यकतिति गोद्धम् ।
धुक्तिरिति उपाय इति प नित्ययमा मवति निर्देकिः॥५१५॥
अर्थ—जो कषाय रागद्वैय आदिके बशोगृत न हो बह जवरा है उस अवश्यका यो आवश्य यह आवश्यक है । तमा युक्ति उपायको कहते हैं जो असंदित जुक्ति वह निर्देखि है ।
गायरककी जो निर्देखि (संवृण उपाय) बह आवश्यक निर्देखि

जब जावस्यक्रके छह भेद कहते हैं;—
सामाइय चायीसन्यय पंदणपं पविषमणं ।
चयवन्याणं च तहा काओसम्या एविषमणं ।
सामाविष्ठं चर्तिव्यालयं थेदना प्रतिक्रमणं !
प्रत्याल्यानं च तथा कायोत्समां भवति पष्टाः ॥ ५१६ ॥
अर्था—सामाविक चर्ताकृतिहात्सम् वंदना प्रतिक्रमणं भवार्याव कायोत्समं ये छह जावस्वनित्तिक्त वेदना मतिक्रमण मत्यार्याव कायोत्सम्बिक्तिर्वित्तिक्ष केदने हैं। ५१६ ॥
अर्था मार्थार्व्यार्थनिर्वितिक्षं करने हैं।

आगे सामाविकतिर्श्विक हे कहते हैं;— सामाइयणिजुसी योच्छामि जधावरुमं समासेण ! आयरियपरंपरए जहागाई आयुद्धपीए ॥ ५१७ ॥ सामाविकतिर्श्विक परवे यसामं समासेन । आयारेपरंपराग यथागं आजुरूमी ॥ ५१० ॥ अर्थ-में बहुबेर नाम संपद्धते सामाविक संपूर्ण उपायोको

मुणाबार-कमके अनुनार आवामीकी परिवारीने आवमकी परिवारीने सर्भार संक्षेपने कड़ता है ॥ भ१७ ॥ 注 पामद्भागा दाने नेसे काले तहेच भागे य। मामाज्याचि तसी गिरगेओ छन्त्रिओ गेंगो॥५१४॥

२०२

अर्थ-नाम लापना द्वार क्षेत्र कात्र मात-इसारत् साध विकते हन क्षारका निशेष मानना । श्रम व्यश्नम नामीने सन्दे 🖘 लान वर् नामगामाधिक है। इसीतरद अला भी जानना 🎚 गरमनगामरीजयनवेति सं नं गरस्यसम्बद्धाने। गरायोज् मं मु भगिर्च मभेष गामाइयं जागे ॥५१९॥

नामनाचना द्रम्यं क्षेत्रं काठकारीत माराघ । मामाधिके एवः निशेषः पश्चिमी श्रेपः ॥ ५१८ ॥

वरणकारावानियाकोति। यस्त प्रधाननपामान्ते । नवयन्त्रः न न मणियन्त्रमेत् सामाविके ज्ञानीदि ॥५१५॥ भूनों ---सम्बन्ध भाग संवस तप इन करके भी तीयके भ^{री} करी अवस उनकर सहित नी को एकस बहु समत है। प्रतीके पूर्व संस्थित अले ॥ प्रश्न ॥ विद्वारमान्यविभन्न उपन्ते भाषणास्य सविवीयः।

जल भवसा बन्धरी सामाहयवरिणवी वीती॥६३०॥ रिरोक्यनेपरिषद् उपयुक्ता भारताम् गरिविष् । मर्भारतनारक्तम् । मामाधिकवीत्रियो जीवा ॥५१ ।॥ बर्के कर रावन क्यानों कीर परिवर्तकों क्षेत्ररिया है तो बन्द

मारुवा नवा क्षत्र महिन्दर्शन हरतात हुन्ह है कीत की वर्ग े में ५-११ इसमें है बह मेर क्यारिक्षे क्या हुन मनगान



१) कं च समो अप्पाणं परे य मार्य सव्यमहिलास । अप्पियपियमाणादिस नो समणो तो य सामश्यापि ११ यक्षाच सम आत्मि परे च माविर सर्वमहिलास । अप्रियम्बियमानादिष तक्षात् भगणत्वस सामाविदे॥१२१॥ अपं — विस्तित्वे अपोमें क्षार पर्धे साम्बेद्धरित हैं, भाव कीर सब दिवाँ गृं यु मावकर सम हैं क्यांत सब दिवाँ से स्वेदे ।

अर्थ—विसन्धिये अपनेमें बोर पासे साम्रुवाहित हैं, मान जोर सब बियोंमें गुद्ध भावकर सम हैं अर्थान सब क्षियोंके मानाके समान रेसते हैं तथा घष्ट्रनिव मान अवसान आदिने सम हैं हसन्धिये ये अमान कहें जाते हैं हसकारण उन्होंकों सामा-विक्त जानना ॥ ५२१ ॥ जो जानगर समस्पापं दर्खाण ग्रामाण पत्रापाणं सा

जो जाणह समयापं दृष्वाण ग्रुणाण पञ्चपाणं च । सन्भावं तं सिद्धं सामाह्यसुरामं जाणे ॥ ५६९ ॥ यः जानति समवायं द्रष्याणां गुणानां पर्यायाणां च ।

यः जानाति समयोगे द्रष्याणां गुणानां प्रयापाणां च । सञ्ज्ञानं ते सिद्धं सामायिकमुचमं जानीहि ॥ ५२२ ॥

जर्म—जो हम्मीन गुणीन धर्मभीन सादरको अथवा एक जगह सतःतिज्ञ रहनेको जानता है यह उठम सामाविक है ऐसा जानना गुणगुणीनी साधाल संबंधते एकता है सम्बाधते नहीं ॥) रामदौरते जिर्देशीलमा सम्बन्ध सम्बन्धनमस्य । ग्रानोगर का परिणामी सामान्यमस्य सामाना ॥ ६००॥

रागबोतो जिरोहिता समदा सञ्बद्धमासु । सुत्तेसु अ परिणामो सामाइयमुत्तमं जाण ॥ ५६३ ॥ समदेषो निरूप समता सर्वकर्मसु ।

एवेषु च परिचायः सामायितसूच्ये वार्ताहि ॥ ५२६ ॥ वर्ष—सर बामोने चय देगोले छोद्दर सम्यव होना और हारताय सुगोने असान होना उसे तुन उपन सामायिक स्वते ॥ ५२६ ॥ दहां सम्बनस्वतिस्त्री ब्रोदेश हैं। जीवः सामायिकं नाम संयमस्थानमुत्तमं ॥ ५२४.॥ अर्थ-जो सब पापेंसे विरत (रहित) है, तीन गुप्ति सहित है, इसलिये जिसने पांच इंदियोंक विषयव्यापरको रोक दिव है ऐसा जीव वह सामायिक है उसीको उचन संयमका सार्व जानना ॥ ५२४ ॥ जस्स स्विणाहिदो अप्पा संजमे णिपमे तवे । तस्स सामायियं ठादि इदि केवलिसासणे ॥ ५२५ ॥ यस संनिहितः जात्मा संयमे नियमे तपति । तस्स सामायियं ठादि इदि केवलिसासणे ॥ ५२५ ॥ यस संनिहितः जात्मा संयमे नियमे तपति । तस्स सामायिकं विष्ठति इति केवलिसासमे ॥ ५२५ ॥ वस सामायिकं विष्ठति इति केवलिसासमे ॥ ५२५ ॥

अर्थ-- जिसका आत्मा सयममें नियममें तपमें लीन हैं उसीके सामायिक तिष्ठता है ऐसा केवली भगवानके आगमने

विरदो सन्वसावज्ञं तिगुत्तो पिहिदिंदिओ । जीवो सामाइयं णाम संजमहाणम्रत्तमं ॥ ५२४ ॥ , विरतः सर्वसावयं त्रिगुप्तः पिहितंद्रियः ।

जो समो सञ्चमुदेसु तसेसु धावरेसु प । जस्स रागो प दोसो प विपर्धि ण जणित हु ॥५२६॥ यः समः सर्वभूतेषु त्रसेषु स्वत्यत्युः न । यस रागथ दीपथ विकृति न जनवत्ता ॥ ५२६॥ अर्थ-जो वस स्वत्य ऐसे सव शाणियोरी वाधारिक सर्व

कहा है ॥ ५२५ ॥

यस रागध दायथ पकृति न जनयतस्तु ।। ५५६ ॥
अर्थ- जो व्रव स्वावर देसे सव शाणियों माधारिहेत सर् परिणाम करता है जोर नितक राग देव ये दोनों निकारको नहीं . उत्तक करते उसीके सामायिक ठहरता है ॥ ५२६ ॥ जेण करियों स आणी, य माराम होनों स गिम्निदर । जस्स सण्णा य ठेस्सा य बियार्ड ण जणंति द्रु॥५२७ येन कोपथ मानभ माया लोमथ निर्जिताः ! यस संज्ञाथ ठेस्ताथ विरुति न जनयंति तु ॥ ५२० ॥ अर्थ—जिवने कोप मान माया लोमरूप क्षायोंकी जीतलिया है जीर नियके आहार आदि संज्ञा तथा रूण आदि ठेस्या विकारको नहीं उपजार्ती उसीके सामायिक ठरता है ॥ ५२० ॥ / जो रसेंदिय फासे य कामे वज्जदि णियसा ।

जो रूवगंघसारे प भोगे पञ्चदि णिचसा ॥ ५२८ ॥ यः रसेंद्रिये स्पर्धने च कार्म वर्षपति निलदाः । यः रूपगंधदान्दांश भोगं वर्षपति निलदाः ॥ ५२८ ॥

यः रूपपप्रान्दाश्च भाग वज्यात निरुष्ठाः ॥ ५२८ ॥ अर्थ—जो स्सना इंदिय स्पर्धन इंदिय इन कानेदियोके स्स स्पर्ध विषयको सदा छोड़ता है जोर जो चल्ल प्राण क्षेत्ररूप भौगेदियके रूप गंग छन्दरूप विषयको सदा छोड़ता है उसके ही सामायिक होता है ॥ ५२८ ॥

7) जो दु अहं रुद्दं च झाणं चछेदि णियसा । जो दु पम्मं च सुद्धं च झाणं झायदि णियसा॥५२९॥ यस्तु आर्वं च रांद्रं च प्यानं वर्षयवि निलग्रः ।

यस्तु पर्मे च शुक्तं च ध्यानं ध्यायित नित्यदाः ॥ ५२९ ॥ अर्थ-—वो आर्वध्यान रीद्रध्यान इन दो ध्यानोको हमेवा छोड देवा दै जीर जो पर्मध्यान शुक्रध्यान इन दोनोको हर समय ध्यावा है उसीके सामायिक होतकता है।। ५२९ ॥ सामायिकानोगपरिवञ्चणहे सामाइयं केवलिर्हि पसत्यं। शिहरभयम्मोऽपरमस्ति पावा कुञ्जा बुधोअभ्यहिपंयसत्यं

२०६ मूळाचार-सावद्ययोगपरिवर्जनार्थे सामायिकं केवलिभिः प्रयस्तं । गृहस्थपर्मोऽपरम इति ज्ञात्वा कुर्यात् चुपः आत्महितं प्रयस्तं ५३

अर्थ — केवली मगवानने पापासव रोकनकेलिये सामायिक कहा है। गृहस्पर्म आरंभसहित होनेसे जपन्य कहा है। ऐ जानकर ज्ञानी आरंभक्त हित करनेवाले सामायिकको करें ॥५३

सामाइयिष्ठा दु कदे समणो इर सावओ ह्वदि ज्ञष्या एदेण कारणेण दु यहुसो सामाइयं कुज्ञा ॥ ५३१ ॥ सामायिकं तु कृते श्रमणः किल शावको भवति यसाद् एतेन कारणेन तु बहुदाः सामायिकं कुर्यत् ॥ ५३१ ॥ अर्थ—सामायिकं करता हुआ शावक भी संवर्गः प्रतिषे समान होजाता है इसलिये बहुत करके सामायिक करता लाहिये ॥ ५३१ ॥ सामाइए कदे सावणण विद्धो मओ अरण्णिष्ठ । सो यामाइयं किरिजो॥ ५३१ सो यामाइयं किरिजो॥ ५३ सो यामाइयं किर्यं केर्यं केर्यं केर्यं केर्यं केर्यं केर्यं सो यामाइयं किर्यं केर्यं क

सामायिकं कृते आवकेण विद्धो सूगः अरण्ये । स च सूगः उद्धवः न च स सामायिकं स्फेटितवान् ॥५२०॥ अर्थ--- किसी आवकने वनमें सामायिकं करना आरंग दिवा पेसे अवसरपर किसी शिकारीने हिरण मारा वह उस आवक्रे

चर्णोमं गिरकर मरगया ऐसे समयपर भी उस आवकने संसार दया विचार सामायिकको नहीं छोडा ॥ ५३२ ॥ यायीसं तिरुपपरा सामायिपसंज्ञमं उचदिस्ति । छेदुचठावणियं पुण नययं उसहो य वीरो य ॥ ५३३॥ आर्थिततीयंकताः सामायिकसंयमं उपदिशेवि । छेदोपस्वापनं पुनः भगवान् ऋषमध्र वीरव ॥ ५३३ ॥ अर्थ--अजितनाथको आदि हे वार्थनाथ परेत माहेश तीर्भवर त्यामाध्य संवयक परेत हैं और भगवान् अपभदेत एवा सहावीर स्वामी छेदोध्यापना वार्यमदेत एवा सहावीर स्वामी छेदोध्यापना वीर्यम्या उपदेश होति । ५३३॥ आपित्रमूर्व विभानिष्ट्र विणणार्ष्ट्र चारित होति । १५३॥ एवेला कारणेण हु महत्त्वत्र होति ।

आस्पाति विभक्ति विद्याते पापि तुम्बतरे भवति । एतेन पारणेन तु मदामवानि पंच प्रश्नप्तानि ॥ ५६५ ॥ अर्थे — कहनेकी विभाग करनेकी जाननेकी सामाधिक सुगव होता दे रक्षित्वे पांच महामठीको कहा ॥ ५६५ ॥ आदीग दुन्त्यिकोचन णिक्षणे नह सुङ्ग दुरुणुवाले थ । मृदिमा प्य विश्वप्तानि कृष्णुवाले य ।

आही हुर्षिणेपने निधने तथा गुष्ठ हुरनुपाठे च । पृथीध परिमा अपि दि कल्पाकर्ण न जानंति ॥ परेष ॥ प्रथीध परिमा अपि दि कल्पाकर्ण न जानंति ॥ परेष ॥ अपं—आदिन्या होनेते हुरक्षर शहर निर्मे वात्रकर्त हैं हतीवाद जेतक तीयेरे दिव्य कर्पाकर्मा दिनेते हुरक्षर पान्य कर्पाकर्म दिनेते हुरक्षर पान्य कर्पाकर्म दिनेते हुरक्षर पान्य कर्पाकर्म दिनेते होने क्षां आदि जेत तीयेरे पेशेष्वरायाच्या प्रदेश है ॥ परेष ॥ परि दिक्षरिष्य कर्पाकर्म क्षां है आप परमाणे । अप्ता दिक्षरिष्य परमाणे । अप्ता दिन्यों पुनो कर्पाकर्म क्षां है अप परमाणे । अप्ता दिन्यों पुनो कर्पाकर्म क्षां क्षां है अपन परमाणे ।

मविकेखितांबिक्तिः उपयुक्तः उत्थाप एकमनाः । अञ्चादिष्ठः उत्तः वरोति सामायिकं निद्धः ॥ ५२६ ॥

अर्थ-विसने अंजलि और हाथोंको अग्रकर लिया है सार धानता सहित है जिसका प्रकाम चित्र है जो आफुलतारहित

है देसा साधु उठ सड़ा होकर आगमकथित निधिसे सामायिका

करे ॥ ५३६ ॥ आगे चतुर्विरातिसाव कहनेकी प्रतिज्ञा करते हैं:-सामाइयणिक्स्सी एसा कहिया मए समासेण।

भववीसयणिजुत्ती एतो उद्वं पवक्लामि ॥ ५३०॥ सामायिकनिर्यक्तिः एषा कथिता मया समासेन ।

चर्ता ग्रितिनिर्वेक्ति इत कर्ध्व प्रयस्यामि ॥ ५३०॥ अर्थ--मैंने यह सामाथिकनिर्विक संशेपसे कही । अन इस्रे आगे चतुर्विशतिसाव निर्युक्तिको कहता हूं ॥ ५३० ॥

णामद्रवणा दृष्ये धेको काले घ होति भावे प। पसी पविद्या पोओ जियमीयो छविही हो। ५३८॥ नाम शापना द्रब्पं क्षेत्रं कालय मत्रति मारथ।

एष सर्व क्षेत्रो निर्वेषः पद्मविधो मवति ॥ ५३८ ॥

वब शति करनेही गीति काजने हैं।—

छोगुञ्जोस प्रव्यक्तिस्पर्यर जिल्प्यर प अर्थते ।

हिसाम हेवलियेव य उसाववीहि प्रम दिसंद्र ॥५१९॥ टो होबोबहम प्रदेशेषेहरा किरासप अर्थः ।

कीनंनीयाः क्रेमडिन वर्त च उत्तमनोर्धः पर्यः दिवंद्यापा

अर्थ--नामसन सापनासन दशकार क्षेत्रसन काळसा भार स्व-रमप्रकार नीजिसतीयैक्सेक स्वयनके एक भेर है।। नामीमे सुद्धी नामसाव है। इत्यादि अन्य भी इसीतरह जानना ॥ ५३६ [‡]

अर्थ-अमनको प्रकाश कानेवाले उत्तरप्रकारिक करिएक प्रक्रीता के प्रकार प्रकार कार्य प्रकार प्रकार कार्य प्रकार कार्य प्रकार कार्य कार्य प्रकार कार्य कार्

अब प्रथम लीक्षा लक्ष्य घटते हैं।---

स्रोचीद् आर्थापीद पहीचीद् साहोचीदीक व्यात्मी । जन्म जिलेहि प्रसिज संज्ञात पूर्वद को ती १८५५ ।।

सीवपूर्व प्रातीवयने प्रतीववत बीतावपूर्व शृंत एकाचे. र युगाजिन शृहको सेन एक अवयो त्यका सार्कान्य

णाम द्वरणे घुन्ने जेन्द्री स्वतहं कुरायारीको च । अवलोगी आवलोगी पञ्चपलोगी च जारान्या १०५१म जाम जापना इन्हें धर्न किंद्र कुरायतस्य १

માનું મોતાનાના મુખીયાનન શાસનો કો જાદ દેશ પ્રદેશનામાં તેને આવેલાન પ્રયુખ કરાત કો જાદ કે જ્યાપોક કરતીક માનું કે માનું તેને તેને જે તે ત્રિક્ષ માનું કો જો દેશ

णामाणि आणि व वित्रंच स्ट्रास्ट्राचि रोलांकः । णामलोगं विष्णाहि अध्यव जिल्देसिट १, ५४० र नामानि गानि कानिभित् युनागुनानि ठोके। नामठोके विज्ञानीहि अनेतिजनद्यिते॥ ५४२॥

अर्थ—इन शेक्नी किनने कुछ गुप अगुन नाम है उन्हें नामश्रोक जानी ऐमा अभिनाशी जिनमगरानने उपदेश हिमा ^{है।} ठविष्दं ठाविष्दं चाथि जं किंथि अरिथ लोगाग्रि ।

ठयणालोमं विमाणाहि अर्णतजिणवेसिदं ॥ ५४३ ॥ मितं स्थापितं चापि यत् किंचिद्ति लोके । स्थापनालोकं विजानीहि अनंतजिनदेशितं ॥ ५४३ ॥

स्थापनालाक विज्ञानाहि अनवाजनहाजुत ॥ पहर ॥ अर्थ-अर्कातम और क्रितिन रूप जो कुछ इस लोक्ने कि मान है वह स्थापना लोक है ऐसा अविनाशी जिनमगर्गार

ज्यदेश है ॥ ५४३ ॥ ज्यदेश है ॥ ५४३ ॥ जीवाजीवं स्वास्त्वं सप्देसमप्देसं च ।

जावाजाव स्थार्क स्वयुक्तमयद्वेस या द्वव्यतोगं विद्याणाहि अर्णतज्ञिणदेसिदं ॥ ५४४ ॥ जीवाजीव रूपरुपि सप्रदेशमयदेशं च । द्वयत्तोकं विज्ञानीहि अर्नतज्ञितदेशितं ॥ ५४४ ॥

णियं कारण कत्ता सन्वगदिवरिष्ठा अपवेसी॥४४^{४॥} परिणामि जीवो मृर्न सब्देशं एकतेत्रं क्रियावत् च । नित्यः कारणं कर्तो सर्वगत इतरिक्षन् अपवेशः॥५४^{५॥} अर्थ—इन द्रव्योनें परिणामी चेतन पूर्व समदेश^{्द्रकृत्र} कोई बच्च हैं जीर कोई इनसे उछटे अर्थान् अपरिणामी आदि हैं॥ आयासं सप्रदेसं उद्गमहो तिरिपर्होगं च । ग्वेत्तारोगं वियाणाहि अणंगजिणदेशितं ॥ ५४६ ॥ आकार्य सप्रदेशं उप्यंगपः विर्येग्संकं च । धेवलोकं विजानीहि अनंवजिनदेशितं ॥ ५४६ ॥ अर्थ-मदेश सहित भाषाध अर्थलोक अपीलोक निर्मेग्डो-कुरूप तीनपकार है उसे क्षेत्रकोंक जानना ॥ ५४६ ॥ जं दिई संटाणं द्रव्याण गुणाण पञ्चयाणं च । चिण्हलोगं विचाणाहि अणंत्रजिणवेसिवं ॥ ५४७ ॥ यव दर्ध संस्थाने द्रव्याणां गुणानां पर्यायाणां च । चिद्रलोकं विजानीहि अनेत्रजिनदेशिते ॥ ५४७ ॥ अर्थ-द्रव्योका जो जायासम्य टीना अर्थात समयास आकारस्य जीवद्रव्यका होना इत्यादि तथा गुणीका आकार पर्या-योवा आकार वह जिद्दछोक है ऐसा जाती, ऐसा जिलेददेवने यदा है ॥ ५४७ ॥ कोधो माणो माया होची उदिण्या जस्स जंतुचो । प्रसायक्षेत्रं विचाणाहि अर्णनिजिणदेशिकं ॥ ५४८ ॥ शोधी मानी माया लोगः उदीर्थाः यस्य जेताः । क्यायरोकं विज्ञानीदि अनंत्रजिनदेशितं ॥ ५४८ ॥ अर्थ-विस जीवके काप भाग माथा लोब-वे बारी क्यांचे उद्दक्षी मान ही दह क्यायलोक है ऐता जानना ॥ ५४८ हा नेररपरंपमाणुमतिरिषयञ्जेणि गद्रा य जे सला ।

नारकदेवमनुष्यतिर्यग्योनिं गताश्च ये सत्त्वाः।

तीत्रो रागथ द्वेपथ उदीणी यस जंतो: । मावलोकं विजानीहि अनंतजिनदेशितं ॥ ५५० ॥ अर्थ-जिस जीवके अत्यंत राम द्वेष उदयको प्राप्त हो 🤻

भावलोक है ऐसा जिनदेवने वहा है ॥ ५५० ॥ द्ववगुणसेत्तपञ्चय भावाणभावो य भावपरिणामो। जाण चउव्यहमेयं पञ्चयलोगं समासेण॥५५१॥ द्रव्यगुणक्षेत्रपर्यायाः भावानुभावश्र भावपरिणामः। जानीहि चतुर्विधमेवं पर्यापलीकं समासेन ॥ ५५१ ॥ अर्थ-द्रव्योके ज्ञानादिगुण, क्षेत्रोंके सर्ग नरक भरत क्षेत्र आदि पर्याय, आयुके जवन्य आदि भेद, ग्रुभाग्रुम अर्व^{द्रवा}री परिणाम-इसतरह बच्चगुण १ क्षेत्रपर्याय २ भाशनुभाव २ वार् परिणाम ४ इन चारीको संक्षेपसे पर्यायलोक जानना ॥ ५५१ ॥

आगे उदोतम समूच कहते हैं:--पञ्जोषो सन्त दुविहो णादच्यो दब्यभाषसंग्रसो। वय्युञ्जोचो अग्गी चंदो सूरो मणी धेव ॥ ५५२ ॥ उपोतः सञ् दिविषः वातव्यः द्रव्यनारागंपुकः ।

णिययभये वहंता भवलोगं तं विजाणाहि ॥ ५४९॥

अर्ध-नारक देव मनुष्य तिर्थेच योनिमें प्राप्त हुए की अपने वर्तमान पर्यायमें पाप्त जो जीव उनको भवलोक जाननापश्र

निजभवे वर्तमाना भवलोकं तं विजानीहि ॥ ५४९ ॥

तियो रागो य दोसो य उदिण्णा जस्स जंतुणो। भावलोगं वियाणाहि अणंतजिणदेसिदं ॥ ५५० ॥

द्रव्योघोतः अदिः चंद्रः सूर्यो मण्डियः ॥ ५५२ ॥ अर्थ---प्रकारके दो भेद हैं द्रव्य भाव । अपि चंद्रमा सूर्य रक्त ये सब द्रव्यद्योत हैं ॥ ५५२ ॥

य तर प्रयच्यात ६ ॥ ५५८ ॥ भागुञ्जोयो णाणं जह भणियं सच्यभावद्रिसीहिं। तस्स दुष्योगकरणं भागुञ्जोयोति णादच्या ॥ ५५६ ॥

तस्स दुष्पागकरण साधुद्धायात णादण्या ॥ ५२६ ॥
भावोपोनो द्वानं यस भणितं सर्वमावदर्धिमः ।
तस्य तु उपयोगकरण साधेपोन इति द्वातच्यः ॥ ५५२ ॥
वर्ध—द्वान है वही भावद्योग हे एता केवली भगवानने
स्त्रा है । उस प्रानक उपयोग करनेस स्वरमक्राध्यना है इसीक्रियं वह प्रान भावद्योत है ऐसा जानना ॥ ५५६ ॥
पंचविद्दरें व्यद्ध भणिओं भादुस्त्रोवों प जिण्णविद्देहिं ।
आभिणिओं हिपसुद्ध ओहिणाणमणकेषणं णेषं ॥५५४॥

पंचिष्णः राज्य अणितः आश्रीणीतम् विजयर्देः । आमितिर्वापिकभुतावपिज्ञानममःकेतलं सूर्य ॥ ५५४ ॥ अर्थ--जिनदेवने आयोधोतकं पांच भेर ष्रदे हैं-मति श्वर अर्था मनःपर्यय फेरक्शन । वेशा जानना ॥ ५५४ ॥ इन्युम्पोरोक्रोपो पहित्रुण्णाद परिमिदद्वित खेलाहि । आयुक्रोपोक्रोपो लोगास्त्रोगं पपासेर्दि ॥ ५५६ ॥ इन्योपोज्ञः उपोतः प्रतिहन्तते परिमित्र धेरे ।

द्रव्यापोवः उपोवः प्रतिहृत्यवे परिमिने क्षेत्रे । भागोपोव उपोवः होकालोकं मकाप्रपति ॥ ५५५ ॥ सर्प—द्रव्योवोतस्य उपोव अन्य स्त्यो रुक्त यात्रा है और परिमित (मर्वादास्य) देवनं रहत्व है तथा भागोपोकस्यी ट्योव गोष स्वोक्ष हुन्दो महादार्थो है निस्मित रक्त्य नदी-५५५ स्रोगस्युज्ञोवयरा दृज्युज्ञोएण ण हु जिणा होति। भाषुज्ञोवयरा पुण होति जिणवरा चउच्चीसा॥५५॥ लोकस्योद्योतकरा द्रव्योद्योतेन न सन्ध जिना भवंति। भाषोद्योतकराः पुनः भवंति जिनवराः चतुर्विद्यतिः॥५५६ अर्थ—जिन भगवान द्रव्योद्योतसे लोकके उद्योत कर्तवारे नहीं हैं। तथा चीनीस तीर्थकर जिनवर भाषोद्योतके कर्तवारे होते हैं सकारण लोकके उद्योतक हैं॥ ५५६॥

मुळाचार-

तिविहो य होदि धम्मो सुद्धम्मो अत्थिकायधम्मोय। तदिओ यरित्तधम्मो सुद्धम्मो एत्प पुण तित्थं ५५० त्रिविषश्च भवति धर्मः श्रुतधर्म अस्तिकायधर्मश्च। तृतीयः चारित्रधर्मः श्रुतधर्मः अत्र पुनः तीर्थ॥ ५५०॥ अर्थ—धर्मके तीन भेद हे श्रुतधर्मः श्रुतिकायभं र

चारित्रभर्म ३ । इन तीनोंमेरे श्वत्रभं तीर्थ कहा जाता है॥५५० दुवित् च होइ तित्यं णादच्यं दच्यभावसंजुत्तं । एदेसिं दोण्हंपि च पत्तेष पस्त्र्यणा होदि ॥५५८॥ दिविषं च भवति तीर्थं झातव्यं द्रव्यभावसंयुक्तं । एनयोः द्वयोरपि प्रत्येकं प्रस्त्रणा भवति ॥५५८॥ अर्थं—तीर्थके दो भेद हें द्रव्यभाव। इन दोनोंकी महस्त्रा

एनयोः इयोरिष प्रत्येकं प्ररूपणा भगति ॥ ५५८ ॥ अथं—सीयंके दो भेद हैं क्ष्य भाव । इन दोनोंकी महस्या भिन्न र है ऐसा जाना ॥ ५५८ ॥ दाहोपसमण तणहा छेदो महस्यंक्षपवहणं नेय । तिहिं कारणिहिं जुत्तो तन्मा नं वच्यदो तिर्ग्य ॥५५९॥ दाहोपसन तृष्णाछेदः महसंक्ष्यहणं पैर ।

त्रिमिः कारणः युक्तं वसात् वद्रव्यवः वीर्थम् ॥ ५५९ ॥

अर्थ-संवाप शांव होता है कृष्णाका नाग्र होता है मनपंद्रकी शुद्धि होती है ये तीन कार्य होते हैं इसिटिये यह द्रव्य तीर्थ है।। दंसणणाणचरित्तं णिजुत्ता जिणवरा द् सम्वेषि । तिहि कारणेडि जुन्ता नामा ने भाषदो तिन्धं ॥५६०॥ दर्शनज्ञानचारित्रः निर्युक्ता जिनवराम्तु गरेंपि । त्रिनिः कारणः युक्ताः तसात् ने भावतन्तीर्थम् ॥ ५६०॥ अर्थ-सभी जिनदेव दर्शन ज्ञान चारित्रकर संयक्त है। इन तीन कारणीसे युक्त हैं इसिंठिये वे जिनदेव भावतीर्थ है।। ५६०॥ जिबकोहमाणमाया जिबलोहा नेण ने जिला होति । हंता अरि च जन्मं अरहंता तेण युवंति ॥ ५६१ ॥ जितकोपमानमाया जितलोगाः तन ते जिना भवंति । हंतारः अरीणां च जन्मनः अर्हतस्तेन उच्चंते॥ ५६१ ॥ अर्थ—कोप मान माया छोभ इन कपायोको जीन हिया है इसिलिये वे भगवान जिन हैं। और कर्मशत्रुओं के तथा संसारके नाम करनेवाले हैं इसिलये अर्दत कहे जाते हैं ॥ ५६१ ॥ अरिहंति धंदणणमंसणाणि अरिहंति पूरासदारं । अस्टिति सिदिगमणं अरहेता तेण उधेति ॥ ५६२ ॥ अईति वंदनानमस्कारयोः अईति प्रवासत्कारं । अर्हति सिद्धिगमने अर्हतः तेन उच्चेते ॥ ५६२ ॥ अर्थ-बंदना और नमस्त्रारक योग्य है पूजा और सत्त्रारक बीम्य है भोध बानेक बोम्य हैं इस बारण वे अहत करे आते हैं। किह ते ज किसजिज्ञा सदेवमणुपासुरेहिं होगेहिं। वंसणणाणपरिसे तय विणाओं जेहि पण्णसो ॥५६६॥

उपदेश किया है वे भगवान देव मनुष्य असुरोंकर क्यों नहीं गुण-गुवाद योग्य होसकते सता ही देवादिकांसे पूजने योग्य हो। ५६१॥ सन्दर्भ केयलकरणे लोगे जाणांति तह य पर्दात । केयलणाणचिरित्ता तक्या ते केयली होति ॥ ५६४॥ सर्व केयलकर्या लोके जानांति तथा च पर्द्यति । केयलक्षानचारियाः तसात् ते केयलिनो भवंति ॥ ५६४॥ अर्थ—जिस कारण सृत्र केयलजानका विषय लोक अलोक्ये जानते हैं और उसीतरह देसते हैं । तथा जिनके केवल्यान ही जांचरण है इसलिये वे भगवान केवली चेरित्तमोहं च । मिन्छलवेदणीयं णाणावरणं चरित्तमोहं च । विचिहा तमाहु सुक्षा तक्या ते उत्तमा होति ॥ ५६४॥ मिथ्याखवेदनीयं ज्ञानवरणं चरित्रमोहं च ।

कर्य ते न कीर्तनीयाः सदेवमञ्जासुरैः होकैः । दर्शनक्षानचारित्राणां तपसः विनयो येः प्रवृत्तः ॥ ५६३॥ अर्थ—जिन तीर्थकरीने दर्शन ज्ञान चारित्र तपके विनयक्ष

मिध्यास्वेदनीयं ज्ञानावरणं चारित्रमीहं च !
त्रिविधात् तमसी मुक्ता तसात् ते उत्तमा भवंति ॥५६५॥
अर्थ—अश्रद्धानरूप सिध्यास्वेदनीय, ज्ञानावरण, चारित्रमीहं
इन तीन तरहकं अधकारीसे रहित हें इसलिये वे अगवार उत्तम हैं॥ ५६५॥
आरोग्ग वीहिलाहं देंतु समाहिं च में जिणवर्रिदा।
हिं ण हु जिद्दाणमें यं ज्ञावरिवासस्य कापच्यां।५६६
आरोग्ग वीधिलामं ददतु समाधि च मे जिनवर्द्धाः।
किं न खतु निदानमेत्त् केबलं विभाषात्र कर्तन्या॥५६६॥ अर्थ—ऐसे पूर्वेक विशेषको सहित जिनेंद्रदेव मुझे जन्मन-रणस्य रोगसे रहित करें तथा नेद आनकी मात्रि जार समाधि-मरण दें। बचा यह निदान है यहा विकरनसे समझना॥ ५६६॥ सास्त्रमें यह निदान नहीं है हमका गुगास करते हैं!— भाग अस्त्रमोम्सा पायरि हु भशीय भारित्वा भागा। ण हु सीणरागदीमा दिति समाहि य पोहि सा-६९० भागा असत्स्मृपा केवले हि भग्या भाषिना भागा। न हि धीणरागदेशा ददित समाधि य रोधि य॥ ५६७॥

भाषा असलसूपा करते हि भवता भाषिता भाषा ।

म हि र्क्षाणसगढेषा दर्दान समाधि च पोधि चामिल्छ।।
अर्थ—यह असलसूषा बचन है चेबक भक्ति यह बचन बहा गया है। बसीकि बिनके साम हैच सील होगये हैं वे बिन-देव समाधि और बोधिको नहीं दसकते ॥ ५६७ ॥ जं मेहिं वु दावस्पे मं दिण्णो जिणवेरिह सस्पेहिं। दंसगणगाणचरित्सस्य एस तिबिहस्स उपवेदना ॥ ६६८॥

यत् वस्तु दावन्यं वद्यं जिन्वरः संवैः।

द्रभेनभानपास्त्राणां एव शिविधानामुपदेशः ॥ ५६८ ॥ अर्थ-ची विनवरीकर देनेशीन भा यह सन देशेया । यह देने बीन्य वस्तु दर्शन शान भारित्र इन तीनीचा उपदेश है । बही भीक्षम कारण है ॥ ५६८ ॥

भत्तीए जिजवराणं बीर्याद जे पुन्यसंचित्रं धन्मं । आपरिवपनाएण प विज्ञा मंता प सिठहांति॥५६९॥ अवया जिनवराणो धीयते यह पूर्वसचित्रं क्ष्मं ।

आपार्वप्रसादन प विषा मंत्राथ विद्वपंति ॥ ५६९ ॥ अर्थ-विनेद देशेश्री अधि कार्गत दुवे दक्दे कि दुव २१८

कर्म क्षयको प्राप्त होते हैं जीर आचार्यांकी भक्तिके प्रधारते हैं जीर मत्र सिद्ध होजाते हैं ॥ ५६९ ॥

मुलाचार-

अरहंतेस य राओ ववगदरागेस दोसरहिएस। घम्मक्ति ग जो राओ सुदे ग जो पारसविपरिपार आपरिगेस य राओ समणेस य बहसदे गरिनो।

एसो पसत्थराओ हबदि सरागेसु सब्बेसु ॥ ६३१ अर्हत्स च रागः व्यवगतरागेषु दोषरहितेषु ।

धमें न यः रागः श्रुते न यो द्वाददाविधे ॥ ५७० ॥ आनार्वेषु न रामः श्रमणेषु न बहुधुते नरिवाहरे । एव प्रश्चसतामी भवति सत्तमेषु सर्वेषु ॥ ५७१ ॥

अर्थ-समर्थित अठारह दोपसहेत वेसे अरहतीने हा (अक्ति), पर्ममें पीति, ग्रादशांग भूतमे सम, आनावींने 🧗

प्रतियोगे सम, उपाध्यायमे सम, उत्क्रम चारिक्यारीने हैं હોના યે લગ ગુન રામ હૈં 🛭 ૧૭૭૧૫૭૨ 🕫 तेमि अहिमुत्रवाए अत्या सिन्दांति तत्र च नशीप

तो असि रामपुरवं गुवह पूर्व ज ह जिल्लामं ॥५३३) तेवां अभिमानवा अर्थाः सिद्भांति तथा च मनवा ! तवान् विका रागपूर्वपूच्यते एतम राउ विदाने ॥५३३। अर्थ- उन जिनवरी है सन्यूप होनेमें तथा उनहीं भारि

वादित कार्य सिज्य बोते हैं। इसिड हे यह भावा समयूरें हैं તિસાન નહીં & સ્વોલિક સવારોક પાળા એ તિશાન થઠો & ^{પછી} નનારંશ હારવજા બનાર દેવા ૧૩૮ લ

ચરાં છુક્તરવાના વરિકાલય હોઝનીજાવવાથી (

...े धुर्वे 🔩 चत्रवीमधोत्तर्यं निकल् चतुरंगुलांदरपादः प्रतिलेख्यः अंजलीकृतप्रशस्तः । अय्याधिम उक्तः करोति च चतुर्विग्रतिस्तेत्रं मिश्रः॥५७३ अर्थ-जिसने पैरीका अंतर चार अंगुल किया हो, श्रीर हुन्मि चिषको जिसने गुद्ध कर लिया हो, अजलिको करनेसे ्रीम्य भाववाला हो, सब व्यापारीमें रहित हो ऐसा संयमी शनि बीवीसतीर्धकरीकी स्त्रति करे ॥ ५७३ ॥ .चउचीसपणिज्ञुसी एमा कहिया मए समासेण । यंद्रणणिज्ञुसी पुण एतो उद्वं पययम्यामि ॥ ५७४ ॥ चतुर्विद्यतिनियुक्तिः एषा कथिता मया समारोत । वंदनानिर्यक्ति पुनः इत उर्ध्व प्रवस्यामि ॥ ५७४ ॥ अर्थ-मेन यह चतुर्विद्यतिमविधिष्य संक्षेपसे कही है अब इससे आगे बंदना निर्युक्तिको पदना हु ॥ ५७४ ॥ णामहचणा द्रव्ये ग्येश काले प होदि भावे प। एसी चल्द बंदणमें जिब्देवो छिप्टी जेओ ॥ ५ ५५॥ नाम स्थापना द्रव्य धेत्रे फालध भवति भावध । एष गाउ पंदनाया निधेषः पर्विभी क्षेत्रः ॥ ५७५ ॥ अर्थ-नामबदना, स्थापना, दव्य क्षेत्र काल आय-रसत्तर बंदनाका निश्लेष एड प्रकारका है पेसा जानना ॥ ५०५ ॥

किदियम्मं थिदियम्मं पूराकम्मं च विजयकम्मं सः। कादच्यं केण करस प कर्ष व कर्डि व कांद्रस्तुस्ते॥५७६ कवि ओणवं कदि सिरं कदिए आयश्तमेहि परिसुद्धं। कदिवोसविष्पमुक्तं किदियम्मं होदि काद्ययं ॥ ५.३५.।

416 कमें क्षयको मात होते हैं जीर आनावीं ही भक्ति महारे हैं और मंत्र सिद्ध होजाते हैं ॥ ५६९ ॥

अस्त्रंतेस प राओ वयगदरागेस दोसरहिएस। पम्मीध प जो राओ सुब य जो पारसविशिक्ष आपरिपेस प राओ समणेस प पहसूत्र परिणी

पसी पमन्पराओं हवति मरावेगु सब्वेगु ॥ ६३ अर्थन च मगः व्ययम्बरागेष दोपरिकेष । धेमें य यः समः धुते य यो ब्राह्मधिये ॥ ५७० ॥ आवारींपु न समः धमणेपु च बहुधुने नरिवाही । एन प्रचलतानी भागि ततानेत गर्भन ॥ ५७१ ॥

अने-समाज अझार रोपमहा पेने बादतीने " (बन्ह), पर्वने बीत, क्षारमत भूतने सव, जाना नी ए वृत्ति क्षेत्री सत्तर, उपाध्यापनी सत्तर, उन्हर्य नासक्यापनी है alm bus his no an En sucreet a

त्रीने अधिपत्रवाषु अस्था सिन्धाति यत्र य भशीता लें! भारत रातपुर्व पुनड गर्द या हा विद्यार्थ ॥ ५३% ભા તામનુબના ત્રુપોર ભિરૂપીને તથા ન બરવા ! કના દુ ના પ્રદ સમયુ છે. સ્વતે પ્રત્ય અન્દ્ર નિશાને 1993^ન

अने -- इन किनामें हैं पेन्तून बातन बचा उनहीं मंदि राज्य करे अरहार है स्वारत पर बाल सवस्ति है अहन नहीं है शरीक जेवार में मन हो विश्व कर है औ great with aniel by the

જ લેમ્પુરેન સ્તારો જોઈએક વ મહારોજ્યાનની દ

नव्वालित्तो बुत्तो कुणदि य चउवीसधोत्तयं भिक्ख् चतुरंगुलांतरपादः पतिलेख्यः अंञलीहतप्रयस्तः । न् अय्यादिप्त उक्तः करोति च चतुर्विग्नतिस्तोत्रं मिक्षुः॥५७३ तं अर्थ—जिसने पैरोंका अंतर चार अंगुरु किया हो, छरीर युनि चितको जिसने गुद्ध कर लिया हो, अंजलिको करनेसे तीम्य भाववाटा हो, सब व्यापारीसे रहित हो ऐसा सयमी अनि बीवीसतीर्धकरोंकी स्तृति करे ॥ ५७३ ॥ वउवीसयणिञ्जुत्ती एसा कहिया मए समासेण। वंदणणिज्ञुत्ती पुण एतो उद्वं पवक्कामि ॥ ५७४ ॥ चतुर्विद्यतिनिर्युक्तिः एषा कथिता मया समासेन । वंदनानिपुक्ति पुनः इत ऊर्ध्व प्रवस्यामि ॥ ५७४ ॥ अर्थ-मैने यह चतुर्विश्वतिस्तवनिर्विक सक्षेपसे कही है अब इससे आगे बंदना निर्युक्तिको पहता हूं ॥ ५७४ ॥ णामद्वयणा दब्वे ग्वेसे काले य होदि भावे य। एसो खळु वंदणमे णिक्खेबो छविहो जेओ॥५७५॥ नाम सापना द्रव्यं धेवं कालध भवति भावध ।

एप खतु वंदनाया निषेषः वहविषो द्वेषः ॥ ५७५ ॥ अर्थ—नानवदना, स्त्रपना, द्रव्य क्षेत्र काळ भाव-द्रतत्तद्द वंदनाका निषेष छद प्रकारका दे पेसा जानना ॥ ५७५ ॥ किदियममं चिदियम्मं पूयाकम्मं च विषयकम्मं च ।

किदियम्मं चिदियम्मं पूराकम्मं च विणयकम्मं च । कादच्वं केण कस्स य कपं यकहिं वकदिखुत्तो॥५७६ कदि ओणदं कदि सिरं कदिए आयत्तोर्गहि परिसुदं। कदिदोसविष्यमुक्षं किदियम्मं होदि कादच्वं॥ ५७आ २१८

कमें क्षयको प्राप्त होते हैं जोर आन

और मंत्र तिद्ध होजाते हैं ॥ ५६९ ।. 😁 अरहंतेस य राओ प्यगदरागेस्ट

क्षेता । यह भून सम्बद्धी ॥ ५७०१५७३ ॥

मक्तिक स्टब्स नवार है । पज्द त

ષ્ક્રદ્રભુટંતભારી પશ્ચિમિક મેં હરીજાવામાં દે

मुखान:

धम्मन्ति य जो राओ सुदे य जो ५ आपरिवेस य राजो समणेस य 🧸

एसी पमत्पराओं हविष सरागेस छन अंतम च समः स्थयमनसमेष दीपर्राहरू

भंभे च या रागा भूने च मी जादश्वति।

भाषार्थेषु म समः ध्रमणेषु म बहुभूते सन्दर्भ

का प्रदेशमधी भावि मसभेषु सभैषु ॥ ५ 🚙

त्रयं-नामसन्। जहारत् बीपमहन् पेरी - 🚐

(भान्त), प्रवेने पीति, ज्ञानश्चाव न्युनी सवा, अहनन युन तेने सव, उपारवायने सव, उत्क्रप्त चादिर -

નેનિ પ્રક્રિપલવાવ પ્રત્યા વિલોતિ તક વ પ્ર-

तो जीन समयुष्यं युन्ह गर्व गा हु णिदाणे ॥ -

क्या अभिन्यवाचा अवो। विद्यावि वचा च बनवा-

रजान गन्धि समर्पापुरवने एनथ सन् निराने ॥'९

अहे- व्यक्तिकार मानुष्य बातवा वचा व्यक्ति व क्षेत्रक अल्ब (क्षेत्र काल है इनावक नद नांग्र गयं की लाइन नहीं है स्वीति नेवारक धरतकों निर्दाय करेंगे हैं।

लेशालुबिनिविषयो अस्पोणियने य बाधनेने स् । अप्रविषयो र चर्चा प्रमाणी धोवन्यक्तियो संट ८

रोष्ट्रश्चाचित्रवरः अभैनिधित्रं च दायत्त्रं च । सदारतस्य चतुर्वः वेचमः भोज्ञीद्वययः ॥ ५८० ॥ अर्थः—अवस्तुरात्रं विश्वः, अर्थानात्त्रं, सामवदः, सर्विदयः सोर्वः राज्यो सामित्रवर्वे ॥ ५८० ॥

अध्वद्वाण अञ्चित्रामण्याणं च अतिहिष्ट्या य । लोगाणुदिन्तियणओ देवद्रपृथा मर्थिनयण ॥ ५८१॥ अस्पुराने अवत्रि आमनसमे च अदिप्यिम य ॥

अन्युपान अजाति व्यागनान च जातायुजा भा जेन्द्राजुर्जावित्या देवतायुजा स्वीव्यक्ते ॥ ५८१ ॥ जेन्द्राज्ञाति इत्यादा हाच जोव्या, अस्य देना, यादुब-स्ति कता, देवजादी पूजा करनी स्वस्तिक अनुसार करनान्वे स्व याद्याजुर्वाण स्वाव है ॥ ५८१ ॥ आसाजुर्वाण स्वाव है ॥ ५८१ ॥

होत्राणुविभित्रवर्णको अञ्चलकार्य प्रथमवर्षा। ५८२ नारानुवर्षकः प्रदानुवर्तने देशकानदाने प । होत्रानुवर्षिक्षकार्यः अवस्थितकार्यः प्रथमहेतः ॥ ५८२ ॥

अर्थ-ावता पुरस्क स्थाने जनुरुत रोहना, उत्तक अवि-

२२७ मुलाचार-

कृतिकर्म चितकर्म पूजाकर्म च विनयकर्म च। कर्तन्यं केन कस्य वा कथं वा कस्तिन वा कृतिकृत्वः॥५७६ कियंत्यवनतानि कति शिरांसि कतिभिः आवर्तकेः परिशद्धं । कतिदोपवित्रमुक्तं कृतिकर्म भवति कर्तव्यं ॥ ५७७ ॥

अर्थ--जिससे आठ प्रकारके कर्मीका छेदन हो वह कृतिकर्म है, जिससे पुष्पकर्मका संचय हो वह चितकर्म है, जिससे पूजा

करना वह माला चंदन आदि पूजाकर्म है, ग्रुश्रूपाका करना विनयकर्म है। वह क्रिया कर्म कौन करे किसका करना किस

विधिसे करना किस अवस्थामें करना कितनी बार करना। कितनी अवनतियोंसे करना कितनी चार मस्तकमें हाथ रखकर करना कितने आवर्तीसे शुद्ध होता है कितने दोगों रहित ऋतिकर्म करना । इसपकार प्रश्नोपर विचार करना चाहिये ॥५७६।५७७॥ क्रतिकर्म विनयका एकार्थ है इसिलये विनयकी निहक्ति

हरते हैं:---मधा विणेदि कम्मं अट्टविहं चाउरंगमोस्रो य । तह्या बदंति विदुसो विणओत्ति विलीणसंसारा ५७४ यसात विनयति कर्म अष्टविधं चातुरंगमोध्ध । वसाव वदंति विद्वांसी विनय इति विलीनसंसाराः ॥५७५

अर्थ—जिसकारण आठ प्रकारके कर्मीका नाश करता है बतुर्गतिरूप संसारसे मोध करता है इसकारणसे संसारसे पार हुए iडित पुरुष उसको विनय कहते हैं ॥ ५७८ ॥ हुन्वं चेव य विणओ परुविदो जिणवरेष्टिं सन्वेहि । उदास कम्मभूमिसु णिचं सो मोक्लमग्गम्मि ॥५७९॥

पडावस्यकाधिकार ७ ।

पूर्वन्नित् चंब विनयः प्ररूपितो जिनवरः सर्वः । सर्वास कर्मभूमिष नित्यं स मोक्षमार्गे ॥ ५७९ ॥ अर्थ-सब जिनवादेवीने सब इमंगुनियोगे प्रधमहातमें क्षमार्थक निमिष विनयका ही ग्रह्म उपदेश किया है वह

२२१

मेशा करना चाहिये ॥ ५७९ ॥ होगाणुवित्तिविणओं अत्यणिमित्ते य कामतंते य । भयविणओं य चडरूपो पंचमओ मोवम्बविणओं य४८० लोकातुवृत्तिविनयः अर्थनिमित्तं च कामतंत्रं च । भयोजनयथ चतुर्थः पंचमः मोधविनयथ ॥ ५८० ॥

अर्थ--रोकानुर्गत विनय, अर्थानमित्त, कामतंत्र, भयविनय जार पाचवा मोक्षविनय है ॥ ५८० ॥ अन्सुट्टाणं अंजलियासणदाणं च अतिहिपूजा य ।

होगाणुवित्तिविणओं देवदृष्या सविभवण ॥ ५८१॥ अभ्युत्यानं अंजलिः आमनदानं च अतिथिषूजा च । होकानुष्वचिवनयः देवतापूजा स्विभवेन ॥ ५८१ ॥ अर्थ-आसनसे उठना, हाथ ओड़ना, आसन देना, पातुण-

गति करना, देवताकी पूजा अपनी सामध्यके अनुसार करना-चे सब लोकानुवृत्ति चिनय है ॥ ५८१ ॥ भासाणुविसि छंदाणुवसणं दसकालदाणं च । डोकाणुविसिविणओं अंजलिकरणं च अत्यकदे॥ १८२

·

,1

(

,

भाषानुवृत्तिः छंदानुवर्तनं देशकालदानं च । रोकानुप्रविषित्यः अंजरिकरणं च अर्थकृते ॥ ५८२ ॥

अर्थ-किसी पुरुषके बचनके अनुसूठ बोहना, उराक अभि-

२२७ मूलाचार--

कृतिकर्म चितकर्म पूजाकर्म च विनयकर्म च । कर्तव्यं केन करव वा कर्ष वा कित्वन्याकृतिकृत्यः॥५७६ किर्मत्ययनवानि कित शिरांसि कितिमः आवर्षकः परिशुद्धं । कित्वत्यविषयम्

कातदापायमभुक्त कृतिकम भवात कत्वव ॥ ५७७ ॥
अर्थ—जिससे आठ मकारके कमीका छेदन हो वह कृतिकर्म
है, जिससे पुष्पाक संचय हो वह चितकर्म है, जिससे पुषा
करना वह माला चंदन आदि पुषाकर्म है, शुक्ष्माका करना
विजयकर्म है। वह किया कर्म कीन करे किसका करना किस

विनयकमं है। यह किया कमें कीन कर किसका करना किस विभिक्षे करना किस अवस्थामं करना कितनी थार करना। कितनी अवनतियोंसे करना कितनी यार मखकमें दाय रखकर करना कितने आवर्तीसे ग्रुद्ध होता है कितने दोषों रहित कृतिकर्म करना। इसमकार मश्रींगर विचार करना चाहिये॥५०३॥५००॥

कृतिकर्म विनयका एकार्थ है इसिटिये विनयकी निरुक्ति करते हैं:— जग्रा विणेदि कम्मं अट्टविहं चाउरंगमोस्नो य । तक्षा वदंति विदस्तो विणओत्ति विट्टीणसंसारा ५७८

जय—ानसकारण आठ मकारक कमाका नाश करता द नतुर्गतिस्त संतारसे गोश करता दे इसकारणसे संतारसे पार हुप पंडेत पुरुष उत्तको निनय कहते हैं ॥ ५०८ ॥ पुट्यं चय या विणाओं पस्टिविदो जिजावरीहिं सन्येहिं । सवासु कम्मभूमिसु णियं सो मोफलमगगिम ॥५०९॥ पूर्वसिन् पैच विनयः प्ररूपितो जिनवरैः सर्वैः । सर्वोष्ठ कर्मभूमिषु नित्यं स मोधमार्गे ॥ ५७९ ॥ अस्—सव जिनवरदेवोने सव ध्वंगमुनियोमें प्रयमकारुमें अध्या—सव जिनवर्देवोने सव प्रयूच उपदेश किया है वह हनेशा करना चाहिने ॥ ५०९ ॥ स्रोगाणुविस्तिविणाओ अस्थणिमिस्ते य कामतंते य ।

भयविणओ य चडन्थो पंचमओ मोवस्वविणओ य५८० लोक्तुवृद्वविविनयः अर्थनिमित्तं च कामतंत्रं च । भयोऽनयथ चतुर्थः पंचमः मोधविनयथ ॥ ५८० ॥ अर्थं—लेकानुष्ट्वित विनय, अर्थनिमित्त, धानतंत्र, भयविनय जार पाचर्या मोद्यनिय है ॥ ५८० ॥

आर पाचवा माक्षावनय है ॥ ५८० ॥ अन्सद्वाणं अंजलियासणदाणं च अतिहिपूजा य ।

होताणुविस्तिविणओ देवदंपूपा सविवर्षण ॥ ५.८१॥ अभ्युत्धानं अंत्रिः आसनदानं च अतिथिपूता च । छोकानुविचित्तपः देवतापूता सविभवेन ॥ ५८१॥ अर्ध—आसनदे उठना, हाथ बोहना, आसन देना, पाहुज-गति क्राना, देवताकी पूता अपनी सामध्येक अनुसार करना-

स्व श्रेषानुद्रपि विनय है ॥ ५८१ ॥ भासाणुवित्ति छंदाणुवत्तर्ण देसकारुदाणं च । स्रोकाणुवित्तिविणओ अंजलिकरणं च अस्पकदे॥५८२

भाषानुष्रचिः छंदातुवर्तनं देशकालदानं च । लोकानुष्रचिविनयः अंबलिकरणं च अर्थकृते ॥ ५८२ ॥ अर्थ—किसी पुरुषके बचनके अनुकुत्र बोहना, उसके जिल- म्हाचार−

२२२

प्रावके अनुकूल बोलना, देश योग्य काल्योग्य अपना द्रव्य देना-ये सब लोकानुश्वि विनय है। अपने प्रयोजनकेलिये हाम बोहना अर्थानिमित विनय है। ५८२॥

अयोनिनेच विनय है ॥ ५८२ ॥ एमेच कामतंते भयविणओं चेच आणुपुरुवीए । पंचमओ राज्य विणओं परूचणा तस्सिमा होदि॥५८३ एवमेच कामतंत्रे भयवितयः चैच आनुपूर्व्यो ।

ष्वभेव कामनम्र भयविनयः चत्र आतुष्या । पदि ॥ ५८३ ॥ पंत्रमः राज वित्रयः प्ररूपणा तस्ये भवति ॥ ५८३ ॥ अम्—इसीतवृद्ध काम पुरुषायंक निमित्र तिनव करना कार्यत्वे वित्रय है । पांचर्य वे वित्रय है । पांचर्य वो भोशित्तय है । पांचर्य वो भोशित्तय है उपका कथन अब करते हैं ॥ ५८३ ॥ वेर्यम्म प्रयूपणाणाणाणिकों स्थापणाणाणाणिकों स्थापणाणाणिकों स्थापणाणाणाणिकों स्थापणाणाणाणिकों स्थापणाणाणिकों स्थापणाणाणिकों स्थापणाणाणिकों स्थापणाणाणिकों स्थापणाणिकों स्थापणाणिक स्थापणाणिकों स्यापणाणिकों स्थापणाणिकों स्थापणाणिको

मोग्यन्यिक एक्स विकाशी पंचवित्ती होदि पात्र्वयोश् द्रश्नामनारियं नयमि दिनयः औपनारिक्षेत्र । मोद्र प्याचित्रयः पंचवित्रो महात झाल्याः।। ५८४। अर्थ--दर्शनित्रयः ज्ञानित्रयः चारित्रव्यः नशीनित्रः सै चारिक नितन्द्रवत्रदः भोजनित्रयः पात्रवित्रयः पीर्यः। वत्रयः।

ते तस्यपञ्चया वस्तु उपविद्वा जिल्लामोहि सुप्रणाणे ते तह सहहदि जसो दंसणियलओसि वाहस्योऽध्य चे द्रव्यवर्गायाः सह उपदिद्या विस्तरीः श्रुतता । तात् तथा बर्गाति सर दर्गमित्रव हति प्रात्वाः ध्रुत वर्गन्त्रवर्गने विस्तराति । उस वर्गन्य

प्रस्ता प्रवास नाष्ट्र उत्तरका स्वास क्षानाम्य प्रवास पर्यास प्रवास करें उत्तर प्रवास पर्यास प्रवास करें अपनित्र के साम प्रवास प्यास प्रवास प

णाणी गच्छदि णाणी वंचदि णाणीणवं च णादियदि। णाणेण क्रुणदि चरणं तहाा णाणे हवे विणओ।।५८६॥ ज्ञानी गुच्छति ज्ञानी बंचति ज्ञानी नवं च नाददाति । ज्ञानेन करोति चरणं तसात् ज्ञाने भवेत् विनयः ॥५८६॥ अर्थ--- ज्ञानी मोक्षको जानता है ज्ञानी पापको छोड़ता है ज्ञानी नवीन कर्मोंको महण नहीं करता, ज्ञानी चारित्रको अंगीकार करता है इसिलये ज्ञानमें विनय अर्थात् श्लानविनय करना चाहिये॥ पोराणय कम्मरयं चरिया रित्तं करेदि जदमाणो । णवकम्मं ण य यंधदि चरित्तविणओत्ति णाद्व्यो५८७ पाराणं कर्मरजः चर्यया रिकं करोति यतमानः । नवकर्म न च बभाति चरित्रविनय इति ज्ञातच्यः ॥५८७॥ अर्थ-- यज्ञाचार सहित प्रवर्तता ज्ञानी चारित्रसे पराने कर्मी-रूप भूलीका क्षय करता है और नवीनकर्मोंकी बांधता नहीं है यही चारित्र-विनय है ऐसा जानना ॥ ५८७ ॥ अवणयदि तवेण तमं उवणयदि मोक्स्वमन्गमप्पाणं। तवविणयणियमिदमदी सो तवविणओत्ति णादच्यो ॥ अपनयति तपसा तमः उपनयति मोधमार्गमात्मानं । वरोचिनयनियमितमतिः स वरोचिनय इति शात्व्यः ५८८ अर्थ-जिसकी वर्णविनयमें बुद्धि हड है ऐसा पुरुष वपसे पापरूपी अंधकारको हटाता है आत्माको मोक्षमार्गमें प्राप्त करता है यही सर्पविनय है ऐसा जानना ॥ ५८८॥ तह्या सब्वपयत्ते विणयत्तं मा ५दाइ छंडिज्रो। अप्पसुदो विष पुरिसो खवेदि कम्माणि ी

२२४ म्हाचार-

तसात् सर्वप्रयतेन विनयतं मा कदापि त्यजेत् । अल्पश्रुतोपि च पुरुषः धपयति कर्माणि विनयेन ॥५८९

अर्थ—इसल्पि सँयमी पुरुष सब मबल्लोसे विनयभाव कभी छोड़े । थोड़ा श्रुत (आगम) जाननेवाला भी पुरुष इस विनय कर्मोका नास करदेता है ॥ ५२९ ॥

पंचमहञ्बदगुन्तो संविग्गोऽणालसो अमाणी य । किदियम्म णिजरही कुणइ सदा ज्जारादिणिओ ५९ पंचमहात्रतगुरा संविगः अनातसः अमानी च । कृतिकर्म निर्देरार्थी कोति सदा ऊनराविकः ॥ ५९०

अर्थ—नांच महात्वीके आचरणमें हीन, धर्ममें उत्ताह्वण उद्यमी, मानक्षपरिहत, निर्जाको चाहनेवाला, दीशाते ही ऐसा संघमी हतिकमेंको करता है ॥ ५२० ॥

आइरियउवच्झायाणं पवत्तपत्थरमणधरादीणं। पदोसं किदियनमं कावच्यं णिखरहाए ॥ ५९१॥ आनायोंपाध्यायानां प्रवर्तकश्विरगणधरादीनां। एनेषां कृतिकर्मं कर्तव्यं निर्वरायं॥ ५९१॥ अर्थ—आनार्यं उपाध्याय प्रवर्तक श्वविर गणधर आर्थि

इतिकमें निर्माकिने कान चाहिने । मंत्रकेनिने नहीं ॥१९९॥ णो बंदेज अविरदं मादा पितृ गुरु णारिंद अण्णतिर्थ। या देसविरद् देपं या विरदो पामस्थपणमं या॥५९९॥ संस्टेड असिसं एवर्ग एत्स् एर्ट नरेड असरिस् ।

नो वंदेन अविरतं मातरं पितरं गुरुं नरेंद्रं अन्यतीर्व । या देशमिरतं देवं वा विरतः पाधेम्यपंचकं वा ॥ ५९३ ॥

या देशिरते देवे वा विरतः पाधम्यपेकि वा ॥ ५९५ ॥ अर्थ-स्वनी द्वति अनेवगीयनौधी वेहना नदी फरें। वे वे

हैं-माता विता आचरणशिथिङ दीक्षागुरु श्रुतगुरु राजा, पासंडी, थावफ, यक्षादि देव तथा ज्ञानादिमें शिथिल पाच तरहके साध ॥ पासत्थो य कसीलो संसत्तोसण्ण मिगचरित्तो य। दंसणणाणचरित्ते अणिउत्ता मंदसंवेगा ॥ ५९३ ॥ पार्धस्यय क्यीलः संसक्तोऽपसंत्रो सगचरित्रथ । दर्शनवानचारित्रे अनियुक्ता मंदसंवेगाः ॥ ५९३ ॥ अर्थ-सयमीके निकट रहनेवाला, कोधादिसे मलिन, लोभरी राजादिकी सेवा धरनेवाला, जिनवचनको नहीं जानतेवाला, सप और शासज्ञानसे रहित जिनसूत्रमें दोष देनेवाहा-ये पांच पार्श्वस आदि साथ दर्शन ज्ञान चारित्रमें यक्त नहीं हैं और धर्मादिनी हुपरिहित हैं इसलिये बंदने योग्य नहीं हैं ॥ ५९३ ॥ इंसणणाणचरिचेत्वविणए णिचकाट पासत्था । एदे अवंदणिज्ञा छिद्दपेही गुणधराणाम् ॥ ५९४ ॥ दर्घनज्ञानचारित्रतपोविनयेभ्यः नित्यकालं पार्धस्थाः । एते अवंदनीयाः छिद्रप्रेक्षिणी गुणधराणाम् ॥ ५९४ ॥ अर्थ-दर्धन शान चारित्र तपनिनयोसे सदाकाल दूर रहने-वाले और गुणी संयमियोंके सदा दोगोंके देखनेवाले पार्थस आदि हें इसलिये नमस्कार करने योग्य नहीं हैं ॥ ५९४ ॥ ममणं चंदेज मेथावी संजतं सुसमाहितं। पंचमहव्यदकितं असंजमञ्जूगंग्रयं धीरं ॥ ५९५ ॥ श्रमणं वंदेव मेथाविन् संयतं सुसमाहितं । पंचमहाव्रतकरितं असंयमञ्जूपाकं धीरं ॥ ५९५ ॥ अर्थ--- हे बुद्धिमान त ऐसे संयमीकी बंदना कर जो 🗢

१५ मुख•

२२६

आचरणमें इद हो, ध्यान अध्ययनमें स्त्रीन हो, अहिसादि प

महानतों कर सहित हो, असंयमसे म्लानि रखनेवाल हो वीर्ववान् हो ॥ ५९५ ॥

मुलाचार-

दंसणणाणचरित्ते तवविणए णिचकालमुवजुत्ता। एदे खु वंदणिज्ञा जे गुणवादी गुणधराणं॥ ५९३। दर्शनज्ञानचारित्रे तपोविनयेषु नित्यकालग्रुपयुक्ताः । एते खद्ध वंदनीया ये गुणवादिनः गुणधराणाम् ॥५९६

अर्थ--दर्शन ज्ञान चारित्र तपयिनयमें सदाकाल लीन*ते* जै शीलादिगुणधारकोंक गुणोंको कहनेवाले हो। ये निश्चयहर से योग्य है ॥ ५२६ ॥

यासितपराहतं तु पमत्तं मा कदाइ वंदिज्ञो । आहारं च करंतो जीहारं वा जाँद करेदि ॥ ५९०॥ स्याधिप्तपरायुनं तु प्रमनं मा कदाचित् बंदेत ।

आहार च हुर्नने नीहार वा यदि करोति ॥ ५९०॥ भ्रयं-व्यास्थानादिसे आहुन निवताला दूर रहनेताय नि विश्ववादिने ठीन तथा भीजनादि हर रहा हो मलम्बादि और क्रिया कर ग्हा हो वेसी अस्थावालेको वंदना नहीं करनी नावि

आमणे आमणत्यं च उचरांतं च उचिद्वर्दे । अणुविण्यय मेनावी हिद्यिगमे पर्वत्रदे ॥ ५९८ ॥ वानने वागनस्यं च उपश्रांतं च उपश्रितं ।

अनुध्यित्र मेथारी इतिहर्न वर्षेन्द्र ॥ ५९८ ॥ वर्ष-महात नृतिने पद्माननादिने विक्रो दूर सर्वावी

कट रहनेवाले ऐसे मुनीधरोंकी बंदना करे। में बंदना करता ऐसा संबोधन कर, इसविधानमे बुद्धिमान् ऋतिकर्म करे ॥५९८॥ ालोयणाय करणे पडिपुच्छा पूजणे य सदशाए। यराधे य गुरूणं वंदणमेदेसु ठाणेसु ॥ ५९९ ॥ आलोचनायाः करणे प्रतिपृच्छायां पूजने च स्वाध्याये । अपराधे च गुरुणां बंदनमेतेषु सानेषु ॥ ५९९ ॥ अर्थ---आओचनाके समय मधके समय पूजाके समय लाध्या-ह समय क्रोपादिक अपराधके समय-इतने स्वानोंने आचार्य ाध्याय आदिको वंदना करनी चाहिये ॥ ५९९ ॥ तारि पडिकमणे किदियम्मा तिण्णि होति सज्झाए। उण्हे अवरण्हे किदियम्मा चोइसा होति ॥ ६०० ॥ चत्वारि शतिक्रमणे कृतिकर्माणि श्रीणि भवंति स्वाध्याये । पूर्वाहे अपराहे कृतिकर्माणि चतुर्देश भवंति ॥ ६०० ॥ अर्थ-पतिकमणकारुमें चार कियाकर्म (कायोत्सर्ग) होते साध्याय कालमें तीन किया कर्म हैं इसतरह सात संवेरेके र सात सांशके सब चीदह कियाकर्म होते हैं ॥ ६०० ॥ |णदं तु जधाजादं वारसावत्तमेव य । दुस्सिरं तिसुद्धं च किद्यम्मं पउंजदे ॥ ६०१ ॥ द्रचवनतिस्त यथाजातं द्वादशावतंमेव च । चतःशिरः त्रिशदं च कृतिकर्म भयंवते ॥ ६०१ ॥ अर्थ--पेसे कियादर्मको दरे कि जिसमें दो अवनति (भूमिक्रो हर नमस्कार) हैं, बारह आवर्त हैं मन बचन फायकी शहता

मुनानार-चार थिरोनति है । इममहार उत्पन्न तुपः बालकडे धनान अ

चाहिये॥ ६०१॥

२२८

तिविहं तियरणमुद्धं मयरहियं द्विहठाण पुगरतं विणएण कमविसुद्धं किदियममं होदि कायव्यं॥३० त्रिविधं त्रिकरणशुद्धं नदरहितं द्विविधसानं पुनरुकं। विनयेन क्रमविशुद्धं कृतिकर्म भवति कर्तव्यं ॥ ६०२॥

अर्थ-- अवनति आवर्न विशेनति इसनरह तीनवद्यार, न वचनकायसे शुद्ध मद रहित, दो आसनीसे प्रत्येक कियाने, वि यसे, आगमके अनुमार कृतिक्रमें करना चाहिये ॥ ६०२ ॥

अणादिहं च भद्धं च पविद्वं परिपीडिदं। दोलाइयमंकुसियं तहा कच्छ नरिंगियं ॥ ६०३॥ मच्छुव्यत्तं मणोर्द्धं वेदिआयद्वमेव य । भयदोस्रो वभयत्तं इद्विगारव गारवं ॥ ६०४ ॥

तेणिदं पडिणिदं चावि पर्हं तिच्चदं तथा। सदं च हीलिदं चावि तह तियलिद क्रंचिदं॥ १०५। दिहमदिहं चावि य संगत्स करमोयणं।

आरुद्धमणारुद्धं च हीणमुत्तरचूलियं ॥ ६०६॥ म्गं च दहुरं चावि चुलुलिद्मपच्छिमं। यत्तीसदोसविसुदं किद्यममं पडंजदे ॥ ६०७॥ अनादतं च स्तन्धव प्रविष्टः परिपीडितं । दोलायितमंकुश्चितस्तथा कच्छपरिंगितं ॥ ६०३ ॥

मत्स्योद्धर्तो मनोदुष्टो वेदिकायद्ध एव च । भयेन च विभ्यत्त्वं ऋद्विगीरवं गौरवं ॥ ६०४ ॥ स्तेनितं प्रतिनीतं चापि प्रदुष्टसर्वितं तथा ।

ग्रन्थमं द्वेतितं चापि तथा विवित्ततं क्षेत्रतं ॥ ६०५ ॥

दष्टः अदष्ट्यापि च संयस करमोचनं ।
आतन्यः अनातन्थमं द्वीनम्रुचन्द्रतिका ॥ ६०६ ॥

मृक्य दर्दुरं चापि चुल्लितमपश्चिमं ।

द्वार्थियदोपविगुदं कृतिकर्म प्रयुंक्तं ॥ ६०७ ॥

अर्थ-—आदर विना वित्याकमं यत्ता अनादत दोव है
।यादिक गर्वेसं करना खठय दोव है, पंचपरमेश्वीके अतिसमी

अर्थ---आदर विना कियाकर्म करना अनाहत दोष है, विद्यादिके गर्वसे करना खब्ध दोष है, पंचपरमेष्टीके अतिसमीप होके करना मनिष्ट है, इस आदिको पीड़ा देके करना परिपीडित है, हिंडोलेकी तरह आत्माको सद्यय युक्तकर करना दोलायित है, अंकुराकी तरह हाथका अंगुटा टलाटके मदेशमें कर वंदना करे उसके अंक्रशित दोष है, कछवाकी तरह कमरसे चेष्टाकर बंदना करे उसके कच्छपरिगित दोष है ॥ मस्योद्धर्तदोष, मनोद्रष्ट, वेदि-काबद्ध, भयदोष, विभ्यदोष, ऋदिगौरव, गौरव, खेनित, प्रति-नीत, मदुष्ट, वर्जित, शब्ददोप, हीलित, त्रिवलित, कुंचित, हृष्ट, अदृष्ट, समक्र्योचन, आलब्ध, अनालब्ध, द्दीन, उत्तरमुलिका, मूक, दर्दर, बुद्धलिव,-इन वचीस दोपोंसे रहित विशुद्ध कृतिकर्म जो साथ फरता है उसके बहुत निर्वत होती है।।६०३से६०७तक किद्यमंपि करंतो ण होदि किद्यम्मणिज्ञराभागी। वत्तीसाणण्णदरं साह ठाणं विराधंतो ॥ ६०८ ॥

सीसाणण्णादरं साङ्ग ठाणं विरायंतो ॥ ६०८ ॥ इतिकर्मापि क्षवेन न भवति इतिकर्मनिजेराभागी । दार्विद्यतामन्यतरं साधुः सानं विराधयन् ॥ ६०८ ॥ अर्थ—क्वीसदोषेनेसे किसी एक दोषको आवरण करता हुआ २२८ मूजनार-चार चिरोनति हैं। इसप्रधार उत्तत्र हुए माउकके समान कर चाहिये॥ ६०१॥ तिनिक्ं तियरणसुद्धं मयरहियं दुविहटाण पुणरुतं। विणण्ण कमविसुद्धं किदियम्मं होदि कायव्यं॥६०१

त्रिविधं त्रिकरणगुद्धं मदरहितं द्विविधसानं पुनरुकं। विनयेन क्रमविशुद्धं कृतिकर्म भवति कर्तव्यं ॥ ६०२॥

अर्थ—अननति आनर्त शिरोनति इसतरह तीनप्रधार, र् बचनकायमे गुद्ध नद रहित, दो आसर्नोते प्रत्येक कियाँने, रि यसे, आगमके अनुसार हृतिकर्म करण गहिये ॥ ६०२ ॥ अणादिहं च भद्धं च पविद्वं परिपीडिदं । दोलाइयमंक्रसियं तहा कच्छनरिंगियं ॥ ६०२ ॥ मच्छुव्यमं मणोदृढं बदिआयद्धमेय य । भयदीसो यमयत्तं हृद्दिगार्य गार्यं ॥ ६०४ ॥

तेणिदं पडिणिदं चाथि पर्दृहं तिश्चदं तथा । सदं च हीलिदं चाथि तह तियलिद कुंचिदं ॥ १०६॥ दिइमदिइं चाथि य संगस्स करमोयणं । आलद्रमणालद्वं च हीणसुत्तरस्तियं ॥ १०६॥ मृगं च दर्रं चाथि चुदुलिदमणिट्यमं ।

मूर्गं च दहुरं चावि चुलुलिदमपच्छिमं । बत्तीमदोमविमुद्धं किहियममं वर्डजरे ॥ ६०० ॥ अनारतं च हाच्य वरिष्टः परिपीडितं । दोलावितमंड्डिलनचा उच्छारिकतं ॥ ६०२ ॥ मत्त्वोदत्तं मनोदृष्टो वेदिहारद्व एत प ।

नवेन च किन्यसं ऋदिगीर्स गौर्स ॥ ६०४॥

स्तेनितं प्रतिनीतं चापि प्रदुष्टलर्जितं तथा । शन्दय हीलितं चापि तथा त्रिवलितं क्रंचितं ॥ ६०५ ॥ दृष्टः अदृष्ट्यापि च संघस्य करमोचनं । आरुम्धः अनारुम्धश्र हीनमुत्तरचृत्रिका ॥ ६०६ ॥ मुक्तः दर्दुरं चापि चुलुलितमपश्चिमं । द्रात्रियहोपविद्यदं कृतिकर्म प्रयुक्ते ॥ ६०७ ॥ अर्थ-आदर विना कियाकर्म करना अनाहत दोष है. विद्यादिके गर्वसे करना स्तब्ध दोष है, पंचपरमेष्ठीके अतिसमीप होके करना प्रविष्ट है, हस्त आदिको पीड़ा देके करना परिपीडित है, हिंडोलेकी तरह आत्माको सशय युक्तकर करना दोलायित है, अंकुशकी तरह हायका अंगूटा ठठाटके मदेशमें कर यंदना करे उसके अंकुशित दोष है, कछवाकी तरह कमरसे चेष्टाकर बंदना करे उसके कच्छपीरेगित दोष है ॥ मत्स्योद्धर्तदोष, मनोदुष्ट, वेदि-काबद्ध, मयदोष, विभ्यदोष, ऋदिगीश्व, गौरव, स्तेनित, प्रति-नीत, भदुष्ट, वर्षित, ग्रन्ददोप, दीलित, त्रिवलित, कुचित, हष्ट, अदृष्ट, सपदरमोचन, आलब्ध, अनालब्ध, द्दीन, उत्तरचूलिका, मूक, दर्दर, जुडुलिव,-इन वचीस दोपोंसे रहित विशुद्ध कृतिकर्म जो साबु करता है उसके बहुत निर्वश होती है॥६०३से६०७तक किद्यमंपि करंतो ण होदि किद्यम्मणिज्ञराभागी। वत्तीसाणण्णदरं साह्न टाणं विराधंतो ॥ ६०८ ॥

क्रतिकर्मापि कुर्वत् न मयति क्रतिकर्मनिकेसभागी । क्रात्रियतामन्यतरं साधुः सानं विराधयन् ॥ ६०८ ॥ अर्थ-व्यतादोषोमेसे किसी एक दोषको आयरण करताहुआ साधु कृतिकर्मको करता हुआ भी कृतिकर्मकी निर्वेशक प् नहीं होतकता॥ ६०८॥ इत्यंतरेणयाचे संफासपमञ्जल पड्यंती।

जाएँतो वंदणमं इच्छाकारं कुणइ भिक्स् ॥ १०९॥ इस्रांतरे अनावाधे संस्परीयमार्जनं प्रमुंजानः । यानमानो वंदनां इन्छाकारं करोति निद्धः ॥ ६०९॥ अर्थ—एक हाथके अंतरो नाधारित आसन कि अर्जे ग्रीत करता साधु बंदनाको यानता तुआ इन्छाकार को नाम करे॥ ९०९॥ नोण म पत्रिक्छिद्धस्यं मारचरित्रणण सुद्धनायेण। किन्गमानकारकाराज्य संवेदां संज्ञानेता॥ ११०॥ तेन अर्थेशितर्यं गरिविहेतन ग्रुवभावेन।

अभे—कादि आदि है अनिमान स्ट्रित, बेह्ना इस्टेडिंगे वर्गने दूर्ग उटाल करना हुआ, गुद्ध मार्ग पुष्ठ आचार्वने इस्ट नगांकर करना चादिन ॥ २१० ॥ वंद्रणिमञ्जनी पुण एसा कदिया मण समानेगा। वंद्रकमणिमञ्जनी पुण एसा उर्दे प्रदेशनामि॥ १९११ बंद्रनानिर्मुक्तिः पुन एसा कदिना मणा सनागेन। व्यक्तिकमणिन्द्रिकः पुन इस द्वर्श द्वाहणामि॥ १९११॥

हतिहमें हारहसापि संवेषं संजनयवा ॥ ६१०॥

प्रवेच्नमेंने यद अन्तानिभीत गाँउपने क्या है भा 🍪 रूने आस्कान निर्देशको क्यून द्वा ३११ ॥ आगे प्रतिक्रमणनिर्युक्तिज्ञ सरूप कहते हैं;— णामद्रवणा दुव्वे खेरों काले तथेव भावे प । एसी पडिद्धमणगे णिक्खेंवी छव्विहो णेओ ॥६१२॥ नामसापना द्रव्यं क्षेत्रे कालसंथेव भावश्र ।

ग्रसो पर्डिकमणाग णिक्सवा छुट्चिहो णक्षी ॥ ६१२॥ नामस्यारना द्रव्यं क्षेत्रं कारुस्ययेन यावये ॥ एप प्रतिक्रमणके निवेषः पद्दियो द्रेयः ॥ ६१२॥ अर्थ—नाग स्यापना द्रव्य थेत्र काठ कीर मान-ये छह प्रति-ज्ञपक निवेष जानगः॥ वैसे दोरोके नामकी निवृधि करणा

कपण निकेष वात्रा॥ वैसे दोषोके तामकी निष्ठिष करना नामपतिकमण है। इतीतरह जन्म भी समझ तेना ॥ ६२२ ॥ पष्टिकमण देवसियं रादिय इरियापथं च योघन्वं । पष्टिकमणं देवसियं रादिय इरियापथं च योघन्वं । पष्टिकमणं देवसियं संवच्छरसन्तमह च ॥ ६१३ ॥ प्रतिकमणं देवसिकं राविकं ऐपोपिकं च बोद्धन्यं।

पाबिकं चातुर्मोलिकं सांवत्ससमुचमार्थम् ॥ ६१२ ॥ अर्थ—अतीवारीसे निवृति होना वह प्रतिकृत्य है वह दिसमें हो तो देशकिक कहराना है, राविमें किया गया राविक है, वैदाय मानमें हुआ ऐयोपिक है, सवा पाविक चतुर्मोलिक चत्सारिक, जीवनपर्वत किया गया उपनार्थ-पेस सातप्रकार है ॥ पिडक्रमओ पिडक्रमणं पिडक्रमिद्वयं च होदि णाद्वयं। एदेसि पत्तेयं परुवाणा होदि तिणहंगि ॥ ६१४ ॥ पविकासकार प्रविक्रमणं प्रविक्रमणं प्रविक्रमणं स्वात्र वार्वायं।

प्रतिकामकः प्रतिक्रमणं प्रतिक्रमितव्यं च मवति झातव्यं । एतेषां प्रत्येकं प्ररूपणा भवति त्रवाणामणि ॥ ६१४ ॥ अर्थ—विसने दोण दूर क्रियानं सामतिकामक, दोषोसे निवृष्ति होनाहरू प्रतिक्रमण बार त्यागने योग्य दोषहरू प्रतिक्रमितव्य—वी तीन जानने योग्य हैं। इन तीनीका जुदा २ सरूप कहते हैं ॥

२३२ मुलाचार— जीवो दु पडिकमओ दब्वे खेत्ते य काल भावे य। पडिगच्छदि जेण जह्यि तं तस्स भवे पडिकमणं॥६१९ जीवस्तु प्रतिकामकः द्रब्ये क्षेत्रे च काले भावे च । प्रतिगच्छित येन यसिन् तत्तस भवेत् प्रतिक्रमणं॥६१५ अर्थ--जीव है वह द्रव्य क्षेत्र काठ भावने प्रतिकासक है जिस परिणामसे चारित्रके अतीचारको धोकर जिस चारित्रशुद्धि शास दो वह परिणाम उस जीवका प्रतिकरण है ॥ ६१५ ॥ पडिकमिद्रव्वं द्व्यं सचित्ताचित्तमिरिसयं तिविहं। खेत्तं च गिहादीयं कालो दिवसादिकालिया। ११६ प्रतिक्रमित्वयं द्रव्यं सचिचाचिचमिश्रकं त्रिविधं। क्षेत्रं च गृहादिकं कालः दिवसादिकाले ॥ ६१६ ॥ अर्थ-सचित्त अचित्त मिश्रहर जो त्यागने योग्य द्रन्य है व मतिकमितव्य है, पर आदि क्षेत्र हैं, दिवस मुहर्त आदि कार है जिस द्रव्य आदिसे पापासव हो वह त्यागने योग्य है ॥ ६१६ ॥ मिच्छत्तपडिकमणं तह चेव असंजमे पडिकमणं। कसापसु परिकामणं जोगेसु य अप्पसत्येसु ॥ ६१७।

कसारस् पाडक्रमण जागसु य अप्सरयस् ॥ १९०।

मिध्यान्यविक्रमणं तथा चेव असंपमे प्रतिक्रमणं।

क्यानेषु प्रतिक्रमणं योगेषु च अप्रयसेषु ॥ ६१०॥

अर्थ—निव्यानका वर्तिक्रमण, उत्तीतस्त आसमका प्रीक्ष्मण, क्रोबादि क्यायांका वर्तिक्रमण, आर अग्रुम योगोंका वर्तिक्रमण, अर्थ अग्रुम योगोंका वर्तिक्रमण, जार्थ अग्रुम योगोंका वर्तिक्रमण (त्याग) करना चाहिये ॥ ६१०॥

काक्रमण च किदियम्मं पविलेहिय अंतर्लोकरणस्त्रो।
आलोचिक्र सुविहिदो गारव मार्ण च मोन्ण॥६१८॥

कृत्या च कृतिकर्म प्रतिलेख्य अंजलीकरणगुद्धः । आरोपचेत् सुचिद्धितः गार्यं मानं च सुन्त्या ॥ ६१८ ॥ अर्थे—विनयकर्म करके, धरीर आत्मको पीछी च नेत्रसे ग्रद्ध करके, अंजलिक्यामें शुद्ध तुआ निर्मेत प्रतृचिवाश साधु कृद्धि आदि गीरव और जाति आदिकं मानको छोड़कर गुस्से अपने अपराधोका निवेदन करे॥ ६१८ ॥ आरोपणां दिचसियं रादिअ इरियावयं च घोष्ठव्यं । पिकस्या चादुम्मासिय संवच्छरसुस्माई च ॥ ६१९ ॥ आरोपणां देवसिकं सन्तिकं ईपीययं च गोद्व्यं ।

आलागन देवारात सावत इसावय च वाहुल्य । पास्त्रिकं चातुर्मितंकं सांतरसरिक्षमुचमार्थं च ॥ ६१९ ॥ अर्थ—मुरुकं समीव अवशायका कहना वह आलोचना है। वह दैवतिक रात्रिकं हर्यापियक पाक्षिकं चतुर्मितिक संवत्सारिक उत्तमार्थ-इसतरह सात्रप्रकारका जानना चाहिये ॥ ६१९ ॥ अणाभोगाकिदं कम्मं जं किंबि मणसा कदं। तं सच्यं आलोचेन्न छुळ्वास्त्रिकंण चेदसा ॥ ६२० ॥ अनाभोगकृतं कम्मं यत् किमपि मनसा कृतं। तत सर्वे आलोचेन्न अच्यास्त्रिकं चेतसा ॥ ६२० ॥

तत् सर्वं आठोचयेत् अच्याधितेन चेतसा ॥ ६२० ॥
अर्थ---अन्यको नहीं मादम ऐसा अनाभोगरूप किया गया अतीचार, जो दृष्ट मनते किया गया कर्म उस सबको निराकुळ-बिचते गुरुके सामने आठोचन (निवेदन) करे ॥ ६२० ॥ आहोच्यामार्जुच्यण विगडीफरान च भायसुद्धी दू । आहोच्यहिक्त आराधणा अणाहोच्यो अज्ञा ॥६२१॥ आहोच्यहिक्त साराधणा अणाहोच्यो सज्जा ॥६२१॥ आलोचित आराधना अनालोचने भाज्या ॥ ६२१ ॥
अर्थ—आलोचन आहंचन विकृतिकरण जोर भावगृद्धि वे
एकार्थ हैं । गुरुके सामने निवेदन करनेते सम्यन्दर्शनाद्दक्रं
शुद्धि होती है और दोषोंके नहीं कहनेपर शुद्धि होती भी हैं
अथवा नहीं भी होती ॥ ६२१ ॥
उप्पण्णो उप्पण्णा माया अणुपुन्यसो णिहंतव्या ।
आलोचणणिदणगरहणार्हिणपुणो तिअं विदिआं ॥६२२ ॥
अलोचणणिदणगरहणार्हिणपुणो तिअं विदिआं ॥६२२ ॥
अलोचननिदनगर्हण न सुनः हर्तायं द्वितीयं ॥ ६२२ ॥
अर्थ—जेसे जैसे कमसे अतीचार को उसी कमसे कृदिक्रता
धोइ अतीचार शुद्ध करना चाहिये । और उन दोषोंको शुरुके

नला पार—

उसीदिन करे दूसरे तीसरे दिन न करे ॥ ६२२ ॥ आलोचणाणिदणमरहणाहि अन्मद्विओ अ करणार । तं भावपश्चिक्षमणं सेसं पुण दश्यदो भणिओ ॥ ६२३॥ आलोचनिद्दमार्थो अभ्युत्थितथ करणे । वत् भावप्रतिकाणं येषं पुनः द्रव्यतो भणितं ॥ ६२३॥ अर्थ-आयोचन निदन गर्दण इन तीनोहर मृतिहगणहिण उपसी हुआ साथु यद भावपतिहणण दे और शुर्सी अन्य द्रव्य

सामने कहे अन्यके सामने शहट करे अथवा खयं निदा करे पंत

तेक्रमण है ॥ ६२३ ॥ मावेण अणुवजुत्तो दच्यीनृदो पडिदामदि जो दू । तस्सई पडिकमदे सं पुण अई ण सापेदि ॥ ६२४ ॥ भावेन अनुष्युक्तः द्रम्पीनृतः प्रतिक्रमते यस्तु ।

यसार्थे प्रतिक्रमते तं पुनः अर्थे न साधयति ॥ ६२४ ॥ अर्थ-शुद्ध परिणामोंसे रहित हुआ दोपोंसे घृणा नहीं करता साधु जिस दोपके दूर करनेके लिये प्रतिक्रमण करता है उस प्रयो-जनको फिर वह नहीं साधसकता ॥ ६२३ ॥ भावेण संपन्नत्तो जदत्थजोगो य जंपदे सूत्तं। सो कम्मणिज्ञराए विउलाए वहदे साधू ॥ ६२५ ॥

भावेन संप्रयुक्तः यदर्थयोगथ जल्पति छत्रं । स कर्मनिर्देरायां विप्रलायां वर्तते साधः ॥ ६२५ ॥ अर्थ-भावकर संयुक्त साधु जिस निमित्त गुभ आवरण करता हुआ प्रतिक्रमणपदको उचारण करता है वह साधु बहुत कमौकी निर्जस करनेमें प्रवर्तता है ॥ ६२५ ॥ सपडिक्रमणो धम्मो पुरिमस्स य पञ्छिमस्स य जिणस्स अपराधे पडिकमणं मज्ज्ञिमयाणं जिणवराणं ॥६२६॥

सत्रतिक्रमणो धर्मः पूर्वस्य च पश्चिमस्य च जिनस्य । अपराधे प्रतिक्रमणं मध्यमानां जिनवराणां ॥ ६२६ ॥ अर्थ-पहले ऋपभदेव तीर्वकरके समयमें तथा पिछले महावीर

र्तार्थकरके समयमें प्रतिक्रमण सहित धर्म प्रवर्तता है जीर बीचके अजितनाथ आदि तीर्थकरोंके समयमें अपराप हो तो प्रतिक्रमण होता है क्योंकि बहुत अपराध नहीं होता ॥ ६२६ ॥ जावेद अप्पणो चा अण्णदरे वा भवे अदीचारो ।

ताचेद परिकामणं मजिझमपाणं जिणवराणं ॥ ६२०॥ यसिन आत्मनो वा अन्यवरस्य वा भवेदवीचारः । वस्तिन प्रविक्रमणं मध्यमानां जिनवराणां ॥ ६२७ ॥

आलोचिते आराधना अनालोचने भाज्या ॥ ६२१ ॥ अर्थ--आठोचन आहंचन विकृतिकरण और भावशद्वि कार्थ हैं। गुरुके सामने निवेदन करनेसे सम्यन्दर्शनादि प्रदि होती है और दोपोंके नहीं कहनेपर शुद्धि होती भी गथवा नहीं भी होती ॥ ६२१ ॥ प्पण्णो उपपण्णा माया अणुपुञ्चसो णिहंतच्या ।

भारोचणणिदणगरहणाहिं ण पुणो तिअं विदिशं॥६२ उत्पन्न उत्पन्ना माया अनुपूर्वश्रो निहंतव्या । आलोचननिंदनगर्हणे न पुनः ततीयं द्वितीयं ॥ ६२२। अर्थ-जैसे जैसे कमसे अतीचार लगे उसी कमसे कुटिब

गेड़ अतीचार शुद्ध करना चाहिये। और उन दोपोंको गुरुं ।मने कहे अन्यके सामने प्रकट करे अथवा खर्य निंदा करे परं सीदिन करे दूसरे तीमरे दिन न करे॥ ६२२॥ गलोचणणिंदणगरहणाहि अञ्चृहिओ अ करणाय ं भावपडिक्रमणं सेसं पुण दृत्वदो भणिअं॥९२३।

आलीचननिंदनगईणैः अम्युत्थितथ करणै। तत् भावप्रतिक्रमणं श्चेपं पुनः द्रव्यतो भणितं ॥ ६२३ ॥

अर्थ---आलोचन निदन गईण इन तीनोंकर मतिक्रमणकियानै वमी हुआ साधु वह भावपतिक्रमण है और इससे अन्य द्रव्यक

क्रमण हैं ॥ ६२३ ॥ ।।वेण अणुवजुत्तो द्वन्यीनृदो पहिष्क्रमदि जो रू ।

स्सहं पडिकमदे तं पुण अहं ण साधेदि ॥ ६२४ ॥ भावेन अनुपयुक्तः द्रव्यीभृतः प्रतिक्रमने यस्तु ।

इकारण है। इसमें अर्थ चेहेचा एशान है कि सब गरहकी जीव विभीच भरतरी बह एकता हुआ ॥ ६६० ॥ पश्चिम्मणांगाजुर्या पूर्ण गया बहिया संग संस्थायेण । यबक्याणांगल्ली एमी उर्द्र प्रवयन्त्राधि ॥ ६३१ ॥ श्रांतव मणानिशृतिः प्रन एपा काँचना मया समार्थन । प्रत्यानयानिवृद्धिः इत का व प्रवृद्धामि ॥ ६३१ ॥ अर्थ - घट प्रतिकासक विश्वीक वैभि स्रोहको बटी है अब इधक बाद मधारकार विशेषिको कटना हो। ६३१ ॥ कारहचना दर्भ स्वेश बाले च होदि आवे घ । ल्हों प्रधानवाण जिवलंबो छव्बिहा जेओ ॥ ६१६ ॥ नाम स्वापना द्रुप्ते क्षेत्रे कालक सर्वात भावत । एषः प्रत्याच्यानं निश्चेषः पर्रावधी हेवा ॥ ६६२ ॥ अर्थ---नाथ स्थापना द्वाय केंब बाल बाव-दिवतन्त छट धवा-કરા મત્વાર વાનને નિરોધ ગામના પાદિને 🛭 ૫૨૨ 🖠

अर्थ——।य व्यवस्त द्वयं का वा वाव-१००१ छट्ट यकाः
हा करार वानमें निर्णय जानता पादिये ॥ ६२१ ॥
पद्मस्त्राओं पद्मस्त्रवाण व्यवस्त्रवाण्यमंत्रे तु ।
निर्दे पद्मप्यणे अणानदे नेष बालदात ॥ ६११ ॥
प्रत्यास्थापकः प्रत्यास्थाने प्रतास्थानप्यमंत्रे तु ।
अर्थाने प्रत्युव्यक्षे अत्यानि वेष कार्तः ॥ ६११ ॥
अर्थान-मध्यस्त्राकः प्रवास्थान प्रवास्थानस्य न्यः तिनयकाः
का मध्यस्थानकः सद्यास्थान प्रवास्थानस्य निर्मयन्
वाज्ये जानने योग्य दे ॥ ६११ ॥
आणाम् जाणामादिय प्रयक्तनो वृत्यम्बद्धिको ॥ ६१४ ॥
भगामस्मणामादं अणुपालनो वृद्धिको ॥ ६१४ ॥

उस वतके अतीचारमें वीचके तीर्थंकरोंके समयमें प्रतिक्रमण है

अर्थ-जिस वतमें अपने अथवा अन्यके अतीचार लगता

इरियागोयरस्रमिणादिसन्वमाचरदु मा व आचरदु

पुरिम चरिमादु सब्वे सब्वं णियमा पडिकमंदि॥३२ ईर्यागोचरखप्रादिसर्व आचरतु मा या आचरतु । पूर्वे चरमे तु सर्वे सर्वान् नियमान् प्रतिकमंते ॥ ६२८ अर्थ--ऋपभदेव व महावीर पशुके शिष्य इन सब ईर्यागीन समादिसे उत्पन्न हुए अतीचारोंको प्राप्त हो अथवा मत प्राप्त तीभी प्रतिकमणके सब दंडकोंको उधारण करते हैं॥ ६२८॥ मिक्समया दिदयुद्धी एयरगमणा अमोहलक्ला य तथा हु जमाचरंति तं गरहंता वि सुज्झंति॥ ६२९ मध्यमा दृढवुद्ध्य एकाग्रमनसः अमोहलक्षाश्र । तसात् हि यमाचरंति तं गईतोपि शुध्यंति ॥ ६२९ ॥ अर्थ--मध्यम तीर्थकरोंके शिष्य सरण शक्तिवाले हैं सि चिचवाले होते हैं परीक्षापूर्वक कार्य करनेवाले होते हैं इसकार जिस दोपको प्रगट आचरण करते हैं उस दोपसे अपनी निव करते हुए शुद्ध चारित्रके धारण करनेवाले होते हैं ॥ ६२९ ॥ पुरिमचरिमादु जह्मा चलचित्ता चेव मोहलक्का प तो सन्वपडिकमणं अंधलघोडय दिइंतो ॥ ६३०॥ पूर्वचरमास्तु यसात् चलचित्तार्थेव मोहलक्षाथ । वसात सर्वप्रतिक्रमणं अंघलपोटकः दर्शतः ॥ ६३० ॥ अर्थ--आदि अंतर्फे तीर्वकरोंक शिष्य चलायमानविषताने होते हैं मृद्युद्धि होते हैं इसिटिये उनके सब मितिकमण वंदक्ष

मुलाचार-

२ क्षत्रण है। इसमें अप बोहेबा एएलि है कि सब छन्द्रकी औष रिकोट कार्यस कर राजना हुआ है दिश्या पश्चित्रधर्णाणजुर्ना पुण पश्चा प्रतिया सप स्थानेज ह पद्मवन्त्राणांगानुकी गर्ना उई पद्मवन्त्राधि ॥ ६३१ ॥ धांतत्र मधांतर्गृतिः पुन एषा कविता मधा समावेन । प्रत्यानयाननिर्मृतिः देव उपने प्रयद्यापि ॥ ६३१ ॥ अर्थ - यह श्रांतक्रमण निशेषा धैन संदेवते वटी है अब इसक बाद प्रत्यंत्र भाग निर्देशियको पटना हु ॥ ६३१ म भाधद्रचणा दर्ध संबंध काले च होदि आवे च । मधी प्रवस्थाण जिक्त्येयी एट्विटी क्रेजी ॥ ६१६॥ नाम स्वापना इच्चे क्षेत्रे पाउच भवति भावम । क्या प्रत्यास्थाने निर्मेषः प्रदक्षियो वेषः ॥ **५**१२ ॥ રહા પ્રત્યાત ચાનને નિહેય જાતના પાર્ટિયે 🛭 ६૨૨ 🛭 पद्यक्ताओं पद्यक्ताणं पद्यक्तिवप्रदर्शनं तु । नीरं पश्चप्पणं अणागरं चेव बालद्धि ॥ ६६६ ॥ प्रत्याण्यापकः प्रत्याण्याने प्रत्याण्यानप्यमेर्। तु । अर्थाने मन्यूत्राचे अञ्चलते चैत्र बात्रे ॥ ६३३ ॥ अर्थ -- पत्यतन्त्रायकः पत्यत्र त्यान पत्यापन्यातस्य-यदः तीनप्रकार

रक्त प्रचार वाच्या करूप जतीतकारचे वर्तगातकारचे चित्रपत् १७०मे चानने कोन्य हैं ॥ ६९६ ॥ आणाए आणणाचिय उपञ्चलो सृष्टमञ्जलपिदेसे । सामारमणागार्ट अणुपाछनो दृष्टपिदीओ ॥ ६६४ ॥ २३६

अर्थ-- क्रिम बतमें अपने अयम अन्य हे अर्वाचार बगदा ही

उम मतके अतीचारों शेचके तीर्वकों के समयमें प्रतिकत्त हैं ॥ इरियागोगरसुमिणादिसच्यमाचरतु मा व आचरतु । पुरिम चरिमातु सच्ये सच्यं णियमा पडिकर्मदि॥३२८॥ इंगोगोगरसप्रादिमर्व आचरतु मा वा आचरतु । पूर्वे चरमे तु सर्वे सर्वान् नियमान् प्रतिकर्मने ॥ ६२८॥

गुजानार-

तह्मा हु जमाचरति नं गरहता वि सुद्धांति॥ ६२९॥ मध्यमा दृढबुद्धय एकात्रमनतः अमोहलक्षात्र । वसात् हि यमाचरंति नं गईनोपि शुध्यंति॥ ६२९॥ अर्थ-मध्यम तीर्थकरोके शिच्य सत्य शक्कियले हैं सि

चित्रवाले होते हें परीक्षापूर्वक कार्य करनेवाले होते हें इसकार जिस दोणको प्रगट आवरण करते हैं उस दोससे अपनी जिंद करते हुए शुद्ध चारियके भारण करनेवाले होते हैं ॥ ६२० ॥ पुरिसचरिसाहु जाग्रा चलचित्ता चेंब मोहल्यक्ता यां तो सल्वपटिक्कमणें अंधलयोडय दिहतो ॥ ६३० ॥

ता संक्ष्यशिक्षमण अघलयाडय । १६८ता ॥ २२० ॥ पूर्वेत्रसमास्त्र यसात् चलचित्राधेय मोहलकाथ । तसात् सर्वप्रतिकमणं अंघलघोटकः रष्टांतः ॥ ६२० ॥ अयं—आदि अंतके तीर्वक्तिः शिष्य चलयमानचित्रावे होते हें मध्यद्वि होते हें इस्टियं टनके स्व मतिकमण दंडकर्म उचारण है। इसमें अंधे घोड़ेका दर्शन है कि यब तरहवी साव पियोंके करनेसे वह गूझना हुआ ॥ ६३० ॥ पहिकमणणिज्ञा पुण एसा कहिया मण समासण । पचनगाणिज्ञाती एतो उर्द्व पवनगामि ॥ ६३१ ॥ प्रतिक्रमणनिर्युक्तिः पुन एषा कथिता मया समासेन । प्रत्याख्याननिर्येक्तिः इत अर्ध्व प्रवश्यामि ॥ ६३१ ॥ अर्ध-यह पतिकाण निर्यक्ति मैने संक्षेपने कटी है अब इसके बाद प्रत्यारयान निर्युक्तिको कटना हं ॥ ६६९ ॥ णामद्रयणा दर्व लेले काले य होति आव य । प्रशो प्रचल्याणे शिक्तवेषो छव्पिष्टा णेओ ॥ ६३६ ॥ नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्रं कालम भवति भावम । एपः प्रत्याण्याने निधेषः पद्मियो ग्रेयः ॥ ६३२ ॥ अर्थ--नाम म्यापना द्वन्य क्षेत्र काल भाव-शतताह एह प्रका-रका प्रत्याच्यानमें निधेष जानना बादिये ॥ ६२२ ॥ पष्यमाओ प्रधानमाणं प्रचित्रसम्बद्धमेवं तु । तीते प्रमुप्पणे अणागते चेच सालान्य ॥ ६१३॥ प्रत्याल्यापकः प्रत्याल्याने प्रत्याख्यावस्यये ह ।

२३८

अर्थ--गुरुके उपदेशसे, दोपोंका खरूप जाननेसे प्रत्यास्यान सहित महणकाल मध्यकाल समाप्तिकालमें गृहस्यघमें वा मुनिधमेंकी पालनेवाला अत्यंत धीरजवाला ॥ ६३४ ॥ एसो पचक्लाओ पचक्लाणेत्ति वृचदे चाओ। पचक्लिद्व्यमुपधि आहारो चेव बोघव्वो ॥ ६३५ ॥ एप प्रत्याख्यायकः प्रत्याख्यानमिति उच्यते त्यागः ।

मुलाचार-आज्ञया ज्ञापकेनापि च उपयुक्ती मूलमध्यनिर्देशे । सागारमनागारं अनुपालयन् दृढधतिकः ॥ ६३४ ॥

प्रत्याख्यातच्यमुपधिराहारश्चेव बोद्धव्यः ॥ ६३५ ॥ अर्थ--ऐसा जीव प्रत्याख्यायक कहा गया है। त्यागको प्रत्या-ख्यान कहते हैं और सचित्त आदि परिष्ठह तथा आहार त्यागने योग्यको प्रत्याख्यातव्य कहते हैं ऐसा जानना ॥ ६३५ ॥ पचक्लाणं उत्तरगुणेस्र लमणादि होदि णेयविहं । तेणवि अ एत्थ पयदं तंपि य इणमो दसविहं तु॥६३६ प्रत्याख्यानं उत्तरगुणेषु क्षमणादि भवति अनेकविधं ।

तेनापि च अत्र प्रयतं तद्धि च इदं दश्चविधं तु ॥६३६॥

अर्थ-पत्याख्यान मूळगुण उत्तरगुणोंने अनशनादिके भेदसे अनेकप्रकार है अथवा उस मत्याख्यानके करनेवालेको यहां यह करना चाहिये । इस जगह अनशनादि दशमकारका है ॥ ६३६ ॥ अब दश भेदोंको कहते हैं:---अणागदमदिकंतं कोडीसहिदं णिलंडिदं चेव ।

सागारमणागारं परिमाणगर्वं अपरिसेसं ॥ ६३७ ॥ अदाणगर्दं णवमं दसमं तु सहेर्नुगं विषाणाहि ।

पचक्वाणवियम्पा णिरुसिजुत्ता जिणमद्रह्मि ॥६३८॥ अनागतमतिकांतं कोटीसहितं निखंडितं चेव । साकारमनाकारं परिमाणगर्दं अपरिशेषं ॥ ६३७ ॥ अध्यानगतं नवमं दशमं त सहेतकं विज्ञानीहि । प्रत्याख्यानविकल्पा निरुक्तियुक्ता जिनमते ॥ ६३८ ॥ अर्ध-भविष्यत् कार्ट्ने उपवास आदि करना जैसे चीदसका उपवास तेरसको, वह अनागत प्रत्याख्यान है। अतिकांत कोटी-सहित, निसंडित, साकार, अनाकार, परिमाणगत, अपरिशेष प्रत्याख्यान, नीमा अध्वगत, दसवां सहेतुक प्रत्याख्यान है।. इस प्रकार सार्थक प्रत्याख्यानके दस भेद जिनमतर्ने जानना चाहिये ॥ ६३७-६३८ ॥ विणए तहाणुभासा हवदि य अशुपाटणाय परिणामें । एदं प्राक्ताणं चर्विवधं होदि णाद्ववं॥ ६३९॥ विनयेन तथानुभाषया भवति च अनुपालनेन परिणामेन। एतत प्रत्याख्यानं चतुर्विधं भवति ज्ञातन्यं ॥ ६३९ ॥ अर्थ--विनयकर अनुभाषाकर अनुपाठनकर परिणामकर शुद्ध यह प्रत्यास्यान चारप्रकार भी है ऐसा जानना ॥ ६३९ ॥ किदियम्मं उवचारिय विणओ तह णाणदंसणचरित्ते। पंचविधविणयज्ञत्तं विणयसुद्धं हवदि तं तु॥ ६४०॥ कृतिकर्म आपचारिकः विनयः तथा ज्ञानदर्शनचारित्रे । पंचविधविनययुक्तं विनयशुद्धं भवति ततु ॥ ६४० ॥ अर्थ-सिद्धभक्ति आदि सहित काबोत्सर्ग तपहूप विनय, व्यवहारविनय, ज्ञानविनय दर्शनविनय चारित्रविनय-इसत्रह

पांचपकारके विनय सहित प्रत्याख्यान वह विनयकर शुद्ध

मुलाचार-

अणुभासदि गुरुवयणं अक्चरपद्वंजणं कमविसुद्धं घोसविसुद्धी सुद्धं एदं अणुभासणासुद्धं ॥ ६४१ ॥ अनुभाषते गुरुवचनं अध्रपदच्यंजनं क्रमविशुद्धं । घोपविश्रद्वचा शुद्धमेतत् अनुभाषणाशुद्धं ॥ ६४१ ॥

अर्थ--गुरु जैसा कहे उसीतरह प्रत्यास्थानके अक्षर पद व्यंज नोंका उचारण करे वह अक्षरादि कमसे पदना, शुद्ध गुरु ल्यु आदि उचारण शुद्ध होना वह अनुभाषणाशुद्ध है ॥ ६४१ ॥ आदंके उवसमो समे य दुव्यिक्ववृत्ति कंतारे। जं पालिदं ण भग्गं एदं अणुपालणासुद्धं ॥ ६४२ ॥ आतंके उपसर्गे थमे च दुर्भिक्षृत्र्वो कांतारे । यत् पालितं न भन्नं एतत् अनुपालनाशुद्धं ॥ ६४२ ॥ अर्थ-रोगमें, उपसर्गमें भिक्षाकी प्राप्तिके अभावमें वनमें जो प्रत्याख्यान पालन किया भग्न (नाहा) न हो वह अनुपालना

रागेण व दोसेण व मणपरिणामं ण दूसिदं जं तु। तं पुण पचक्चाणं भावविसुदं तु णाव्वं ॥ ६४३ ॥ रामेण वा द्वेपेण वा मनःपरिणामेण न द्पितं यत्तु । तत् पुनः प्रत्याख्यानं भावविद्यदं तु द्वातव्यम्॥ ६४३ ॥ अर्थ-राम परिणामसे अथवा द्वेष परिणामसे मनके विकार कर जो प्रत्यास्थान दुधित न हो वह प्रत्यास्थान भावविश्वय

२४०

होता है ॥ ६४० ॥

गद्ध है ॥ ६८२ ॥

जानना ॥ ६४३ ॥

आगे चारपकारके आहारका सहस्य पहने हैं;— असर्ग सुकूरपसमय पाणाणमणुग्गई नहा पार्ग । ब्यार्देसि ब्यादियं पुण सार्वेसि साहियं अणियं॥६४४॥ अद्युत्ते शुपाप्रमम् प्राणानामनुष्ठई गुश पार्व । सुपार्व सुपार्य हुन: ब्याव्ये ब्यार्थ मणिने ॥ ६४४॥

गायते गायं पुनः स्वायने स्वायं अभिनं ॥ ६४४ ॥
अर्थ—क्षित्ते भूत निरंजाय यह अरान है, जिन्ने दन
प्राणिक उपकार हो यह पान है, जो स्वाया जाव यह लाई आर्दि साव है, जीर जिनाते मुखका स्वाद किया जाव दलाई । जारि खाव कहा है ॥ ६४४ ॥
सन्वारिय आहारी अस्तर्ण सम्वादि पुचनं पाणं ।

सन्योजि न्यादियं पुण सन्योजि प सादियं भिणयं॥४४६ सर्वेषि च आहारः अग्रने सर्वोषि उत्पने पाने । सर्वेषि खार्च पुनः सर्वेषि च म्यादं भणिने ॥ ६७५ ॥ अर्थ-स्मी आहार अस्त है स्वी पान क्टा अला है सनी साद है और सभी साव क्टा गया है यह दक्षाधंकरी जेस्स

पदा है ॥ ६४५ ॥

असर्ण पाणं तह त्वाहिषं चडरथं च स्वाहिषं अधियं।
एवं पर्वावदं हु सहिंहुरंजे सहि होहि ॥ ६४६ ॥
अपने पानं हथा सार्थ चतुर्थं च न्यायं अधितं।
एवं प्रत्यितं सु भद्राय सुर्था अस्ति ॥ ६४६ ॥
वर्ष प्रत्यितं सु भद्राय सुर्था अस्ति ॥ ६४६ ॥
वर्ष प्रत्यितं सु भद्राय सुर्था स्वाव और क्षेत्र के के दर्भ
आसर वरा उनको भद्रावकर और सुर्था स्वाव है ॥ ६६६ ॥
प्रयुवकाणणिञ्जनी एसा कार्युया सुर्या स्व

काओसमाणिजुत्ती एतो उद्वं पक्कनामि ॥ ३४०॥ प्रत्याख्याननिर्येक्तिः एपा कथिता मया समासेन । कायोत्सर्गनिर्मिकः इत ऊर्ज्य प्रयस्थानि ॥ ६४७ ॥ अर्थ-यह प्रत्याच्यान निर्युक्ति मैंने मंश्वेपसे कही अब इसंब बाद कायोसार्ग निर्नुक्तिको कदता हूं ॥ ६२० ॥ णामह्यणा दन्ये सेरो काले य होति भावे य ।

मुजानार-

२४र

नाम स्वापना द्रव्यं धेत्रं कालः च भवति भावत्र । एषः कायोत्सर्गे निश्चेषः पडविघो श्चेषः ॥ ६४८ ॥ अर्थ-नाम सापना द्रव्य क्षेत्र काल भाव-ये छहप्रकारः निशेष कायोत्सर्गमें जानना ॥ ६४८ ॥ काउरसम्मो काउरसम्मी काउरसम्मरस कारणं चैव एवेर्सि पत्तेयं परूवणा होदि तिण्हंपि ॥ ३४९ ॥

एसी काउसम्मे णिक्नेवी छन्विही णेओ ॥ ५४८।

एतेपां त्रत्येकं त्ररूपणा भवति त्रयाणामपि ॥ ६४९ ॥ कायोत्सर्ग है, कायोत्सर्गवाला कायोत्सर्गी है जोर कायोत्सर्गक कारण-इन तीनोंका जुदा २ कथन करते हैं ॥ ६४९ ॥ वोसरिदवाहुजुगलो चदुरंगुलअंतरेण समपादो ।

कायोत्सर्गः कायोत्सर्गा कायोत्सर्गस्य कारणं चय ।

सञ्चंगचलणरहिओ काउस्सम्मो विसुद्धो द् ॥६५०॥ व्युत्सृष्टवाहुयुगलश्रतुरंगुलांतरं समपादः । सर्वोगचलनरहितः कायोत्सर्गो विश्वद्वस्तु ॥ ६५० ॥ अर्थ-जिसमें दोनों बाह्न उंबी की हैं, चार अंगुलका जिनने अंतर है ऐसे समपाद, सब दाथ आदि अंगीका चटना जिसमें नहीं है वह शुद्ध कायोत्सर्ग है ॥ ६५० ॥ सुक्खडी जिद्दणिही सुत्तत्थविसारदो करणसङ्घे । आदयलविरियञ्जलो काउस्सम्मी विसुद्धच्या ॥६५१॥ मोधार्थी जितनिद्रः सत्रार्थविद्यारदः करणग्रदः । आत्मवलवीर्वेयुक्तः कायोत्सर्गी विद्यद्वारमा ॥ ६५१ ॥ अर्थ-मोझार्थी, जिसने निदाको जीत हिया है, एव और अर्थ इनमें निपुण, परिणामीकर शद्ध, अपना शारीरिक बढ तथा आत्मबरुकर सहित निशुद्ध आत्मावारा ऐमा फायोत्सर्गी जानना भाहिये॥ ६५१॥ काउरसम्मं मोक्खपहदेसयं घादिकम्म अदिचारं। इच्छामि अहिट्टार्ड जिणसेविद देसिदसादो ॥ ६५२॥ कायोत्सर्ग मोक्षपथदेशकं पातिकर्म अतिचार । इच्छामि अधिष्टातं जिनसेचितं देशिवस्तसात ॥ ६५२ ॥ अर्थ-यह कायोसर्ग सन्यग्दर्शनादि मोक्षमार्गका उपकारी है पातियाकमाँका नाशक है उसको श्रीकार करना भाइता है स्योंकि यह जिनेंद्रदेवने सेवन किया है और उपदेशा है ॥ ६५२ ॥ एगपदमस्पिदरसपि जो अदिचारी र रागदोसेहिं। गुत्तीहिं पदिकमो पा चट्टाहें कसाएहिं य वदहिं॥६५३ छञ्जीपणिकापृहिं भयमपठाणहिं यंभपम्मेहिं। काउरसम्मं ठामिय तं कम्मणियादणहाए ॥ ६५४ ॥ एकपदमाधितस्वापि यः अवीचारस्त रागद्वेपाभ्यां । मुक्षीनां व्यक्तिमो वा पतुर्विः बतार्यः वा प्रतेषु ॥६५३॥

मूलाचार—

रुष्ट

पर्जीवनिकायैः भयमदस्यानैः त्रह्मघर्मे । कायोत्सर्गे अधितिष्टामि तत्कर्मेनियातनार्थे ॥ ६५४ । अर्थ--एक पादसे जी सड़ा है उसके राग्देपकर जो वर्त हो उसीतरह चार कपायोंकर तीन गुष्तियोंका जो उलंपन क्रोोंमें जो व्यतीचार हो, प्रथिषी आदि छह काय जोतीकी वि

धनासे जो अतीचार हुआ हो, सात मय आठ भेदोंक द्वारा अतीचार हुआ हो, अक्षयर्थ पर्मेंमें जो अतीचार हुआ हो. सबसे आया जो कर्म उसके नाशके लिये में कारोत्सर्गका आ लेता हूं आ कार्य सम्मेतिक क्षया जो कर्म उसके नाशके लिये में कार्योत्सर्गका आ लेता हूं आ ६५३–६५४ ॥ जो केई उचसाना देवामाणुसतिरिक्सचेवरिणया। ते कें केई उचसाना देवामाणुसतिरिक्सचेवरिणया। ते सब्वे अधिआसं काओसगो दिदो संतो॥ ६५४

सन्य आघजास काजासग्ग ठिदा सता॥ १५५ ये फेचन उपसर्गा देवमानुगतिर्यगयेतनिकाः । तान् सर्वान् अध्यासे कायोत्सर्गे स्थितः सन्॥ ६५५ अर्थ--्यो गुळ देव मनुष्य तिर्यंच अनेतनकृत उपस्

हैं उन सबक्षे कायोत्सर्गमें सित हुआ मैं अच्छोतरह सर करता हूं ॥ ६५५ ॥ संचच्छरसुप्तस्सं भिन्नसुहुत्तं जहन्मपं होदि ।

सेसा काओसनगा होति अपेगेस ठापेस ॥ ६५६ ॥ संवत्तरसुरुष्टं निवसुरूर्वं वयन्यं भगति । श्रेपाः कायोत्सर्गा भवति अनेवेसु खानेषु ॥ ६५६ ॥ अर्थ—कायोत्सर्गं एकवर्षका उत्हृष्ट और अंवर्ध्वर्वं प्रणा

जप-जावाता प्रवास प्राचित्र जात वार्वाता जावाता ज अडसदं देचसियं व्हाइदं पक्तियं च तिणिणसया ! पदावस्यकाषिकार ७ । २०५ उस्सासा कायन्या णियमंते अप्यमक्तेण ॥ ६५७ ॥ अष्टातं देवतिकं क्रव्येप पश्चिकं च ग्रीणि जनाति ।

अष्टमतं देवसिकं करवेर्ष पाक्षिकं च प्रीणि स्वतानि । उच्छासाः कर्तव्या नियमांते अन्नमनेन ॥ ६५७ ॥ अर्थ-दैवसिक प्रतिक्रमणके कायोस्सर्गमें एकसी आठ उच्यात. सिविके कायोत्सर्गमें उससे आधे ५४, पाक्षिकमें तीनकी उच्छात. चीरनक्तिके समय अपनादी ग्रनिको करने चाहिये ॥ ६५७ ॥ चारुम्मासे घउरो सदाई संयत्थरे य पंचादा। काओसग्रस्सासा पंचस टाणेस णादच्या ॥ ६५८ ॥ चातमीसिके चत्वारि धनानि संबन्तरे च पंचयतानि । कार्योत्सर्गोन्छासाः पंचस् स्थानेषु झावन्याः ॥ ६५८ ॥ अर्थ-चातुर्गासिक प्रतिक्रमणमे पारसी, बार्वक्रमे पानसी-इसतरह कायोरसर्गक उच्छास पांच म्यानीने जानने चाहिये ६५८ पाणियह मुसायाए अदश मेहुण परिन्महे ने प । अट्टसर्व उस्सासा काओसम्मत्ति पातच्या ॥ ६५९ ॥ त्राणिक्ये गुपाबादे अदत्ते मधुने परिग्रहे पर । अष्टवर्त उप्पासाः कायोत्मर्गे कर्तव्याः ॥ ६५९ ॥ अर्थ-दिसा शह चोरी मैधन परिमद्दे कतीचार्ने के कायोत्सर्ग उसके एकती आठ उपलास करने बोम्ब है ॥ ६५० ॥ असे पाणे गामंतरे प अरहंतसमणसेकास । उद्यार प्रसायणे पणबीसं होति उस्सासा ॥ ६६० ॥ भक्त पाने ब्रामीवहे प अईवथमणश्चमापास । उचारे प्रसब्धे पेपविश्वतिः भवंति उच्छासाः ॥ ६६० ॥ अर्व-मक्षान जो बीवरी उत्तरे आनेक बाद दनरे साबदे

₹88 पइजीवनिकार्यः भयमदस्थानैः ब्रह्मधर्मे ।

करता हूं ॥ ६५५ ॥

कायोत्सर्गे अधितिष्ठामि तत्कर्मनिषातनार्थे ॥ ६५४ ॥ अर्थ-एक पादसे जो खड़ा है उसके रामद्वेपकर जो अतीचार हो उसीतरह चार कपायोंकर तीन गुप्तियोंका जो उलंबन हो, वर्तोंमें जो अतीचार हो, प्रथिवी आदि छह काय जीवोंकी निरा-धनासे जो अतीचार हुआ हो, सात मय आठ मेदोंके द्वारा बं अतीचार हुआ हो, ब्रह्मचर्य धर्ममें जो अतीचार हुआ हो-इर

सबसे आया जो कमें उसके नागके लिये में कायोत्सर्गका आध्य

भूलाचार--

लेता हं अर्थात् कायोत्सर्गसे तिष्ठता हं ॥ ६५३-६५८ ॥ जे केई उवसम्मा देवामाणुसतिरिक्सचेदणिया। ते सब्वे अधिआसे काओसग्गे ठिदो संतो ॥ ६५५॥ ये केचन उपसर्गा देवमानुपतिर्थगचेतनिकाः। तान् सर्वान् अध्यासे कायोत्सर्गे स्थितः सन् ॥ ६५५ ॥ अर्थ—जो कुछ देव मनुष्य तिर्यंच अचेतनकृत उपसर्ग

संवच्छरमुक्षस्सं भिष्णमुहुत्तं जहण्णयं होदि । सेसा काओसग्गा होति अणेगेसु ठाणेसु ॥ ६५६ ॥ संवत्सरमुत्कृष्टं भिन्नमुहुर्ते जधन्यं भवति । शेपाः कायोत्सर्गा भवंति अनेकेषु स्थानेषु ॥ ६५६ ॥ अर्थ-कायोत्सर्ग एकवर्षका उत्कृष्ट और अंतर्महर्त प्रमा

हें उन सबको कायोत्सर्गमें स्थित हुआ मैं अच्छीतरह सहन

वपन्य होता है । रोप कायोत्सर्ग दिनरात्रि आदिके नेदसे बहुत हैं। अइसदं देवसियं कछुद्धं पविखयं च तिष्णिसया।

उस्सासा कायच्या णियमंते अप्पमसेण ॥ ६५७ ॥ अष्टवर्त देवतिकं कल्येषे पाक्षिक मिणि वतारी उच्छासा कंत्र्या नियमति अपमतेन ॥ ६५७ ॥ अर्थ-देवतिक प्रतिकाणके कायोशमंग एकसी आर उच्च

उच्छासाः कर्तच्या नियमांते अप्रमचेन ॥ ६५७ ॥ अपं—देवसिक मतिकमणके कार्योसमाँगे एकवी आठ उच्चार, रात्रिके हार्योसमाँगे उससे आपे ५५ गारिकमें तीरावी उच्छार, रात्रिके हार्योसमाँगे उससे आपे ५५ गारिकमें तीरावी उच्छार, सीराविक कार्य आहे थे ॥ ६५० ॥ चाहुम्मासे चजरो सदाई संवस्थरे य पंचसदा । काओसम्बुस्सासा पंचसु ठाणसु णादच्या ॥ ६५८ ॥

चातुर्गीतिके चत्वारि श्रवानि संवन्तरे च पंचश्रवानि । कार्यात्सर्गोच्छासाः पंचसु स्वानेषु द्वावन्याः ॥ ६५८ ॥ अर्था-चातुर्गतिक प्रतिक्रमणने चारती, वार्षिक्रमे पांचती-इस्रतत्व क्षात्रीसर्शक उच्हीत्वत्व पांच स्वानीने वानने चाहिते ६५८ पाणिवह सुस्राचाए अद्त्त मेहुण परिग्गहे चे य ।

अहसदं दुस्तासा काओसरगाध्य काद्र्या ॥ ६५९ ॥ प्राणिवये प्रशावादे अदने मेथुने परिग्रहे चव । अप्रदातं उद्भावाः कायोत्सर्गे कर्तन्याः ॥ ६५९ ॥ अप्रनिद्धाः सह नोशे मैथुन परिग्रहे अतीचारों जो अप्रोत्सर्गे उत्तरे एक्सी आड उद्भाव करने योग्य है ॥ ६५९ ॥ भूसे पाणे गामंतरे य अप्रहेतसमणसंस्तास् ।

उचारे परस्वणे पणवीसं होति उरस्तासा ॥ ६६० ॥ मक्ते पाने प्रामंतरे च अर्द्धभमणद्ययापाम् । उचारे प्रस्तव्ये पंचवित्रतिः भवंति उच्छासाः ॥ ६६० ॥ अर्थ-भक्त्यान चो गोचरी उत्तरे आनेके बाद दूतरे जानने २४६ म्हानार-जानेकेशाः विनविशोगमनि आर्थः अर्टनसम्या विकादास

जानेकेचार, जिननिर्माणमूनि आदि अर्दुनग्रस्था निषयकाश साम् मनण शस्या इनमें, दीर्पाका समुगंका करमेकि बार-दन गर्मक कामीत्मामी विषय विषय उद्याग ठोते दें ॥ ६६० ॥

उद्देस णिदेसे साउमार वंद्रणेय गरियाणे । सत्तातीसुस्मासा काओमाग्यक्ति काद्या ॥ ६३१ ॥ उद्देशे निर्देशे साध्याये वंद्रनायां प्रण्याते । सप्ततिशतिकरशायाः कायोत्यमं कर्तव्याः ॥ ६६१ ॥ अर्थे—पंथादिक आरंभी, पूर्णताक्रती, बाज्यायमं, बंद

नाने, अग्नुभ परिणाम होनेने जो बायोसमाँ उनमें सर्वाहंत्र उच्चात करने योग्य है ॥ ६६१ ॥ काओसमां इरियायहादिचारस्स मोक्चमन्मान्म । योसहच्चतेह्वा करति हुम्बयन्वयद्वाग् ॥ ६६२ ॥ कायोसमाँ ईपीप्पातिचारस्य मोधमाने । स्यास्ट्रस्तकदेद्वाः कृषीत दुःसद्यापर्थं ॥ ६६२ ॥

अर्थ—र्यावश्ये अतीचारको सोपनेकलिये मोझमागेनं लिउ शरीरमं ममत्वको छोड़नेवाले द्वित दु.सके नाश करनेकिन्ये कागोस्सर्ग करते हैं ॥ ६६२ ॥ भन्ते पाणे गामंतरं य चडुमास्तिवरिसचरिसेस्स । णाजण ठाँत पीरा घणिदं दुक्त्वक्त्यस्याद्वाण ॥ ६६३ ॥ भन्ते पानं ग्रामांतरं च चासुमोसिकवार्षिकचरमान् । इात्मा तिग्रंति पीरा अल्यर्थ दुःख्यव्यार्थम् ॥ ६६३ ॥ अर्थ—भक्त पान ग्रामांतर चतुर्मोतिक वार्षिक दवमार्थ-इनको पढाबस्यकाधिकार ७ । २२७

जानहर भीखुरु अतिशयकर दु.सके स्वयितिश कायोग्यायी तिहते हैं ॥ ६६३ ॥ बाओमगमीम टिदो चितिदु इस्पियचपस्म अनिचारी मं सन्य समाणिक्ता भर्मम गुर्क च चिनेत्रो ॥ ६६४ ॥ कायोगारी स्थितः चित्रवम् देशस्यस्य अतीक्तार् ॥ ने मर्व समानिय पर्म शुक्तं च चित्रवम् ॥ ६६४ ॥

अर्थ-कायोलगंगे तिष्ठा, देर्याययक अर्थानारक शासकी विवयन करता गुनि उन सन नियमीको समाधकर पर्यच्यान लाग गुक्रभ्यानका विवयन करो ॥ ६६४ ॥ नह दिपस्पियरादिपपविज्यपण्डुमानियदिकाणस्मित् । ते सन्यं समाणिणा पम्मे सुन्ने च हार्यक्रो ॥ ६६६ ॥ तथा देवनिकाशिकपाधिकणनुमानियर्थनसम्भात् ।

ते सर्व समाप्य पर्य शुक्रै च प्यापेत् ॥ ६६५ ॥ अर्थ—हारीयकार देवरिक शक्ति पारिक चतुन्तरिक वास्क उद्यापेन्हत सब निवामेंको पूर्यकर पर्यप्यान जीर शुक्र-प्यापको प्रयोग ६६५ जान निवासिक प्रांत्रकार्यको प्रयोग

काओसम्मक्ति कर्दे जह निकादि अंगुर्वमसंपीओ । सह निकादि कम्मरपं वाउस्सम्मस्य करणेण ॥६६६॥ कारोत्सर्गे हते यथा नियंते अंगोर्वामसंघरः । तथा नियंते कर्मरक्षा कार्यानार्थस्य करमेन ॥ ६६६॥ अर्थ—कार्योजने कर्मरस्य निर्मे कर्मरा साहस्य स्थानस्य साहस्य नि

होजाती है ॥ ६६६ ॥

२४८ म्लाचार-

वलवीरियमासेज्ञ य खेत्ते काले सरीरसंहडणं। काओसग्गं कुज्ञा इमे दु दोसे परिहरंतो॥ ६६७॥ वलवीर्यमासाय च क्षेत्रं कालं उरीरसंहतनं। कायोरसर्गं कुर्यात् इमांस्तु दोषान् परिहरन्॥ ६६७॥

अर्थ---बरु कीर आत्माकिका आध्ययकर क्षेत्र कार इतीरके संहतन-इनके बरुकी अपेक्षाकर कार्योत्सर्गके कहे जानेवालेदोपोझ त्याग करता हुआ कार्योत्सर्ग करें ॥ ६६७ ॥

अब कायोत्सर्गके दोषोंको कहते हैं;— घोडय लदा य खंभे कुट्ठे माले सवरबध् णिगले।

लंबुत्तरथणदिटी वायस खलिण जुग कविट्टे ॥ ६६८॥ सीसपकंपिय मुइयं अंगुलि भूविकार वाकणीपेपी। काओसग्गेण ठिदो एदं दोसे परिहरेल्लो ॥ ६६९॥ धोटको लता च स्तंभः इन्जं माला श्वरस्थू निगडः। लंबोचरः स्तनदृष्टिः वायसः सलिनं सुगं कपिर्यं॥६६८॥

शिरः प्रकापितं मुकत्वं अंगुलिः भृविकारः वारुणीपायी । कायोत्सर्गेण स्थित एतान् दोपान् परिहरेत् ॥ ६६९ ॥ अर्थ- भोटक ठता स्तंभ भीति माञा भीतिनी वेदी लंबोचर स्वन्दिष्टं काग सिल्म तुग कपित्य शिरमकंपित मुकल अंगुलि भृविकार मदिरापायी-इन दोषोंको कायोत्सर्गमं स्थित हुआ जीव त्याग करे ॥ ६६८-६६९ ॥ आजोगणां दिसाणं मीवाउण्णामणं पणवणं च । णिद्धीवणंगमरिसो काउससम्मक्षि विज्ञ्जो ॥ ६७० ॥

आलोकनं दिशानां शीबोद्यामनं प्रणमनं च ।

निष्टीवनमंगामञ्ज फायोन्यमं बर्जवेद ॥ ६७० ॥ अर्थ-दिशाओंकी नरफ देखना, गर्दनि (नारि) का फंफ दरना, मारिका नमाना, शुक्रना, धरीरका मधळना-इतने दोषोदी भी बाबोस्सर्ग-अवस्थामें त्यांगे ॥ ६७० ॥ णिक्दं सविमेसं पराणुरूवं घयाणुरूवं च ।

काओस्यमं भीरा फरंति कुपन्यवायद्वाप ॥ ६५१ ॥ निः हर्ट सविशेषं चलानुरूषं पर्यानुरूषं च । कायोत्मर्ग पीराः पूर्वति दःमध्यार्थम् ॥ ६७१ ॥

mu-ungeffet efen, fairque eilen. walt eifnie अनुसार, बाल आदि अवस्थाके अनुकृत पीरपुरं हु रहक शबक लिये कायोत्सर्ग करते हैं ॥ ६ वर्र ॥ जो पण भीगाँदयरिको सन्तरियरिकेण पारणाच मधी।

विसमी ग कहवादी जिल्लिकाजी प भी प अहो॥६७६ यः पनः प्रियदर्गः सप्रतिवर्षेण पारकेन समः ।

विषमध प्रत्यादी निर्वितानी च स च अहः ॥ ६७२ ॥ अर्थ--- जो तीसदर्वप्रमाण बीदन अदस्यादात्र तमन सर्हाद वर्षनाले शाकि-रहित शुद्धके साथ काबीलर्गको पूर्वताकरक बदाव

ten E gael unuft sin E ce mig angen not ? માયા પાર્ધ દે વિશાનરદિત દે ! પારિવર્દાદત દે જોર મૂર્વ દે ઘ प्रदिवप्रदिव परिव्याधिक प्रपश्चित्रहरिये थेव । उपविद्वणिविद्वीवि य काओसमो बहुद्वाणी ॥ ६५६॥

Bienalfena Bienafafan Bufablienague उपिटनिविधोषि च प्रायोत्सर्थः चत्रःस्यानः ॥ ६०३ ॥

वो नाति निनिताला निषयम् उस नार है नाति । वनिधितम् निराह्मप्रभी वाति हेत्ने तथ ॥ १८७३ ब्र है-- ने निसि ग्रामा है अवहि है छन्ने इदिष ऋषा विद्यान

मृज्य सार--

दिपरिणामीकी मैकितिया दे भीर निमक्त शुद्ध गहेवा निधित है

बगके मानमें निष्यका होती है। बोर जो शोष्ट्रा प्रशंध वजानमान निष कपायों है उस है उसके निषयका केंद्र अब्ह

2.42

बात कानमा ॥ १८७ ॥ आमार्ग विष्णपुरसम् आसिया होति जायदो । आमाप अविष्यमुद्धाम मही दर्याद हेवले ॥ ३८८॥

आरापा विमान्द्रमा आसिहा नासि नासाः । आज्ञया जित्रमृत्यस शब्दो नगति केवले ॥ ६८८ ॥

जानना । और नो भागाहर महिन है उस पठ है असिका करन देव इ नामबाज है ॥ ६८८ ॥

णिञ्ज्ती णिञ्ज्ती एसा कहिदा मए समासेण । अइ वित्यारपसंगोऽणियोगदो.होदि णादव्यो॥६८९॥ निर्यक्तिनिर्यक्तिः एपा कथिता मया समासेन । अय विस्तारप्रसंगी अनियोगात भवति वातन्यः ॥६८९॥

अर्थ-आवस्यकृतिवृद्धि अधिकारने सबकी निर्देक्ति सधेपने मैंने कही। जो इसका पिस्तार जानना हो तो जाचारांगरे जानलेना ॥ ६८९ ॥ अब इस आवश्यकाधिकारको संक्रोचते हैं;---

आवासयणिञ्जत्ती एवं कधिदा समासओ विहिणा ।

अर्थ-नी नामात्रानीसे संका है उसके नासिया परमार्वते

जो उपगुंजिद णियं सो सिद्धिजादि विसुद्धण्या॥६९० आप्ट्यकिपुंकिः एवं कपिता समायतो विधिना । यः उपपुंक्त नित्यं मा निद्धि पाति विगुद्धान्ता ॥६९०॥ प्रस्के स्वस्तर कैने आयरबहीन्द्रीक विधिक्त संवेषसे कही वो दसके स्वस्तर आनस्य करता है वह पुरुष क्रमेंसे रहित ग्रद्ध आत्म हुआ मोशको मात्र होता है ॥ ९५०॥ इसमझा आयर्थभीयहकेरियिपित मुक्ताचारकी हिंदी-

भाषाटीकार्ने एट आवस्यकीको कटनेवाला सातवां पढावस्यकाधिकार समास हुआ ॥ ७॥

दादशानुमेक्षाधिकार ॥ ८ ॥

आगे भंगवाराणपूर्वक अनुभेश करनेशी मतिज्ञा करते हैं;-सिद्धं जमंसितृचाय झाणुस्तमस्वियदीहसंसारं । दहं दह दोरों प जिले दहरों अणुपेहणा बुच्छा।विश्वा। सिद्धान नमस्त्रस्य ध्यानोचमधपित्रीपंत्रसारा । दछ दछ द्वा द्वा प जिनान दछदे अनुभेश पस्त्री।विश्वा। अर्थ—उचम ध्यानवे क्षय सिया है दीर्थ वकार जिन्होंने ऐसे रिद्धोंके नमस्त्रास्त्र कथा चौषीस तीर्थकर जिनेद देवोंको नम-स्वारकर में बारह अनुभेशाओंको कहता हूं। ६२१॥ अञ्चयसदणमेगस्त्रमण्यासंसारकोगमानुचिसं । आस्वस्त्रं प्रमुख्यानेष्ट्रीयो चिलिक्षो ॥ १९२॥ २५४

अनिसितस निपद्यकाशन्दो भवति केवलं तस ॥ ६८७॥ अर्थ-जो निसितात्मा है अर्थात् जिसने इंद्रिय कपाय निज-दिपरिणामोंको रोकलिया है और जिसकी बुद्धि सर्वया निश्चित है उसके भावसे निषयका होती है। और जो स्वेच्छा प्रवर्तता चलायमान चित्त कपायोंके वदा है उसके निषदाका केवल दान्द-मात्र जानना ॥ ६८७ ॥ आसाए विप्पमुक्तस्स आसिया होदि भावदो।

आसाए अविष्पमुक्षस्स सद्दो इचिद् केवलं ॥ १८८ ॥ आग्नया वित्रमुक्तस्य आसिका भवति भावतः ।

मुलाचार-यो भवति निसिवात्मा निपद्यका तस्य भावतो भवति ।

आश्रमा अवित्रमुक्तस्य शब्दो भवति केवलं ॥ ६८८ ॥ अर्थ-जो आकांक्षाओंसे रहित है उसके आसिका परमार्थने जानना । और जो आशाकर सहित है उस पुरुषके आसिका करन केवल नाममात्र है ॥ ६८८ ॥ णिज्ञत्ती णिज्ञत्ती एसा कहिदा मए समासेण। अह वित्थारपसंगोऽणियोगदो.होदि णादव्वो॥६८९॥

निर्धुक्तेनिर्धुक्तिः एपा कथिता मया समासेन । अथ विस्तारप्रसंगो अनियोगात् भवति ज्ञातन्यः ॥६८९॥ अर्थ---आवश्यकनिर्धुक्ति अधिकारमें सबकी निर्धुक्ति सक्षेपसे मैंने कही। जो इसका विस्तार जानना हो तो आचारांगसे जानलेना ॥ ६८९ ॥

अब इस आवश्यकाधिकारको संकोचते हैं;-

आवासयणिख़त्ती एवं कधिदा समासओ विहिणा ।

द्वादमातुर्वेक्षाषिकार ८ । २५५ जो जबजंजदि णियं सो सिद्धिंजादि विसुद्धप्पा॥६९० आवस्यकृतिद्वीकः एवं कृषिवा सुमासवो विधिना ।

याः उपपुक्ति नित्यं सः सिद्धि याति विद्यद्वारमा ॥६९०॥ अर्थ—इसपकार मेंने व्यवस्थकिनुर्वेकि विधिकर संक्षेपसे कही जो इसको सबकान आपण करता है वह पुरुष कर्नोसे रहित ग्रद्ध आत्मा हुआ नोहको मात्र होता है ॥ ६९०॥ इसपकार आपार्थभीवहकोरिनिरनित मुलाचारकी हिंदी-भाषाटीकार्ने छह अवस्थकोंको कहनेवाल

सातवां पडावस्यकाधिकार

आगे मंगळाचरणपूर्वक अनुवेश कहनेकी मतिज्ञा करते हैं;→ सिद्धे णमंसिद्गप झाणुत्तमखवियदीहसंसारे । दह दह दोदों य जिणे दहदो अणुपेहणा युच्छं॥दि९१॥ सिद्धान् तमुम्हस्य ध्यानोचमधपितदीर्थसंसारान् ।

द्य द्य दो हो च जिनान द्यादे अनुमेशा वस्त्रे॥६९१॥ अर्थ —उपम ध्यानसे क्षय किया है द्वीपे संसार जिन्होंने ऐसे सिद्धोंको नमस्कारकर तथा चैतीस तीर्थकर जिनेंद्र देवोंको नम-स्कारकर में बारद अनुमेक्षाओंको कहता है ॥ ६२१ ॥

सिद्धोंको नमस्कारकर तथा चौचीस तीर्थकर निर्मेद देवोंको नम-स्कारकर में बारह अनुयेक्षाओंको कहता हूं ॥ ६२१ ॥ अञ्चयमसरणमेगस्मारणणसंसारस्टोगमस्विकार्यः। आस्त्रयसंवरणिज्ञस्परमं योपि च चित्रज्ञो ॥ १९२ ॥ रेपे र प्राचार-

दिपरिवामी है से हिन्मा है और जिम हो नृद्धि मांचा निधिन है उसके भागते निपना होती है। और जो संस्ता अर्सन बजावमान निव कपानों है बन है उसके निपन हा केरड उस्स्माय जानता ॥ १८० ॥ आसाए विष्पमुक्तस्स भासिया होदि भागवदो । आसाए अविष्पमुक्तस्स सन्नो इचिट्ठ केवलं ॥ १८८ ॥ आदापा वित्रमुक्तस्य आसिका भवति भागता ।

यो नाति निर्मितारमा निषयका तहा मानतो नाति । प्रतिमितमा निषयकारम्हो भाति केवले तहा ॥ ६८०॥ प्रयो—यो निर्मितारमा दे वर्मार विगने हेदिन क्यान निरम्

आरापा अविश्वमुक्तरर ग्रन्दो भवति केनले ॥ ६८८ ॥ अर्थ----ो आडांशा श्रीके सहित है उसके आसिका परमार्थर जानना । और जो आग्राकर सहित है उस पुरुषके आसिका करने केवल नाममात्र है ॥ ६८८ ॥

णिञ्चत्ती पिञ्चत्ती एसा कहिंदा मण समासेण । अह वित्थारपसंगोऽणियोगदो होदि णादच्यो॥६८९। निर्युक्तिर्पुक्तिः एगा कथिता मया समासेन । अथ विद्यारमसंगो अतियोगात भवति ज्ञातच्यः ॥६८९॥

अर्थ विस्तारमसंगो अनियोगात् भवति ज्ञातच्यः ॥६८९॥ अर्थ—आवस्पक्रितेष्ठीके अधिकारमें सबकी निर्शुक्ति संथेरवे मैने कही । जो इसका विस्तार जानना हो तो आचारांगरी

मेंने कही। जो इसका विस्तार जानना हो तो आचार्रागर्से जानलेना॥ ६८९॥ अब इस आवडककार्यकारको संकोचने हैं:---

अव इस आवस्यकापिकारको संकोचते हैं;— आचासयणिक्षसी एवं कथिदा समासओ विहिणा । जो जवजुंजिद णियं सो सिर्द्धि जादि विसुद्धप्पा॥६९० आवश्यकनिर्धुतिकः एवं कथिवा समासतो विधिता । यः उपर्युक्त तित्यं सः तिर्द्धि याति विशुद्धात्मा ॥ ६९० ॥ यः उपर्युक्त तित्यं सः तिर्द्धि याति विशुद्धात्मा ॥ ६९० ॥ व्यक्ति स्वस्ति स्वस्ति विधिक्त संक्षेत्र कही व्यक्ति सक्ति क्षात्र अवस्ता हुआ मोशको मास होता है ॥ ६९० ॥ इसमझर आचार्यभीवहकेरिविरिकत मुकाचारिकी हिंदी-भाषाटीकार्मे छह आवरसकों कहनेवाला

सातवां पडावस्यकाधिकार समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

दादशानुप्रेक्षाधिकार ॥ ८ ॥

जागे मंगवास्वप्एंवेड अनुमेश इंदनेकी मतिश करते हैं।सिंद्रे वार्मीसन्वाय झाणुत्तमस्वित्यवीहसंसारे।
दह दह दोरों य जिणे दहरों अणुरेहणा दुन्छं।।६९१॥
सिद्धान नमस्त्रत्व ध्यानेचमश्चितर्यासंसारा ।
दम दश दो हाँ च जिनान दश्चरे अनुमेश वस्त्री।६९१॥
अर्थ---उपन ध्यानचे थम क्रिया है दौर्प संसार किन्होंने पेसे
सिद्धोंको नमस्त्रास्त तथा चीपीस तीर्थस् किंद्र देवीको नमस्त्रास्त तथा चीपीस तीर्थस् किंद्र देवीको नमस्त्रास्त्र तथा चीपीस तीर्थस् किंद्र देवीको नमस्त्रास्त्र तथा चीपीस तीर्थस् किंद्र देवीको नमस्त्रास्त्र तथा चीपीस तीर्थस् किंद्र होने सेसे
स्त्रास्त्र में बाद्र अनुमेशाजोको कहता हूं ॥ ६९१ ॥
अनुसमस्तर्यामेगात्तमणपासंसार्द्योगमसुचित्तं ।
आस्त्रससंत्राणक्रेत्रस्थमं वीपि च चित्रां ॥ १९२ ॥

र५४ मुलाचार-

अनिसितस निपद्यकाशब्दी भवति केवलं तस्य ॥ ६८७॥ अर्थ-जो निसितात्मा है अर्थात् जिसने इंदिय कपाय चिजा-दिपरिणामोंको रोकलिया है और जिसकी बुद्धि सर्वया निश्चित है उसके भावसे निषद्यका होती है। और जो स्वेच्छा प्रवर्तन चरायमान चित्त कपायोंके वस है उसके निषद्यका केवल सब्द-मात्र जानना ॥ ६८७ ॥

यो भवति निसिवात्मा निपद्यका वस्य भाववो भवति ।

आसाए विष्पमुकस्स आसिया होदि भावदो। आसाए अविष्पमुकस्स सदो इवदि केवलं ॥ ६८८ ॥ आश्या वित्रमुक्तस्य आसिका भवति भावतः । आश्रया अविप्रमुक्तस्य ग्रब्दो भवति केवलं ॥ ६८८ ॥

अर्थ-जो आकाक्षाओंसे रहित है उसके आसिका परमार्थसे जानना । और जो आशाकर सहित है उस पुरुषके आसिका करना

केवल नाममात्र है ॥ ६८८ ॥ णिज्ञत्ती णिञ्जत्ती एसा कहिदा मए समासेण। अह वित्थारपसंगोऽणियोगदो होदि णादच्यो॥६८९॥

निर्धेक्तेनिर्धेक्तिः एपा कथिता मया समासेन । अथ विस्तारप्रसंगो अनियोगात् भवति ज्ञातन्यः ॥६८९॥ अर्थ-- आवश्यकनिर्युक्ति अधिकारमें सबकी निर्युक्ति संक्षेपसे

भेंने कही। जो इसका विखार जानना हो तो जाचारांगरे

जानलेना ॥ ६८९ ॥ अब इस आवश्यकाधिकारको संकोचते हैं:-आवासयणिज्ञसी एवं कधिदा समासओ विहिणा ।

जो उचजुंजदि णिचं सो सिद्धिं जादि विसुद्धपा॥६९० आदरमकृतियुंकिः एवं कियता समामतो विधिना । यः उपयुंक नित्यं प्रः सिद्धिं याति विद्यद्वासा ॥६९० ॥ अर्थ—इसकार मेंने आदरमकृतियुंकि विधिक्त संक्षेत्रके कही जो इसको सकाल जानरण करता है वह पुरुष कमेंति रहित ग्रद्ध आसा हुजा मोक्षको मात्र होता है ॥ ६९० ॥ इसमकार जानर्याक्षयहकेरियरिजित मृत्याचारकी हिंदी-भाषादिकार्म छह जानर्यकों कहनेवाल सात्रायं प्रवाचयक्रकों कहनेवाल

समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

द्वादशानुप्रेक्षाधिकार ॥ ८ ॥

आगे भंगव्यवस्वपूर्वक अनुमेशा कहनेकी मतिज्ञा करते हैं;सिद्धं पार्मसिद्वाप झाणुत्तमस्विवयदीहसंसारे ।
वह दह दोरों प जिले दहरो अणुपेहणा दुन्छं।।१९१॥
विद्धान नमस्त्रल ध्यानोचमध्यितप्रसंदारा ।
दश दश द्री द्रां च जिनान दश्वदे अनुमेशा वस्त्री।१९१॥
अर्थ—उपम प्यानसे क्षय किया है दीपे संभार किहीने ऐसे
विद्धांके गमस्कारका तथा चौथीस तीर्थकर कियेद देवोड़ी नमस्मारकर में बारद अनुमेशालोको कहता है। १२१॥
अनुचमस्तरणमेगात्तमण्णसंसारकोगमसुपित्तं।
आस्वस्त्रवाण्यवस्त्रम्भ योपि च चिंतज्ञो ॥ ६९२॥

₹42 मुलाचार-

अर्थ-जो निसिताला है अर्थात् जिसने इंदिय कपाय निजन दिपरिणामों हो रोकलिया है जोर जिसकी बुद्धि सबैया निश्चित है उसके भावसे निषयका होती है। और जो स्वेच्छा प्रार्वता चलायमान निच कपायोंके वस है उसके निषयका केवल सन्दर मात्र जानना ॥ ६८७ ॥ आसाए विष्पमुक्स्स आसिया होटि भावटो। आसाए अविष्पमुक्तस सद्दो इचिंद केवलं ॥ ३८८ ॥

यो मवति निसिनात्मा निषयका तस्य मावतो भवति । अनिसितस निषद्यकाग्रन्दो भवति केवलं वस्य ॥ ६८०॥

आज्ञया अवित्रमुक्तस्य जन्दो भवति केवलं ॥ ६८८ ॥ अर्थ-जो आकांक्षाओंसे रहित है उसके आसिका परमार्थसे जानना । और जो आग्राकर सहित है उस पुरुषके आसिका करना केवल नाममात्र है ॥ ६८८ ॥ णिज्ञत्ती णिज्ञत्ती एसा कहिदा मए समासेण।

आद्या विषयक्तस्य आसिका भवति भावतः ।

अह वित्थारपसंगोऽणियोगदो होदि णादच्यो॥६८९॥ निर्युक्तिर्निर्युक्तिः एपा कथिता मया समासेन । अथ विस्तारप्रसंगो अनियोगात् भवति ज्ञातच्यः ॥६८९॥ अर्थ-आवश्यकनिर्वृक्ति अधिकारमें सबकी निर्वृक्ति सक्षेपसे मेंने कही। जो इसका विस्तार जानना हो तो आचारांगसे

जानलेना ॥ ६८९ ॥ अब इस आवश्यकाधिकारको संकोचते हैं:---

आवासविण्डित्ती एवं किवदा समासओ विहिणा ।

जो उपजुंजिद णियं सो सिद्धिं जादि विसुद्धण्णा।६९० आवरयकिपियुक्तिः एवं किपिता समासती विधिना !
गः उपपुंक्ते नित्यं सः सिद्धिं वाति विश्वद्धात्मा ॥ ६९० ॥
अर्थ—द्रसपक्षर भैने आवरयकिपियुक्ति विभिन्नर संकेपसे कही
जो इसको सकाज जानरण करता है वह पुरत कमेरि रहित
श्वद्धं आत्मा हुन्म मोसको मास होता है ॥ ६९० ॥
इसमकार आचार्यभीवडकेरिविरचित मूहाचारकी हिंदी-

आत्मा हुजा मीयाची माग्र होता है ॥ ६९० ॥ १८४म्बर आपार्वभीषदकीरिविरिचत मूठाचारकी हिंदी-भाषाटीकार्ने छह आवरयकोंको क्टनेतावा सातवं पढावस्यकायिकार समाग्र हुजा ॥ ७ ॥

बादशानुप्रेक्षाधिकार ॥ ८ ॥

आगे मंगळा राणपूर्वक अनुमेश कहनेकी मतिज्ञा करते हैं;सिद्धे णमंसितृच्या झाणुत्तमस्ववियदीह संसारे ।
दह दह दोरो य जिगे दहरो अनुपंतृणा युच्छा। १९१॥
सिद्धान नमस्त्रत्य प्यानोचमश्रपितरीय संसारे ।
दय दय द्ये द्री में चितान द्राप्टे अनुमेश गस्त्री। १९१॥
अर्थ—उपम प्यानसे श्रव किया है दीपे संशार बिन्होंने ऐसे
तिद्धोंको नमस्वारक तथा चौपीत तीर्थकर बिन्हेंदे रैचोंको नमस्वारक स्वार्थक अनुमेश अनेक प्रदेश हैं ॥ १९१॥
अनुवाससरणमेशात्तमभूष्ति स्वार्थक स्वार्यक स्वार्थक स्वार्थक स्वार्यक स्वार्थक स्वार्थक स्वार्थक स्वार्थक स्वार्यक स्वार्यक स्वार्थक स्वार्यक स्वार्थक स्वार्थक स्वार्थक स्वार

मृत्यवार-

आसाण विष्पमुक्तस्स आसिया होदि भावदो । आसाण अविष्पमुक्तस्स सही हवदि केवलं ॥ ६८८ ॥ आद्यया विषमुक्तस्य आसिका मवति भावतः । आद्यया अविषमुक्तस्य ग्रन्दो भवति केवलं ॥ ६८८ ॥ अर्थ—जो आकासाओसे सहित है उस प्रकृषे आसिका करण जानता । और जो आदाकर सहित है उस प्रकृषे आसिका करण

केवङ नाममात्र है ॥ ६८८ ॥ णिद्धत्ती णिद्धत्ती एसा कहिदा मए समासेण । अह वित्यारपसंगोऽणियोगदो होदि णादच्यो॥६८९॥ निर्देकिर्तियुक्तिः एपा कथिता मचा समासेन ।

ानुकानयुक्तः एषा काघता मया समासना । अथ विस्तारमसंगी अनियोगात् भवति द्वातब्यः ॥६८९॥ अर्थ—आवस्यक्रियुक्ति अधिकार्से सनकी नियुक्ति सक्षेष्वे भैने कही । जो इसका विस्तार जानना हो तो आचारांग्वे जानकेना ॥६८९॥ अब इस आवस्यकाधिकारको संक्रोचते द्वां—

आवासयणिख्नुत्ती एवं कथिदा समासओ विहिणा ।

२५४

मात्र जानना ॥ ६८७ ॥

जो उचजुंजदि णिचं सो सिर्ज़् जादि विसुद्धपा॥६९० आदरकित्युक्तिः एवं कियिता सामायते विपिता । यः उपयुक्ति तित्यं सः सिर्ज्ञि याति विग्रद्धाता ॥६९० ॥ अर्थ—इस्तरकार मेंते आदरकित्युक्ति विग्रिक्त संकेपसे कदी जो इसको सबस्त्रक आचरण करता है वह पुरुष कमेंति रहित ग्रद्ध आत्मा हुआ मीयको मात्र होता है ॥ ६९० ॥ इसक्बार आचर्यक्रीयदकेरिविरिकत मुठाचारकी हिंदी-भागदिकार्में छह आवरपक्रीक्षेत्र स्कृतेवाला सात्रवी प्राचनक्रिकार

आगे भंगव्यवरणपूर्वक अनुवेश कहनेकी प्रतिश्च करते हैं,— सिद्धे जमंसिन् चाप साणुस्तमस्विवयदीहर्ससारे । दह दह दोते प निणे दहरों अणुपेहणा गुरुंधा(१९१॥ सिद्धान नम्फुल्य ध्यानोचमशंगितरीयंसारान् । दश दश दो द्वां च त्रिनान् दग्रदे अनुवेशा पर्से॥६९१॥ अर्थ—उपन प्यानसे श्रव किया है शीर्ष संसार बिन्होंने ऐसे तिद्धोंको नम्स्कारक वथा चौथीत तीर्यकर बिनेंद्र देवेको नम्स्कारक दं भार अनुवेशाओंको कहता है। १९१॥ अञ्चनस्तरणमेगत्त्रमध्ये स्वता है। १९१॥ आख्यसस्तरणमेगत्त्रमध्ये स्वता है। अध्यमगरणमे कृतं अन्यत्तंमारतीकं अशुप्तितं । आसवसंवरतिवेतापर्म वीधि च नितवेत् ॥ ६९२ ॥ अर्थ-अतिल अग्राज पृक्तं अन्यतः सत्तार कोक अशुन्त्र आसव संवर निर्वेश भर्म वीधि-इत बारह अनुमेशाओका (: नाओका) वितवत करे ॥ ६९२ ॥

नाओंका) नितवन करे ॥ ६९२ ॥

ठाणाणि आसणाणि य देवासुरसणुप्यइत्विसोक्स्ताइं
सानुषिदुस्यणस्वासदाय पीदीवि य अणिका॥६९ः
स्थानानि आसनानि च देवासुरसजुनकाद्विसोक्यानि ।
मार्विषद्वस्यनसंवासता प्रीत्यपि च अनित्या ॥ ६९२ ॥
अर्थ-मामादि स्थान सिंहासनादि आसन देव अपुर मग्र इनकी हाथी पोड़ा आदि विभृति इंद्रियमुल, मार्ग पिग संवित्व पक्ष जगह रहना और इनके साथ प्रीति—ये स

जिल हैं ॥ ६९३ ॥ सामर्गिनिदेपसर्व मदिजोवणजीविषं वलं तेजं । गिहसयणासणभंडादिया अणिबेति चितिजो॥६९४॥

सामग्रींद्रियरूपं मतियोवनजीवितं वर्ल तेनः । गृहयनासनमांडादीनि अनित्यानीति चिवयेत् ॥ ६९४॥ अर्थ-सज्य हाथी योडे, नेत्रादि ईदिय, गोरा फाला वर्षः

हुद्धि, जवान अवस्ता, जीवन, वङ, कृति व मठाए, वर सी शस्या सिंहासन वस वर्तन आदि सभी अनित्य हैं ऐसा चिंतवन फरें।। ६९४ ॥

आगे अश्ररणभावताको कहते हैं;— ह्यगयरहणरचलवाहणाणि मंतोसघाणि विज्ञाओं। व नपरस ण भरणे णिगरी जोडी च जीवा च ६९५ ennamarazarraila hármila fron i भागमधात न धार्य निर्दालः नीतिः च विज्ञान तर्रात्याः आर्थु— भीडा दानी स्थान सनुभावत सक्षा रुका रुका ly suite factionally subsequently to be a second ते जार अपने भाई भादि चट्डीजन-च र र भग्दर ५ र ७ ह नुषर कोई सहाई नहीं हानकत स ६० व स धामराधरणसभादिकांचा सरणी ण विसर् छाए। । घरणधारा विश्ववारणी मु (जनसारायी सुचा ७ ६८ ५ स जन्मजनसम्भागमादिव धार्च व दिस्के र १४ । जगमाणमहास्थिताओं है जिल्लामने हें रह है है है Bul--uff geift bif gnat tige bet un er भक्तेची भई रेचिनीय इंडेलियान एसे विचन रहे । १ के अन्य દે હી દતાનું માટી દેવ ધરા વિનાવન હી કૃદ **ત્ર ટ**ા તેમ છ (णनपश्चि उपगर्द देवादि सहद्या छ मलाम । ાતો સ્તાર્પો સરાર્ધ મહિલ્લ (પ્રમાફ સરજ્લ દ્વાર કેટ માલ્યામન રૂપમાંને લેવી માંધે લેટી મેં હલા વાસ દ પ્રમાનને ધાર્ય માતાલન મહત્વ પાલ્ટ ને છે પ્રાંત હ AND - Approve that we next agent the service to LICINE COLD DE CONSTITUTE SE SE SE SE SE SE SE SE SE ANIMA & MAN CONTRACTOR OF THE PART OF MAN 44 (4.44.4) \$ \$ \$ cit & . . .

२५८ • मूलाचार--

वज्रि मनुबस्तादों ण जणं कोई समं एदि॥६९ सजनस परिजनस च मध्ये एकः रुजातैः दुःखितः वज्रित मृत्युवयुत्तातः न जनः क्यिद्षि समं एति॥६। स्वर्ध—माई भतीजा आदि स्वर्ध— त सारीदास शादि पाँ इनके मध्यमें अकेला ही रोती दुःसी हुआ मृत्युके वर्षमें पर्लोक्को गमन करता है। इसके साथ कोई भी म

नहीं बाता ॥ ६९८ ॥ एको करेड़ कम्मं एको हिंडदि य दीहसंसारे । एको जायदि मरदि य एवं चिंतहि एयसं॥ ६९९

एकः करोति कर्म एकः हिंडति च दीर्घसंसारे । एकः जायते त्रियते च एवं चितय एकतं ॥ ६९९ ॥

अर्थ—यह जीव अकेटा ही गुमनगुम कर्म करता षकेटा ही दीर्पसंसारमें भटकता है, अकेटा ही जन्म देत स्मीर अकेटा ही मस्ता है। इसताह एक्टनमावनाका तुम ि

वन करो ॥ ६९९ ॥ जागे अन्यतभावनाका सहस्य कहते हैं;— माद्ग्यिदृस्ययास्यियोगं य सुव्येवि अत्तागो अण्णे

इह्होगर्यथया ते ण प परलोगं समा गेंति ॥ ७०० मारुपिनृसञ्जनसंग्रीपनश संग्रीप आत्मनः अन्ते । इह्लोक्संपराक्षे न च परलोकं समें गच्छेति ॥ ७००

इंड्डाइनायगरत न च परताह सम गण्डात ॥ ४००० अर्थ-माता दिला कुटुंगीवन और संबंधी ये समी वा आरमाते न्यारे दें वे इस्टोडके दिल्ये ही माई (सहायह)

ा^{र्चन} परबोहर्न साम नहीं जासकते ॥ ७०० ॥ ४. अण्णो अण्णं सोयदि मदोत्ति समणाहओत्ति मण्णंतो अत्ताणं ण द् सोयदि संसारमहण्णवे गुद्धं ॥ ७०१ ॥ अन्यः अन्यं पोषित एव इति सम नाप इति मन्यनातः । अत्यः अन्यं पोषित एव इति सम नाप इति मन्यनातः । अर्थ—नितः सार्वो नित्याया ऐवा मानतः हुआ अन्वकोई दूतरे जीवका तो सोच करता है परंतु संसारक्ष्यो समुद्रमें दूवते हुए अपने आत्माका सोच (विता) कुछ भी नहीं करता ॥७०१ अण्णं इसं सरिरादिगंपि जं होज्ञ याहिरं वृत्यं । णाणं दंसणमात्वा त्ति एयं चिताहि अण्णत्तं ॥७०२ ॥ अन्यत् इदं शरीरादिकमपि यत् नवेत् यहिरंन्यं । ॥७०२ ॥ अन्यत् इदं शरीरादिकमपि यत् नवेत् यहिरंन्यं । ॥७०२ ॥ जानं दशनमात्मा इति एवं चिता अन्यत् ॥ ७०२ ॥ जानं दशनमात्मा इति एवं वितय अन्यत् । ॥७०२ ॥ इति वितय हम्बन्यः अपय है ॥ इतिवित्यं जानवर्वन ही अपने आत्मोक है इसवाह अन्यन्ते ही । इतिवित्यं जानवर्वन ही अपने आत्मोक है इसवाह अन्यन्ते ।

भावनाका तुम चितवन करो ॥ ७०२ ॥ अब संसारभावनाकी कहते हैं;—

मिच्छत्तेणोछण्णो मार्ग जिणदेसिदं अपेक्खंतो । भमिद्दि भीमकुडिछे जीवो संसारकंतारे ॥ ७०३ ॥ मिध्यात्वेन आछवो मार्ग जिनदेशितं अपध्यन् ।

ार्च्यासम् आकृति वीषः संवारकोता । ॥०२ ॥ अभिपाति मीमङ्गिरिते वीषः संवारकोता ॥ ॥०२ ॥ अर्थ —अश्रद्धानरूर निष्यास्य अंपकारसे सवबगद्द पिरा हुत्या यह चीव जिनदेशकः उपरेत्र कियेगये मोश्रमागेको नहीं देखता संवा भयानक अर्थेव ग्रहन संसाररूपवनने ही अमम करेगा ॥ ००३ ॥ २६० मुलाचार-दब्वे ग्वेत्ते काले भावे य चदुव्विहो य संसारो। चरुगदिगमणणियद्धो यहप्ययारेहिं णाद्व्यो ॥७०४।

द्रन्यं क्षेत्रं कालः भावध चत्रविधध संसारः।

चतुर्गतिगमननिवदः बहुप्रकारैः ज्ञातन्यः ॥ ७०४ ॥ संसार जानना । यह नरकादि गतियोंने अमण है छिये कारण र मीर बद्धा प्रहासका है ॥ ७०५ ॥ किं केण करम करूप व केवचित्रं कविविधी व भावी व छति अणिओमहारे सब्दे भावाणुमंतव्या ॥ ७०५॥ कः केन करा कृत या कियमिर कतिनिधः च भारत ।

षद्दनिरनियोगद्वारः गर्ने भागा अनुभंतच्या ॥ ७०५ ॥ अर्थ-कीन संवार है, किसनावर्ग संवार है, किनके संवार है, कहा समार है, किनने बदुनकाल का मनार है, किनने प्रभारका मेलार है-इस तरह छह प्रभावतीयांस समारको तच धनी पराची ही जानना चारिते ॥ ७०५ ॥ तम्य जसानस्कानमं दुवनं विपविष्यजोग बीहणमं । अष्यियमंजोगीव च सममज्ञावेदकाओ च ॥ २०४॥

तत्र असमस्यानचे दृश्यं विचरित्रनीयं नीपर्य । नविवयं तेपनी च तेपम्या हिनाच ॥ ७०५ ॥ अर्थे-इत नवारने अगुक्त भव नरवद्या भव भन्द कार्यक्ष

तुल्ब, निषयल्ड्रेंग्र सिर्वायने अस्त्र तुना हुन्य, सर्वेश्वर असि भवन्तेमले अन्त्र कुल, सानी नाइ रेमने बन्ती ग्रह दन्छे

34 Cal E 1 203 1

जायंत्रो य मरंत्रो जलपलनपरेख तिरियणिरियेख । माणुम्मं देवलं दुवन्तसहस्माणि पप्पोदि ॥ ७०७ ॥ जायमान्धं भ्रियमाणः जलन्यलगुचरेषु तिर्यप्रिरयेषु । मानुष्ये देवत्वे दःग्यमहस्राणि प्राप्नोति ॥ ७०७ ॥

अर्थ--- दन मंसारमें जन्म मरण फरता यह जीव जलकर स्थतचर आपाराचर तिर्वचयोगिमे, नरकरी, मनुष्यगतिमे और देवगतिने हजारी सरदके द स पाता है ॥ ७०७ ॥ जे भोगा चन्द्र फेई देवा माणुस्सिया य अणुभूदा। दुक्लं थ णंत्रादुक्तो जिरए तिरिएस जोणीस ॥५०८॥

संजोगविष्यश्रोगा लाहालाहं सहं च दुक्लं च। संसारे अणुनुदा माणं च नहायमाणं च ॥ ७०९ ॥ एषं पहुष्पपारं संसारं विविद्दृश्याधिरसारं । णाऊण विधितिज्ञो नदेव छहुमेव णिस्सारं॥ ७१० ॥

वे भोगाः राख केचिन् देवा मानुपाध अनुभूताः । दुःग्वं चानंतकृत्वः नरके तिर्पश्च योनिषु ॥ ७०८ ॥ संयोगवित्रयोगा हाभोऽहाभः सुखं च दुःखं च । संगारे अनुभूता मानं च तथापमानं च ।। ७०९ ॥ एवं बहुप्रकारं संसारं विविधदःखस्थिरसारं । ज्ञात्वा विचिववेत वर्धव लघुमेव निस्सारं ॥ ७१० ॥

अर्थ-ससारमें जो बाछ देवगतिक सथा मनव्यगतिक भोग निध्यकर सेवन किये उनसे नरक तिथेचयोनिमें अनंतवार वःस्व पाया ॥ फिर इस जीवने इष्टसंयोग इष्टवियोग बांछिनका लाभ अटान सुख द:ख पूजा तिरस्कार इन सबको भोगा ॥ ऐसे बहुत

२६२ म्ङाचार∸ मकार अनेक दुःल ही जिसमें सार हैं ऐसे संसारको जनक

बीम ही इसको निस्तार चिंतवन करना चाहिये ॥७०८–७१० अब बोकानुभेद्याको कहते हैं;— एमबिहो खल्ड छोओ दुविहो तिविहो तहा बहुविहो ब दब्बेहिं पञ्चपृष्टिं य चिंतेञ्ज छोगसन्मार्य ॥ ७११ ॥

एकविषः खुद्ध लोकः द्विविषः त्रिविषः तथा वहुविषो व। द्रव्यः पर्यायः च चित्रपेत् लोकसद्भावं ॥ ७११ ॥

अर्थ—यह लोक सामान्यकर एक हे जब्बंत्रपोलोक्ते हो मकार है तिर्यम्लोक मिलानेसे तीन भेदबाल है, गति लिलाक दिया पदार्थ कर्म इनकी अपेक्षा बार पांच छह सात बाठ भेर बाल है - इसफकार द्रव्य तथा पर्यापमेदकर लोकके अखिलक्ष विचन करे॥ ७११॥ लोगो अकिहिमो खल्ड अणाइणिहणो सहावणिष्पणो जीवाजीवेहिं सुडो णिचो तालकरुससंठाणो ॥७१॥

लोकः अकृतिमः खखु अनादिनिषनः सभावनिष्पनः । विवानीनैः भृतः नित्यः वालमुश्वसंस्थानः ॥ ७१२ ॥ अर्थ—यद लोक अकृत्रिम है अनादिनिषन है अपने सम्बन्धे सित्य है किसीकर बनाय हुआ नहीं है जीव अजीव द्रव्योंने भरा हुआ है नित्य (सर्वकाल रहनेवाल) है और वाइम्बन्धे मकार है। ७१२ ॥ अस्मापम्मागासा गदिरागदि जीवपुग्गलाणं च । वायसायम्भोगो आगासमदो एरमणंतं ॥ ७१३ ॥

धर्माधर्माकाद्यानि गतिरागतिः जीवप्रद्रतानां च ।

यमन आगमन हैं उतना दी सोक हैं । इसके आगे अंतरहित (अनत्) प्रच्योंक विधामरहित केवल आकाश है उसको अली-पादाय बहते हैं ॥ ७११ ॥

हिट्टा मञ्झे उपरि पेत्तासणझहरीमुर्दिगणिओ । मजिझमबिल्पारेण द चोहसगुणमायदो होओ ॥७१४

अपो मध्ये उपरि पेत्रामनहाडरीमृदंगनिभः ।

मध्यमविस्तारेण तु चतुर्देशगुण आयवी होकः ॥ ७१४ ॥ अर्थ-यह लोफ अधोदेशमें मध्यदेशमें कराले प्रदेशमें कमसे पेत्रासन (मूंटा), शाबर, मृदंग इनके आकार है। मध्यके एक राज्विसारसे चीदहगुणा ढंबा सब छोक है ॥७१८॥ तत्थण्डचंति जीवा सकम्मणिब्यत्तियं सहं दक्लं । जम्मणमरणपुणस्भयमणंतभयसायरे भीमे ॥ ७१५ ॥

त्रवातुमवंति जीवाः सकर्मनिवंतितं सरां दःसं । जन्ममरणपुनर्भवं अनंतभवसागरे भीमे ॥ ७१५ ॥ अर्थ-उस टोक्में ये जीव अपने क्मोंसे उपार्जन किये मुख दु:खको भोगते हैं और भयंकर इस अनंतभवसागरमें अन्म-मरणको बार्रवार अनुभवते हैं ॥ ७१५ ॥ मादा य होदि पदा पदा मादुलणं पुण उचेदि । पुरिसोवि तत्थ इत्थी पुमं च अपुमं च होड् जगे।।

मावा च भवति दृद्धिवा दृद्धिवा मावलं प्रनहरेति ।

.ष्ट म्लाचार**-**

पुरुपोपि तत्र सी पुमांथ अपुमांथ मवति जगति ॥७१६॥ अर्थ-इस संसारमें माता है वह पुत्री हो जाती है की पुत्री माता होजाती है । पुरुष सी होजाता है जीर बी कुर क्यार नपुंसक होजाती है ॥ ७१६ ॥ होजण तेयसत्ताधिओ दु वलविरियस्वसंपण्णी। जादो वचघरे किमि धिगत्यु संसारवासस्स ॥०१॥ भूत्वा तेजःसत्त्वाधिकस्तु वलवीयस्त्पसंपन्नः । जातः वर्चोग्रहे कृमिः घिगस्तु संसारवासम् ॥ ७१७॥ ऐसा राजा भी कर्मवंदा अञ्चिच (मैले) स्वानमें लट जीव होबाड है। इसलिये ऐसे संसारमें रहनेको थिकार हो॥ ७१७॥ धिब्भवदु लोगधम्मं देवावि य सुरवदीय महधीया। भोत्तूण य सुहमतुलं पुणरवि दुक्तवावहा होति॥७१८ धिम्भवतु लोकधर्म देवा अपि च सुरपतयो महधिकाः। अनत्वा च सुखमतुलं पुनरपि दुःखावहा भवंति ॥ ७१८॥ अर्थ-लोकके सभावको धिकार हो जिससे कि देव और महान् ऋद्विवाले इन्द्र अनुपमसुलको भोगकर पश्चात् दुःलके भोगनेवाले होते हैं ॥ ७१८ ॥ णाऊण लोगसारं णिस्सारं दीहगमणसंसारं। होगग्मसिहरवासं झाहि पयत्तेण सुहवासं॥ ७१९॥ शाल्या लोकसारं निस्सारं दीर्घगमनसंसारं । लोकाप्रशिखरवासं ध्याय प्रयत्नेन मुखवासं ॥ ७१९ ॥ अर्थ-इसमकार लोकको निस्तार (तुच्छ) जानकर तथा

उस संसारको अनंत जानकर अनंतमुखका स्वान ऐसे मोक्षस्वानका

यत्रसे ध्यानकर् ॥ ७१९ ॥

आगे अशुविभावनाको कहते हैं;— णिरिएसु असुहमेषंतमेय तिरिपेसु पंघरोहादी।

जिरिगम् असुरमपतमय तिरियसु पंपरीहादा । मणुपेसु रोगसोगादियं तु दिवि माणसं असुरा॥७२० नरकेषु अग्रभमेकांतमेय तिर्पेशु वंपरोपादयः ।

सनुजेपु रोगधोकादयस्तु दिवि मानसं अद्युक्तं ॥ ७२० ॥ अर्थ—सन्दर्भका दुःस ही हैं, पोड़ा हाथी आदि

तिथैचगितमें यथन ताडन आहारादिका रोकना ये दुःश्व हैं, मनु-च्यगतिमें रोग शोक आदिका दुःश्व है, देवगतिमें दूसरेकी

बाज्ञामें रहना आदि मानसिक दुःख है ॥ ७२० ॥ आयासदृक्खवेर भयसोगकलिरागदोसमोहाणं । असहाणमावहोवि य अस्थो मूर्ल अणस्थाणे ॥ ७२१

असुहाजमावहान ये जत्या मूल अजन्याणा । ७२ आयासदुःखंबरभयग्रोक्तहल्सगद्देषमोहानाम् । जन्नुभानामावहीप च अर्था मृलमनयोनाम् ॥ ७२१ ॥

अर्थ-पाना के पेटा फरोने हुःस, पेर, भय शोक फरह राग द्वेप, निध्यास अर्धसम्बद्ध मोह-इन अशुमेंकी माति होना ये संसारमें महान दुःस है । अथवा जितने अनर्थ (अशुम) है

उनका मुल्कारण धन है ॥ ७२१ ॥ दुग्गमदृष्टहरूलाभा भयपत्रा अप्पकालिया लहुया । कामा दुक्खवियामा असुहा संविद्यामाणाव ॥७२२॥ स्रोधनीयसम्बद्धाः स्वयुग्य अस्त्रातिक स्वयुग्य

कामा दुक्लावयामा अनुस् सावज्ञमाणाव (१०२२ दुर्गमदुर्लभराभा भयप्रनुस अन्यमालका रुपुकाः । अरुभाः सेन्यमाना अपि ॥ ७२२ रदद

अर्थ-इम संमारमें कड़में मिननेवार्त आनेको इड दार्थ मिनने कठिन हैं, मारण वंधन आदि भवसाहित हैं, बोई झन रहनेवार्ज हैं साररहित हैं । बोर सेवन हिनेवारे काननीय मै

रदनेवाले हैं साररहित हैं । जीर सेवन क्रियेगये कामभीय दु:संके ही देनेवाले हैं इसकिये अगुभ हैं॥ ७२२॥

दुःसरु ६ ६२॥० ६ ६माला अग्रुम ६ ॥ ७२२ ॥ असुङ्घिअविले गन्मे यसमाणो वत्थिपदलप्रच्छण्णो। मातृङ्सेभलालाङ्गं तु तित्वासुङ्गं पिवदि ॥ ७२३॥

अञ्चन्पाविले गर्भे वमन् वित्तपटलप्रच्छन्नः । मानुश्वेन्पलालिपितं तु तीवाञ्चमं पिवति ॥ ७२३ ॥ अर्थ---यद्द जीव मूत्रमल्युक्त गर्भमं वमता बत्तवु (बेर)

अथ—यह जाव भूत्रमलयुक्त गमम वसता जायु (वर) कर लिपटा हुआ माताके भक्षणसे उत्पन्न केटमा छारकर सहित सीत दुर्गेष रसको पीता है ॥ ७२३ ॥

तान दुन्य राज्य नाज वृ ॥ ७२२ म मंसद्विसं भवसकहिरचम्मपित्तंतमुत्तक्कणिपकुर्ति । बहुदुक्सरोगभाषण सरीरमसुर्भ वियाणाहि ॥ ७२४ मातासिक्षेत्रमवताकपिरचर्मपित्रांत्रमृत्रकृणिपकृटी ।

भासास्यरुप्त्यसारायस्यानय्वानयुन्युन्यस्य । बहुदुःस्रोगमाननं ग्रीसमुगं विज्ञानीहि ॥ ७२४ ॥ अर्थ—मास हाड करू नेद लोही चाम पिव जात मूत्र मल

इनका पर, बहुत दुःल और रोगोंका पात्र पेसे शरीरको तुम अञ्जुनि जानो ॥ ७२४॥ अस्यं कामसरीरादिगंपि सन्वमसुभक्ति णाजण ।

णिविवज्ञंतो झापसु जह जहसि कलेवरं असुइं॥७२५ अर्थ कामग्रतीरादिकमपि सर्वमशुममिति झाला ।

जर्य कामरारातिकाम चनगडुनामात ज्ञारा । निर्वेद्यमानः ध्याय यथा जहासि कलेवरं अञ्चाचि ॥७२५॥ जर्थ—स्त्री वस्त्र धनादि मैधन शरीरादि ये सभी अञ्चम ह देगा जानकर वैराग्यको माध हुआ तु बैराग्यका इसतरह ध्यान-कर जिम सरह अशुनि (अपवित्र) इस शरीरको छोड़ दे ७२५ मोस्ण जिणवन्यादं धम्मं सुहमिह दु णस्थि लोगम्मि। ससरासरेस तिरिएस णिरयमणुपस चिंतेचो ॥७२६ प्रक्रमा जिनाच्यावे धर्मे धुममिह त नास्ति स्रोके। रामुरामुरेषु विर्पेधु नरकमञ्जेषु चिवयेतु ॥ ७२६ ॥ अर्थ--- मुर अमुरी सहित तिर्वेच नरक मनुष्य इन गतियों में जिनभगवानकर उपदेशित धर्मको छोड़कर ठोकमें अन्य कोई भी कस्याणकारी नहीं है। इस जगतने आरमाका हितकारी जिन्हामी द्या है देसा चितवन करे ॥ ७२६ ॥ अब आसवानुषेक्षाको कहते हैं;---दपस्त्रभयमीणपउरे संसारमहण्णवे परमघोरे । जेत जं तु णिमञ्जदि कम्मासपहेदुयं सच्चं ॥७२७॥ दःखभयमीनप्रचरं संसारमहार्णवे परमधीरे । जंतः यत्त निमज्जति कर्मास्रवहेतकं सर्व ॥ ७२७ ॥ अर्थ-द:स भयरूपी मत्स जिसमें बहुत हैं ऐसे अत्यंत

भयंकर संवार सप्रदर्भ यह माणी निसकालिसे जुनवा है वही सन क्लीसबका काल है ॥ ७२० ॥ रागो दोसी मोहो इंदियसण्या य गारवकसाया । मणचयणकायसहिदा हु आसवा होति कन्मस्स ॥ रागः देशः भोहः इन्द्रियसंग्राथ गारवकरायाः ।

रागः द्वेषः मोदः इन्द्रियसंज्ञाथ गोरवकपायाः । मनोवचनकायसदिवास्तु आसवा भवंति कर्मणः ॥ ७२८॥ अर्थ-स्था द्वेष मोद पांच इन्द्रिय आहारादि रांज्ञा ऋदि २६८

आदि गीरव कोघादि कपाय मन वचन कायकी किया सहित वे सव आसव हैं इनसे कर्म आते हैं ॥ ७२८ ॥ रंजेदि असुहकुणपे रागो दोसोवि दूसदी णिर्छ। मोहोबि महारियु जं णियदं मोहेदि सब्भावं ॥७२९॥

मुलानार-

रंजयति अशुभक्षणपे रागो देपोपि देषि नित्यं। मोहोपि महारिपुः यन्नियतं मोहयति सद्भावं ॥ ७२९ ॥ अर्थ-राग इस जीवको अगुम मलिन घिनावनी बसुने धनुराग (प्रीति) उपजाता है, द्वेष भी सम्यन्दर्शनादिकोंने द्वेष (अमीति) उपजाता है और मोह भी महान वेरी है वो कि

हमेशा इस जीवके असली खरूपको भुलादेता है विनाध करता है ॥ ७२९ ॥ धिद्धी मोहस्स सदा जेण हिदन्थेण मोहिदो संतो।

णवि युज्झदि जिणवयणं हिदसिवसुहकारणं मरगं ॥ धिक धिक मोहं सदा येन हृदयन्थेन मोहिनः मन्। नापि बुध्यते जिनवचनं हितशिवमुखकारणं मार्गम्।।७३०

अर्थ-मोहको सदाकाल धिकार हो धिकार हो क्योंकि हद-यमें रहनेवाले जिसमोहसे मोहित हुआ यह जीव हितकारी मोक्ष-सुखका कारण ऐसे जिनवचनको नहीं पहचानता ॥ ७३० ॥

जिणवयण सदहाणोवि तिव्यमसुहगदिपावयं कुणइ। अभिभूदो जेहिं सदा धित्तेसिं रागदोसाणं ॥७३१॥ जिनवचनं श्रद्धानोपि तीत्रमशुभगतिपापं करोति।

अभिभूतो याभ्यां सदा धिक्र ती रागद्वेपी ॥ ७३१ ॥ अर्थ---यह जीव जिन रागद्वेपीकर पीड़ित हुआ जिनवचनका श्रद्धान परता भी सवा अग्रभगतिका कारण तीन्न पापको करवा है इसलिये उन रागद्वेषीको पिवार हो ॥ ७३१ ॥ अणिष्ठदमणसा एदे इंदियविसया णिगेण्डिह् दुक्खं। मंतोसहिंहीणेण व दुटा आसीविसा सप्पा ॥ ७३२ ॥

अतिभृतमनसा पतान् इन्द्रिपविषयान् निमुद्दीतुं दुःखं । मंत्राप्यदीनेन इव दुष्टा आदीविषाः सर्पाः ॥ ७३२ ॥ अर्थ—प्रधामनके विना इन रूप सस आदि इन्द्रियविष-योके रोकनेको समर्थ नहीं होसकते । जैसे मंत्र आपिषकर होन

योंके रोकनेको समर्थ नहीं होसब्ही । 'वेसे मंत्र बोपिकक होन दुरुर दुह आशीवित सर्थोंको यहा नहीं कर सकता ॥ वेस ॥ रिप्तोसिर्मिद्याणं जेसिं ससदो दु पायमज्ञणिय । पायदि पायविवागं दुक्तकार्णतं प्रश्रगदिस्तु ॥ ७३३ ॥

धिरु तानि इन्द्रियाणि येषां वज्ञवस्तु पाषमञ्जीयत्वा । प्रामीति पाषिपाकं दुःदमनंते चृतिविष्ठु ॥ ७३३ ॥ अर्थ—उन इन्द्रियोंको भिदार हो जिन इन्द्रियोंके वद्य दुआ यह जीव पाषका उपार्थन करके उस पाषका फळ जो चारों गतियोंने अनंत दुःस उसे पाता है ॥ ७३३ ॥

गतियोमें वर्नत दुःस उमे पाता है ॥ ७३२ ॥ सण्णाहि मारयहि अ गुरुजो गुरुगं तु पायमञ्जलिय । तो फरमभारगुरुजो गुरुगं दुष्त्यं सम्ग्रुभयदि ॥७३४ संज्ञाभः गौरवय गुरुगुरुकं तु पापमविस्ता ।

ततः फर्ममारगुषः गुष्कं दुःखं समसुभवति ॥ ७३४ ॥ अभ्य-आहार्यादं संज्ञा जीर तीन भीरगेष्ट व्यति मारा अभ्यद् तोन महा पाषके उपार्वन करके स्थात् कर्मस्या भारते वृद्धकारा स्थानित इसको भीराता है ॥ ७३४ ॥ 300

कोषो माणो माया होनो य इरासवा कसावरिक। दोससहस्सावासा दुक्चसहस्साणि पावंति ॥ ३६५॥ क्रोधः मानः माया होमध दुराथयाः क्यावरिपनः । दोपनहस्रावासाः दुःसमहस्राणि प्रापपंति ॥ ७३५ ॥

अर्थ-दृष्ट है आवंबन जिनको, हवारो दोपोर्क नियन पेसे क्रोप नान नाया टोन ने बार इयावहरी युद्र दोनेंग्रे

हवारी दुःस माप्त करते हैं ॥ ७३५ ॥

हिंसादिएहिं पंचहिं आसपदारेहिं आसपदि पार्व । तेहिंतो पुच विणासी सासवणावा जह समुदे॥३३६॥

च्छ देनेश्रम दिवस्त हरना चाहिते ॥ ७६०॥

हिंसादिनिः वंचनिः आसरदारैः आसरति वार्ष ।

वेभ्यो धर्व विनाद्यः मासरनीः यथा सब्द्रे ॥ ७३६ ॥

न्अचार-

अर्थ-दिसा असत्य आदि पांच आमर्थे के द्वारक परहने

भाता है और उन भागरोंने निधवहर बीरोंडा नास होता है. भैने छिद्रसहित नाव मसुदर्भे इब बाती है । इमीतरह बगास-बोंने जीवनी संस्तरमञ्जूने द्वस्य है ॥ ७३६ ॥

एवं पहुष्पपारं कम्मं आसवदि दुइमद्वविहं । णाणावरणादीयं दुवनविवागंति चितेञ्जो ॥ ३१० ॥

एरं बहुप्रधारं धर्मे भाषत्रति दृष्टमप्रतिर्थं । शनारम्बादिङं दुःगरिवाहबिति वितरेत ॥ ०२०॥

अर्थ—इप तरह जाना समादि आठ नेदारत तथा प्रमानेहीने बहुत मधार दुष्ट कर्न जाते हैं हवाँ हैं। उस क्रमाँगरकी रूपि

आगे संबरभावनाको कहते हैं;--तम्हा कम्मासवकारणाणि सन्वाणि ताणि रुर्भिज्ञो । इंदियकसायसण्णागारवरागादिआदीनि ॥ ७३८ ॥ वसात कर्मासवकारणानि सर्वाणि वानि रोधयेत । इन्द्रियकपायसंद्रागीरवरागादिकादीनि ॥ ७३८ ॥

अर्थ-इसलिये जो कर्मासवके कारण इन्द्रिय क्याय संज्ञा गौरव रागादिक हैं उन सबको रोके ॥ ७३८ ॥ रुदेसु फसापेसु अ मूलादो होंति आसवा रुदा।

इन्मत्तिक णिरुद्धे यणिम्म णावा जह ण एदि॥७३९ रुद्रेषु क्यायेषु च मूलात् भवंति आस्रवा रुद्धाः । दुर्वहृति निरुद्धे यने नीः यथा न एति ॥ ७३९ ॥

अर्थ—कपायोंके रोकनेसे मूळसे ठेकर सभी आसव रुक जाते हैं । जैसे छिदको रोकनेसे नाव पानीमें नहीं हुवसकती ॥ इंदियकसायदोसा णिग्घिप्पंति तवणाणविणएहिं ।

रजाहि णिधिष्पंति हु उप्पहगामी जहा तुरया ॥ ७४० इन्द्रियकपायदोपा निग्रदांते तपोझानविनयः।

रज्ञुभिः निगृदंवे राहु उत्पथमामिनो यथा तुरमाः ७४० अर्थ-इन्द्रिय कपाय और द्वेष ये तप ज्ञान और विनयसे रोके जाते हैं, जैसे कुमार्गमें जाते हुए घोड़े छगामसे रोक दिये जाते हैं ॥ ७४० ॥

मणवयणकायगुर्त्तिदियस्स समिदीसु अप्पमत्तस्स । आसवदारणिरोहे णवकम्मरयासवी ण हवे ॥७४१॥

मनोवचनकायगुर्हेद्रियस समितिषु अप्रमचस ।

२७२ मुलाचार⊶

आसवद्वारनिरोधे नवकर्मरजास्रवो न भवेत् ॥ ७४१ ॥ अर्थ---मन बचन कायकर जिसने इन्द्रियोंको रोक लिया है और जो ईर्या आदि समितियोंके पालनमें प्रमादरहित है ऐसे चारित्रयुक्त मुनिके आसवद्वारके रुक जानेपर नवीनकर्मीका आसर नहीं होता ॥ ७४१ ॥

मिच्छत्ताविरदीहिं य कसायजोगेहिं जं च आसवदि। दंसणविरमणणिग्गहणिरोधणेहिं तु णासचदि ॥७४२ मिथ्यात्वाविरतिभिः च कपाययोगैः यच आस्रवति ।

दर्शनविरमणनियहनिरोधनस्त न आस्ववति ॥ ७४२ ॥ अर्थ--मिथ्यात्व अविरति कपाय योग इनसे जो कर्म आते हैं वे सन्यन्दर्शन विरति कपायनिमह योगनिरोध इनसे यथाक्रम-कर नहीं आते ॥ ७४२ ॥

संवरफलं तु णिब्बाणमिति संवरसमाधिसंजुत्तो । णिगुजुत्तो भावय संवर इणमो विसुद्धप्पा ॥ ७४३ ॥ संवरफलं त निर्वाणमिति संवरसमाधिसंयक्तः ।

नित्योद्यक्तो भावयसंवरमिमं विद्यद्वात्मा ॥ ७४३ ॥ अर्थ-संवरका फल मोश है इसकारण संवरके ध्यानकर सहित हुआ, सबकाल यनमें लगा पैसा निर्मल आत्मा होने हव

संवरका वितवन कर ॥ ७४३ ॥ आगे निर्जरानुपेक्षका वर्णन करते हैं;---

रुद्धासुवरस एवं तवसा जन्तरस णिज्ञरा होदि l दुविहा य साबि भणिपा देसादो सञ्बदो चेप ७४४

रुद्रासवस्य एवं तपसा यक्तस्य निर्जेस भवति । डिविधा च सापि भणिता देखतः सर्वतर्धव ॥ ७४४ ॥ अर्थ-इसप्रकार जिसने आसवको रोक्छिया है छार जी सपकर सहित है ऐसे मुनिक कर्मीकी निर्वत होती है वह निर्वत प्रकृतेश सर्वदेश पेसे दो प्रकारकी है ॥ ७५४ ॥ संसारे संसरंतस्य ज्ञोयसमग्दस्य कम्मस्य । सब्वस्सवि होदि जमे तवसा पुण णिजरा विउद्धा ७४५

संसारे संसरतः धयोपग्रमगतस्य कर्मणः ।

सर्वसापि भवति जगति तपसा प्रनः निर्जस विष्ठल ७४५ अर्थ-इस जगतमे चतुर्गतिरूप संसारमे अगण बरते सभी जीवोंक संयोपशमको मास फर्मोंकी निर्शत होती है यह वक्टेश निर्जत है । और जो तपसे निर्जरा होती है यह सकलिर्जत है ॥ जह पार पम्मंती सुरक्षदि सी अभिगणा र संत्रती । त्तवसा तथा विसाउझदि जीवो फम्मेडि कणवं च अपर यथा पातः प्रम्यमानः शप्यति सः अप्रिना त संतप्तः ।

वयमा तथा विद्यापाति जीवः कर्मभ्यः कनकमिर ॥ ७४६ अर्ध-असे सबर्णपापाण धमाना हुआ अभिसे तपाचा गया कीशदिमलरहित होके शब होजाता है उसीतरह यह जीव भी तपस्त्वी अधिसे तपाया गया कभीते रहित होके शुद्ध होजाता है।। ७३६।। णाणवरमास्दलदो सीलपरसमाधिसंजनज्जविद्रो। वहरू नवी भववीयं नणकहादी जहा अग्गी ॥ ५४५॥

मानवरमास्त्यपुर्व शीलवरसमाधिसंयमोञ्चलितं ।

दहति तपो भववीनं तृणकाष्टादिं यथा अग्निः ॥ ७४७

मुलाचार-

२७४

अर्थ-- जानस्ती प्रचंडपवनकर सहित, शील उपनसम् संयम इनकर प्रश्नतित जो तप वद संसारके कारण कर्ने मस्स करदेश हैं। जैसे अग्रि, तृण काठ आदिहो भस्स करडार है।। ७४७॥

चरकालमञ्जदंषि य विद्वापदि तयसा रयसि णाज्य दुविहे तयमिम णियं भावेदच्यो हयदि अप्पा ॥७४ पिरकालमर्वितमपि च िपृतीति तपसा रज इति सारा जिमेशे तपसि निरंबे भारितच्यो भारति जातम ॥७४८

अर्थ-वतुतकारका संबव किया तुआ भी कमें तभी है। होजाता है पेसा जानकर दोपकारके सपने आस्त्रा निर्देश आ योख है।। ७४८।। णिकारियसच्यक्तकारो जादिजरामरणयंभणविनुको।

पार्वाद सुक्लमणंतं जिञ्चरणं तं मणति कुञा॥२४९ निर्माणन्येवनी जातिज्ञसम्ब्यपेयनीयुक्तः। प्राचीति सुरामनंते निर्माणं तम्मनीत कृपाद ॥ ५४९ ॥

आधान गुरामनन हिन्दाल तरमनानि हुयान् ॥ ७४९ ॥ अर्थ-- अर्रोठ नार्ट्स सन फोल्ड रहिन, नम्म नयः मरण्डा भीनो ४८ रहिन तुना जनुरुतुम्हो पास है दूस्रीरने सनते निर्वय स्टेनना दिन्दन हस्ता जातने ॥ ७४४ ॥

घण्णा नं परिवण्णा विसुद्धमणसा तमे प्रथुपा॥४० सरिवानो स्टिस्तो धरोः तीर्वस्रीः आध्यानः। धन्यास्तं प्रतिपन्ता विशुद्धमनसा जगति मनुजाः ॥७५०॥ अर्थ—सन भव्यजीवींका हितकारी उत्तमक्षमादि धर्म तीर्थकर भगवानने उपदेशित किया है, उस धर्मको जो मनुष्य शुद्धवितसे प्राप्त हुए हैं वे जगतमें पुष्पवान् हैं ॥ ७५०॥

जेणेह पाविदव्यं कछाणपरंपरं परमसोक्खं । सो जिणदेसिद्धममं भावेशुववज्ञदे पुरिसो ॥ ७५१॥ वेनेह प्राप्तव्यं कल्याणपरंपरां परमसाल्यं ।

स जिनदेशितं धर्मं भावेन उपपयते पुरुषः ॥ ७५१ ॥ अर्थ-इस संसारमें जिल जीवडो फल्याणकी परंपसवाटा परम सुरव मास होना है वही जीव तीर्थकर उपदेशे हुए धर्मको

भावसे सेवन करना है थद्धान करता है ॥ ७५१ ॥ खंतीमह्यअञ्चयलाघयनवसंज्ञमो अर्किचणदा।

तह होइ बद्धाचेरं सर्व चागो य दसधम्मा ॥ ७५२ ॥ भ्रांतिमार्दवार्ववरासंयमाः अक्तिचनता ।

तथा भवति ब्रह्मचर्यं सत्यं त्यागश्च दश्यभाः ॥ ७५२ ॥ अर्थ--- उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव शौच तुत्र संयम आर्थिजन्य

ब्रह्मचर्ये सत्य त्याग वे दश सुनिपर्गके भेद हैं ॥ ७५२ ॥ उचसम दया य खंती वहुइ वेरम्मदा य जह जहसी। तह तह य मोक्ससोक्सं अक्सीणं भावियं होइ७५३

 २७६ मुलाचार-जाते हैं वैसे वैसे इस जीवके अविनाशी मोक्षमुस अनुभा गोना

होवा जाता है॥ ७५३॥ संसारविसमदग्गे भवगहणे कहवि मे भमंतेण। विद्वी जिणवरविद्वी जेही भम्मोत्ति चितेन्नो ॥७५४॥

संसारविषमपूर्व भागहने कथमपि मया अमता। इप्टी जिनपरविद्यो ज्येष्ठी धर्म इति चित्रयेन ॥ ७५४ ॥ अर्थ-वनपरावर्तनस्य मसारकर जिसका मार्गे विषम है पेने महानमें भगण करते तुष मैंने पढ़े कथ्रमे जिनदेवकर उपदेश मद्भार भर्मे पापा पेसा चिनान करना चाहिये ॥ ७५४ ॥ આવે નોધિ દર્તનાનવેશા કો જાતતે હૈં:---

मंगारिक अणंत दीवाणे बुद्धमं मणुस्मशं । जनमधिलामंजीमी लयणमम्हे जन्ना ग्या ॥ ७५५॥ संसारे अनंते जीवानी श्लेने मन्छवर्त । युवविक्रजानेवीवी जाणगम्हे वेचा वर ॥ अस्र ॥

अर्थ--इस अना संवास्त्रे जीतीक सनुभावन्त्रका विकती વૈના દુર્દન તે તેમનું અસ્થમમુત્રને પણ શિદ્ધ મહિલાકા સંબંધ ! નવાર બન્દ્ર હુલ અનુનાની તો કહ્યા હાલા આર પશ્ચિમ મામની ब्हर्न सं अल्ड अर उन सानसङ्घात्रेष्ठ छ हो प्रोध होता

क्रुट्रन हुउँन है इवालाई संभाग जानना ॥ ७५५ ॥ **હૈં** વસ દુન્ક મમસ્ત્રને આજ આતેમાં નીવિવ વિજા**ો** () स्वर्ण गर्र्ण पदि चारणा य प्रदेशि द्वहा लीप 👭

देशहरुक्तमभूषे जालुर जागेर्स्य विवे विनयर (व्यक्त प्रदान परितः साम्या च व तिव दनेना वाहास्परी

अर्थ-किसी तरह मनुष्य जन्म भी मिल गया तौभी आर्थ-देश, शुद्ध कुटमें जन्म, सर्वीगपूर्णता, नीरोगता, सामर्थ्य, विनय, आचार्योका उपदेश, उसका प्रहण करना, चितवन करना, धारणा रखना-ये सब आगे आगेके कमसे छीकमें मिछने अतिकठिन हैं॥ रुद्धेसुवि एदेसु अ बोधी जिणसासणिक्ष ण ह सुरुहा। कुपहाणमाकुछत्ता जं वितया रागदोसा य ॥ ७५७॥ रुन्धेप्यपि एतेषु च बोधिः जिनशासने न हि सुरुभा । कुपथानामाकुलत्वात् यत् विष्टा रागडेपा च ॥ ७५७ ॥ अर्थ-पूर्वकथित मनुष्यजन्म आदिके मिलनेपर भी जिनमतमें कही गई सम्यम्दर्शनकी विशुद्धिका पाना सुलभ नहीं है अति दुर्छम है क्योंकि कुमार्गोकी आकुलतासे यह जगत् आकुल होरहा है। उसमें राग द्वेप ये दोनों वडवान हैं॥ ७५७ ॥ सेयं भवभयमहणी वोधी गुणवित्धडा मए छदा। जिंद पडिदा ण हु सुलहा तथा ण व्यमं प्रमादी मे ७५८ सेयं भवभवमधनी बाधिः गुणविस्तृता मया रुन्था । यदि पतिता न खलु सुलभा वसात् न धमः प्रमादी ममण्५८ अर्थ-संतारके भवको नाश करनेवाठी सब गुणोकी आधार-भूत सो यह बोधि अब भैने पाई है जो फदाचित् संसारसमुद्रमें हाथसे छटगई तो फिर निध्यकर उसका मिलना मुलभ नहीं है इसलिये मुझे भोधिमें प्रमाद करना टीक नहीं है ॥ ७५८ ॥ दुछहरु।हं रुद्रुण घोषिं जो गरी पमादेखो । सो पुरिसो कापुरिसो सोयदि कुगदि गदो संतो ५५९ दर्लभलामां लब्ध्वा बीपिं यो नरः प्रमायेत् ।

पाप्त होजाता है ॥ ७६० ॥

अर्थ-जिसका मिलना कठिन है ऐसी बोधिको पाकर जो मनुष्य प्रमाद करता है वह पुरुष निंदनीक पुरुष है जीर वह नरकादि गतिमें प्राप्त हुआ दुःखी होता है ॥ ७५९ ॥ उचसमन्त्रयमिस्सं वा बोधिं छन्**ण भवियपुंडरिओ ।** तवसंजमसंजुत्तो अक्खयसोक्खें तदा रुहाँदे ॥७६०॥ उपशमक्षयमिश्रां वा बोधि लब्ब्बा भव्यपंडरीकः । तपःसंयमसंयुक्तः अक्षयसीख्यं तदा लभते ॥ ७६० ॥ अर्थ-पांचवी करण लिथके बाद उपराम क्षयोपराम क्षायिक सम्यक्तवरूप बोधिको यह उत्तम भव्यजीव पाता है फिर उस समय तप सयमकर सहित हुआ कर्मीका नाशकर अधिनाशी सुसकी

तद्या अहमवि णिचं सद्धासंवेगविरियविणएहिं। अत्ताणं तह भावे जह सा बोही हवे सहरं॥ ७६१॥ तसात अहमपि नित्यं श्रद्धासंवेगवीर्यविनयेः। आत्मानं तथा भावयामि यथासा बोधिः भवेत सुचिरं७६१ अर्थ-जिसकारण ऐसी बोधि है इसलिये में भी सबकाल

श्रद्धा धर्मोनुराग शक्ति विनय इनकर आत्माको इसतरह भाजे जिससे कि यह बोधि बहुतकालतक रहे ॥ ७६१ ॥ योधीय जीवद्वाद्याह बुज्झह हु णववि तचाहं। गुणसपसहस्सकलियं एवं मोहिं समा झाहि ॥७६२॥ योध्या जीवद्रव्यादीनि बुध्यंते हि नवापि तत्त्वानि ।

गुणश्वसहस्रकितां एवं बोधि सदा ध्याय ॥ ७६२ ॥

अर्थ---इस बेधिसे जीवादि छह प्रस्य नी पहार्थ जाने जाते हैं इसिटिये टक्षी भुजीबर युक्त ऐनी बोधिको तुम सब काळ चित्रवन करी॥ ७६२॥

द्वार ये प्रभावणाओं एवं संस्ववदो समुद्दिहा । जिणवरणे दिहाओं कुप्रजणसरमाराणणीओ ॥७६३॥ द्वा हे प्रभावना एवं मंद्रेषतः मनुदिश । जिनवपने एश पुप्रजनवर्गम्यजनन्यः ॥ ७६३ ॥

अर्थ-भन इमावता महिवसे ये बाग्द भावता कहीं दें जो बिनवरनामें हो देखी गई दें अन्यजगद नहीं और विवेकी पेटि-मीक बेरायके उराज करनेवाठी दें ॥ ७६३ ॥

अणुषेयन्याहि एवं जो असाणं सदा विकायदि । सो विगदसञ्चयन्यो विमटो विमटास्यं सहदि ७३४ अनुवेशानिः एवं यः आमानं यदा विभागति ।

स विमानपंत्रमी विमरो विमराठ केमने ॥ ७६४ ॥ अर्थ—स्वपदार अर्थुक्षाओंदर जो पुरूष सरादाक आत्मादी भारता है यह पुरूष स्वयपीरहित निर्मेत हुआ निर्मेत मोक्षसा-नो पाता है॥ ७६४ ॥

झाणाई कवियकस्मा मोक्सम्यलमोडया विगयमोहा। ते मे तमरयमहणा तारंतु भवाहि उहुमेव ॥ ७६५॥ ५वातः धृषितकर्मणः मोक्षगंत्रमोटका विगवमोहाः । वे मे वमेरजोमधनाः वारंतु भवात् उपु एव ॥ ७६५॥

अर्थ—जिनोंने ध्यानकर कर्मोंका क्षय किया है जो मोक्षकी

२८० म्हाचार-धर्मरुके छेदक हैं मोह रहित हैं मिय्याल ज्ञानावरणी दर्शनावरणी-कर्मिक विनाशक है ऐसे सिद्ध हमें संसारसे शीव ही तारो॥०९५

जह मज्झ तक्षि काले विमला अणुपेहणा भवेजण्हु । तह सबलोगणाहा विमलगदिगदा पसीदंतु ॥ ७६६॥ यथा मम तसिन् काले विमला अनुप्रेक्षा भवेषुः ।

तथा सर्वलोकनाथा विमलगतिगताः प्रसीदंतु ॥ ७६६ ॥ अर्थ—जिसतरह अंतसम्बमं मेरे बारह अनुभेक्ष निर्मल हो उसतरह निर्मलगतिको मात्र हुए सक्लोकके सामी सिद्ध भगवान सुक्षपर प्रस्तर हो ऐसी मार्थना में करता हो ॥ ७६६ ॥

इसप्रकार आचार्यश्रीषटकोरिवरिषत मूलाचारकी हिंदी-भाषाटीकार्में बारह अनुप्रेक्षाओंको फहनेवाला आठवां द्वादशानुमेक्षाधिकार समात हुआ ॥ ८ ॥

अनगारभावनाधिकार ॥ ९ ॥

आगे मंगलचरणपूर्वक अनगारभावनाको कहते हैं.— चंदिसु जिणचराणं तिहुचणज्ञयमंगाटोचचेदाणं । फंचणपियंग्रविहुमयणज्जेदमुणाट्यकः।।णं ॥ ७३७ ॥ अणयारमहरिसीणं णाईवणरिवहंदसहिदाणं । चोच्टामि विविहसारं आवणसुरतं गुणमहर्त्रा॥ ७३८॥ चंदिता जिनवरान् विश्ववनव्यमंगरीपंतान् ।

कांचनप्रियंगुविद्दमपन्द्वंदमृणालवर्णान् ॥ ७६७ ॥ अनगारमहर्पीणां नागेंद्रनरेद्रेद्रमहितानां । वस्यामि विविधमारं भावनायुत्रं गुणमहत् ॥ ७६८ ॥ अर्थ--तीनलोक्ने जयलक्ष्मी और पुण्य इन दोनोंकर सहित तथा सबर्ण सरसोंका फूल मूंगा रमणीक मेपकुद पुष्प कमलनाल इनके समान रंगयुक्त शरीरवाले ऐसे जिनेद देवींकी नमस्कारकर नागेंद्र चरुवर्ती इद इनकर पूजित ऐसे गृहादि परिमहरहित महा-मुनियोंके गुणोंकर महान् सब शाखोंने सारभृत ऐसे भावनामूत्रको मै पहता हं॥ ७६७-७६८॥ हिंगं वदं च सुद्धी वसदिविहारं च भित्रन णाणं च। उज्झणसुद्धी य पुणी वर्ष च तवं तथा झाणं॥७६९॥ एदमणयारसुत्तं दसविधपद विणयअत्थसंजुत्तं । जो पदड भत्तिजुत्तो तस्स पणस्संति पाचाई॥७७०॥ हिंगस्य व्रतस्य च ग्रुद्धिः वमतिर्विहारश्च मिथा ब्रा**नं** च । उन्झनशुद्धिः च पुनः गार्यं च तपः तथा ध्यानी।७६९॥ एतानि अनगारख्याणि दशविधपदानि विनयार्थसंयुक्तानि। यः पठति भक्तियुक्तः तस्य प्रणक्ष्यंति पापानि ॥ ७७० ॥ अर्थ-- टिंगकी शद्भि, वतशद्भि, यसतिशद्भि, विहारशद्भि, मिक्षागृद्धि, ज्ञानगुद्धि, उन्हानगुद्धि, वाक्यगुद्धि, तपगुद्धि और ध्यानशृद्धि । ये दसपदवाले विनय अर्थकर सहित अनगारसूत्र हैं: इनको जो भक्ति सहित पढता है उसके पाप नष्ट होजाते ર્દ્વે 🛮 હદ્દલ–૭૭૦ 🖠 णिस्सेसदेसिद्मिणं सुत्तं धीरजणयहुमद्मुदारं ।

म्बानार-

अजगारभाजणमिणं सुसमणपरिक्रिशणं सुणहाः

२८२

निभ्नेपदेशकानि इमानि ध्रपाणि धीरमनवदुनगानि उद्दाराणि अनगारभावनानीमानि मुधमणपरिक्रीर्गनानि भूणुगी००६ अर्थ—ने सूत्र गुआगारशिक्षांके कदनेगारे हैं, स्वपर्यारे

इन वर्गे ॥ ५५१ ॥ विष्यंप्रधानस्मीर्गे अभागस्मिरसमुसिगुसार्गे । विर्धित्य र्धमारतार्गे वोस्वासि मुगे मुगपरार्गे॥३५३॥ विर्धासपूर्णेमी अनगस्यविष्युक्तिमुग्नाम् ।

क्रों है बहुत मान्य हैं, समीदिक के देने बादे हैं उत्तवपुती वीकी क्रों के करने बादे हैं पैसे इन अनुमारमा बनाय ही क्रों भी साधारी है

अर्थ — बनाति के बाति संविधि विश्व विकास तेष महीके लाका, भूता है प्रतिकृति मेर्न प्रतिमद्द स्तृत मनुष्युनियों हैं भूति की विद्वास १००८ प्रतिकृति ।

કૈલ ત્વનકાનવની વસ્તામિ મુળાનું મુખબલબાણ 🛭 અમે🖰

નક . હહા દૂધ કર રે ફેંટન - બન્ક્ચવન્ટ હોલ્ડિફીનમે મા દેખ લાગુલસગલદારે છે - દેખ ન્યુગ કાનનોલક પ્રદેશનિય વર્ચોદ્રદ્દેવ વિભાગ 24ી - દેબન્સ 2ક્ચન્ટીનમાં વર્ષ નુભનગળનાનિ દ્રવેન 4 હામે 4ી

જન્મ ના મુખ્ય દિવસ જાણા વિદ્વાર્થો છે. કરક પ્ર જ્યાર સંસ્થાર પ્રાપ્ત ન્યુપ્યાનપૂર્ણ છે. ક્યાર જેને લાં અનુવાન પ્રાપ્ત છે. કર્મ છે.

જેના પ્રાથમિક કર્યા છે. તિને, પાનુનામાં દુધ પ્રાથમિક પ્રાથમિક કર્યા છે. જેલ્દિન પ્રાથમિક ક્ષેત્ર પ્રાથમિક માથે પ્રાથમિક अर्थ—अस्मिर नाग्नसहित रस जीवनको जीर परमार्थरहित इस मनुष्यबस्मको बातकर सी आदि उत्तमीग तथा भीवन आदि भोगोसे अनिव्यापाहित हुए, निर्मपादिसरूप चारियमें इद दुदि-बाठ, परके रहनेसे दिरक निचवाठे ऐसे सीरपुरूप भीगों आये फूठोंकी तरह गाय थोड़ा आदि धन सीना इनहर परिपूर्ण ऐसे बांधव बनोंको छोड़ देते हैं ॥ ७०३।००३ ॥

वायव वनाका का हु पत् हु । जडराजड ॥ । ? जम्मणमारपुण्डिया। भीदा संसारवासमसुभरस । रोचंति जिणयरमदं पवयणं बहुमाणस्त ॥ ७७५ ॥ जन्ममरणोदिया भीताः संसारवासे अञ्चमद् । गर्यत्रे जिनवरमतं प्रयचनं वर्षमानसः ॥ ७७५ ॥ वर्षम्—अम जार मण्यो केवित वथा सतार वासी द्रास

अर्थ—अम्म जाँर मरणसे कंषित तथा सत्तार वासमें दुःससे भयभीत शुनि श्रुपादि जिनवरके मतझी वर्षमान सामीके द्वादशांव चतुर्दरा पूर्वसरूप शत्त्वनकी श्रद्धा करते हैं ॥ ७७५ ॥ १) पयरयरघम्मतित्यं जिणवरयसहस्स यद्वमाणस्स ।

तिबिहेण सहर्हित य णित्य हदो उत्तरे अण्णा॥७३६॥ प्रवरवरधर्मतीयै नितवरहुपभरा घपैमानसः। विविधेन श्रद्धाति च नासि इत वरमस्यत्॥। ७७६॥ अर्थे—हुपगदेव व महातीर सानी इन सन तीर्थकरीक अति श्रेष्ठ धर्मत्यो तीर्थको मनवचनकायती शदाती श्रद्धान करते हैं।

अथ्—इपनरेव च महावीर सानी हर सब तीथकरीके श्रति
श्रेष्ठ धर्मारूपी तीथेके मनवचनकावनी ग्रुदतासे श्रद्धान करते हैं।
वर्षोर्क इसर्तार्थि अध्यक अन्यतार्थ कोई नहीं है। १०६ ॥
)) उच्छाहणिच्छिदमदी चयसिद्वयसायपद्धकच्छा य ।
भावाणुरायरत्ता जिणारणणत्ताम धम्मिम ॥ ७५०॥
उत्सादिनिध्वमतयो व्यवसिद्ययसायपद्धकच्छा ।

भावानुरागरक्ता जिनप्रवृत्ते धर्मे ॥ ७०० ॥ अर्थ— वपमे तक्षीनहोनेमं जिनकी बुद्धि निश्चित्त है निर्होने पुरुषार्थ किया है कर्मके निर्मृत (नावा) करनेमं जिनोंने कमर क्सी है और निनदेन कथित धर्ममें गरमार्थमूत मक्ति उसके भेगी हैं ऐसे मुनिर्वोक कियागुद्धि होती है ॥ ७०० ॥ धम्ममायान्तर सिमं कम्ममायान्तर सिमं

मुलाचार-

संवेगजायसङ्गा गिण्हंति महत्व्वदा पंच ॥ ७०८ ॥ धर्ममनुत्तरिममं कमेमलपटलपाटकं जिनास्वातं । संवेगजातश्रदा एक्षति महावतानि पंच ॥ ७०८ ॥ अप-यह अद्वितीय जिनदेव कथित धर्म ही कमेमल समृहं विनास करनेमं समर्थ है जो धर्म धर्म करने हर्ष होनेसे उत्तन श्रद्धा सिहत है वे ही समुरून इस धर्मको महण करते हैं तथा

श्रद्धा सहित है व ही ससुरत इस धमकी श्रहण करते हैं व पांच महामतोंको पारुते हैं ॥ ७०८ ॥ सचयपणे अहिंसा अदत्तपरियञ्चणं च रोचंति । तह धंमचेरगुर्त्ति परिग्गहादो विमुत्ति च ॥ ७०९ ॥

सत्यवनने अहिंसा अद्चपियर्जनं च रोचंते। तथा ब्रह्मचर्यगुर्सि परिब्रहात् बिम्रक्ति च ॥ ७७९ ॥ अर्थ—सत्यवचन अहिंसा 'चथीरे' ब्रह्मचर्यका पाटन ऑर रिम्हत्साय दन पांच महाजीको अच्छी तरह चाहते हैं। ७००॥ गणिकड ममाधार्य अदन मेटण परिचाह चेव ।

परिमहत्याग रन पांच महामतीको अच्छी ताह चाहते हैं ॥७०९॥ पाणियह मुसाचादं अदत्त मेहुण परिगमहं चेव । तिचित्तेण पडिकंते जायज्ञीवं दिवधिदीया ॥ ७८० ॥ प्राणियधं मुगायादं अदत्तं मेथुनं परिग्रहं चेव । त्रिपिधेन प्रतिकामंति यावजीवं स्टब्स्यरः॥ ७८० ॥

अर्थ-स्ति बुद्धिपाले साबु हिसा सुठबोठना घोरी मैधून-सेवा परिषद्व इन पांच पारीको मनवचनकायसे जीवनवर्यत स्वागते हैं ॥ ७८० ॥

थागे मतशक्तिको पहते हैं:---

ते सञ्चसंगमुका अममा अपरिग्गहा जहाजादा । वोसहचलदेहा जिणवरपम्मं समं निति ॥ ७८१ ॥ ते सर्वसंगमका अपना अपस्पिहा यथाजाताः ।

व्यन्त्रप्टत्यकदेहा जिनवरूपम् नमं नवंति ॥ ७८१ ॥

अर्थ-चे सुनि सब अंतरंग परिमहरहित हुए, खेहरहित, क्षेत्रादि बाध परिमहरहित, नममुद्राको मास तेल यानादि देहसे-स्कारसे रहित हुए जिनभर्म जो चारित्र उसको परठोक्रमें भी साथ हैजाते हैं ॥ ७८१ ॥

, सवारंभणियत्ता जुत्ता जिणदेसिद्गि धम्मम्मि । ण य इच्छंति ममत्ति परिगाह वालमित्तम्मि॥७८२॥

सर्वारंभनिश्चा युका जिनदेशिते धर्म । न च इच्छंति ममत्वं परिग्रहे वालमात्रे ॥ ७८२ ॥

अर्थ-जिमकारण वे मुर्नाधार पश्चिमपी आदि सब व्यापारीत निवृत्त और निनेंद्रकर उपदेशित पर्ममें उधत हुए बालमा र्पारमहर्मे भी ममता नहीं रखते हैं॥ ७८२ ॥

) अपरिगदा अणिच्छा संतुहा सुहिदा चरित्तम्मि । अबि गीएवि सरीरे ण करंति मुणी ममन्ति ते॥७८३ अपरिप्रहा अनिच्छाः संत्रष्टाः सस्यिताः चरित्रे । वर्षि निजेषि धरीरे न कविति सनयः ममत्वं ते ॥ ७८३

२८४

भावानुरागरक्ता जिनप्रज्ञसे घर्मे ॥ ७०७ ॥ अर्थ- तपमें तहीनहोनेमें जिनकी बुद्धि निश्चित है जिन्होंने पुरुपार्थ किया है कमेंके निर्मूल (नास) करनेमें जिनोंने कनर कसी है और जिनदेव कथित धर्ममें गरमार्थमूद मिक उसके के हैं भीसे गुनियोंके लिंगगुद्धि होती है ॥ ७७७ ॥

त (तम उपनान क्याग्रेद्ध होता है ॥ ७०० ॥
अमणा अग्रीप्तं क्रमममलपङलपाड्यं जियानस्वादं ।
अर्थ— वे साधु गरीर्स-(त्तान १००० गढा सूर्य राज्य ॥
है वहां ही टहर जाते हैं कुछ भी अधेशा नहीं करते ।
वे किसीसे वंधे हुए नहीं सतंत्र हैं विजठीके समान इष्टम्प्ट है

व किसास वध हुए नहा स्ततन्न हा विजलाक समान ६४०६ इसलिये अपरिमद हैं॥ ७८४॥ गामेयरादिवासी णयरे पंचाहवासिणो धीरा।

सवणा फासुविहारी विवित्तगुगंतवासीय ॥ ७८५ ॥ ग्रामे एकरात्रिवासिनः नगरे पंचाहवीसिनो घीराः ।

असणाः प्रापुक्तविहारिणो विविक्तकांतवासितः ॥ ७८५ ॥ अर्थ-गाममे एक ग्रुत रहते हें नगरमे वाच दिन तक रहते हैं। वे साधु भैनसहत रूप्युक्तविहारी हैं सी आदिरहित प्रशं जगहमें रहते हैं॥ ७८५ हैं

एगंतं मग्गंता सुसमणा वृद्धांपद्दन्धिणो धीरा । सुफड्डाणरदीया सुसिसुहं चरामं पत्ता ॥ ७८५ ॥ एकांतं सृत्यसाणाः सुंक्षमण यरापेद्रदितः धीराः ॥

शुरुपानरतयः मुक्तिनुरामुचमं प्राप्ताः ॥ ७८६ ॥ अर्थ-एकांत स्थानको देशते हुए श्रेष्टांगबरहाजी ताद भीर चीर उचम साधुनन शुरुप्यानमें ठीन हुए उचम मोशमुसको पाते हैं ॥ ७८६ ॥

भनगारमापनाधिदार ९ । २८९ पर्यात्रसमरका वसंवि सर्वा मिस्युहासु ॥ ७९३ ॥ अर्थ--- वाप आदि कृत जीवीका सेवित पारी तरफ भयानक धति अपदारकर गहन ऐसे बनके पर्वतीको गुपाओंने पारित्रके आवरणने सत्पर शुनिराज रावमें निवास धरते हैं ॥ ७९३ ॥

⁾ सञ्झायद्माणञ्जूसा रस्ति ण सुर्वति ने प्यामं तु । सुसाम्धं चिनंता णिहाय वसं ण गच्छंति ॥ ७९४ ॥ खाप्यायप्यानयका सर्वा न म्यर्पत ते प्रकार्य त । एवार्थ थितवंतः निद्रामा बर्ध न मञ्जेति ॥ ७९४ ॥ अर्थ-धुतकी भावना ध्यान इनमें टीन हुए और सूत्र

अधेशो चितवन करते हुए मुनिराज निर्माफ आधीन नहीं दोते । यदि सोत भी है तो पहला विष्टा पहर छोड़का कुछ निज्ञा हेरते हैं ॥ ७९४ ॥

ः पश्चिपंकणिसंञ्चगदा वीरासणएयपाससायीया ।

टाणकरेहि मणिणो वर्वति रसि गिरिग्रहास ॥७९६॥ पर्वकनिषद्यागता बीतासनैकपार्श्वद्यायिनः । सानात्वर्द्रः प्रनयः धपयेवि रात्रिं गिरिगुहासु ॥ ७९५ ॥

अर्थ--प्रमासन सामान्य आसनका बेठे पीरासनका स्थित तथा एक पतवाडिसे सोते कायोत्सर्ग उनुरु आदि आसनीसे बेठे मुनिगज पर्वतकी गुपाओंमें राउदी पिताते हैं॥ ७९५ ॥

।/ उपधिनरविष्यमुका चीसहंगा णिरंवरा धीरा। णिकिचण परिसुदा सापू सिद्धिव मार्गति ॥ ७९६ ॥

उपधिमरवित्रमुका व्युत्सर्यांगा निरंबरा धीराः ।

निध्धितनाः परिहादा साधवः सिद्धि अपि मूगर्वते॥७९६

१६ महा•

आगुंजियमारसियं सुर्णाते सदं गिरिग्रहासु ॥७९०॥ एकांते वसंतो वक्रव्याव्रतरक्षुअक्षमञ्जाना । आगुंजितमारसितं गृण्वंति शब्दं गिरिग्रहासु ॥ ७९०॥ अर्थ—एकांतमें पर्वताकी गुकाओमें वसते सागु भेडिया गण

मुलाचार--

जय — एकावन प्रवास तुकालान प्रतास साझु नाड्या गा चीता रीछ इनके आगुंजित आरसित शब्द सुनते हैं। तौमी सत्त्वते चलायमान नहीं होते ॥ ७९० ॥

सत्त्वस चळायमान नहा हात ॥ ७९० ॥ रत्तिंचरसंखणाणं णाणा कत्तिस्त्रस्तिदसदालं । जण्यसित यणंनं जत्थ यसेतो समणसीहा ॥ ७९१॥ व्यक्तिस्त्रकारानं सार्व कत्त्रस्त्रस्ति

राश्रिचरशकुनानां नाना रुचसितमीतशब्दार्ल । उद्यादपंति यनांतं यत्र वसंति श्रमणसिंहाः ॥ ७९१ ॥ अर्थ — रातिमें विचरनेवाले पू पू आदि पश्चिमेर्क नामाकार्के

रोनेबहित भयंत्रर सन् जिस वनके मध्यमे गर्जना ,करते हैं उसी बनमें ग्रानिशन रहते हैं ॥ ७९१ ॥ सीला इच णरसीहा पञ्चपनङक्षडयकंदरग्रहामु ।

जिणवयणमणुमणेता अणुविग्गमणा परिवर्सति॥७९३ मिहा इव नरसिंहाः पर्वनतटकटकहेदरगुहातु ।

वर्वतं इत्र्योगाम अस्ताम पार्थमाम अक्ष्या गुक्तामे रहते हैं०५२ सावद्रसम्याशुचरिये पश्चिमयभीमंघपारमंभीरे । धम्माशुरायरसा यसंति रस्ति मिरिग्रहासु ॥ ७९२ ॥

यापद्यतानुचरितं पुरिभयनीमे अधकारगेनीरे ।

धर्मानरागरका वसंति राष्ट्री विशिष्टासु ॥ ७९३ ॥ अर्थ-वाप बादि पर जीबोक्त शेवित पारी तरह भवानक व्यति अंपदारकर गटन ऐसे बनके पर्वतीकी गुण्यओंने चारित्रके आपरणमें सत्वर युनिराज सत्तमें निवास करते हैं ॥ ७९३ ॥ मज्ज्ञापद्माणश्चला रसि ण सुवंति ने प्यामं नु । सक्तमे विनंता णिहाय यसं ण गन्छति ॥ ७९४ ॥

म्याप्यायप्यानयुक्ता राष्ट्री न म्यपंति ने प्रकाम तु । ध्यार्थ विवयेतः निदास पर्ध न गण्डंति ॥ ७९४ ॥ अर्थ-सवर्धा भावना ध्यान इनमें ठीन तुए जीर तुप अर्थको थितवन परते हुए मुनिराज निदाक आधीन नहीं होते । यदि सोते भी हैं तो पहला विकल पहर छोड़कर प्रक निज्ञा हरते हैं ॥ ७९४ ॥

· परियंक्षणिसंञ्जनदा पीरासणएयपाससायीया । टाणुषाहेहिं भूजिणी व्यवंति रासि गिरिग्रहास ॥५९५॥ पर्वश्निपयागता वीरासन्द्रपार्थशायिनः ।

स्थानोत्त्रद्रैः प्रनयः धपयंति रावि गिरिपुद्दासु ॥ ७९५ ॥ अर्थ--पद्मासन सामान्य आसनका भेठे पीरासनका क्षित तथा एक पसवाडेसे सीते कायोत्सर्ग उक्क आदि आसनेसि बेटे मनिराज पर्वतकी मुफाओंने रातको विताते हैं॥ ७९५ ॥ / खब्धिनरविष्यमुका चोसहंगा णिरंपरा धीरा। णिषिचण परिसुद्धा साभू सिद्धिवि मार्गति ॥ ७९६ ॥ उपधिभरवित्रमुक्ता व्यत्स्प्रशंगा निरंपरा धीराः ।

निध्किषनाः परिश्रद्धां साधवः सिद्धिं अपि मूग्यंते॥७९६ १९ मुद्धाः

२९२ मूळजार– णिक्खित्तसत्थदंडा समणा सम सब्वपाणसृदेसु।

अप्पद्धं चिंतंता इचंति अन्यायडा साहू ॥ ८०३ ॥ निश्चिप्तग्रसूदंडाः अमणाः समाः सर्वप्राणभूतेषु । आत्मार्थ चिंतयंतो भवंति अन्याप्रताः साधवः ॥८०३ ॥

आर्थ— हिसाके कारणमूत हथियार ढंडा आदि सब निर्दोने छोड़ दिये हैं, जो सब माणियोंने समान इष्टिवाले हें ब्याचार-रहित हैं जीर आस्माफे हितको विचारनेवाले ऐसे महाइनि किसीको पीड़ा नहीं उपजाते ॥ ८०३॥

उवसंतादीणमणा उचेक्ससीला ह्वंति मन्द्रात्था। णिद्धदा अलोलमसठा अपिनिया कामभोगेस ८०४ उपरांता अदीनमनसः उपेशातीला मवंति मध्यसाः। निभृता अलोला अग्रटा अविसिता कामभोगेष्र ॥ ८०४॥

जिणवयणमणुगणेता संसारमहानयंपि चितेता। सम्भवसदीसु भीदा भीदा पुण जम्ममस्णेसु॥८०५॥ जिनवजनमनुगणपंतः संसारमहाभयमपि विनयंतः।

ं भयनीत ऐमें महानुनि होते हैं॥ ८०५॥

`चरगंति ॥८०७॥

रुहिरचलाविलपउरे वसिद्व्यं ग्रन्भवसदीसु ॥८०६॥ षोरे निरयसद्ये कुंमीपाके सुपच्यमानानां I

अनगारभावनाधिकार ९ ।

रुधिरचलाविलप्रचुरे वसितव्यं गर्भवसतिषु ॥ ८०६ ॥ अर्थ-भयानक नरकके समान हाड़ीपाकर्मे भलेमकार पच्य-

मान हमको टोहीकर चपठ ग्लानियुक्त ऐसे गर्भरूपी खानमें रहना पहता है ॥ ८०६ ॥

^१ दिष्टपरमष्टसारा विण्णाणवियक्खणाय बुद्धीए ।

गत् भगति प्रगार्व भार्व च वित्तर्ग होत्रही। अप्रामुकं तु वाला वो निर्वासनक विकास अर्थ- जो मीतन तो दिनहा किया हो ह इन्हें हो समापन नासन होगमा हो संपर्छन वीरोझ द्वार है अपासक जानकर उस आहारको वे सनि हों। रहेरी हों जं पुष्कित किण्णाइयं वहणं पृत्वपष्पदार्वित। पञ्जनि यञ्जणिञ्जं भिरम्य अणासुपं जं तु॥४३।। यन पुरिषनं रिश्वे लक्षा नपुष्पपंदारीनि र वजयति वजेनीयं निश्वाः अत्रामुहं पत्तु॥ दसः॥ अर्थ-- में ना हे मके हैं जाह अप दूप दूर्भशहा डा पूर्वा पापत मा(देको इसकर नपासक बन्द लागने बीम्बदैरे पाला र मुल्या हर । १४४ एवं हा है। दर्शी ज म . मममन जात जात्र च उद्य वेदो या। trates by the transaction wenters of glicks पन श्रामामक का । । । । । । । । । । । पुक्रीत मृत्य विश्वा याण बातार एका । १२ म 44 0 (A) 4 2) AL + 1401 481 4 41 41) while it is not that the set with the miller has, his test the life t जहर्भन्तवीयं मणातानामः । मामते हिन्दः। ion second survey र्भवा ॥ द •

अर्थ-अभिकर नहीं पके पेसे फड़ कंद मूछ बीज तथा अन्य भी जो कथा पदार्थ उसको अभक्ष्य जानकर ये धीर गीर श्रुनि सानेकी इच्छा नहीं करते॥ ८२५ ॥

, ज़ं ह्यदि अणिन्यीयं णिवहिमं फासुयं फयं चेव । णाजण एसपीयं तं नियत्वं मुणी पढिच्छाते ॥८२६॥ यत् भवति अनिर्यादं निवर्तिमं शासुकं कृतं चेव ।

द्वारेवा अधर्नीयं वर्द भैश्यं धुनवः प्रतीच्छति ॥ ८२६ ॥ अर्थ----वो निर्वीत्र हो जीर माद्यक किया गया हो पेसे बाहारको साने योग्य समझकर द्वनिराव उसके नेनेकी इच्छा करते हैं ॥ ८२६ ॥

११. ओर्चुण गोयरमी तहेच मुणिणो पुणोवि पडिकंता। परिमिद्रणयाहारा खमणेण पुणोवि पारेंति ॥ ८२७॥ भक्ता गोचाप्रे तथेव मुनवः प्रनापि प्रतिकांताः।

स्तर्वया गायराज जयब सुनयः जुनराप त्रातकाताः । परितिर्वेकाहाराः धमणेन पुनराप पारयेति ॥ ८२७ ॥ अर्थे—ेपक बेटार्ने परवार है आदार निनके पेसे सुनि भिक्षाने श्र∤ आहारको लेकर भी दोशोफे निवारण करनेके लिये

भिक्षान मीप आहारका टक्ट भी दाशक ानवारण करनक लिय मतिनुमद्दारित हैं। जॉर उपवाद करके फिर भोवन करते हैं। आगे बानगुद्धिको करते हैं:— २)ते उद्धणगणचरुक् णागुम्मीएण दिष्टपरमद्वा।

र्णिस्सिकिद्दणिष्ट्यदिनिष्ठाद्ववटपरक्षमा सापू ॥८२८॥ ते टम्बदानबक्षो इत्त्रोगोतेत ष्टपरमायीः। निःशंकानिर्विषिक्रसास्यवचराक्रमाः साथवः॥ ८२८॥ वर्षे—विगेने आने नेत्र गठिया है पेते हैं, जानस्पी मका

₹00 मुलाचार-शसे जिनोंने सब लोकका सार जान लिया है, पदार्थीने शंकारहित ग्लानिरहित अपने वलके समान जिनके पराक्रम (उत्साह) है

ऐसे साधु हैं ॥ ८२८ ॥ अणुबद्धतवोकम्मा खवणवसगदा तवेण तणुअंगा। धीरा गुणगंभीरा अभगाजोगाय दिवचरित्ता य ८९९ आलीणगंडमंसा पायडभिउडीमुहा अधियदच्या। संघणा तयं चरंता उद्याणा धम्मलच्छीए ॥ ८३०॥ आगमकद्विण्णाणा अहंगविद्यवुद्धिसंपण्णा। अंगाणि दसय दोण्णिय चोदस य घरति पुन्वारं ८३१

धारणगहणसमत्था पदाणुसारीय बीयवदीय। संभिष्णकुटुबुद्धी सुयसागरपारचा घीरा ॥ ८३२॥ सुदरयणपुण्णकण्णा हेउणयविसारदा विउलवुद्धी। णिउणत्थसत्थक्रसला परमपद्वियाणया सम्रणा ८३३ भयगदमाणन्धंमा अणुरिसदा अगब्विदा अगदिशाः। ता महत्रमा समयविद्यम् विणीना य । त्यलद्वपुष्णपाचा जिणसासणगहिदमुणिदेर्३४॥ रचरणसंयुदंगा झाणुवतःता मुणी होति । हो स्व अनुबद्धतपः क्रमीणः धमणवद्यंगताः वपसा वन्ये गाः । र्धारा गुणर्गभीरा अभवयोगा दढचरिवाध ॥ **४**२९ ॥

अलीनगेडमांताः अक्टमकृटीमृताः अर्घाशीः । अपनाः तपयांत उत्कीर्णा प्रश्चितः अर्घाः । अपनाः तपयांत उत्कीर्णा प्रश्चित्रदिर्धपाः । आपमकृतिभाना अष्टांगिति स्पित्रदिर्धपाः । अपमि द्वा च दे चुद्देश्च हैं।

धारणप्रहणसमर्थाः पदानुसारिणो वीजबुद्धयः । संनिचकोष्टबुद्धयः धुतसागरपारमा धीराः ॥ ८३२ ॥ श्रुतरत्नपूर्णकरणा हेतुनयविशारदा विपुलयुद्धयः। निपुणार्थशास्त्रकुश्रलाः परमपदविज्ञायकाः श्रमणाः॥८३३॥ अपगतमानस्तंभा अनुत्सृता अगविंता अचंडाध । दांता मार्दवयुक्ताः समयविदो विनीताथ ॥ ८३४ ॥ उपलब्धप्रण्यपापा जिनशासनगृहीतज्ञातपर्यायाः । करचरणसंद्रतांगा ध्यानोपयुक्ता मुनयो भवंति ॥ ८३५ ॥ अर्ध-जिनके वपदी किया निरंवर रहती है, उत्तन क्षमाके धारी, तपसे जिनका अंग झीण होगया है भीर गुणीकर पूर्ण जिनका योग अभम है चारित्र हट है ऐसे मुनि हैं। जिनके गाल बैठ गये हैं केवल भींड मुंह दीखता है आखोंके तारेमात्र चनकते हें ऐसे मुनि ज्ञान तवी भावनारूप धर्मछक्ष्मीकर सहित हुए पीर विषको आचरते हैं। जिनोने आगमसे ज्ञान प्राप्त किया है, अंग अव्यंजनादि आठ निमिचोंने चतुर नुद्धिको प्राप्त है, बारह अंग भिन्नीदह पूर्वीको धारण करते हैं अर्थात जानते हैं। अंगींके अर्थ प्रतिकार प्रदणमें समर्थ हैं, पदानुसारी बीजनुद्धि संभितनुद्धि कोष्ठनुद्धि इन फद्भियोंकर सहित है श्रुतसमुद्रके पारगामी थीर ऐसे साधु हैं। श्रुतज्ञानरूपी रज़कर जिनके कान भूषित हैं, हेतु नयोंने निपुण हैं महान् बुद्धिवाले हैं संपूर्ण व्याकरणशास तर्क इनमें मबीण हैं मुक्तिलरूपके आननेवाले हैं देखे साथ हैं। ज्ञानके अभिमानकर रहित जाति आदि आठ मदौंकर रहित कारोतले-

स्यारहित कोधरहित हैं, इंदियोंके जयकर सहित कोमलपरिणाम-

३०२

वाले समत परमतके जाननेवाले जोर विनयसहित हैं। विन

पुण्य पापका सहस्य जान लिया है जिनमतमें सित सन द्रमी

आगे उज्जनशुद्धिको कहते हैं;—

हुआ है जोर ध्यानमें उचमी देसे मुनि होते हैं॥ ८२९-८३५

सरूप जिनने जानलिया है हाथ पैरकर ही जिनका शरीर र

बानादि संस्कार नहीं करते ॥ ८३९ ॥ सुब्रणयणवंत्रधोषणसुरुषद्वण पात्रधोषणं श्रेष । संयाहण परिमद्रण सरीरसंठायणं सञ्जं ॥ ८३७ ॥ धूयणयमण विरेषण अंजण अबनंग सेवणं श्रेय । गरु।पयरिधापकरमं सिरयेज्ञां अष्यणी सन्धं॥८१८। प्रमनगनरंग्यानगुर्द्धनं पार्यास्ने भेर । र्धं रादनं परिषदेनं शरीरसंस्थापनं सर्वे ॥ ८३०॥ पूर्ण रमनं विरेशनं अंत्रनं अन्तर्ग केपनं धैर । नानिहारनिहर्न विराधि भागना गर्रे ॥ ८३८ ॥ લવે—કુલ નેક બીર સીતોના પોતા શોધના પળકના કરદય |करना देर पोता जगमर्देन कराना मुद्दीने । धरीरका तादन । करना कार्यक बनवे अशिरका बीहता वे धव अशिरक मेरवार है।

)ते छिण्णणेहबंधा जिण्णेहा अप्यणो सरीरम्मि । ण करंति किंचि साह परिसंठप्पं सरीरिमा ॥८६६ वे छिमस्नेहपंथा निलेहा आत्मनः वरीरे। न कुर्वेति किंपित् साधवः परिसंस्कारं घरीरे ॥ ८३६ । अर्थ-पुत्र भी आदिमें जिनने प्रेमऋषी बंधन कारदिया और अपने धरीरमें भी ममतारहित पेसे साधु शरीरमें कुछ न

मुलाचार्⊸

धूपसे श्वरीरका संस्कार करना कंठशुद्धिकेलिये वमन करना श्रीपथा-दिकर दस्त रेजा, नेत्रोंने अंबन छगाना सुगंधतैलमर्दन करना चंदन करतुरीका लेप करना सटाई वची आदिसे नासिकाकर्म विखक्रम करना नसोंसे छोदीका निकालना ये सब संस्कार अपने धरीरमें साधुजन नहीं करते ॥ ८३७-८३८ ॥ उप्पण्णिस्म य वाही सिरवेयण कुविखवेयणं चेव। अधियासिति सुधिदिया कापतिगिछं ण इच्छंति८३९ उत्पन्ने च व्याघी शिरोवेदनायां क्रिधेवेदनायां चेव। अष्यासंते मध्तयः कायचिकित्सां न इच्छंति ॥ ८३९ ॥ अर्थ-- ज्वारोगादिक उत्पन्न होनेपर भी तथा मसाकर्मे पीडा उदरमें पीडाके होनेपर भी चारित्रमें इदपरिणामवाले वे सनि पीडाको सहन कर लेते हैं परंत शरीरका इलाज करनेकी इच्छा नहीं रखते ॥ ८३९ ॥ ण य दुम्मणा ण विहला अणाउला होति चेप सप्परिसा णिप्पडियम्मसरीरा देंति उरं चाहिरोगाणं ॥ ८४० ॥ न च दुर्मनसः न विकला अनाउला भवंति चैव सत्प्रवृपाः। निष्यविकर्मग्ररीस ददवि उसे न्याधिरोगेभ्यः ॥ ८४० ॥ अर्थ--वे सत्पुरुष रोगादिकके आनेपर मनमें खेदलिल नहीं होते. न विचार शुन्यहोते हैं. न आकुछ होते हैं किंद्र छरीरमें मतीकार रहित हुए व्याधिरोगोंके लिये हृदय देदेते हैं अर्थात सबद्धो सहते हैं ॥ ८४० ॥ जिणवयणमोसहमिणं विसयसुहविरेयणं अमिद्भूदी जरमरणचाहिवेयण खयकरणं सञ्बद्धक्खाणं ॥८४१॥

९ मूळाचार− जिनवचनमीपघमिदं विषयसुराविरेचनं अमृतभूतं। जरामरणन्याधिवेदनानां धृषकरणं सर्वदुःरानाम् ।८४१॥

अर्थ--इंद्रियोंके विषयसुसीका क्षाइनेवाला, जरा भर्म व्याधिकी पीढाका क्षय करनेवाला जीर सब द:सीका क्षय करने

₹08

भावते ॥ ८४३ ॥

बाज ये अमृतस्य जीवभ जिनवनन ही है तूसरी कीं जीवभि नहीं ॥ ८४१ ॥ . जिणावपणणिच्छित्तमदी अधि मरणं अन्सुयंति संस्पृतिसा ण प इच्छंति अकिरियं जिणायपणवाद्वामं कार्नुदेश । जिनवननिधितमतयः अभि मरणं अन्युवर्षति संस्पृत्याः । ज व इच्छंति अकियां जिल्लाम्बार्तिकयं कृत्वा ॥ ।

अर्थ—जिनकी पृद्धि जिन्दवनोधे निभित्त है देसे संस्पृष्ट मरणकी तो इच्छा अध्यात्मक करवेते हैं परेतु जिनस्वनध्र उत्तेपनुष्ट सेमादिक यजन्य सोधी किया कर्नी नहीं कर्ती

रोमाणं आगवणं याधिमवसमुद्धितं सरीत्परं । धीरा बणमवि रागं च करेति मुणी गरीरविमा।८४३॥ गेमाणां अवनतं ब्याधिकतपातिकां यरित्पूरं । धीरा थ्रणमीर रागं न इति मुनवः यादि ॥ ८४४॥ नर्के-व्य थरार को पर तेति । सार्व है ॥ १ वि इक् ब्याहनं ६०० करिनो है विहासर वाना नार्व है ॥ १

नोर तर दान हेने प्रधाने अन्तर ना नेन नहां करें है। दक्षा यद सरीरपसंद गिर्न हरिकायसभागणमपीवर्त है

अंतोष्टाहददिद्विस सिन्भिसभरिदं अमेञ्झघरं॥८४४॥ एउत् भरीरमञ्जूचि नित्यं कलिक्द्रप्रभावनभूशुभं । अंतरठादिवदिद्विसं किल्बिपमतं अमेष्यगृहं ॥ ८४४ ॥ अर्थ-यह छरीर सदा अपनित्र है रागद्रेपका पत्र है सुसके रेशकर रहित है कपास समान मास बसा अंतरंगमें होनेसे जाम-बर दहा हुआ है पीर्य रुपिर आदि अशुनि वसुओं हर भरा है

ब्तर मसम्बद्धा पर है ॥ ८४४ ॥ पसमञ्जामंससोणियपुण्यसकालेञ्जसिंभसीहाणं। सिरजालअद्विसंकद चम्में णदं सरीरघरं ॥ ८४५॥ वसामञामांनद्गीणिवप्रप्यस्कालेजस्ट्रेपसिंहाणं ।

सिराजाटास्थिसंकीर्ण चर्मणा नदं शरीरगृहं ॥ ८४५ ॥ अर्थ-वसा मजा मांस छोटी झागसमान पोक्स कलेजा (अति काले मांसका दुकड़ा) कक नाकका मल नसाजाल हाट इनकर भरा एका जीर चामकर मदा हुआ यह शरीरपर है॥८०५

688 II

अध्ययत्रहसितं प्रगलितहालाङ्कलं अचीरूयं ॥ ८४६ ॥ अर्थ-यह शरीर दरावना है धूक नासिकामल मू मूत्र इनकर म्यानिसहित है आंस राधिकर सहित झरती हुई खारसे म्यानिक्य है इसलिये अपवित्र है ॥ ८४६ ॥ कायमस्यास्थरिंगं दंतमस्य विचिक्कणं गरिवसेयं । किमिजंतदोसभरिदं सेंद्रणियाकदमसरिच्छं ॥ ८४७॥ -्ः

पानरस वर्गाच पूरकारछ अन्य अधूनर ।

₹0**६**

कायमलं मस्तुलिंगं दंतमलं विचित्रयं गलितस्वेदं । कृमिजंतुदोपभृतं स्यंदनीयकदेमसदयम् ॥ ८४७ ॥ अर्थ—मञ्जूषाद माथेश सोकदश्यक्तः मैन दांतम है नेयमल बरता परीना दनकर सहित लट आदि नत्रजीवींका स्वापिषकक्तर दोगोंसे मरा ऐसा यह शरीर दुर्गयपुक कीय समान है ॥ ८४० ॥

सभान है। टश्क ॥
अर्डि च चम्मं च तहेव मंसं पित्तं च सें मं तह सोणिदं व अमेज्झसंघापमिणं सरीरं परसंति गिल्वेदगुणाणुपेही असीति च चर्मं च तथेव मांसं पित्तं च रूप्मा तथा शोणिं अमेण्यसंघातमिदं शरीरं परसंति निर्वेदगुणानुपेदिणा-८४ अर्थ—संसार शरीर भोगोंसे वैरामको माग्र हुए ग्रीन ६

अर्थ-संवार शरीर भोगोंसे बैरायको प्राप्त हुए सुनि र् शर्या से ऐसा देखते हैं कि हुड़ी चमड़ा मांत पिष कर है। इत्यादि अपवित्र बलुका समृहरूप यह शरीर है।। ८४८।। अद्विणिछण्णं णालिणियद्धं कलिमलभरियं किसि-उल्प्रिणं

जाहाणांडण्या चाराताणाच्यु कालमलमादद काम-जलपुण्यां मंसाविलिसं तायपिडळण्यं सरीरघरं तं सददमचोक्सं। अस्मिनिछसं नालिनियदं कलिमलभूतं कृमिकुलपूर्णं । मांसविलिप्तं त्यक्पितिच्छसं धरीरगृहं तत्सततमचोरूपं८४९ अर्थ—यद् धरीररूपी पर हाडोंकर मदा नतोंकर संया अगु-विद्वयोंकर - पूर्णं कृमिके समृद्दकर भरा मांसकर लिया चमडेसे

दका हुआ है इसलिये दमेशा अञ्चिष है ॥ ८४९ ॥ पदारिसे स्तरीरे दुग्गंधे कुणिवपूदियमचोक्खे । सब्जपरबणे असारे रागं ण करिति सस्पुरिसा॥८५:

एतादश्चि शरीरे दुर्गेषे कृषिपपृतिके अचीरुवे। सदनपतने अनारे सर्ग न इवीते सत्प्रदशः ॥ ८५० ॥ अर्थ-दुर्गपपुक्त अशुनिद्रव्यकर भरा तुआ सच्छतारहित छड़ना पहना कर सहित साररहित ऐसे छरीरने साधजन मेम

नहीं परते ॥ ८५० ॥ जं वंतं गिहवासे विसयसुई इंदियत्थपरिभोषे। तं खु ण फदाइभदो संजंति पुणोवि सप्परिसा॥८५१

यत् वांतं गृहवार्स विषयसुखं इंद्रियार्थपरिभोगात । तत् राख न बदाचिद्धतं धंजते प्रनरिप सत्प्रस्पाः ॥८५१॥ अर्ध-गृहवासमें रूपरसगंपरपर्धश्रहोंक भोगसे उत्पन्न जो

विषयसस एक बार छोड़ दिया फिर कभी भी किसी कारणसे भी उसे उत्तमपुरुष नहीं भोगते ॥ ८५१ ॥ पुष्परदिकेलिदाई जा इड्डी नोगनोयणविहिं च।

णवि ते फशंति फरसचि णवि ते मणसा विचितंति८५२ पूर्वरिकाडितानि या ऋदिः भोगभोजनविधिश्र। नापि वे कथयंति कसचित् नापि वे मनवा विचित्रयंति८५२ अर्थ-पूर्वकालमें स्त्री बस्त आदि बारंबार भोगे। और सुवर्ण

चारी आदि विभृति पुष्प गंप चंदन आदि भोग तथा घेवर फैनी आदि चतुर्विष आहार इनको भी अच्छी तरह भोगा उसे मुनि न तो किसीसे फहते हैं और न मनसे ही चितवन फरते हैं ॥ अब बबनगृदिको कहते हैं:--

ने भासं विणयविद्वणं धम्मविरोही विवज्रये वयणं। प्रचिछदमप्रचिछदं वा णवि ते भासंति सप्परिसादं५३

106

मापा विनयविद्यानां धर्मदिरोधि विदर्जयंति रचतं। पूष्टमपूर्धं या नापि ते भागंते सन्युरुपाः ॥ ८५३ ॥ अर्थ-सन्युरुप वे द्वति तिनयदित क्टोर भागाधे त्य संग्रे निकट वचनोठो होड देते हैं। और अन्य मी विरोध

अय—सर्वेश व योग । स्वयंद्ध केटार वाशक स्व मसंग्रे निरुद्ध वननींडो छोड़ देते हैं। और अन्य मी स्रिपे इस्तेगार्ट वननींडो कभी नहीं बोडते ॥ ८५३ ॥ अच्छोडिंअ पेचछता करणोर्डिय यह विहास सुणमाणा।

अच्छोहिअ पंच्छता कण्णाह य यहावहाय मुणमाणा अत्यंति मूयम्पा ण ने करंति हु टोह्यकहाओ ॥८५४ अशिभः पर्यतः क्षाः न वहविषानि ग्रष्यंतः । तिष्ठंति मूकभूता न ते कुर्वति हि टाकिककथाः ॥८५४॥

तिष्ठीति मुक्तभूता न ते कुनित हि लोकिकल्याः ॥८५४॥
अर्थ—ये सागु नेत्रोसे सब योग्य अयोग्यको देसते हें जीर कानोसे सब तहरके दार्दोको सुनते हें परंतु वे गूगेके सनार निप्रते हैं क्षेत्रिक्किक्या नहीं करते ॥ ८५२॥

तिष्ठते हैं शैक्तिकथा नहीं करते ॥ ८५४ ॥ इत्थिकहा अत्थकहा भत्तकहा खेडकव्यडाणं च । रायकहा चौरकहा जणयदणयरायरकहाओ ॥८५५॥

(ायकहा चोरकहा जणवदणयरायरकहाओ ॥८५५। स्रीकथा अर्थकथा भक्तकथा खेटकर्यटयोथ ! राजकथा चोरकथा जनपदनगराक्तकथाः ॥८५५ ॥ अर्थ-स्त्री मर्वणी कथा थनकथा भोजनकथा नदीपर्यवर्ती

पिराहुआ सान उसकी कथा पर्वतसे ही पिरा हुआ सान उसकी कथा राजकथा चोरकथा देश नगर कथा सानि संबंधी कथा ८५५ णडभडमञ्जकहाओं मायाकरजञ्जसन्द्रियाणं च ।

णडमडमहर्कहाओं मायाकरजहानुहियाणं च । अज्ञवललंघियाणं कहासु ण विरञ्चए धीरा ॥ ८५६॥ अर्थ---गटक्या भटक्या भारक्या, कपटके भेषसे जीनेवाले स्थाप स्थार ज्वारी दृतकी क्या, दिशाने रव रहनेवालीकी क्या, वातपर पदनेवाल नटीती क्या-चे एव कीकिसी क्या (विक्या) टे दनमें वेसानी श्रानेसव समागव नहीं करते ॥ ८५६॥

द राज बराग ग्रामाव गरागव गरा हरता । ८५५ ॥ ११ विकहाविसोत्तियाणं खणमवि हिर्मण ते ण चिंतति। पम्म स्द्रमदीया विजहा तिविहेण पद्धति ॥ ८५७ ॥ विजयाविश्वतीत् श्रणमि हृदयेन वे न चिंतगीत ॥ धर्म स्वयावश्रतात् श्रणमि हृदयेन वे न चिंतगीत ॥

धमं तरुपमवरः । वरुपाः । वाच्यन पंचमतः ॥ ८५७ ॥ अर्थ—क्षिष्या आदि विष्या और निष्णासाव दन्हों वे मुने मनसे भी विवयन नहीं ष्टते । एमें मास मुद्रियाले मुनि विष्याको मनवचनकावसे छोड़ देते हैं ॥ ८५० ॥

विक्रमाकी मनवननकावर्गे छोड़ देते हैं ॥ ८५० ॥ १/ कुकुच कंदप्पाइय हास उद्घावर्ण च खेडे च । मददुप्पहत्पवर्द्धिण करेति मुणी ण कारेति ॥ ८५८ ॥

कीन्तुर्व्य कंद्रपीयितं हास्य उद्घापनं च खेडं च । मदद्रपेहस्तादनं न कृषीते मुनयः न कारवंति ॥ ८५८ ॥ अर्थ—दृश्य कंटते अमगट रायका करना, कामके उपवाने-वाटे हासमिठे वचन, हासवचन, अनेकचतुराई बहित मीठे

वाले हास्सिनि वनन, हास्ववन, अनेकचुताई सहित भीठे वचन, परको ठमनेस्य वचन, गदफे गवेसे हाथका वाइना— इनको मुनिसब न वो करते हैं और न दूसरेसे करते हैं॥८५८॥ त हॉर्ति जिप्यियारा पिमिदमदी पहिद्विदा जहा उद्धी।

इक्का द्वानायन न वो परत दे जार न दूसरस करते हैं।८५८॥ १७ त हॉति णिट्यियारा धिमिदमदी पदिद्विदा जहा उद्योश णियमेजु दुरुव्विद्यारा लिमिवमतया समणा॥८५९॥ ते भवेति निर्विकाराः लिमिवमतया प्रतिष्ठिवाःयया उद्यिः। नियमेषु स्टब्रतिनः पारव्यविमार्गकाः अमणाः ॥ ८५९॥ ₹१0 अर्थ-ये मुनि निर्विकार उद्भवनेष्टारहित विचारवाले सङ्खे

ऐसी कथाको करते हैं ॥ ८६० ॥

समान निधल गंभीर छह आवश्यकादि नियमेंमिं हट प्रतिज्ञानी भीर परकोइकेलिये उचमवाले होते हैं॥ ८५९॥

मुनाचार--

जिणवयणभासिवत्यं पत्यं च हिदं च धम्मसंजुत्तं। समओवयारजुत्तं पारत्तहिदं कपं करेंति ॥ ८३० ॥ जिनवचनभाषितायाँ पथ्यां च हितां च धर्मसंयुक्तां।

समयोपचारयुक्तां पारत्यहितां कथां क्वंति ॥ ८६० ॥ अर्थ--वीतरागके आगमकर कथित अर्थवाली पय्यकारी वर्न-कर सहित आगमके विनयकर सहित परलोकमें हित करनेवाली

सत्ताधिया सप्पुरिसा मार्ग मण्णंति वीदरागाणं। अणयारभावणाएं भावेंति य णिद्यमप्पाणं ॥ ८६१ ॥ सच्चाधिकाः सत्पुरुषा मार्गं मन्यंते वीतरागाणां । अनुगारभावनया भावयंति च नित्यमात्मानम् ॥ ८६१ ॥

अर्थ-उपसर्ग सहनेसे अकंप परिणामवाले ऐसे सायुका वीतरागोंके सम्यन्दर्शनादिरूप मार्गको मानते हें और अनगार भावनासे सदा आत्माका ही चिंतवन करते है ॥ ८६१ ॥ आगे तपगद्धिको कहते हैं:---

णिइं च अप्पमत्ता संजमसमिदीसु झाणजोगेसु। तवचरणकरणजुत्ता हवंति सवणा समिद्रपाया ॥८६२

नित्यं च अत्रमत्ता संयमसमितिपु ध्यानयोगेषु । तपथरणकरणयुक्ता भवंति श्रमणाः समितपापाः ॥८६२॥

अर्थ-ने मुनीश्वर सदा संयम समिति ध्यान सीर योगोंने

प्रमाद रहित होते हैं वप चारित्र और तेरह प्रकार करणोंने उचनी हुए पापोंके नाम करनेवाले हीते हैं ॥ ८६२ ॥

अनगारभावनाधिकार ९ ।

हेमंते धिदिमंता सहंति ते हिमरणं परमधोरं ।

अंगेसु णिवडमाणं णिटिणिवणविणासयं सीयं॥८६३॥ हेमंते पृतिमंतः सहंते ते हिमरजः परमघीरं ।

अंगेषु निपतत् निरुनीवनविनाग्रकं शीतं ॥ ८६३ ॥ अर्थ-धीर्ययुक्त हुए ये मुनि हेमंतऋतुमें अत्यंत दुःसह कमिलनी आदि बनस्पतियोका नाग्नक ठंडे पेसे वर्फको अंगोके कपर पड़ते हुए सहन करते हैं दुःख नहीं मानते ॥ ८६३ ॥ जहुंण मइलिदंगा गिह्ये उण्णादवेण दर्त्रगा ।

चहुति णिसिटुंगा सूरस्स प अहिसुहा सूरा ॥ ८६४ ॥ ज्ञहेन मरिनांगां ग्रीप्मे उप्णावपेन दग्धांगाः । विद्वंति निस्रष्टांगा स्वस्य च अभिमुखाः शुराः ॥ ८६४॥ अर्थ—दरीरमञ्से मैठा जिनका अंग है गरमीकी ऋतुमें

गरम भूप करके जिनका सब शरीर अधजला होगया है ऐसे द्यार बीर महामुनि निधन अंग हुए सूर्यके सामने आसनसे तिष्ठते हें दुःख नहीं मानते ॥ ८६४ ॥ धारंधपारगुविलं सहंति ते वादवाहलं चंडं । रसिंदियं गर्टतं सप्परिसा स्वन्यमृष्टेसु ॥ ८६५ ॥

धारांधकारगहनं सहंते ते वातवार्दतं पंडं । राधिदियं गरंतं सत्युरुपा ग्रधमूलेषु ॥ ८६५ ॥

अर्थ--दर्भमत्तर्भे बहपाराके अंधकारकर गहन रातदिन

३१२ मूलजार-मूसलपार बरसता पर्वंड ऐसे बागुसहित मेहको पुन्नक मुख्ये

भैठकर साञ्चन सहते हैं ॥ ८३५ ॥ ° यादं सीदं उपहें नण्हें च छुपं च दंसमस्पं च । सच्चं सहुंति भीरा कस्माण खपं करेमाणा ॥ ८३३ ॥

सच्यं सहंति शीरा कम्माण खयं करमाणा ॥ ८६६ ॥ वातं शीतं उप्णे तृष्णां न क्षुपां च दंशमश्रकं च । सर्व सहंते धीराः कमेणां धयं कुर्राणाः ॥ ८६६ ॥ अर्थ---प्रवंड पवन शीत उप्ण प्यास मूख डांसमच्छर आर्द

ज्ञथ्य-सन्द पवन शांत उट्ण प्यास मूख आसम्ब्हर आदि परीसदीको भीरत पुक्त हुए क्सेंकि क्षय करनेमें ठीन ऐसे वे योगी सदन करते हैं ॥ ८६६ ॥ वुद्धणवयण चढपढं सहंति अछोड सत्थपहरं था ।

दुक्कणवयण चडण्ड सहात अग्राड सत्यपहर वा । ण य फुप्पंति महरिसी समणगुणवियाणया साह८५० दुर्जवयम् चट्टरत सहते अग्राड गुस्तपहार वा ।

नं च कुर्चाति महर्पयः धमणगुणविज्ञायकाः माधवः ८६७ अर्थ-तरे छोहेकी अभिके समान कटोर रुष्टजनोंके वचनोंको, सुगछीके वचन खार खटी आदिकर ताडन तळवारसे घात इनकी क्षमगुणके जाननेवाले साधु सहन करछेते हें परंत क्रोय

नहीं करते ॥ ८६७ ॥ जङ्ग पंजिदियदमओ होज्ञ जणोरूसिद्व्वय णियत्तो। तो कदरेण कर्पतो रूसिज्ञ जए मणुपाणं ॥ ८६८ ॥ यदि पंचेद्रियदमनो भवेत् जनः रोषादिभ्यः निरुचः।

यदि पंचांद्रियदमनो भवेत जनः रोपादिभ्यः निष्ट्वः।

तवा कर्तरण क्रतांवः रूप्येत् जगति मनुजेभ्यः॥८६८॥
अर्थ-जो यह मनुष्य पांच इंद्रियोंके रोक्नेमें हीन हो और
क्रीमादि क्यायोंसे भी रहित हो तो इस जगतमें किस क्रारणि

अनगारभावनाधिकार ९ । ₹१₹ यमराज (काल) मनुष्योंसे गुस्सा करसकता है। अर्थात मृत्य बी उसको नहीं जीत सफती ॥ ८६८ ॥

जदिवि यकरेंति पायं एदं जिणवयणयाहिरा पुरिसा । तं सच्वं सहिदच्वं कम्माण चयं करंतेण ॥ ८६९ ॥ यद्यपि च कुर्वेति पापं एते जिनवचनपाद्याः पुरुषाः । वत सर्वे पोढच्यं कर्मणां ध्यं कुर्वता ॥ ८६९ ॥

अर्ध-यदापि जिन बचनोंसे अलग हुए जो निध्याती पुरुष मारना बाधना जादि पापकर्मीको इस्ते हैं दुःख देते हैं तींभी जिसको कर्मोका नाश करना है उस साधुको सब उपसर्ग सह हेने चाहिये ॥ ८६९ ॥ रुद्धण इमें सुद्दिष्टि यवसायविदिक्षयं तह करेह । जह सुगाइचीराणं ण उपेह यसं कसायाणं ॥ ८७० ॥

हरूबा इमं धुतनिधि व्यवसायदितीयं तथा दुरुत । यथा सुगतिचीराणां न उपहि वदं कपायाणां ॥ ८७० ॥

अर्थ-इस द्वादशांग चीदरपूर्व श्रुतरूप खजानेकी पाकर दूसरा यस ऐसा कर कि जिसतरह मोक्षमार्गक नाशक कोधादि फ्यायों के बशर्ने न दोसके ॥ ८७० ॥ पंचमहव्यपपारी पंथसु समिदीसु संजदा धीरा। पंचिद्यित्यस्थिरदा पंचमगइमागया समणा ॥ ८५१ ॥

वंचमहात्रवपारिणः पंचयु समितियु संयवा धीराः । वंचेंद्रियाधंविस्ताः पंचमगतिमार्गकाः धमणाः ॥ ८७१ ॥ अर्थ-जो पान महामतीको पारते हैं पान समितियोन सीन है थीर थीर है यांच इंदियोंक सपादि विषयोंने दिशक हैं बीधान- **3**88

तिको अवलोकन करनेवाले हैं ऐसे मुनिराज तपशुद्धिके करता होते हैं ॥ ८०१ ॥

ते इंदियेसु पंचसु ण कयाइ रायं पुणोवि वंधंति। उण्हेण व हारिइं णस्सदि रागो सुविहिदाणं॥ ८७२॥

मलाचार-

ते इंद्रियेषु पंचसु न कदाचित् रागं धुनरिप वर्धाति । उप्णेन इव हास्द्रिगे नस्यति रागः सुविहितानां ॥ ८०२ ॥ अर्थ-च्ये सुनि पांची इंद्रियोमें कभी फिर राग नहीं करते

अर्थ---- वे मुनि पांची इंद्रियोंने कभी फिर राग नहीं करते वर्योंकि शोभित आचरण धारियोंके राग नष्ट होजाता है जैसे सूर्येकी धामसे हल्दीका रंग नाशको पाता है ॥ ८७२ ॥

सूर्येकी धामसे हलदीका रंग नाशको पाता है ॥ ८७२ ॥ अब ध्यानगुद्धिको कहते हैं;—-विसएस पघावंता चवला चंडा तिदंडगुर्सेहिं ।

इंदियचोरा घोरा यसम्मि ठविदा वयसिदेहिं॥८७३॥ विषयेषु प्रधानंतः चपलाभंडाः त्रिदंडगुप्तैः । इंद्रियचौरा पीरा बच्चे स्मापिना व्यवसितः ॥ ८७३ ॥

अर्थ—रूपसादि विपयोंमें दौड़ते चंचल कोषको पास हुए भर्यकर ऐसे इंद्रियरूपी चोर मनवननकायगुप्तिवाले चारियमें उद्यमी सापुजनोने अपने बद्यमें करलिये हैं॥ ८०३॥ कुपुह पंडो वणहत्यी उद्दामो णयररायमग्गान्मि।

ज़ुहू चंडो वणहत्थी उद्दामो णयररायमग्गन्मि । तिक्तंक्रसेण घरिओ णरेण ददसत्तिज्ञत्तेण ॥ ८०४॥ युवा चंडी वनहस्ती उदामो नगुरराजुमार्गे ।

वीक्ष्णांद्वरोन पृतः नरेण रडयक्तियुक्तेन ॥ ८०४ ॥ अर्थ—अर्थ मरोत्मव कोपी बनका हाथी सांक्र्य आदि संपर

114

नका हुत हुना कार्या गहक पर करियमध्येत्रके सनुष्यहर तीरण (की) अनुसमें का विया जाता है ॥ ८०५ ॥ तह चेदो सणहरूपी वहामी विषयागयमगमिम । णाणंद्रमेंचा परित्रों कही जह सन्तहरियत्व ॥ ८०५ ॥ तथा पड़ी सनीरमी उहामी विषयाज्ञार्थे । जाने हुने कुनी कही पथा स्परमी हुन। ८०५ ॥

ज्ञानाहुक पूर्वा करा वया वयात्मा रव ॥ टक्प ॥ ज्ञयं—रक्षारह नग्धादिवे दावनेकेविये मध्य मनत्त्री स्थानाहरू साक-महित दुवा विषयस्थी महक्या रोहता स्थानं हार्याची तहर धुनिधानने ज्ञानस्थी अनुद्धाते होद्या व्यार क्या दिवा है ॥ टक्प ॥ ज्ञान क्यार्टि विज्ञानाहित्वे मणहम्भा हराजायादियंभणीहिते ॥

बद्धों तह य पर्वहों विरायर अहि भीरेहि ॥ ८७६ ॥
न प एति विनामर्त्त मनोहर्मा प्यानवादियं प्रमोतः ।
बद्धमधा च प्रपंडः विरायर असि ॥ १६१ ॥ ८०६
अर्थ — जेने २० दायी चारित्रपहर रोका गया निकलेको
समर्थ नर्री रोता रक्षी तह मनस्यी हाथी प्रमानस्यी चारित्रपहे
माग हुना थीर अतिमर्थंड रोनेपर भी मुनियोक्ट बैरामस्यी
सरीवर स्थम (चय) को माग्र हुना निकलेको समर्थ नर्री
रोमक्ता ॥ ८०६ ॥

सात हुना थीर अतिभर्यह रोनपर भी मुनियोचर वेरानस्ती रतेवर स्वम (च्य) हो पात हुआ निक्डनेको समर्थ नहीं रोमबना ॥ ८०६ ॥ चिद्रियणिद्विण्डिट्समी चरित्तपायार गोउर मुंगं । संती सुकद पत्याई तयणयर संजमारचर्य ॥ ८०० ॥ पृत्रित्तमित्तिथितमतिः चरित्रमाकार गोपुर तुंगं । स्रोति सुकृतं पत्पाई वरोनगरं संयमारस्म् ॥ ८०० ॥ 388 तिको अवलोकन करनेवाले हैं ऐसे मुनिराज तपशुद्धिके करता

होते हैं ॥ ८७१ ॥

ते इंदियेसु पंचसु ण कयाइ रायं पुणोवि बंधंति। उण्हेण च हारिइं णस्सदि रागो सुविहिदाणं॥ ८७२॥ ते इंद्रियेषु पंचसु न कदाचित सगं धुनसपि वर्धति ।

मुलाचार—

उप्पेन इव हारिद्रो नस्यति रागः सुविहितानां ॥ ८७२ ॥ अर्थ-वे मुनि पांची इंदियोंने कभी फिर राग नहीं करते

वयोंकि शोभित आचरण धारियोंके राग नष्ट होजाता है जैसे सर्वकी घामसे हलदीका रंग नाशको पाता है ॥ ८७२ ॥

अब ध्यानगद्धिको कहते हैं:--विसएस प्रधावंता चवला चंडा तिदंडगुत्तेहिं। इंदियचोरा घोरा वसम्मि ठविदा वयसिदेहिं॥८७३॥

विपयेष प्रधावंतः चपलाथंडाः त्रिदंडगरीः । इंदियचौरा घोरा वज्ञे स्थापिता व्यवसितः ॥ ८७३ ॥ अर्थ-रूपरसादि विषयोंमें दौड़ते चंचल कोघको प्राप्त हुए भयंकर ऐसे इंद्रियरूपी चोर मनवचनकायमृष्ठिवाले चारित्रमें

उद्यमी साधुजनोंने अपने वधानें करलिये हैं ॥ ८७३ ॥ ्जुह चंडो वणहत्थी उद्दामो णयररायमागस्मि । तिवेन्वंक्रसेण धरिओ गरेण दढसत्तिज्ञत्तेण ॥ ८०४॥

वीक्ष्णांहरीन प्रतः नरेण रदयक्तियुक्तेन ॥ ८७४ ॥ अर्थ-- वेचे मदोन्मच कोधी बनदा हाथी सांदल आदि र्थ-

यथा चंडी वनहस्ती उदामी नगरराजमार्गे ।

₹१५

नकर छटा हुआ नगरकी सड़क पर अतिसामर्घ्यवाले मनुष्यकर तीक्ष्म (पैने) अंकुशसे वश किया जाता है ॥ ८७४ ॥ तह चंडो मणहत्थी उद्दामी विषयरायमगानिम । णाणंक्रसेण धरिओ रुद्धो जह मत्तहत्थिन्व॥ ८७५॥

तथा चंडो मनोहस्ती उद्दामी विषयराजमार्गे ।

ज्ञानांडुरोन धृतो रुद्धो यथा मत्तहस्ती इव II ८७५ II अर्थ--- उसीतरह नरकादिमें डालनेकेलिये प्रवीण मनरूपी हसी सयमादिख्प सांकलरहित हुआ विषयख्पी सड़कपर दौड़ता मतवाले हाथीकी तरह सनिराजने ज्ञानरूपी अंकशसे रोका और वश किया है ॥ ८७५ ॥

ण च एदि विणिस्सरितुं मणहत्थी झाणवारिवंधणीदो । बद्धो तह य पर्यंडो विरायरञ्जूहिं घीरेहिं ॥ ८७६ ॥ न च एति विनिस्सर्तुं मनोहस्ती ध्यानवारिवंधनीतः ।

बद्धस्तथा च प्रचंडः विरागरञ्जभिः धीरैः ॥ ८७६ ॥

अर्थ-जैसे मच हाथी बारिबंधकर रोका गया निकलनेको समर्थ नहीं होता उसी तरह मनरूपी हाथी ध्यानरूपी वारिवंपको प्राप्त हुआ भीर अतिमचंड होनेपर भी मुनियोंकर बैरागरूपी रस्सेकर सबम (बंध) को प्राप्त हुआ निकउनेको समर्थ नहीं होसकता ॥ ८७६ ॥ धिदिधणिदणिच्छिद्मती चरित्तपायार गोउरं तुंगं। खंती सकद क्याडं तवणयरं संजमारक्यं ॥ ८७७ ॥

धृतिस्तमिवनिश्वितमितः चरित्रपाकारं गोपुरं तुंगं। धांतिः गुरुतं कपार्टं वपोनगरं संयमारधम् ॥ ८७७ ॥ 444

अर्थ--जिसझ संतोषमें असंत निश्चितमति होनेहर अर्थात तत्त्वरुनिहर तो परकोटा है, चारित्र वड़ा दरवाजा है, उपप्रम-भाव और धर्म ये दो जिसके क्रियाइ हैं और दोमकारका संयम यह रक्षाकरनेवाल कोतवाल है ऐसा तपहरी नगर है ॥ ८०० ॥ रागो दोसो मोहो इंदिय चोरा य उज्जदा णिखं।

ण च एति पहुंसेदुं सप्पुरिससुरिक्त्यं णयरं ॥८७८॥

रागो द्वेपः मोह इंद्रियाणि चाराथ उद्यता नित्यं । न च चंति प्रध्वंसयितुं सत्युष्पसुरक्षितं नगरं ॥ ८७८ ॥

अर्थ—इस तपत्तपी नगरका नाग्न करनेकेलिये राग द्वेग मोह इंद्रियरूपी चोर सदा लगे रहते हैं परंतु सलुख्यरूपी योघाओंकर

अच्छीतरह रक्षा किये गये इस तपोनगरके नाग्न करनेकेलिये समर्थ नहीं होसकते ॥ ८७८ ॥ एदे इंदियतरमा पयदीदोसेण चोइमा संता ।

एदे इंदियतुरया पयदीदोसेण चोइया संता। उम्मागं णेति रहं करेह मुणपगाहं बलियं॥ ८७९॥

एते इंद्रियत्तरमाः प्रकृतिदोषेण चोदिताः संतः । उन्मार्गे नयंति रथं कुरु मनःप्रग्रहं बलवत् ॥ ८७९ ॥ अर्थ—ये इंद्रियरूपी षोडे सामाविक रागद्वेपकर पेरे हुए

धर्मध्यानरूपी रथको विषयरूपी कुमार्गमें ठेजाते हैं इसलिये ... टगामको बठवान् (मजबूत) करो ॥ ८७९ ॥

लगामको बलवान् (मजबूत) करो ॥ ८०९ ॥ मोहो धिदीए धीरोहिं णिजिदा सम्मं ।

य दंता वदोववासप्पहारेहिं॥ ८८०॥ रागो देगो मोहो ध्रत्या धीरः निर्जिताः सम्यरु।

पंचेंद्रियाणि दांतानि व्रतोपनासप्रहारैः ॥ ८८० ॥ - भावनास्त्र पृतिसे अन्धीतरह जीव टिये और मत उपवासस्त्री द्वियारोक्ट पाच इंदियोंको वर्धने किया ॥ ८८० ॥ दंतिदिया महरिसी रागं दोसं च ते खवेदृणं।

झाणोवओगजुला व्यंति कम्मं व्यविद्मोहा ॥८८१॥ दांतरिया महर्पयो रागं देवं च ते धपित्या। प्यानीपयोगयुक्ताः धपयंति कर्माणि धपितमोहाः ॥ ८८१

अर्थ-इंद्रियोको यश करनेवाछे महामुनि शुद्धोपयोग सहित समीचीन प्यानको माप्त हुए राग द्वेपकर विकारीका नाधकर मोदरहित हुए सब कर्मोका ध्रम कर देते हैं ॥ ८८१ ॥ अट्टविहकम्ममूलं व्यविद कसाया खमादिजुरोहिं।

उद्दम्हो व दुमो ण जाइदव्वं पुणो अस्थि ॥८८२॥ अष्टविपकर्ममुळं धपिताः कपायाः धुमादियुक्तः । उज्वमृत इव दुमी न जनिवन्यं पुनरस्ति ॥ ८८२ ॥ अर्थ-आठ मदार क्मीका मुख्कारण क्रोपादि कवार्थीकी

क्षमादि गुण सहित मुनिराबोंने नष्ट करदिया है इसलिये निर्मूल हुए पृक्षकी तरह फिर उन क्यायोंकी उत्पत्ति नहीं होसकती ८८२ . अवहृह अहरहं धम्मं सुखं च झाणमोगादं। ण च एदि पर्धसेदं अणियही सुद्धहेस्साए ॥ ८८३ ॥

अपहल आर्व रींद्र धर्म शुरुं च ध्यानमवगाढं । न च यंति प्रष्वंसियतुं अनिशृचि शुरुहेदयया ॥ ८८३ ॥ अर्थ--- प्रायोंके निर्मूड करनेकेलिये आर्तध्यान रौद्रध्यानींको होद्रहर धर्मध्यान शुक्कध्यानमें गाढ स्थित हुए और शुक्क लेदबाहर

अर्थ--जिसका संतोपमें अत्यंत निश्चितमति होनेरूप अर्थात् तस्वरुचिरूप तो परकोटा है, चारित्र वड़ा दरवाजा है, उपश्चम-भाव और धर्म ये दो जिसके किवाइ हैं और दोप्रकारका संयम वह रक्षाकरनेवाला कोतवाल है ऐसा तपरूपी नगर है ॥ ८७७ ॥

मूळाचार-

रागो दोसो मोहो इंदिय चोरा य उच्चदा णिर्च। ण च एति पहंसेदुं सप्पुरिससुरिक्खयं णयरं ॥८७८॥ रागो द्वेपः मोह इंद्रियाणि चाराश्च उद्यता नित्यं ! न च यंति प्रध्यंसयितुं सत्युरुपसुरक्षितं नगरं ॥ ८७८ ॥

अर्थ—इस तपरूपी नगरका नाश करनेकेलिये राग द्वेप मोह इंद्रियरूपी चोर सदा लगे रहते हैं परंतु सलुरुपरूपी योघाओंकर अच्छीतरह रक्षा किये गये इस वपोनगरके नाश करनेकेलिये समर्थ नहीं होसकते ॥ ८७८ ॥ एदे इंदियतुरया पपदीदोसेण चोइया संता।

एते इंद्रियतुरमाः प्रकृतिदोपेण चोदिवाः संतः । उन्मार्ग नयंति रथं कुरु मनःप्रग्रहं वलवत् ॥ ८७९ ॥ अर्थ-ये इंद्रियरूपी घोडे सामाविक रागद्वेपकर पेरे हुए धर्मध्यानरूपी रथको विषयरूपी कुमार्गमें लेजाते हैं इसलिये

उम्मागं णेति रहं करेह मणपागई बलियं ॥ ८७९ ॥

एकाममनुरूपी लगामको बलवान् (मजबूत) करो ॥ ८७९ ॥ रागो दोसो मोहो धिदीए धीरेहिं णिज्जिदा सम्मं। पंचिंदिया य दंता वदीववासप्पहारेहिं॥ ८८०॥ रागो देपो मोहो धृत्या धीरैः निर्जिताः सम्यक् । पंचेंद्रियाणि दांतानि त्रतोपवासत्रहारैः ॥ ८८० ॥

भावनान्त्य पृतिसे अच्छीतरह जीत ठिये और मत उपवासरूपी हथियारीकर पांच इंदियोंको वश्चमें किया ॥ ८८० ॥ दंनेंदिया महरिसी रागं दोसं च ते खंदरुणं। झाणोवओगजुत्ता नवंति कम्मं सविदमोहा ॥८८१॥

दांतद्रिया महर्पयो रागं द्वेषं च ते धापित्वा । ध्यानोपयोगयुक्ताः ध्रपयंति कर्माणि धापेतमोहाः ॥ ८८१

अर्थ-इदियोको वश करनेवाले महामुनि शुद्धोपयोग सहित समीचीन ध्यानको भाग हुए राग द्वेपकर विकारीका नाशकर मोहरहित हुए सन कर्मीका क्षय कर देते है ॥ ८८१ ॥

अट्टविहकम्ममूलं न्वविद् कसाया समादिजुत्तेहिं। उद्दम्हो व रुमो ण जाइदव्वं पुणी अस्थि ॥८८२॥ अष्टविधकर्ममुले धापिताः कपायाः धुमादियुक्तः ।

उद्गुतमृष्ठ इव हुमो न जनितव्यं पुनरस्ति ॥ ८८२ ॥ अर्थ--शह मदार क्रमेंका मुलकारण कोधादि कपायोंको

क्षमादि गुण सहित शुनिराजीने नष्ट करदिया है इसलिये निर्मूल हुए पृश्वी तरह फिर उन कपायोंकी उत्पत्ति नहीं होसकती ८८२ . अवहट्ट अटरूदं धम्मं सुक्षं च झाणमोगादं। ण च एदि पर्धसेद्वं अणियही सुद्धलेस्साए ॥ ८८३॥

अपहत्य आर्त रीट्रं धर्म शुक्तं च ध्यानमवगाढं । न च यंति प्रध्यंसियतुं अनिष्टति शुक्रुहेस्यया ॥ ८८३ ॥ अर्थ-क्षायोंके निर्मूछ करनेकेठिये आर्तध्यान रौद्रध्यानोंको छोड़कर धर्मध्यान शुक्रध्यानमें गाढ खित हुए और शुक्र ठेश्योदर

316 मुलाबार-लनिश्चि गुणलानको मारा तुए मुनिराजको किर कपान पीडा नहीं देसकते ॥ ८८३ ॥

जह ण पलइ गिरिरायो अवस्त्तरपुष्वद्विमागेवाए। एयममलियो जोगी अभियनणं झागवे झाणं ॥८८४॥ यथा न चलति गिरिराजः अपरोत्तरपूर्वरधिणगतैः । एरमचित्रतो योगी अभीक्ष्णे ध्यायति ध्याने ॥ ८८४ ॥ अर्थ-जैसे गुमेह पर्रत गुर्व ब्रिण पश्चिम उत्तर दिशानी ही

(शासे शानसे चलायमान नहीं होता उभीतहाँ सा क्योंने अई-पमारताभ मुनि सद्या उत्तमध्यानको ध्याना है ॥ ४८४ ॥ भिज्ञस्विकरणचरणा कम्मं भिद्धत्वं पुशिसाय। जरमरणियमुका ज्यंति सिद्धि पुर्विकसा। ॥४४५॥

विद्यानिकारणनारणाः कर्म विषयोद्धवे पृत्य । जनमण्यस्त्रियमुका उपयोगि विद्धि पुतकेशाः ॥ ४४५ ॥ अर्थ - अर्थ है बाद बादि है और जा हहत हो। है करण पर मेरिक्ट बिनोन कि र पेने पूनि अली। कुरवश्चा क्रवीको निर्देष नायकर

नक्षेत्रकार कुर नवा असवस्थान संदेव जुद अवत जानादिक्ष भागाचा वा है। इदा । नाने अवनार इ एवं सा से नानों हो हर्न हैं.--

मक्कोंस संज्ञांसि व सिंसपुणवापुरिस बीर-समिति । भागानि सुनिद्दिराणे अभागार् नर्वत वेतीसि ॥४४५ जनव स्टिन्स्टर्स

भवन होते वचन होते न ऋषितांत्रवार रहीत विशास होता। नामान नही।हराना जननाम बहेग होता नीवनाहरके

अर्ध---उत्तम चारित्रवाले मुनियोंके ये नाम हैं-ध्रमण संयत क्रमि मनि साथ बीतराग अनगार भदंत दांत यति । तपसे आत्माको खेदयक करे वह भ्रमण, इंद्रियोंको वश करे यह संयत. सब पापोंको दर करे अथवा सात ऋदियोंको मास हो यह ऋषि. खपरकी अर्धसिद्धिको जाने वह मनि, सम्यग्दर्शनादिको साधे वह साथ, जिसका राग नष्ट होगया वह थीतराग, पर आदि परिमहरहित हो वह अनगार, सब कल्याणोंको प्राप्त हो वह

भदंत. पंचेंद्रियों के रोकनेमें ठीन वह दांत और चारित्रमें जो यन करे वह यति वहा जाता है ॥ ८८६ ॥ ं टें रेन अणपारा भववंता अपरिमिदगुणा धदा सरिदेहिं। तिविहेणित्तिण्णपारे परमगदिगदे पणियदामि ॥८८०॥ अनगारान् भगवतः अपरिमित्तगुणान् स्ततान् सरेंद्रैः । त्रिविधेवचीर्णपारान परमगतिगतान प्रणिपतामि ॥ ८८७॥

अर्थ- इसपदार अनंतचत्रप्रयको प्राप्त सब गुणोके आधार इंद्रोंकर साति किये गये शद दर्शनादिरूप परिणत हुए संसारस-मद्रसे पार हुए ऐसे पररहित मनियोंको मनवचनकायसे में नम-स्कार फरता है ॥ ८८७ ॥ एवं चरियविहाणं जो काहदि संजदो ववसिद्धा ।

णाणग्रणसंपञ्जतो सो गाहदि उत्तमं ठाणं ॥ ८८८ ॥

एवं चर्याविधानं यः करोति संयतो व्यवसितात्मा । शानगणसंप्रयुक्तः स गच्छति उत्तमं स्थानं ॥ ८८८ ॥

अर्थ-इस प्रधार दश सत्रोंसे यहे गये वर्गाविधानको तप्रमें

३२० म्ह्यवार-उपमी मतादियुक झान मृह्युणवादित हुआ जो मुनि करता है बह उत्तम स्वानको माम्र होता है ॥ ८८८ ॥ भत्तीए मए कथिदं अणयाराणत्यवं समासेण । जो सुणदि प्यदमणसो सो गच्छदि उत्तमं ठाणं८८९

भक्ता मया कथितं अनगाराणां स्तवं समासेन । यः भूणोति प्रयचमनाः स गच्छति उत्तमं स्थानं ॥८८९॥

अर्थ—भक्ति सहित संभेषते मुझसे बढ़े गये अनगारीके स्वनको जो कोई संयमी हुआ सुनता है वह उत्तम स्थानको पता है ॥ ८८९ ॥ एयं संजमरासि जो काङ्ग्वि संजन्तो ययसिव्प्या । दंसणणाणसमग्गो सो गाङ्ग्वि उत्तमं ठाणं ॥ ८९० ॥ एवं संवमराधि यः करोति संयतो व्यवतिनात्मा ।

पाना है ॥ ८९० ॥

एवं मण अनिशुदा अणगारा गारविह उम्मुका । घरणियरिह य महिया देंतु समाहि च पोर्षि चाट९१ एरं मण अभिन्तुता अनुमाग ग्रीगीः उत्कृताः । चर्मणयरा च महिता दृदतु मुमारि च वेषि च ॥८९१॥ अर्थे—स्म वहार कृद्धि आदिक ग्रीसमहित गामीकर एस चेत्र अनुसाहित होते सुद्धि क्षी है चेर्ग कृता

 मुते सम्बन्धर्पनकी गुद्धि तथा संयमपूर्वक मावपंचननस्कारपरि-मतिको दें॥ ८९१॥

इसम्कार आचार्यभीयरकेरिविरचित मुलाचारकी हिंदी-भाषाटीकार्से अनगारीकी भावनाओंको कदनेवाला नवमां अनगारकावनाधिकार समात हुआ ॥ ९ ॥

समयसाराधिकार ॥ १० ॥

आगे मंगडाचरापूर्वक समयसार के कहने की प्रतिश्वा करते हैं ;—
संदित्तु देवदेवं तिष्ठुअणिमहिंदं च सञ्चसिद्धाणं ।
सोच्छामि समयसार सुण संस्वयं जहा चुत्तं ॥ ८९२ ॥
संदित्वा देवदेवं त्रिश्चवनमहिंदं च सर्वसिद्धात् ।
स्वामि समयसार मृण्यु संदेषं यथा उक्तं ॥ ८९२ ॥
अर्थ—तीनडोककर पृत्य पेसे अर्दत भगवानको तथा सब सिद्धोंको नमस्त्रार करके द्वादशांग्वा परमवत्त्वरूप समयसारको
पूर्वाचार्योक कथानुसार सक्षेत्र में महत्त्व ह सी तुम सुनो॥८९२
दच्यं संस्तं कालं आग्वं च पद्वच संघडणं ॥
स्वर्थ देवं सार्वं समणो तस्थ हि सिद्धिं लहु लहदि८९३
दच्यं संबं कालं आवं च पत्रीत्य संहत्तर्नं ।

पत्र हि यतने श्रमणः तत्र हि सिद्धि लघु लमते ॥८९३॥ अर्थ—द्रव्य क्षेत्र काठ मान हाडके वंगनसे उलन शक्ति

२१ मूला•

१२२ म्नाचार-इनका साध्यकर जिस क्षेत्रमें झान दर्शन तपने चारिएको पाउवा

है उमीजगर भीन ही लिक्किते पता है ॥ ८२३ ॥ भीरो चररामपरो भीनं हि प सिन्धिम्म स्थासित हु । माहि सिन्काहि पेरम्मपित्रीमो पविष्टुम सम्बस्स्थाएं भीरो प्राम्मपरः लोहं हि शिक्षता विभाति है।

न दि मिष्यति नैसम्पविद्वीनः पडित्सा मर्रश्वासाणि ८९५ अप्रे----वो असर्ग सन्तेने समये सतार प्रदीर भोगोरे रिसम्बन्ध दे नद भोर भी आल पता हो तो नो कर्मा नाग्य हरून है और नो नेसम्पतिन दे नद सन आल नो पर अप तो भा कर्म चन्न तर्मी हरम्बना ॥ ८९४॥

वता है जार में जन नहीं हरकाता ॥ ८९४ ॥ निवर्ष पर चना रचने भोजे जेमेंदि मा पत्र जेप । तु:म्हें सद्द निया जिद्दा मेहिन आपीह सुद्ध पराये ८९६ निवार पर नम मनने स्तिते जेव मा गत्र जना

ति । त्र का स्टब्ल्य वास नाम वा स्तु तर्य द्वारों वह जन निर्म ने मिसाय गुजु देसाये ॥ दश्य ॥ चहु द नृत सम्बद्ध नाम याच्या है तो विद्या नोजन दर्भ नने रहे नाम जातर दर्भ स्तृत्व ने हे हरोते स्तर इर्भ का रहा नाम जातर है। वह ने ने ने स्टब्स स्त्री स्तर्भ इर्भ का राज का इर्भ है।

એ એ સ્વાર્થિક પ્રાપ્ત પ્રાપ્ત પ્રાપ્ત પ્રાપ્ત હતું હતા છે. જે કે કે સ્વાર્થિક સ્વાર્થિક સ્વાર્થિક કે સ્વાર્થ

भरदित हो, क्याय और परिमदको छोड़ आत्महितमें उपनी हो. क्रिकेट संबंधि मह पर ॥ ८९६ ॥ 🗗 घोषध्य सिक्लिंद जिणह पहुसुदं जो चरिससंपुर्णो। जो प्रण चरिचाहीणों कि मस्स सुदेण पहुण्णा/८९७॥

स्त्रोके शिक्षिते अपति पहुश्रुतं यः पारिप्रसंपूर्णः । यः प्रनः पारिप्रधीनः कि तस श्रुतेन पहुकेन ॥ ८९७ ॥ अर्थ-ओ मुनि भारियमे पूर्ण है यह भोडासा भी पंचयत-

रदारादि पदा हुआ दशपूर्वके पाठीको जीत हेता है। क्योंकि जी चारित्रहित है वह बहुत्ते शाखीका जाननेवाला होताय तो भी उसके बहुत शास पढे दोनेसे बया लाग है। कुछ लाग नहीं । पारित्रपार विना कर्मीका धय नहीं होसकता ॥ ८९७ ॥

🕖 णिज्ञायमी य णाणं यादी झाणं चरिस णाया हि । भवसागरं त भविया तरंति तिहिस्रविणवायेण॥८९८ निर्यापकथ द्वानं यातः ध्यानं चारितं नीहिं ।

भवगागरं त भन्याः तरंति त्रिमक्षिपातेन ॥ ८९८ ॥ अर्थ-जिद्दात्र चटानेवाटा निर्यापक तो ज्ञान है पवनकी जगह ध्यान है और चारित्र जिहान है इन ज्ञान ध्यान चारित्र तीनोंक मेटसे भव्यजीव संसारसमुद्रसे पार होजाते हैं ॥ ८९८ ॥

्रणाणं पपासओ तयो सोधओ संजमो य ग्रुसियरो । तिण्हंपि य संजोगे होदि हु जिणसासणे मोक्खो८९९ ग्रानं प्रकाशकं तपः शोधकं संयमध गुप्तिकरः । त्रयाणामपि च संयोगे भवति हि जिनशासने मोक्षा।।८९९

३२४ मुलाचार--

अर्थ—ज्ञान तो द्रव्यखरूपका प्रकाश करनेवाला है, त कर्मोंका नाशक है, चारित्र रक्षक है । इन तीनोंके संयोगरे जिनमतमें मोक्ष नियमसे होता है॥ ८९९॥

) णाणं करण्विहीणं छिंगग्गहणं च संजमविहणं। दंसणरहिदो य तवो जो कुणइ णिरत्थयं कुणदि९००

झानं करणविहीनं लिंगग्रहणं च संयमविहीनं । दर्शनरहितं च तपः यः करोति निरर्थकं करोति ॥९००॥ अर्थ--जो पुरुष पडावश्यकादि किया रहित ज्ञानको संयम-रहित जिनरूप नम छिंगको, सम्यक्त्वरहित तपको धारण करता

है उस पुरुषके ज्ञानादिका होना निष्फल है ॥ ९०० ॥

🕇 तवेण घीरा विधुणंति पावं अज्झप्पजोगेण खवंति मोहं। संखीणमोहा धुदरागदोसा ते उत्तमा सिद्धिगर्दि पयंति तपसा धीरा विधन्वंति पापं अध्यात्मयोगेन क्षपयंति मोहं। संक्षीणमोहा धुतरागद्वेपाः ते उत्तमाः सिद्धिगति श्यांति९०१ अर्थ-सम्यग्ज्ञानादिसे युक्त तपकरके समर्थमुनि अगुभकर्मीका नाश करते हैं, परमध्यानकर दर्शनमोहादिका क्षय करते हैं।

मोक्षको पाष्ठ होते हैं ॥ ९०१ ॥ हेस्साझाणतवेण य चरियविसेसेण सुमाई होई। तह्या इदराभावे झाणं संभावये धीरो ॥ ९०२ ॥

लेक्याध्यानतपरा च चारित्रविद्येपेण सुगतिः भवति ।

वसात् इतराभावे ध्यानं संभावयेत् धीरः ॥ ९०२ ॥ , अर्थे-लेरवा ध्यान तव चारित्र इनके विरोषधे उत्तन सर्गादि

पश्चात् मोहरहित हुए तथा रागद्वेपरहित हुए वे उत्तम साधुजन

गति होती है इसिल्ये लेटबादिक कदावित न होनेपर भी भीर भूति शुभण्यानका अवदय वितवन करे। क्योंकि प्यान समर्गे भुक्त है।। ९०२॥

मिसमादो णाणं णाणादो सन्यभायउपलदी । उपल्डदपदस्पो पुण सेपासेयं विपाणादि ॥ ९०३ ॥ सम्यन्याद् ग्रानं द्वानाद् सर्वमायायर्टिमः । उपल्डप्यदार्यः पुनः धेयः अभेयः विज्ञानाति ॥९०३॥ अर्थ-पन्यस्यसे ग्रान सम्यज्ञान दोता है ज्ञानते स्व प्रदा-भेफ सरुपकी पद्यान होती है जार विसने पदार्थोक सहस्य अप्रीत्यद्व जान दिया है वही पुण्य वापको अथवा हित अहितको

अच्छातर जान तथा है वहा पुष्प पापका अथवा हित जानता है ॥ ९०३ ॥ ,सेयासेयबिदण्ह, अनुददुस्सील सीलयं होदि ।

सीलफलेणन्मुदयं तसो पुण लहिंद जिन्नाणं॥९०॥।
श्रेगोध्रयंविद् उद्दुदुःग्रीलः ग्रीलगा भवति ।
ग्रीलफलेनान्युदयं ततः तुनः लगते निर्मणं ॥९०॥ ॥
वर्ध--पुष्पापका शाता दोनेते उत्रीलको दुःखा कारत्व द्वार शिक्षा भाग करनेवाला होता है उत्रके पाद शिक्षा फले सर्गादिका तुता भोग नोशको माता है ॥ ९००॥ (3)सच्चित्र सुद्धाणां सुद्ध सुग्राणिवृंगि सुद्ध पढिवृंशि । समणं भट्टमरिसं ण सु सक्षा सुगाद गोहुं॥९०५॥ सव्योगि हि शुव्दानो ताहु ग्राग्राविष् ग्रह्म पठिवृंशि ।

श्रमणं अष्टचारित्रं न हि श्रुचयं सुगति नेतुं ॥ ९०५ ॥ अर्थ-स्वर्षि मनिने सब ही श्रवज्ञान अच्छीतरह पहिल्या

उस सुनिको सुगतिमें वह सान नहीं हेजा सकता। ४^{९ २ जन्छ।}वरह मनने करलिया हो तौभी चारित्रते *ज* चारित्रमुख्य है ॥ ९०५ ॥ '' जिंद पड़िंद दीयहत्यो अयडे कि कुणिद तस्स सोद जिद्दे सिनिस्स्रिकण अण्यं करेदि किंतस्स सिक्सक यदि पवति दीपहत्तः अवटे कि करोति वस स दीपः यदि शिक्षित्वा अनयं करोति कि वस शिक्षाफळ॥१०६ अर्थ—जो हायमं वीयक्रिये हुए हे रेसा पुरुष यदि कुर् गिरनाय तो उसको दीपक लेनेसे क्या लाभ है ! कुछ भी गहीं। उसीतरह शस पढ़कर जो चारित्रका भंग करे तो उसके गान पढनेसे कुछ फायदा नहीं है ॥ ९०६॥ पिंड सेजं उचिं उमामउष्णवणसणादीहिं। वारित्तरक्वणहं सोघणमं होदि सुचरित्तं ॥ १०७॥ विंडं शच्यां उपाधं उद्गमोत्पादनेषणादिभ्यः । चारित्ररमुणार्थं शोधयन् भवति गुनारित्रं॥ ९०७॥ अर्थ—जो साधु चारित्रकी रसाढे किये निमा राष्ट्रा और ान संयम शोचके उपकरणोंको उत्तम उत्पादन और प्रपणादि

भोते चीपना है यही मुचारिकाला होता है। दोपींचा न होना द्वादि है।। ९००॥ त्वपी नोमो चोसडसरीरदा स पडिलिङ्गां। हु लिंगरूपो पद्देश्यिषों होहि णादच्यो॥९०८॥ विद्वाद्वादेशीरदा च प्रतिनेतनं। है डिंगकृत्यः चतुर्प्रधारिता च प्रतिनेतनं। है डिंगकृत्यः चतुर्प्रधार्मिता च प्रतिनेतनं।) अर्थ—करहे भादि यन परिमद्दश त्याग, फेन्नसेन, प्रतिस्ति-शास्त्रास्त्र भ्रमान भ्रोमणी यद पारषदार निगमेद जानता । ये अति अपरिमद धर्माणीन भावता पीतरागता द्याणन्ता इनके हर्ष पन्द दें ॥ ९०८ ॥
अयोरस्मुद्दिस्य संज्ञाहर रायपिंड किवियममं।

चद जेंद्र पडिस्मणे मामे पत्नो समणकरपी ॥ ९० ॥
अपेलक स्वमूर्रिकं ग्रय्वाग्रहं राजपिंड कृतिकर्म ।
मतानि ज्यष्टः प्रतिक्रमणे मामः पयो ध्रमणकरपः॥९०९॥
अपं— ध्रमणकरण वर्षात् कृतिपमेनेद दत तरह्या है—
वस्त्रादिक अन्नाव, उद्येष भोजनचा त्याग, मेरे वस्त्रीकार्मे
रहनेविक्को भोजन देना द्व तरदेयाक अन्नाव, गरिष्ट पुष्ट भोजनचा त्याग, यंदनादिमें अपने साथी होनेका त्याग, प्राप्ती
निज्नेकी रूपाका त्याग, प्रत्यानेका विचार, देवतिकार्द प्रतिक्रमण, योगते पहले नासवक रहना, पंचकत्याणकरिक सानीका
स्वरा ॥ ९०९॥

, रजसेदाणमगहणं महर सुकुमालदा लहुसं च । जत्येदे पंचगुणा तं पहिल्लिहणं पसंसंति ॥ ९१० ॥ रज्ञःस्वर्याग्रहणं मार्देवं सुकृमारता लघुत्तं च । यदेवं पंचगुणास्तं प्रतिलेखनं प्रयंसंति ॥ ९१० ॥ अर्ध—जिसमें वे पाच गुण हैं उस ग्रीयनोपकरण पीळी आर्द्धा सायुक्त प्रशंस करते हैं बह वे हैं—पुलि और पसेवसे मेळी न हो होमल हो देखने योग्य हो हल्की हो ॥ ९१० ॥ सुदुमा हु संति पाणा दुप्पस्या अविस्त्यो अमेज्ज्ञा हु।

जदि पडदि दीवहत्थो अवडे किं कुणदि तस्स सो दीवो जदि सिविखऊण अण्यं करेदि किंतस्स सिक्सफ्लं॥ यदि पतित दीपहरतः अवटे किं करोति वस स दीपः। यदि शिक्षित्वा अनयं करोति किं तस शिक्षाफलं॥९०६॥ अर्थ-- जो हाथमें दीपकलिये हुए है ऐसा पुरुष यदि कुएने गिरजाय तो उसको दीपक हेनेसे क्या लाभ है ? कुछ भी नहीं। उसीतरह शख पढकर जो चारित्रका मंग करे तो उसके शास पदनेसे कुछ फायदा नहीं है ॥ ९०६ ॥ पिंडं सेजं उवधिं उग्गमउप्पादणेसणादीहिं। चारित्तरक्लणहं सोघणयं होदि सुचरित्तं ॥ ९०७ ॥ पिंडं शच्यां उपधि उद्गमोत्पादनैपणादिभ्यः । चारित्ररक्षणार्ये शोधयन् मवति मुचारित्रं ॥ ९०७ ॥

हो व अच्छीतरह मनन करिया हो तौभी चारित्रसे प्रष्ट होनेम उस मुनिको सुगतिमें वह ज्ञान नहीं लेजा सकता। इसकिंगे

चारित्रमुख्य है ॥ ९०५ ॥

अर्थ--जो साध चारित्रकी रक्षाके लिये भिक्षा राज्या और ज्ञान सयम शीचके उपकरणोंको उद्गम उत्पादन जीर एपणादि दोपोंसे शोधता है वही सुचारित्रवाटा होता है। दोपोंका न होना वही शुद्धि है ॥ ९०७ ॥

अचेलक्षं लोचो घोसइसरीरदा य पडिलिहणं। एसो हु लिंगकपो चदुव्विधो होदि णाद्व्यो॥९०८॥ अचेतकत्वं होची व्युत्स्पृष्टयरीरता च प्रतिलेखनं । ्र एप हि लिंगकरपः चतुर्विधो भवति ज्ञातव्यः ॥ ९०८ ॥

अर्थ---इपहे आदि सन परिप्रहका त्यान, फेराटोंन, धरीरसे-स्कारका जभाव भोरपीछी यह चारमकार डिंगभेद जानना । ये चारों अपरिप्रह समीचीन भावना बीतरागता दयापाठना इनके चिन्ह हैं ॥ ९०८ ॥

अवेरुकुद्देसिय सेजाहर रायपिंड किदियमां।
वद जेट्ट पडिक्रमणे मासे पज्जो समणकरपो ॥९०९॥
अवेरुकत्यप्रदेशिकं प्रय्याप्ट्र राजपिंड कृदिकमी ।
व्रवानि क्षेष्ठः प्रतिक्रमणं मासः पर्या अमणकरपः॥९०९॥
अर्थ-अमणकरपः अर्थात् धुनिपमंभेद दल तरहका हैव्यादिका अभाव, उदेशते भीजनका त्याग, मेरी यसतिकामें
रहनेवालेको भीजन देना इस उपदेशका अभाव, गरिष्ट पुष्ट
भीजनका त्याग, यंदनाहिमें अपने साथी होनेका त्याग, साथी
मिलनेकी स्थाका त्याग, प्रयमनेका विचार, देवसिकादि प्रतिक्षण, मोगते पहले मासक रहना, पंचकत्याणकोक सालोका
सेवन ॥९०९॥

तमा जीवद्याए पडिलिक्णं पारए भिवस्तू ॥ ९११॥ सस्या हि स्ति प्राचा रूपस्य अस्या अपात हि । जन्म द्राव्या हि । जन्म जीवस्यामः पतिलेखनं पारेषे भिन्नः॥ ९११॥ जर्म—अन्ते जीवे हे । १११॥ जर्म-अन्ते जीवे हे । ११॥ इस्ते देसनेने जाते हें जीत हम प्रान्याम् नहीं देरी नामको साही हे जीवस्य पार्वेहिने साह प्राप्त प्राप्त स्ता १११॥ ज्यारं परस्याणं जिसि सुन्ते उद्विते ह्या साइस्य ।

मुख्यार-

२२८

પ્રવૃતિનેવ્ય મળતું તેકાપે ક્રેલીન નિર્ભતું હા ૧૧૫ પ્રદેશ પ્રવૃત્ત નો લોકો છે. ઉક્ષ મુખ્ય જેલા પૂર્વ ક્ષેત્રો સારકા જેલા કર તેમને દિના નિર્દેશન તોમનો પેવા લાગુ કહ્યા હે છે. ૧૧૧ તેમને સામનો પ્રવૃત્ત નિર્દેશના વાત્ર કહ્યા હે છે. ૧૧૧ દૃષ્ટ દૃષ્ટ દૃષ્ટ દિલ્લી નિર્દેશના વાત્ર નિર્દેશના વાત્ર નો કર્યું હતા કર્યું હતા કર્યું પાર્ટ નિર્દેશના સામનો તેમને કર્યાન નિર્દેશના સામનો તેમને કર્યાને વાત્ર મહિલા મામનો તેમને કર્યાને મુખ્યાને તેમને કર્યાને વાત્ર મહિલા મામને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને મામને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને મુખ્ય કર્યાને તેમને કર્યાને કર્યાને કર્યાને તેમને કર્યાને તેમને કર્યાને કર્યાને કર્યાને કર્યાને સ્પાર્થન કર્યાને કર્યાને

अष्यक्रिकितिय सुपंती जीवपतं कृषार्थियपंतुत्रस्य - उत्तरं प्रस्तपंतियि गुत्र उत्तिनी विकास

च्य प्रभाव जा प्रविद्धां कीत होण ॥ प्रदेश कर्क (१०१०) कार महा नहीं विद्यास नी नहीं है ज्या की विद्यास प्रभाव प्रभाव वृत्व कार ११॥ ११ प्रभाव १८३१ व्याप्त कार्यास स्थाप स्थाप १४ ११ १४ व्याप्त १४ ११ १४ व्याप्त स्थाप प्रभाव १४ १४ व्याप्त स्थाप स्थाप १४ १४ व्याप्त स्थाप प्रभाव १४ १४ व्याप्त स्थाप स्थाप १४ व्याप्त स्थापत स्थापत १४ व्याप्त स्थापत १४ व्याप्त स्थापत स्थापत १४ व्याप्त स्थापत स्थापत १४ व्याप्त स्थापत स्य

अर्थ-पायोत्सर्गमें गमनमें फर्मडलु आदिके उठानेमें प्रसुका-दिके रखनेमें शबनेमें आसनमें सठनके साफ करनेमें बबसे पीछी-कर जीवोंकी रक्षा कीजाती है जार यह सनि संयमी है ऐसा अपनी पक्षमें चिन्ह होजाता है।। ९१४ ॥ 📭 पोसइ उवओ पक्से तह साह जो करेदि णियदं तु ।

णावाए काद्राणं चाइम्मासेण णियमेण ॥ ९१५ ॥ बापपं उनयोः पद्ययोः तथा साधुः यः करोति नियतं तु । नापाये कल्याणं चातुर्भातेन नियमेन ॥ ९१५ ॥ अर्थ-जो साधु चातुर्मासिक मतिकमणके नियमसे दोनों चतुर्दश्चीतिथियोंमें भीषधोपनास अनस्य करता है नह परमससका

नादा नहीं घरता अर्थात्*संखकी माप्ति आवश्य होती है ॥९१५॥ पिंडोवधिसेज्ञाओं अविसोधिय जो य भंजदे समजो। मृटहाणं पत्तो भुवर्णसु हवं समणपोद्धो ॥ ९१६ ॥ पिंडोपिध्यस्या अविशोध्य यथ भंके श्रमणः। मुख्यानं प्राप्तः भवनेषु भवेत् थमणतुच्छः ॥ ९१६ ॥

अर्थ-जो मुनि आहार उपकरण आबास इनकी न सोधकर सेवन करता है वह मुनि महस्थपनेको प्राप्त होता है और छोक्से सुनिपनेसे द्दीन कहाजाता है ॥ ९१६ ॥ ., तरस ण सुज्झइ चरियं तचसंजमणिचकालपरिहीणं। आवासमं ण सुज्झह चिरपव्यइपोवि जह होह ९१७ तस न शुध्यति चारित्रं तपःसंयमनित्यकारुपरिहीनं ।

आवश्यकं न शुध्यति चिरप्रवनितोषि यदि भवति॥९१७॥

₹₹८ . मूलाचार-

सहमा हि संति प्राणा दुप्पेश्या अश्णा अप्राह्मा हि। तसाव जीवदयायाः प्रतिलेखनं धारयेत् मिश्रुः॥ ९११ ॥ अर्थ-अत्यंत छोटे द्वीदिय एकेंद्रिय जीव हैं वे बहुत कप्टसे देखनेमें आते हैं और इस चर्मचझुसे नहीं देखे जासकते इसलिये

तह्या जीवद्याए पडिलिहणं घारए निक्खु ॥ ९११॥

जीवदया पाठनेकेठिये साधु मयूरपीछी अवस्य रखे ॥ ९११ ॥ जबारं परसवणं णिसि सुत्तो उद्विदो हु काऊण । अप्पडिलिहिप सुवंतो जीववहं कुणदि णियदं तु९१२ उचारं प्रसवणं निशि सुप्त उत्थिवो हि कृत्वा ।

अप्रतिलेख्य खपन् जीववर्षं करोति नियतं तु ॥ ९१२ ॥

अर्थ--रातमें सोतेसे उठा फिर मलका क्षेपन मृत क्षेप्मा आदिका क्षेपण कर सोधन विना किये फिर सोगया ऐसा साध

पीछीके विना जीवहिंसा अवस्य करता है ॥ ९१**२** ॥ ण य होदि णयणपीडा अचिछपि भमाडिदे दु पडिलेहे। तो सुहुमादी लहुओ पडिलेहो होदिकायव्यो॥९१३॥ न च भवति नयनपीडा अहिंग अपि आमिते तु प्रतिलेख्ये।

वतः सक्ष्मादिः लघुः प्रतिलेखो भवति कर्वन्यः ॥९१३॥ अर्थ-- जिसकारण मपूर पीछी नेत्रोंमें फिरानेपर भी नेत्रोंको पीडा नहीं देती इसीकारण सुक्ष्म रुष्ट आदि गुण युक्त मयूर पीछी रखनी चाहिये॥ ९१३॥

ठाणे चंकमणादाणणिवसेवे संयणआसण पयत्ते। 🗓 ें । पडिलेहिंबई लिंगं च होई सपक्से॥९१४ स्थाने चंक्रमणादाननिक्षेपे श्रयनासने प्रयतेन ।

प्रतिलेखनेन प्रतिलिख्यते िंगं च भवति स्वयते ॥९१॥। अर्थ—क्रावोस्तांने गननमें क्ष्मंत्र आहे उद्योगे पुजका-दिके रसनेमें प्रवचने असनमें हिन्दों सहने स्वति देवे रसनेमें प्रवचे पीडी-कर जीवोही रहा कीजाती है और यह द्वित संयमी है ऐसा अपनी पक्षों विद्व होजाता है॥ ९१०॥ । ११ पोसह उपओ पक्ष्में तह साह जो करेदि णियदं तु । णावाण कहाणं चाहुम्मासेण णियमेण ॥ ९१५॥

पोसह उचओ पबस्ते तह साहू जो करेदि णियदं तु । णावाए कह्माणं चादुम्मासेण णियमेण ॥ ९१५ ॥ श्रीष्पं उमयोः पध्योः तथा साधुः यः करोति नियतं तु । नाषाचे कत्याणं चातुर्मासेन नियमेन ॥ ९१५ ॥ अर्थाणं चातुर्मासेक नियमेन ॥ ९१५ ॥ वर्त्वद्वीतिधियोंने भोष्योषसक अवस्य करता है वह परमस्यक्षा नाय नहीं करता अर्थावसुसक्की माधि आवस्य होती है ॥९१॥॥

(पिंडोचिपिसेजाओ अविसोपिय जो य गुंजदे समणो।
मूल्हाणं पत्तो श्वचणेतु हवे समणोहा ॥ ११६ ॥
पिंडोपिपियणा विद्योग्य यथ ग्रंके अमणः।
मूल्ह्मानं प्राप्तः श्वचेतु भवेत् यमणतुष्टः ॥ ११६ ॥
वर्ष—जो ग्रातः श्वचेतु भवेत् यमणतुष्टः ॥ ११६ ॥
वर्ष—जो ग्रातं जाताः उपकाण भागाः रानको न होषका
सेनव करता दे वह यनि महस्यवेको मारा कोता दे और कोको

३२८

मुलाचार-

तस्मा जीयद्याए पडिलिहुणं धारए भिक्खः॥ ९११॥ सस्मा हि संति प्राणा दुष्प्रस्था अक्ष्मा अग्रासा हि। वसाव जीवदयायाः प्रतिलेखनं धारयेत् मिद्धः॥ ९११ ॥

देखनेमें आते हैं और इस चर्मचक्क्षसे नहीं देखे जासकते इसिन्धे नीवदया पालनेकेलिये साधु मयूरपीछी अवश्य रखे॥ ९११॥ उचारं परसवणं णिसि सुत्तो उद्विदो हु काऊण ।

अर्थ—अत्यंत छोटे द्वीदिय एकेंद्रिय जीव हैं वे वहत कपसे

अप्पडिलिहिय सुवंतो जीववहं कुणिद् णियदं तु९१२ उचारं प्रसंपणं निश्चि सुप्त उत्थितो हि कृत्वा । अप्रतिलेख्य खपन् जीववर्ध करोति नियतं तु ॥ ९१२ ॥

अर्थ---रातमें सोतेसे उठा फिर मलका क्षेपन मृत क्षेप्मा आदिका क्षेपण कर सोधन विना किये फिर सोगया ऐसा साध पीछीके विना जीवहिसा अवस्य करता है ॥ ९१२ ॥

ण य होदि णयणपीडा अव्छिपि भमाडिदे दू पडिलेहे। तो सहमादी लहुओ पडिलेहो होदि कापच्यो॥९१३॥ न च भवति नयनपीडा अस्णि अपि भ्रामिते तु प्रतिलेख्ये । ववः ब्रह्मादिः लघुः प्रतिलेखो भवति कर्वव्यः ॥९१३॥

अर्थ--जिसकारण मयूर पीछी नेत्रोंमें फिरानेपर भी नेत्रोंको पीडा नहीं देती इसीकारण स्क्ष्म छप्न आदि गुण युक्त मपूर पीछी रसनी चाहिये॥ ९१३॥ ठाणे चंकमणादाणणिक्लेवे समजाआसण पयत्ते।

🗓 ्रेज पडिलेहिंजइ लिंगं च होइ सपक्ले॥९१४ स्माने चंक्रमणादाननिक्षेपे ग्रयनासने प्रयक्ति ।

समयसाराधिकार १०।

प्रतिलेखनेन प्रतिलिख्यते लिंगं च भवति खपक्षे ॥९१४॥ अर्थ-कायोत्सर्गमें गमनमें कमंडल आदिके उठानेमें पुलुका-दिके रखनेमें शयनेमें आसनमें झुठनके साफ करनेमें यबसे पीछी-कर जीवोंकी रक्षा कीजाती है खोर यह मुनि सयनी है ऐसा अपनी पक्षमें चिन्ह होजाता है ॥ ९१४ ॥

🕡 पोसह उबओ पक्ले तह साह जो करेदि णियदं तु l णावाए बह्यार्ण चादुम्मासेण णियमेण ॥ ९१५ ॥ त्रोपधं उभयोः पश्चयोः तथा साधुः यः करीति नियतं तु । नापाये कल्याणं चातुर्मासेन नियमेन ॥ ९१५ ॥

अर्थ-जो साधु चातुर्मासिक मतिक्रमणके नियमसे दोनों चतर्दशीतिथियोंमें मोपघोपवास अवदय फरता है वह परमसुखदा

नाश नहीं करता अर्थात्•सुखकी माप्ति आवश्य होती है ॥९१५॥ पिंडोवधिसेज्ञाओं अविसोधिय जो प भुंजदे समणो। मुद्धहाणं पत्तो अवणेस्र हवे समणपोद्धो ॥ ९१६ ॥

पिंडोपधिग्रय्या अविशोध्य यथ भुंके धमणः । मुलस्थानं प्राप्तः भ्रुवनेषु भवेत् थमणतुर्द्धः ॥ ९१६ ॥ अर्थ--- जो सनि आहार उपकरण आवास इनको न सोधकर सेवन फरता है वह मुनि महस्वपनेको मात्र होता है जार लोकमें मुनिपनेसे दीन कहाजाता है ॥ ९१६ ॥

, तस्स ण सुज्हाइ चरियं तयसंजमणियकालपरिहीणं। आवासमं ण सुज्यह चिरपव्यह्योवि जह होह ९१७ तस न द्युप्यति चारित्रं तपःसंयमनित्यकाटपरिद्यनं । आवश्यकं न शुध्यति चिरप्रविविशेषि यदि भवति॥९१७॥

११८

तम्रा जीवन्याए पदिलिक्षणं पारए निरम्म् ॥ ९११ यस्मा दि सेनि प्राणा रूपेश्ना अस्या अवाया दि । वन्यन् जीवरपायाः यतिनेसनं पारयेन् निग्रा ॥ ९११ ।

नुसासा-

अर्थ-अवन छोटे ग्रीहिय पंतिह्य शीय है थे बहुत कहते देसमेंगे भागे हैं जीर इस नर्भगञ्जसे नहीं देसे आसकते इसकिये जीवद्या पानमें हेलिये सातु मयूर्योधी अवस्य रखे ॥ १२१ ॥ उचारं परस्तवणं णिसि सुत्तो उद्विदो हु काऊण । अप्पिब्रिलिष्टिंग सुप्तो जीवयलं कुणदि णियदं तु९१२

भारिका क्षेत्रण कर सोधन विना किये किर सोगवा ऐसा साथ पीछोक विना जीवर्दिसा अवस्य करता है ॥ ९१२ ॥ ण प होदि णयणपीडा अस्टिविंग अमाडिन्दे दु पडिलेहें। तो सुद्रमादी लहुओ पडिलेहों होदि कायच्यो॥९२३॥

न च भवति नयनपीडा अहिच अपि आमिते तु प्रतिहेरुदे । ततः सहमादिः लघुः प्रतिलेखो भवति कर्तन्यः ॥९१३॥ अर्थ—विसकारण समूर पीछी नेत्रोमें क्रियोगरः भी नेत्रों की पीछा नहीं देती इसीकारण सहम लघु आदि गुण वुक्त नपूर पीछी सस्ती चारिते ॥९१३॥

नाज गुर्ता स्थार कारण द्वार रहे जादि युग युक्त नदूर संग रक्तमी चाहिये ॥ ९१६ ॥ ठाणे चंक्तमणादाणणिक्खेवे सचणआसण पयत्ते । पडिलेहणेण पडिलेहिंजइ लिंगं व होइ सपक्खे॥९१४

स्थान चंक्रमणादाननिक्षेपे श्वनासने प्रयत्नेन ।

प्रतिलेखनेन प्रतिलिख्यते लिंगं च भवति खपक्षे ॥९१४॥ अर्ध-कायोत्सर्गमें गमनमें कमंद्रज आदिके उठानेमें पुस्तका-दिके रखनेमें श्रयनेमें आसनमें शठनके साफ करनेमें यबसे पीछी-कर जीबोंकी रक्षा कीजाती है और यह मुनि सबसी है ऐसा अपनी पक्षने चिन्द होजाता है॥ ९१४ ॥

🗗 पोसह उवओ पक्ले तह साह जो फरेदि णियदं हु 🛭 णावाए कादाणं चादम्मासेण णियमेण ॥ ९१५ ॥ प्राप्त उभयोः पद्धयोः तथा साधः यः करोति नियतं त । नापाये कल्याणं चातुर्मासेन नियमेन ॥ ९१५ ॥

अर्थ-- जो साथ चातुर्मासिक प्रतिक्रमणके नियमसे दौनी चतुर्दशीतिभियोंने मोपयोपनास अवस्य करता है वह परमसखका नारा नहीं करता अर्थात् सुस्तकी प्राप्ति आवश्य होती है ॥९१५॥

पिंदोवधिसंज्ञाओं अविसोधिय जो य भुंजदे समणी। मृत्रहाणं पत्तो भुवणेसु हवे समणपोहो ॥ ९१६ ॥ पिंडोपधित्रय्या अविद्योध्य यथ भ्रंक थमणः। मृहस्थानं प्राप्तः भवनेषु भवेत् थमणतुच्छः ॥ ९१६ ॥ अर्थ-चो मुनि आहार उपकरण आवास इनको न सोधकर

सेवन करता है वह मुनि महस्यपनेको माप्त होता है और छोक्से मुनिपनेसे दीन कहाजाता है ॥ ९१६ ॥ ,, तस्स ण सुज्झइ चरियं तवसंजमणियकालपरिष्ठीणं। आवासमं ण सुज्झइ चिरपव्यइयोवि जइ होइ ९१७

तस्य न ग्रध्यति चारित्रं तपःसंयमनित्यकारुपरिद्वीनं । आवश्यकं न शुध्यति चिरत्रवजितोपि यदि भवति॥९१७॥

अर्थ--पिंडादिकी शुद्धिके विना जो तप करता है तथा त संयमसे जो सदा रहित है उसका चारित्र शुद्ध नहीं होसकत व्यार भावस्यकर्म भी शुद्ध नहीं होसकते चाहे वह बहुतकालक दीक्षित क्यों न हो॥ ९१७॥ मूलं छित्ता समणो जो गिण्हादी य वाहिरं जोगं। बाहिरजोगा सब्वे मूलविहणस्स किं करिस्संति ९१८ मूलं छिचा श्रमणो यो गृद्धाति च वाहं योगं। बाह्ययोगा सर्वे मृछविद्दीनस किं करिप्यंति ॥ ९१८ ॥ अर्थ--जो साघु अहिंसादि मूलगुणीको छेद वृक्षमूलादियो-गोंको प्रहण करता है तो मूछगुणरहित उस साधुके सब बाहिरके योग क्या कर सकते हैं उनसे कर्मीका क्षय नहीं होसकता॥९१८॥ हंतूण य वहुपाणं अप्पाणं जो करेंदि सप्पाणं। अप्पासुअसुहर्काची मोक्लंकंसी ण सो समणो॥९१९ इन्ता बहुप्राणं आत्मानं यः करोति सप्राणम् । अप्रामुक्तसुखकांक्षी मोक्षकांक्षी न स थमणः ॥ ९१९ ॥ अर्थ--जो साधु बहुत त्रसस्यावरतीवींको मारकर सदीप आहार मोगकर अपनेमें बल बढ़ाता है वह मुनि अपासुकसुसका अभिलापी है जिससे कि नरकादि गति निरु परंतु मौशसुसका बांछक नहीं हैं॥ ९१९॥

प्रशापार—

श्रीभेकापी है जिससे कि नरकादि गति मिने परेत मोशसुसका गांडक नहीं हैं ॥ ९१९ ॥ एको या वि तयो या सीहों यग्घो मयो य स्वादिज्ञो । "दि स्वादेज्ञ स जीयो जीवयरासिं णिहंतूण ॥९२०॥ एकं या दो त्रीन् या पिंदो स्थाघो मूर्ग या सादरेन् । पिंद सादयेन् स नीयो जीवसार्ध निहस्य ॥ ९२०॥ समयसाराधिकार १०।

सालेता है तो वह नीच पापी कहा जाता है यदि साध अधः कर्मसे जीवराशिको हतकर आहार करे तो यह महानीच है ९२०

आरंभे पाणिवही पाणिवहे होदि अप्पणी हु बहो । अप्पा ण हु इंतन्वी पाणिवही तेण मोत्तन्वी॥९२१॥

आरंभे प्राणिवधः प्राणिवधे भवति आत्मनो हि वधः ।

आत्मा न हि इंतन्यः प्राणिवयस्तेन मोक्तन्यः ॥ ९२१ ॥

अर्थ-पचनादि कर्ममें जीवघात होता है बीर जीवघात

होनेसे आत्मपात होता है। जिसकारण आत्माका पात करना

टीक नहीं है इसीलिये जीवपातका त्याग करना ही योग्य है ९२१

भंक्ते अधःकर्म सर्वे अपि निरर्थका योगाः ॥ ९२२ ॥

अर्ध-- जो साथ स्थान भीन और भीरासनसे उपवास चेळा-

तेला आदिषर तिष्ठता है जीर अधःकर्म सहित भोजन करता है

उसके सभी योग निरर्धक हैं॥ ९२२ ॥

किं फाइदि पणवासी सुण्णागारी प रस्त्रमृटी वा।

शंजदि आधारममं सञ्बंबि णिरत्थपा जोगा॥ ९२३॥

किं करिप्यति पनवासः शून्यागारध पृथमृतो वा । श्रंके अधःकर्म सर्वेषि निर्धका योगाः ॥ ९२३ ॥

अर्ध--उस मुनिके बनवास बया करेगा सुनेधाने दास जार

जो ठाणमोणवीरासणेहिं अत्यदि चउत्यक्टेहिं। मंजदि आधाकम्मं सन्येवि णिरत्थया जोगा ॥९२२॥ यः स्थानमीनवीरासनैः आस्ते चतुर्थपष्टभिः ।

मुजानार-इश्लन्त्रमें रहना क्या करसकेगा वो अभःक्रमेंसहित भीवन कर है। उस के सभी उचरणूण निर्धक है ॥ ९२३ ॥ कि तस्स ठाणमोणं कि काइनि अन्भवगासमादाये

मेत्तिविहणो समणो सिउझदि ण ह सिद्धितंसोयि९ कि वस साने मीने कि करिप्यति अभावकाशभावापः मेरीविदीनः थमणः सिष्यति न हि सिदिक्रीयोपि ९२ अर्थ-उस साप्रहे कायोत्सर्ग मीन और अभारकाश यो आ प्राप्त योग स्वा हर सहता है जो साधु मेरीना श्रीहर्त बद भी तका चादनेश व होनेपर भी मोश्च नहीं पामकवा ॥९२४

• ३३२

जब योमरिसु कतिं थिसं व बोसर्स बाक्यो संपी तद क्रोबि मंद्रममणी वंच र खुणा ण वोगराद ९२ पत्रा अरुव्हाम इति शि न स्युत्महाति दाहमा गर्पः ।

क्या क्रीवि भेदभमणः येन तु श्ला न व्युग्धनि ॥९३५। अर्थ-नेत बढ़ा रीप्र भाष क्रांक्श्रेको छोत्रक्त (व्यक्ते नर्ध को र !! है उसानगर होई बद पूर्ति अनीत् बारिकी आक्रा

मा हु मोजन ह जीनते पनस्ताको नहीं डीवृत्त ॥ १२५ ॥ र्दश्या पीमणी पादी उदक्तनं पमञ्जी। बार्यक्वं भाषं मादि जीवराती व मरीर ॥ १२४॥ ब्रह्मा वेशमी वृक्षि उद्दूष्टने प्रमाजनी ।

मेरल देला राज्यः बीसाविः सानो महीत्॥ ५२४ ॥ वंद- नेन्यं की पूर्व स्थवधानात (यांग)

े दिन्दित से वर्षे वर्षे अवस्थित सीहर स्थान हरते ें ... अपने पार्ट महें का है ने ९५६ त

	समयसाराधिकार १०।	३३३
11	जो भुंजदि आधाकम्मं छञ्जीवाण घायणं किचा।	ſ
	अबुहों छोल सजिन्मो पवि समणो सावओ होज	१२७
	यो भुंके अधःकर्म पद्जीवानां घातनं कृत्वा ।	
	अबुधो होतः सनिद्धः नापि श्रमणः श्रावकः भवेत्॥	
	अर्ध-जो मृदनुनि छहकायके जीवींका पात करके	
	कर्मकर सहित मोजन करता है वह छोठपी जिह्नाके वश	हुआ
	मुनि नहीं है यावक है ॥ ९२७ ॥	
9/		
	जेमंतोवि सघादी णवि समणो दिष्ठिसंपण्णो ॥९	२८॥
	पचने वा पाचने वा अनुमनचित्तो न तत्र विमेति ।	
	जेमंतोपि स्वघाती नापि श्रमणः दृष्टिसंपन्नः ॥ ९२८	
	अर्थपाक करनेमें अथवा पाक करानेमें पांचउपकर	
	अधःकर्ममें प्रवृत हुआ और अनुमोदनामें प्रसन्न जो मुनि	
	पचनादिसे नहीं ढरता वह मुनि भोजन करता हुआ भी आत्म	धाती
	है। न तो मुनि है और न सम्यन्दृष्टि है॥ ९२८॥	
11	ण हु तस्त इमो लोओ णवि परलोओत्तमङभट्टस	स ।
	दिंगग्गहणं तस्स दु णिरत्थयं संजमेण हीणस्स प	१२९
	न हि तस अयं ठोकः नापि परहोक उत्तमार्थश्रष्टस	
	हिंगप्रदर्ण तस तु निर्धकं संयमेन दीनस ॥ ९२९	
	ु अर्थ—्यो चारित्रसे अष्ट है उसमुनिके यह छोक भी	
	स्रोर परलोक भी नहीं। संयगरहित उस मुनिके मुनिहिं	गका
	पारण करना व्यर्थ है ॥ ९२९ ॥	
91	पायच्छित्तं आलोयणं च काऊण गुरुसयासिह्य ।	

तं चेव पुणो संजदि आधाकममं असुहकममं ॥ ९३०।
प्रायिषयं आलोचनं च कृत्वा गुरुसकारो।
तदेव पुनः भ्रुंके अधाकमें असुमकर्म ॥ ९३०॥
अर्थ-कोई सागु गुरुके पास वाकर दोषका हदाना जो
दोषको प्रयट करना इनको करके किर पीछे अधाकमंजुक मोजनरं
साता है उसके पापवंग ही होता है और दोनों लोक्से अध होता है ॥ ९३०॥
जो जह जहा रुद्धं गेण्हदि आहारसुविध्यादीयं।
सम्पणगुणसुक्कोगी संसारपवद्वओ होदि॥ ९३९॥

समणगुणमुक्तजोगी संसार्पयद्वओं होदि ॥ ९३१ ॥ यो यत्र यथा रूप्यं गृहाति आहारमुपिकादिकं। अमणगुणमुक्तयोगी संसारप्रवर्षको भवति ॥ ९३१ ॥ अर्थ—ो सागु जिस गुद्ध अगुद्ध देशमें वैसा गुद्ध अगुद्ध मिना आहार व उपकरण प्रदण करता है वह अमणगुणसे रिदेत

बोगी संसारका बढानेवाटा ही होता है ॥ ९३१ ॥ पयणं पायणमशुमणणं संबंती ण संजवो होदि । जेमंतोवि य जन्मा णवि समणो संजमो णतिया।९३२॥

पत्रने पाचनमञ्जननं सेवमानी न संबती भवति । जेमंतीपि च यसात् नापि अनवाः संबमी नामि ॥ ९३२ अर्थ—पचन पाचन अनुभोदना इनको सेवन करता हुआ वृति सबर्गा नहीं हैशकता और पेसे भीजन करता अमण भी नहीं है तथा उसने सेवन भी नहीं है ॥ ९३२ ॥

र्श द वया उसने वयन या गरा है ॥ ९२९ ॥ दर्भ सुद्रमधीदं कि काहदि अजाणमाणस्स । दिना अंधे णाणविसेसीवि तह तस्स ॥ ९३३॥ बहुकमि श्रुवमर्थातं कि करिष्यति अञ्चानतः । दीपित्रेषः अपे झानविज्ञेषारि तथा तस्त ॥ ९३३ ॥ अपं—यो उपयोगरित है चारित्रहीन है प्द महुतसे धान्सोशे भी पड़ते तो का सामुक्तं वह झासज्ञान क्या करसकता है गुळ भी नहीं। जैसे अपेक हाममें दीवक उसीतरह उसका ज्ञान भी कार्यकारि नहीं हैं॥ ९३२ ॥ आधाकम्मपरिणदो फासुगदस्येपि पंषगो भणिदो।

सुद्धं गर्वसमाणो आधाकममेवि सो सुद्धो ॥ ९३४ ॥ अधःकमेपरिणवः प्रामुक्ट्रप्लेषि वंधको मिणवः । सुद्धं गर्वसमाणः अधाकमेणापि स सुद्धः ॥ ९३४ ॥ अध्य-भागुक द्रव्यः होनेतरः वो सागु अधाकमेकर परिणव ह वदं आगमी वष्टा कृतो वहा है जोर वो शुद्धभीवन देखता । ४.६णकरता है वदं अधाको दोससे वरिणामगुद्धिसे गुद्ध है ९३४

भटणकरता दे वह अधारम वापत वारणानगुद्धस गुद्ध है ९६४ ति भागुगमा य दुविहो पसत्थपरिणाम अप्यस्तयोत्ति। सुद्धे असुद्धनायो होदि उवद्वावर्ण पापिनते॥ ९३५॥ मार्थोद्रमाथ दिविधा महत्त्वपत्तिमाः अमस्य स्त्रीति

भागद्गमध्य ।द्वाच्याः प्रश्नेत्वपाराचामः अगश्चतः इत् । शद्धे अशुद्धभावो भवति उपस्थापनं प्रायधिनं ॥ ९३५ ॥ अर्थ-स्मावदोप दोषद्वारकः है एक मयस्वपरिणान दूसरा अप्रश्चन परिणाम । जो शुद्धन्तुने अशुद्धभाव करता है वहाँ उपस्थापन नाता प्रायधिन है ॥ ९३५ ॥

उपस्थान नामा प्रायाश्वह है ॥ ५२५ ॥ १ फासुगदाणं फासुग उचिर्ष तह वीवि अत्तासोधीए। जो देहि जो य मिण्हिंद दोण्हेंपि महाफर्छ होहा॥३३६ प्रायुक्तदानं प्रायुक्तसुपि वथा द्रयमपि आत्मगुद्धा। तं चेव पुणी मुंजदि आघाकम्मं असुहकम्मं ॥ ९३०॥ प्रायिष्यं आलोचनं च कत्वा गुरुसकारी। तदेव पुनः भुंके अधःकर्म अशुभकर्म ॥ ९३० ॥ अर्थ-कोई साधु गुरुके पास जाकर दोपका हटाना और

दोपको मगुट करना इनको करके फिर पीछे अधःकर्मयक्त भोजनको

साता है उसके पापबंध ही होता है जोर दोनों ठोकसे अष्ट होता है ॥ ९३० ॥ जो जह जहा रुद्धं गेण्हदि आहारमुवधियादीयं।

समणगुणमुक्काेगी संसारपवहुओ होदि॥ ९३१॥. यो यत्र यथा लब्धं मृद्धाति आहारमुपधिकादिकं। श्रमणगुणयुक्तयोगी संसारत्रवर्धको भवति ॥ ९३१ ॥ अर्थ-जो साधु जिस शुद्ध अशुद्ध देशमें जैसा शुद्ध अशुद्ध

मिला आहार व उपकरण मदण करता है वह श्रमणगुणसे रहित योगी संसारका वडानेवाटा ही होता है ॥ ९३१ ॥ पयणं पायणमणुमणणं सेवंतो ण संजदो होदि।

जेमंतीयि य जहाा णविसमणो संजमो णतिया।९३२॥ पचनं पाचनमञ्जमननं सेवमानो न संपत्तो भवति । जैमंतोपि च वसात् नापि श्रमणः संवमो नास्ति ॥ ९३२

अर्थ-वचन पाचने अनुमोदना हनकी सेवन करता हुआ द्यनि सबमी नहीं होसकता और ऐसे भोजन करता धमण भी नहीं है तथा उमर्ने संबम भी नहीं है ॥ ९३२ ॥ ्रं सुदमधीदं कि काहदि अजाणमाणस्स ।

ा 🔄 🗓 अंधे णाणविसेसोवि तह तस्स ॥ ९३३॥

बहकमपि श्रुतमधीतं किं करिप्यति अजानतः । र्दापविशेषः अंधे ज्ञानविशेषोषि तथा तस्य ॥ ९३३ ॥ अर्थ-- जो उपयोगरहित है चारित्रहीन है वह बहुतसे धा-स्रोंको भी पढले तो उस साधुके वह द्वासज्ञान क्या करसकता है कुछ भी नहीं । जैसे अंधेके दाथमें दीपक उसीतरह उसका

ज्ञान भी कार्यकारी नहीं है ॥ ९३३ ॥ आधाकसमपरिणदो फासगढब्वेवि वंधगो भणिदो। सदं गवेसमाणो आधाकम्मेवि सो सदो ॥ ९३४ ॥ अधःकर्मपरिणतः ग्रामकदृब्येपि वंधको भणितः ।

शुद्धं गवेपमाणः अधःकर्मणापि स शुद्धः ॥ ९३४ ॥ अर्थ--प्राप्तक द्रव्य होनेपर जो साध अधःकर्मकर परिणत है यह आगममें बंधका कर्ता कहा है जार जो शुद्धभोजन देखता ह्रहणकरता है वह अधःकर्म दोपसे परिणामशुद्धिसे शुद्ध है ९३० भ भावुरममो य दुविहो पसत्थपरिणाम अप्पसत्थोसि।

सुद्धे असुद्धनायो होदि उघट्टावणं पायछितं॥ ९३५॥ भाषोद्रमध द्विविधः प्रशस्तपरिणामः अप्रशस्त इति ।

शुद्धे अशुद्धभाषी भवति उपसापनं प्रायधितं ॥ ९३५ ॥ अर्थ-भावदोप दोपकारका है एक प्रशस्त्रपरिणाम दूसरा अप्रशस्त परिणाम । जो शुद्धवनुत्में अशुद्धभाव करता है बहा

उपलापन नामा प्रायश्चित्त है ॥ ९३५ ॥ फासगदाणं फासग उपधि तह दोवि अससोधीए। जो देदि जो य गिण्हदि दोण्हंपि महाफलं हो हा। ९३६

प्रासकदाने प्रासकपप्रि तथा द्रयमप्रि आत्मग्रद्ध्या ।

मुद्राचार— यो ददाति यथ गृज्ञाति द्वयोरपि महाफलं मवति ॥९३६॥ अर्थ-जो निर्देश मोजन निर्देश टपकरण इन दोनोंको

विशुद्ध परिणानोंसे देता है जीर जो महण करता है उन दोनोंकी. ही महान् कर्मञ्चयस्पी फल निजता है॥ ९३६॥ जोगेसु मूलजोगं भिक्खाचरियं च विष्णयं सुत्ते।

अण्णे य पुणो जोना विण्णाणविहीणएहि कया ५३७ योगेषु मृतयोगो गिद्याचर्या च वर्णिता सूत्रे । अन्ये च पुनर्योगा विद्यानविद्यन्तिः कृताः ॥ ९३७ ॥ अर्थ---आगमने सब मूळ उत्तरगुणोंके मध्यने प्राप्तुकमोजन

ही प्रधान ब्रत वहा है, और अन्य जो गुण है वे चारिब्रहीन साप्रऑकर किये जानने ॥ ९३७ ॥ कछं कछंपि वरं आहारो परिमिदो पसत्थो य।

ण य समण पारणाओ वहवो बहुसो बहुविघो य ९३८ कल्पं कल्पमपि वरं आहारः परिमितः प्रशस्तव । न च धुमणानि पारणा वहवो बहुद्यो बहुविधव ॥ ९३८॥

अर्थ-अगन्ने अगने दिनमें परिमित दोपरहित नोजन करना ठीक है परंतु बहुतसे बहुत प्रकारके उपवास तथा पारणाकर सदीप आहार लेना ठीक नहीं ॥ ९३८ ॥) मरणभयभीरुआणं अभयं जो देदि सञ्बजीवाणं।

तं दाणाणवि दाणं तं पुण जोगेसु मूलजोगंपि॥९३९॥ मरणभवमीरुकेभ्यः अभयं यो ददाति सर्वजीवेभ्यः। ्दानानामपि दानं तत् पुनः योगेषु मृखयोगोपि॥९३९

समयसाराधिकार १० । 3 T U है वही दान सब दानोंने उत्तम है जीर वह दान सब आचरणोंने प्रधान आचरण है ॥ ९३९ ॥ 🗥 सम्भादिद्विस्स वि अविरदस्स ण तयो महागुणो होदि। होदि हु हत्थिण्हाणं चुंदिन्छदकम्म तं तस्स ॥९४०॥ सम्यग्दष्टेरिप अविरतस न तपो महागुणो भवति । भवति हि हस्तिस्नानं चंदच्छित्कर्म वत् वस्य ॥ ९४० ॥ अर्थ-सयमरहित अविरतसम्यग्दृष्टिके भी तप महान उपकारी

नहीं है उसका तप हाथीके खानकी तरह जानना अथवा दहीमध-नेकी रस्सीकी तरह जानना, रस्सी एक तरफसे खुलती जाती एक तरफसे बंधती जाती है ॥ ९४० ॥ 🕡 वेज्ञादुरभेसज्ञापरिचारयसंघदा जहारोग्गं । गुरुसिस्सर्यणसाहणसंयत्तीए तहा मोक्खो ॥ ९४१ ॥ वैद्यातरभेपञ्यपरिचारकसंयत्या यथा आरोग्यं ।

गुरुश्चिप्यरत्नसाधनसंयत्या तथा मोधः॥ ९४१ ॥ अर्ध-- जैसे वैद्य रोगी जीपभ जीर वैयावत्य (टहल) करने-बारुंकि भिरुनेसे रोगी रोगरहित होजाता है उसीतरह गुरु विनय-वान शिष्य सम्यन्दर्शनादि रत्न और पुरुक कमंडल पीछी आदि साधन इन सबके संयोगसे मोध होता है ॥ ९४१ ॥ 🕧 आइरिओवि य वेज्ञो सिस्सो रोगी दु भेसजं घरिया।

खेल वल काल पुरिसं णाऊण साणि दढं कुजा॥९४२॥ आचार्योपि च वैदाः शिष्यो रोगी तु मेपत्रं चर्या। क्षेत्रं वलं कालं प्रवर्ष ज्ञात्वा धर्नः दृढं कुर्यात् ॥ ९४२ ॥

अर्थ-आवार्य हो वेदा है शिष्य रोगी है जीवंग चारित्र है

१३ मूक्ष-

भेक तक का क पूर्ण परिषे पास्त है एक प्रकृती अवहर संपूर्ण र्मोदेव ६ फे फोगू र हो है, फ़िल्मुफोर हुई ब्रह्मा क्या दे हैं १ र ह ६ ३ farene milenter eguin-grine arreit igent b इंग्लामां के के हाले अपने के गाउन है है है । माजको की मानियु है मान्यु में सब्दे के लागाना हुई। रमन्द्रमञ्जूषान्त्रके परिवाधनान्त्रीयन्त्रे हे हे हे है है है वेक्ष्रे प्रतियोग्ने एवक्क्षिपुत्रक शयुक्ते रणः द्राच्यानामं अने बाल वह ने व वालातं है है है है वक्तराहेपरियुद्धे प्राप्तके प्राप्ते के प्रथमायुद्धे हे trainfeign agrinsfisk fift a tiv a अर्थे राज्यभाष्यात्रे (१४७० हा उस. नरीर ह dies, tign eralline og fiere par felte få gene ninfine ein bie biffe eite all aufne nat नेने नाश्वकी इस्थापान अन काब मानेकी सन दर wit is the total of the आशोर तनावी विमहिताने विमहामें च । अभागानुभावने जनगातार निगद्यांगा ॥ ५४५ ॥ महोर चर्चा विवक्तार क्रिक्ट्र व । बाबानापनमाने बानावार विकासनाः ॥ १७५ ॥ अर्थ---मनार रोपाद : पूम रोपाद : नन्द्रवाद : । । । निभिन्न पुराहें अध्यक्ष कर्ननाव माहारह्ये राहास्य जुने बदन इन्हें हा ५४५ है ु बुवहारमोहणाए परमद्वाप तथा वारहरत्र।

T 12 11 4 4

314

दुविहा चाबि दुर्गण छोड्य छोग्रसरा चेव ॥ ९४६ ॥ व्यवहारहोभनाय परमार्थेष तथा पहिस्तु । द्विषया चापि शुप्ता छोफिसी छोकोचरा पेव ॥९४६॥ अर्थ—शैकिसी स्थाति तथा छोकोचरा शुप्ता इन दोनोंको व्यवहारशुद्धि शुक्ति आदिके होभनके लिये तथा रखनवकी शुद्धिके लिये छोड़ना चाहिये ॥ ९४६ ॥

शुद्धक किन राइना बाहिय ॥ १९६ ॥ ।

| परमिद्धपं विसोहिं सुदु पपत्तेण फुणह पव्यह्नओ ।

परमाद्धनांछा विस्त सुदु पपत्तेण परिहरूत ॥ १४७ ॥

परमाधिकां विद्यद्धिं सुद्ध प्रयत्नेन करोति प्रवानितः ।

परमाधिकां विद्यद्धिं सुद्ध प्रयत्नेन करोति प्रवानितः ।

परमाधिकां विद्यद्धिं सुद्ध प्रयत्नेन परिहरूत् ॥ ९४७ ॥

अर्थ—सार्ष रक्ष्यण्यद्धिको भन्ने यत्नकर करे लोर संकादि

स्वानिको अन्त्री तहर यत्नदे त्याग दे ॥ ९४७ ॥

संजनमानिराधेतो करेन वयहारसोधणं मिक्स्सू ।

ववहारदुगंछावि य परिहरजं यदे अभंजंतो ॥ ९४८ ॥ संयममविराधयम् करोतु व्यवहारग्रीधनं मिश्तः । व्यवहारद्वगुत्पामपि च परिहत्तृ नवानि अभेजयन् ॥९४८ अप्ते—सापु भारित्रको नहीं भंग करता व्यवहारग्रीदको करनेवाले प्राथमिजको करें लोर अहिसादि मुर्ताको भंग न करते

व्यवहार्रिदाको भी छोड़े ॥ ९४८ ॥ जन्य कसायुष्पत्तिरभक्तिदियदारङ्ग्तियजणबहुटं । दुक्खमुबसगगयहुटं भिक्ख् खेत्तं विवज्लेक ॥ ९४९ ॥ यत्र क्यायोत्पत्तिरभक्तिरिद्रयद्वारखीननवाहुन्दं ।

यत्र कपायात्पाचरभाकाराद्रयद्वारखाजनवाहुल्य । दुःखप्रुपसर्गबहुलं मिक्षः क्षेत्रं विवर्जयेत् ॥ ९४९ ॥ युक्त पारि -

110

अर्थे-- मि नेवर्ने स्थापीकि अपनि हो, प्राप्तक बनार ही पूर्ण प अधिक हो नहीं नेंबे आदि हिटाबेंक दिश्यकी संविकता हो, नहीं मेंगार चारिना रीमहित विका परिवा ही, क्रेम बरिक हो, उपमें नहां ही देने मानको बान बनार

क्षेत्रहे ॥ १४२ ॥ गिरिकंदरे ममाणं सुण्यागारं च रक्यान्तं वा । जाणं विरामपत्रलं भीरो भित्रम् णिसंबेक्र ॥ ९५० ॥

गिरिक्रमं बचाने प्रयागारे व राजपूर्व स ! भाने विषयपुर्व पीये निष्ठाः निर्माणी ॥ ९५० ॥

अर्थ-पांतकी गुक्ता, मधानश्री प्राप्त और १४का कोटर वेने नेसम्बंहे कारण म्यानीने भीर मुनि रहे ॥ २५० ॥ णियदिविष्ठणं लेलं णियदी वा जरव दृहओ होज।

प्रयक्षा च म सहनष्ट मंद्रामपादी य ते वर्ज ॥ १५१॥ मुप्तिविद्यीनं क्षेत्रं नुपतिमां यत्र रही नवेत । प्रवरमा प न लभ्यते संयमधातभ तत् राजेयेत् ॥ ९५१ ॥ अर्थ-- जो देश राजाकर रहित हो अथवा जहां राजा उड

हो, भिश्वा भी न गिले दीशा महण ऋरनेने ठावि भी न हो, नीर सयमका पात हो उस देशको अवस्य त्याम दे ॥ ९५१ ॥ णो कप्पदि विरदाणं विरदीणमुवासपिता नेहेर्।

तत्थ णिसेव्यवदणसञ्ज्ञापाहारवोसरणे ॥ १५२॥ नो करप्यते विस्तानां विस्तीनामुपाश्रये सातुं ।

[!]ः निषद्योद्धर्तनस्राध्यायाहारन्युत्सर्गे ॥ ९५२ ॥ अर्थ-मुनियोको आर्थिकाओंक लानमें रहना टीइ नहीं हैं मतिक्रमण करना योग्य नहीं है ॥ ९५२ ॥

। होदि दुर्गुछा दुविहा ययहारादो तथा य परमद्वो।

पपदेण य परमहे वयहारेण य तहा पच्छा ॥ ९५३ ॥ भवति जुगुप्ता द्विषा स्पवहारात् तथा च परमार्था ।

प्रयतेन च परमार्था व्यवहारेण च तथा प्रधात ॥ ९५३ ॥ अर्थ—आर्थिक स्थानमें मुनिके जुगुप्ता त्रीपकारकी है

पक व्यवहार दूसरी परमार्थ वर्धात ठोकनिंदा व मतभंग। यन फरके पहले परमार्थ होती है पीछे लोकनिंदारूप व्यवहार-जगुन्सा होती है।। ९५३॥

जुगुप्ता होती है ॥ ९५३ ॥ बहुद्दि मोही संसम्मेण तथ पुणो विणस्सेदि । संसमाविससेण दु उप्पटमंधी जहा गंधी ॥ ९५४ ॥

वर्षते बोधिः संसर्गेण तथा पुनर्वनत्यति । संसर्गियरेषेण तु उत्परुगंधी यथा गंधः ॥ ९५४ ॥ अर्थ—संगतिये ही सन्यन्दर्शनादिकी शुद्धि बदती हैं जीर

संगतिसे ही नष्ट होजाती है जैसे कमस्त्रीदर्श गंपके संबंधसे तीतक सुगंपित जब होजाता है जीर अभि आदिके संबंधसे जब उच्च सथा पिरह दोजाता है ॥ ९५४ ॥ ।/ चंदी चयतो मंदी सह साह्न प्रहिसंसपब्रिसेंची। गार्चकसायपहरो हुरासओ होदि सो समणो॥९५५

चंडः पपत्ने मंदः वधा सागुः पृष्टिमांसप्रतिनेत्री । गारवक्तावरहुठो दुराभयो भवति स धमणः ॥ ९५५ ॥ अर्थ-जो अलंत कोधी हो चंबलस्ववराज्य हो चारिकर्ने 111 TH 112-

मानभी तिर रोक वर्षनेवामा त्येग्ड रहे. पुबंच बण्ड रहा स्थान के रेना बाद मेनने नेपन तर्रे हैं। र रूप इ नेतापनवित्रीमें विगयवित्रमें व र्म्युहिद्वयीने । मयमं विकासीणं सुवंत्रयां वातुं न विकास्त्रका

रेवाक्याविसेने विनयस्थिते व दृः पृत्तिव्यी है। बनमें निरामतीने मुर्गपमा मार्गने मेरेन हा ५५३ ह वर्ष--मोमी गारिको भेवाचे रहेर, त्रवकारर, जरेर

श्राची कर हुना काणी नेमान्याचे र लेले माधुकी जान नार्व का न सार नहीं मर १ र र है।

रंभे परपरिवारं विश्वास्या वावस्थानिये। चिराव्यक्रंति सुणी आरंभवर्त् ण सेविता ॥ ३५ ० ॥

रेने परपरिवादिने विभूने पापपापनिर्विति । चिरवर्तात्वपांच मान आरेन्य हे न से हैत ॥ २५० ॥

अर्थ- को उपने मधाबी, इबरे की पीक्ष देने मधा बी, अर्दे दीवीको प्रदेश करने ग्रांस की, मारण नाहि मारणस्य जनग दिवाकोष हजासी हा से बने गया हो, जारेन बहित हो वेले. रहत

कारमें दीवित भी पुनिकों महानाणों नहीं मेडे ॥ १५०॥ चिरपष्यद्वीय मुणी अपुरुषम्मं असंपुर्व जीवं । लोइप लोगुर्सारपं अयाणमाणं विवश्रेत ॥ १५८॥

चित्रवित्रवित्रापि मृति अपुष्टवर्म असंदर्त तीचे । र्लीकिहं सोहीचरं अजानंतं विगर्वपेत् ॥ ९५८ ॥ अर्थ-जो शुनि बहुतकालसे वीक्षित भी दी परत निष्यक्ष

्रिव ही समेच्यावचन भोठनेवाडा हो नीच फामीनें सा ही

लैकिक कीर पारलैकिक व्यापारको नहीं जानता हो ऐसे सापुके साथ कभी न रहना चाहिये॥ ९५८॥

आयरियकुळं सुबा विहरदि समणोय जो दु एगागी। ण प गेण्हदि उबदेसं पायस्समणोत्ति सुबदि दू॥९५९

न च न चहुन्त उचयुक्त सवस्तानभात खुळाडू दुन्तरपुर आचाचेकुट मुस्ता विद्रति भगाव्य चत्तु एकाकी । न च गृह्वाति उपदेशं पायश्रमण इति उच्यते तु ॥ ९५९ ॥ अर्थ—चो श्रमण सचको छोड़क्त सपाहित अफला विद्यार करता है जोर दिये उपदेशको प्रदूण नहीं करता वह पायश्रमण इहा जाता है ॥ ९५९ ॥

क्षा जाता ह ॥ ९५९ ॥ म आयरियत्तण तुरिओ पुब्वं सिस्सत्तणं अकाऊण। हिंडइ दुंदापरिओ णिर्कुसो मत्तहत्थिच्य ॥ ९६० ॥

आचार्यस्वं स्वरितः पूर्वं शिष्यस्वं अकृत्वा । हिंडति ढोढाचार्यो निरंकुगो मचहस्ती इव ॥ ९६० ॥ अर्थ—जो पहले शिष्यपना न करके आचार्यपना करनेको वेगयान है वह पूर्वापविषेक रहित ढोढाचार्य है जैसे अंकुशरहित

मतवाला हाथी ॥ ९६० ॥

/ अंबो णिंबत्तर्ण पत्तो दुरासएण जहा तहा। समर्ण मृद्संबेगं अपुद्वधम्मं ण सेविज्ञ॥ ९६१॥

122 マットリア ニー वीवेडलं विवं इत्रपनामा नवीवविकासम् । वरणगरितरमधे भित्र वचनहतारे वर्षवरम् ॥ १३२ त भेतन्ये नित्ये हानवयनात् क्लाहितहातः ।

बरनगरनिर्णमादिकं राजकाराते वरावः ॥ १६० ॥ अर्दे-वर्गमभावकी क्षेत्रामध्य ब्रह्मसात्र ट्रांनड क्यूनर मचा दी भक्त करना बाहिते । स्थीति नई हानतकन श्रेष्ट्रमार ब्र

वन है निकान है सान ममान है वह रवन करें हुई हो। यह का पर है 🏻 ५६८ 🏗 आगरियसणभूत्रणयः जी सुधी आगर्भ ग याणंती। अन्तार्गित निमासिय अन्योषि तुमी विमासेहै।१९४३ जामार्थनमानयति यो मनिमानम् न जानन् । त्रारमानमाप विनायक जन्मानको प्रनाः विनायपनि।८३२॥

अर्थ-- ने धीने आगमको नदी जाना। अपनेकी आनार्य मान केता है वह अपना नाश हर हुमरीको भी नद्र करता देश १६३ गीदगरु दिसमाणस्य पादिर पगणित्वकरणगरणस्य।

अन्यंतरिक कुद्धियस्य तस्य द् कि याक्षणोगेहि ९३४ पोटक्कादिगमानस् वायेन वर्कनिश्तकरणचरणस् । अन्यंतरे इथितमा तस तु हिं बाद्ययोगैः ॥ ९६५ ॥ अर्थ-पोर्देश क्षेत्रके समान अंतरंगमें कन्तरंग जीर बाहिरी वेशसे निश्वबदाय पांचपाठे बगडेके समान ऐसे मूजगुज-रहित साधुके बाख पृथमुलादि योगोसे क्या लाभ है। कुछ ूर्मी नहीं ॥ ९६४ ॥

् यासगणणा ण तत्थ वासाणि परिगणिञ्जंति ।

384

यहवो तिरत्तवुत्था सिद्धा धीरा विरग्गपरि समणा ९६५ मा भवत वर्षगणना न तत्र वर्षाण परिगण्वेते ।

मा भवत वर्षगणना न तत्र वर्षाणि परिगण्यते । वहतः त्रिराचीत्थाः तिद्धा पीरा वराग्यरराः अमणाः ९६५ अर्थ--वर्षेका गणना मत् हो क्येकि मुक्तिके कारणमें वर्षे

अये—व्याको गणना सत हा क्याक ग्राहक कारणम वर्ष नहीं गिने जाते । बहुतसे ग्राहित तीनराततक चारित्र धारणकर धीर लीर नैरागी हुए कमेरित तिद्ध होगये ॥ ९६५ ॥

आगे थंथ और उसका कारण कहते हैं;— (प्)जोगणिमित्तं ग्रहणं जोगो मणचपणकापसंभृदो । भाषणिमित्तो पंधो भाषो रहिरागदोसमोहजुदो९६६ योगनिमित्तं ग्रहणं योगो मनोवचनकायसंभृतः ।

भावनिमित्तो पंथी भावी रितरागडेपमोहपूतः ॥ ९६६ ॥ अर्थ-कर्मका महण योगके निनिष्ति होता है, योग मनव-चनकायसे उपजा है अर्थात् तीनीकी भियाको योग कहते हैं यह इष्टबंध है। भावके निमित्ति हो वह भाववंब है, मिध्याल असंयम कपाय ये भाव जानना ॥ ९६६ ॥

3) जीवपरिणामहेट्ट फस्मलण पोग्गला परिणमंति।
ण द्र णावपरिणारे पुण जीवी फर्म्म समादियदि९६७
जीवपरिणामहेतवः फर्मलेन पुत्रलाः परिणमंति।
न तु द्वानपरिणतः पुतः जीवः कमं समादने ॥ ९६०॥
अर्ध—जिनको जीवके परिणाम कारण दे देसे रुप्पादेमान्
प्रताय कमंसरूपरे परिणाने हैं पर्दे आन्मावकर परिणत हुआ
जात कमंसावकर पुत्रलोको नदी मदण करता ॥ ९६०॥
अत्राविकणाणसंपपणो सामाजकरणसंपीत्रदो।

११६ राजार-क्रमापमार दृष्ण्हीं संगारे तस्य त्राहर १९६४ जनविजनगंभो जाना-प्रात्माप्तः ।

क्षाप्रकोरबोम्ब्युक्तः संपार्ते वर्गते चन्तु १९६६ । वर्गते — में मारवारिक मारेत है, पात उत्पाद तम इस्स् महित है पोर काम्य पोरवायर गहत है तक इस्तान सरम्बद्धाः

मार है जा क्यार कर कर है। है हर हुन में तथा है। भी की कर मार्ग है। के हैं जो अ सम्मान कुचनी पीनिहित्यमंत्रों निवृत्ती पा। संसदि व तुरस्मामणी निमालक समानि में निवृत्ती पा।

माध्याचे इतेन वेतीऽपर्यत्तर (त्यूष्य) भारते च वकायमना विन्तन गर्याद्वित विद्वात १२९७ व्यक्तिमात्राय करण दुना गातु स्वत्याह गर्माद्वित हाप्

दे, तीन गुण्या व शेनामा है, त्यानने अन ओर (सनेवस्ट्राइ दोनामा दे ॥ ९६९ ॥) सारस्यवित्रासिक सालने सर्कालक्ष्याविरे कुस्सार्थरिके ।

पावि अस्ति पावि पात्रीत्राहि माज्यागर्यमेनयो हम्मे९ >> द्वारपायि पानवी भारतस्यामे हुवजर्यः । मावि अस्ति मावि पानिस्यति माज्यागर्ये तप् हमे९ >>

भाग नान साह व मार्च्या नामा प्राप्त के राज्य के स्वयं के अपने के अपने के स्वयं के स

यह जाहा सम्भा व प्रतिक क्षा विभाग हो स्व अर्थ । एवं समुत्तापुरिसो ण णस्सदि तह प्रमाददोसेण १०१ वर्षी पथा समुत्रा न नस्यति तु प्रमाददोरेण ।

एवं सद्यप्रक्षो न नव्यति तथा प्रमाददोपेण ॥ ९७१ ॥ अर्थ-असे सुई स्थम भी मनाददोवसे कुडेंने गिरी हुई डोराकर सहित हुई नष्ट नहीं होती है देखनेसे मिछजाती है उसीतरह शास्त्रसाध्यायपुक्त पुरुष भी ममाददीपसे उत्ह्रष्ट तप रहित हुआ भी संसारऋषी गड्डेमें नहीं पड़ता ॥ ९७१ ॥

🕧 णिइं जिणेहि णिवं णिहा चन्तु णरमनेदणं कुणदि।

यहें इ पस्तो समणो सब्बेस दोसेस ॥ ९७२ ॥ निद्रां जब नित्यं निद्रा खलु नरमयेतनं करोति । वर्तेत हि प्रतुप्तः धमणः सर्वेषु दोषेषु ॥ ९७२ ॥ अर्थ-हे साधु न् निदाको जीत वयोंकि निदा मनुष्यको

विवेषरहित अचेतन बना देती हैं । सोता हुआ मुनि सब दोषोंमें प्रवर्तता है ॥ ९७२ ॥ 🦯 जह उसुगारी उसुसुज्ञ कुणई संपिंडियेहिं णयणेहिं ।

तह साह भाषेत्रो चित्तं एयग्गभावेण ॥ ९७३ ॥

यथा इपुकार इपुं ऋजु करोति संविद्विताम्यो नयनाभ्यो । तथा साधुः भाववेद् चित्तं एकाव्रभावेन ॥ ९७३ ॥ अर्थ-वेसे धनुषका कर्वा बाणको मिलाये दोनी नेत्रीकर

सरल करता है उसीनरह साधु भी स्थिर वृत्तिकर मनका अभ्यास करे॥ ९७३ ॥ 🕖 कम्मस्स वंधमोक्खो जीवाजीवे य दृष्ट्यपञ्चाए ।

संसारसरीराणि य भोगविरत्तो सपा झाहि॥ ९७४॥ कर्मणो वंधमोद्धी जीवाजीवा च द्रव्यपर्वीयान् ।

संसारश्चरीराणि च भौगविरक्तः सदा ध्याय ॥ ९७४ ॥

८ म्हाचार--अर्थ--ज्ञानावरणादि कमेंके वंघ मोधकी, जीव ः

द्रव्योको तथा उनकी पर्यायोको और संसार तथा श्ररीरको मे विरक्त हुआ युनि ध्यावे॥ ९०४॥ दन्ये खेरी काले भावे य भवे य होति पंचेव।

186

परिचष्टणाणि बहुसी अणादिकाले य चिंतज्ञो ॥९७ द्रव्यं क्षेत्रं कालो भावश्र भवश्र भवंति पंचव । परिचर्तनानि बहुदाः अनादिकाले च चित्रयेत् ॥ ९७५

अर्ध-स्वयारिवर्तन क्षेत्रपरिवर्तन कालवारिवर्तन भावपारिवर्त भवपरिवर्तन-ये गांच परिवर्तन इस जीवने अनादिकालके लेक अनेकवार किये ऐसा विवयन करना चाहिये॥ ९७५॥ मोहिनिगणा महत्तेण दज्झमाणे महाजमे घीरा।

समणा विसयविरत्ता झायंति अर्णतसंसारं ॥ ९७३॥ मोहाप्रिना महता द्वमानं महात्रगत् पीराः । श्रमणा विषयविरक्ता ध्यायंति अनंतसंसारं ॥ ९७६ ॥

अर्थ- महान् मोहरूपी अग्रिसे जनते हुए सन् होकड़ी देसकर विषयींचे विरक्त धीख़ाने अनंतसंसारक सरूपका विवयन करते हैं॥ ९०६॥ आरंज च कसाचं च ण सहदि तयो तहा छोए!

अच्छी लवणसमुदो य कपारं खल जहा दिहं ॥९७७ आरंभ च कपायान् च न सहते तपलया लोके। अक्षि लवणसमुद्रथ कचारं खलु यथा दृष्टम् ॥ ९७७॥

अक्षि लवणसमुद्रथं कचार खेल यथा दृष्टम् ॥ ९०७ ॥ अर्थ---जैसे नेत्र बार व्वणसमुद्र तृणादि क्रूडेको नहीं सहन इरते तटस्य इरदेते हैं उसीतरह बोक्में तप (चारित्र) अर्थ--ज्ञानावरणादि कर्मके वंच मोलको, जीव द्रव्योको तथा उनकी पर्यायोको बीर संसार तथा शरीरको

386

विरक्त हुआ मृति ध्यावे॥ ९७८॥ दुग्वे खेरो काले भावे य भवे य होंति पंचेव।

परिवद्दणाणि बहुसो अणादिकाले च चिंतेज्ञो ॥ दृष्यं क्षेत्रं कालो मावश्च मचय मचंति पंचेव । परिवर्तनानि बहुजुः अनादिकाले च चिंतपेतु ॥ २००

अर्थ-द्रस्थपरिवर्तन क्षेत्रपरिवर्तन कालपरिवर्तन मा ी भवपरिवर्तन-ये पांच परिवर्तन इस जीवने लनादिकाल्से लनेकवार किये देसा वितवन करना चाहिये॥ ९७५॥ मोहन्गिणा मह्त्तण दल्झमाणे महाजागे धीरा।

समणा विसयविरसा झायंति अर्णेतसंसारं॥१७३ मोहाप्रिना महना दयमानं महाजगन् पीराः। श्रमणा विषयविरक्ता ध्यायंति अनंतसंसारं॥१७६॥

जर्ध- महान् भोहरूपी असिते जनते हुए सप होक्डो देखकर विषयोंसे विरक्त धीरमुनि अनंतसंसारके सरूपका बितवन करते हैं ॥ ९७६ ॥

आरंभं च कसापं च ज सहिद नवो तहा छोए । अच्छी लवजसमुदो च कवारं खलु जहा दिहे ॥९७७ आरंभं च क्यायाच् च न सहते तपसथा स्रोके ।

अशि स्वणसमूद्रयं कचारं रास पया रष्टम् ॥ ९७७ ॥ अर्थ-कीते नेत्र बोर स्वणसमुद्र तृणादि करेको नहीं गहर करते तरस करदेते हैं उमीतरह कोकमें वर (मारिक) परिमहका उपार्जन और कपाय इनको नहीं सहन करसकता बाख कर देता है॥ ९७७॥ जह कोइ सिट्टयरिसो तीसदियरिसे णराहियो जाओ।

जह कोइ सहिवरिसो नीसदिवरिसे णराहिबो जाओ। उभयत्थ जम्मसद्दो वासविभागं विसेसेइ ॥ ९७८ ॥ यथा कथित पहिवर्षः त्रिग्वर्षे नारिभो जातः। उभयत्र जनसञ्ज्ये परिवर्माणं विशेषपति ॥ ९७८ ॥

जर्म चेता कोई साठ परसकी आधुवाला पुरुप तीस वर्ष बाद राजा होगया तो राज्य तथा अराज्य दोनों अवस्याओं में बन्म ग्रन्द वर्षके कमको विदोषहर करता है ॥ ९७८॥

एवं तु जीवदच्यं अणाङ्गिहणं विसेसियं शिवमा । रायसरिसो दु फेवलपञ्चाओ तस्स दु विसेसो ॥९७९ एवं तु जीवद्रव्यं अनादिनिधनं विदेग्यं नियमत् । राजसद्यस्तु केवलं पर्यापसस्य तु विदेशः ॥ ९७९ ॥

राजसँदयस्त केवलं पर्यापसस्य तु विशेषः ॥ ९७९ ॥
अर्ध-जैसे जन्मशन् राज्यकाल जीर अराज्यकाल दोनों
कालोंने कहा हमीप्रकार जीवद्रव्य अनादिनिथन नियमसे
अनेकमकार आधारपनेसे कहा गया है और उसका नारक
मनुष्पादिल्प पर्याप केकल राज्यपिक समान है ॥ ९७९ ॥
जीवो अणाङ्गणिहणो जीवोचित्य गिष्यमदो ण यस्त्वो।

मतुःत्यादिक्त पत्रोय केवक राजययोगके समान है ॥ ९०६ ॥
जीयो अणाइणिहणो जीयोसि य णियमहो ण यस्तव्यो ।
जीया अणाइणिहणो देवावगजीयपविसिहो ॥ ९८० ॥
जीयःअनादिनिषनो जीव इति च नियमतो न वक्तव्यः ।
यत् प्रस्पाद्यक्तिये देवायुक्तियिविदिष्टः ॥ ९८० ॥
वर्षे —यह जीव कनादिनिषन है इस पर्यायविदिष्टः ॥ ९८० ॥
वर्षे —यह जीव कनादिनिषन है इस पर्यायविदिष्ट हो जीव
है सेवा एकात्रे नहीं कहुना चाहिये क्योंकि को महन्यभावस्य

मृलाचार— हित जीव है वही देवायुके जीवन विशिष्ट है। पर्यायसे भेद है

वैसे द्रव्य अपेक्षा एक ही है ॥ ९८० ॥ संखेजमसंखेजमणंतकष्पं च केवलण्णाणं।

340

तह रायदोसमोहा अण्णेवि च जीवपञ्चाया ॥ ९८१॥ संख्येयमसंख्येयमनंतकल्पं च केवलज्ञानं ।

तथा रागद्वेषमोहा अन्येषि च जीवपर्यायाः ॥ ९८१ ॥ अर्थ--संख्यात विषय मतिज्ञान श्रुतज्ञान असंख्यातविषय

अवधिज्ञान मनःपर्ययज्ञान अनंत विषय केवल्ज्ञान है ये तथा राग द्वेष मोह अन्य नारकादि मी-ये सब जीवके पर्याय हैं॥९८१

अकसायं तु चरित्तं कसायवसिओ असंजदो होदि । जबसमदि जिह्म काले तकाले संजदो होदि ॥ ९८२॥

अकपायं तु चारित्रं कपायवद्यगः असंयतो भवति । उपशाम्यति यसिन काले तत्काले संयतो भवति ॥९८२॥

अर्थ-अकवायपनेको चारित्र कहते हें क्योंकि क्षायके यशर्में हुआ असंयमी होता है जिस काठमें कपाय नहीं करता उसीकारूमें चारित्रवान् होता है ॥ ९८२ ॥

घरं गणपवेसादो विवाहस्स पवेसणं।

विवाहे रागउप्पत्ति गणो होसाणमागरो ॥ ९८३ ॥ धरं गणप्रवेद्यात विवाहस्य प्रवेदानं ।

्रे..हे रागोत्पत्तिः गणो दोपाणामाकरः ॥ ९८३ ॥ ् कुलमें शिप्यादिमें मोह करनेकी अपेक्षा विवाहमें । करना ठीक है । क्योंकि विवाहमें सी आदिके ग्रहणसे

रागकी उत्पवि होती है कीर गण तो कपाय राम हेप आदि सब दोवोंकी सानि है ॥ ९८३ ॥

्रपचयमूदा दोसा पचयमावेण णतिथ उप्पत्ती । पचयमाये दोसा णस्संति णिरासपा जहा वीपं॥९८४ प्रस्तवभूता दोषा प्रस्तवामावेन नास्ति उत्पत्तिः ।

प्रस्तयभूता दीपा प्रत्यामाचेन नासि उत्पत्तिः । प्रस्त्यामावाद् दीपा नर्म्यति निराध्या यथा धीन्नी।९८४॥ प्रत्यामावाद् दीपा नर्म्यति निराध्या यथा धीन्नी हैं स्मार कारणके अभावसे दोषोंकी उत्पति नहीं होती हस्तिके कारणके अभावसे निरायात असवग कथाय योगकर रूपे जीवके होषस्य परिणाम वे निरायार हुए भीनकी तरह निर्मृत संपक्ती प्राप्त होते हैं ॥ ९८४॥

) हेद् पश्चयमुदा हेद्दुविणासे विणासमुवर्यति । तत्ता हेद्दुविणासो कायच्यो सच्यसाहर्हि ॥ ९८५ ॥ हेतवः प्रस्ययभूता हेतुविनारो विनाशमुपर्याति ।

तसात् हेतुविनादाः कर्तन्यः सर्वसायुमिः ॥ ९८५ ॥ अर्थ--कोपादिक हेतु परिमहादिके कारण हैं लोगादि हेतुके नाध होनेसे परिमहादिक नायको मात्र होते हैं इसलिये सब

साधुओंको हेतुका नाग्न करना चाहिये ॥ ९८५ ॥ / जं जं जे जी जीवा राज्ञायं परिणमंति संसारे । रायस्स य दोसस्स य मोहस्स चसा मुणयच्या॥९८६ गं में में में मार्गायां साध्यायं भारे ।

मूलाचार-करते हैं वे पर्याय राग द्वेप मोहके बशसे अहण की जाती हैं९८६ अत्थस्स जीवियस्स य जिन्मोवत्थाण कारणं जीवो।

मरदि य मारावेदि य अर्णतसो सन्वकालिह्या।९८७।। अर्थस जीवितस्य च जिहोपस्ययोः कारणं जीवः । म्रियते च मारयति च अनंतश्वः सर्वकारुम् ॥ ९८७ ॥ अर्थ-धर पशु बसादिकके निमित्त, आत्मरक्षाके लिये और

भोजनके कारण, कामके कारण यह जीव आप मरता है जीर अन्यपाणियों अनंतवार सदा मारता है ॥ ९८७ ॥ जिन्मोवत्थणिमित्तं जीवो दक्खं अणादिसंसारे।

पत्तो अणंतसो तो जिन्मोवत्थे जह दाणि ॥ ९८८ ॥ जिहोपस्यनिमित्तं जीवो दःसं अनादिसंसारे। प्राप्तः अनंतदाः ततः जिह्रोपस्यं जय हदानीं ॥ ९८८ ॥

अर्थ--इस अनादिसंसारमें इस जीवने जिहा इंद्रिय और स्पर्शन इंद्रियके कारण ही अनंतवार दुःख पाया इसलिये हे मने त जिहा और उपस इन दोनों इंदियोंको जीत अर्थात्

यशमें कर ॥ ९८८ ॥ चदुरंगुला च जिन्मा असुहा चदुरंगुलो उपत्थोवि । अद्वेगुलदोसेण इ जीवो इक्तं ह पप्पोदि ॥ ९८९ ॥

चतुरंगुरा च जिह्ना अशुमा चतुरंगुर उपस्थोपि। अष्टांगुलदोपेण तु जीवो दुःखं हि प्राप्तोति ॥ ९८९ ॥ अर्थ-चार अंगुल पमाण अशुभ जिहा इंदिय और चार

र्थंतुल प्रमाण अगुम भैपुन इंदिय इन बाठ अंतुलोके दोपसे ही यह जीव दःस पाता है ॥ ९८९ ॥

🗸 भीहेद्दव्वं णिश्चं कट्टत्थस्सवि तहित्थिरूवस्स । हवदि य चित्तक्लोभो प्रवयभावेण जीवस्स ॥९९०॥ मेतव्यं नित्यं काष्ट्रसादपि तथा सीरूपाद । मवति च चित्तक्षोमः प्रत्ययभावेन जीवस्य ॥ ९९० ॥ अर्थ-फाउसे बने हुए भी बीरूपसे सदा डरना चाहिये क्योंकि कारणवरासे जीवका मन चलायमान होजाता है।। ९९०॥ 🔈 घिद्रभरिद्रघडसरित्थो पुरिसो इत्थी पर्छतअग्गिसमा। तो महिलेपं दुका णहा पुरिसा सिवं गया इदरे॥९९१ प्रतमृतपटसद्याः पुरुषः सी ज्वलद्रियमा I तों महिलामंतं डॉकिता नष्टाः पुरुषाः श्चिवं गता इतरे९९१ अर्थ-पुरुष पीसे भरे हुए पड़ेके समान है, और स्त्री जलती हुई आगके समान है जो पुरुष स्वीके समीवको माप्त हुए वे नाराको मास हुए और जो नहीं मास हुए ये मोक्षको गये ॥९९१ । मापाए घहिणीए घुआए मृद्दय युद्व इत्थीए। पीहेदच्यं णिघं इत्थीरूपं णिरावेषणं ॥ ९९२ ॥ मातुः भगिन्या दुहितुः मृकाया ष्टद्वायाः खियाः । मेत्रव्यं नित्यं सीरूपं निरपेशं ॥ ९९२ ॥ अर्थ-माता बहिन पुत्री गूंगी बुद्दी ऐसी स्वीसे सदा दरना चाहिये । क्योंकि सीका रूप देखनेयोग्य नहीं है ॥ ९९२ ॥ १ हत्थपादपरिच्छिण्णं कण्णणासवियन्त्रियं । अविवास सर्वि णारि दृरिदो परिवज्ञए ॥ ९९६ ॥

हस्तपादपरिनिष्ठको कर्णनामाविकत्पितो । अविवाससं सर्ती नारी दृग्तः परिवर्जयेत् ॥ ९९३ ॥ ९३ मूल+

अर्थ--हाथकर छिन्न पांवसे छिन्न कानसे बहिरी नाकसे दीन वलरहित (नंगी) ऐसी भी स्त्रीको दूरसे त्याग देना चाहिये ॥ मण बंभचेर वचि बंभचेर तह काय बंभचेरं च। अहवा हु बंभचेरं दुव्यं भावं ति दुवियणं ॥ ९९४॥ मनसि ब्रह्मचर्षे वचसि ब्रह्मचर्य तथा काये ब्रह्मचर्य च । अथवा हि ब्रह्मचर्ये द्रव्यं मावमिति द्विविकल्पं ॥ ९९४ ॥ अर्थ---मनमें बहाचर्य बचनमें ब्रह्मचर्य और कायमें ब्रह्मचर्य-ऐसे तीनपकार ब्रह्मचर्य है अथवा प्रगटपने द्रव्य भावके भेदसे दोतरहका है ॥ ९९७ ॥ भावविरदो दु विरदो ण दब्वविरदस्स सुग्गई होई । विस्तयवणरमणलोलो घरियब्बो तेण मणहत्थी॥९९५ भावविरतस्तु विरतो न द्रव्यविरतस्य सुगतिः भवति । विषयवनरमणलोलो धारियतच्यः तेन मनोहस्ती ॥९९५॥ अर्थ--जो अंतरंगमें विरक्त है वही विरक्त है बाह्यवृत्तिसे विरक्त होनेवालेकी शुभगति नहीं होती। इसलिये मनरूपी हाथी जोकि विषयवनमें कीडालंपट है उसे रोकना चाहिये॥९९५ पढमं विउलाहारं विदियं कायसोहणं। तदियं गंधमहाइं चउत्थं गीयवाइयं ॥ ९९६ ॥ तह सपणसोघणंपि य इत्थिसंसग्गंपि अत्यसंग्रहणं। पुरुवरदिसरणमिंदियविसयरदी पणीदरससेवा ॥९९७ दसविष्ट्रमञ्चंभविणं संसारमहादुहाणमावाहं। परिहरह जो महत्वा सो दढवंभव्यदो होदि ॥९९८॥

प्रथम विष्ठाहारः द्वितीयं कायशोधनं ।

त्तीयं गंपमाल्यानि चतुर्यं गीतवादियं ॥ ९९६ ॥
तथा अपनःगोपनामि च सीतंपगीषि अर्थतंप्रदृष्णं ।
पूर्वरतिसरणं इंद्रियविषयरितः प्रणीतरससेवा ॥ ९९७ ॥
द्रश्रविषयम् इदं संतारमहाद्युःपानामागार्वं ।
परिदर्शते यो महात्मा स रहत्रहमनवो भवति ॥ ९९८ ॥
अर्थ—मथन तो भहुत भोजन करना, दूसरा तैस्त्रदिसं
संरात्का संस्त्रा, तीत्सा सुग्य पुप्पाला आदि, योथा गायत
वाजा अत्रमचर्य । शस्या श्रीदापर निजवाल आदि एकांत्रसानोंका
तलाश करना करासने देस्तानाही स्वियंके साथ स्तेक करना,
आम्पण बसादिका पहरना, पूर्वसमयके भोगोकी याद, रूपादि
विषयों मेम, इप प्रप्रसक्त सेवन-इसतरह ये दसतरहका
अत्रस्वर्यं संसारके महा दुःसोंका सान है इसको भो महास्त्र

हैं॥ ९९६-९९८॥ य कोहमदमापलोहेहिं परिगाहे लयह संसजह जीवो। नेणुमयसंगचाओं कायच्चो सन्वसाहहिं॥ ९९९॥ क्रोधमदमायालोमेः परिग्रहे लगति संसजति जीवः।

तेनोमयसंगत्नागः कर्तव्यः सर्वसाधुमिः ॥ ९९९ ॥ अर्थ-कोष मान माया लोम इन करके यह जीव परिवहमें

हीन होता है जोर भरण करता है इसल्पि सन सायुजीको दोनोंतरहोंक परिमहका त्याम करना योग्य है ॥ ९९९ ॥ णिरसंगो णिरारंभो भिनक्वाचरियाए सद्धभायो य । एगागी झाणरदो सट्यग्रणहो हवे समणो ॥ १०००॥ ३५६

११ निःसंगो निरारंमो मिञ्चाचर्यायां द्यदमादव ।

एकाकी ध्यानरतः सर्वगुणाट्यो मवेत अमणः॥१०००॥

अर्थ-दोनोंतरहके परिप्रहके लमाव होनेसे साधु मूर्छारहित होता है, पापिकयासे रहित होता है, मिझावर्यामें शुद्धमाव

होता है, एकाकी ध्यानमें ठीन होता है, जीर सबगुलोंसे परिपूर्ण होता है ॥ १००० ॥

णामेण जहा समणो ठावणिए तहय द्वयभावेण ।

णिक्खेवो बीह तहा चदुव्विहो होई णायव्वो ॥ नामा यथा श्रवणः स्थापनया तथा च द्रव्यमावेन ।

निक्षेपोपि इह तथा चतुर्विघो मवति ज्ञातव्यः ॥१००१॥

अर्थ-नामकरके धनण, सापनासे धनण, द्रव्यसे धनण

मीर मावसे अमण-इसतरह यहां चार तरहका निशेष जानेना ॥

भावसमणा हु समणा ण सेससमणाण सुरगई जम्हा ।

जहिऊण दुविहमुवहिं भावेण सुसंजदो होह ॥१००२

अर्थ-मावश्रमण हैं वे ही श्रमण हैं क्योंकि शेष नामादि

श्रमणोंकी सुगति नहीं होती। इमलिये दोपकारके परिषद्को

त्यागकर उत्तम संयमी हो ॥ १००२ ॥

षदसीलगुणा जम्हा भिक्खाचरियाविसद्विए ठेति । तम्हा भिक्त्वाचरियं सोहिय साह सदा विहारिज्ञ ॥

मावश्रमणा हि श्रमणा न दोपश्रमणानां सुगतिर्यसात् । जहित्या दिविधमुपिं मावेन सुसंयतो मन ॥ १००२ ॥

ववर्शालानि गुणा यनाव निशाचर्याया विश्वक्यां तिष्ठंति। वसात् निश्चावर्या शोषवित्वा साधुः सदा विहरेत् १००३ : अर्थ-- मत शील बोर गुण भिक्षाचर्यकी शुद्धिमें रहते हैं शालिय भिक्षाचर्याको शोषकर साथु सदा मतरें ॥ १००१ ॥ भिनम्बं चसं हिमयं सोपिय जो चरिंद णिच सो सासू । एसो सुहिद साह भगिओ निणसासणे भायवं ॥

प्रश्ति सुद्धित साहु नाजजा जिल्ह्साराज स्थय ॥ मिश्रां वावयं हृदयं ग्रीपित्वा यः चरति नित्यं स सापुः । एए गुस्तिवः सापुर्भिणेवो जिनग्रासने मगवान् ॥१००॥। अर्थ—जो सापु निक्षाके बावभको हृदयको सोपकर सदा चारिकों उपम करता है यह सवगुणतंत्रक सापु जैनसतमें भगवान् कहा गया है ॥ १००॥॥

7 द्रव्यं खेरां कालं भायं सिंस च सुट्ट णाजण । झाणजद्वायणं च तहा साष्ट्र चरणं समाचरत्र ॥ १००५ द्रव्यं क्षेत्रं कालं भावं ग्राक्ति च सुद्व ग्रात्वा । च्यानमञ्चयनं च तथा साधुधर्यं समाचरत्त ॥ १००५ ॥ अर्थ—आहारादि द्रव्य क्षेत्र काल भाव ग्राक्तिको अच्छी तरह जानकर तथा च्यान अध्ययनको जानकर साधु चारिकको सेवन करे ॥ १००५ ॥

ग्वाओ प होइ दुविहो संगवाओ फल्स्चाओ प । जन्मयागं किया साह सिद्धि छह छहि ॥ १००६ ॥ स्वागंध भवति द्विपियः संगलागः फल्यत्वागंथ । उपमत्वागं कृत्वा साधुः सिद्धि छणु छनते ॥ १००६ ॥ अर्ध—स्वाग दोगकार है एक परिकाला पुस्ता भीत्वा ।

सापु दोनोंका त्याग करके शीम ही मोश पाता है ॥ १००६ ॥

-
-
पुट्यीकायिगजीया पुट्यीए चावि अस्सिदा संति ।

346

मुलाचार-तम्हा पुढवीए आरंभे णिचं विराहणा तेसिं॥ १००७ पृथिवीकायिकजीवाः पृथिव्याः चापि आश्रिताः संति ।

तसात पृथिच्या आरंभे नित्यं विराधना तेषां ॥ १००७ ॥ अर्थ-ेपृथिवीकायिक जो जीव हैं छोर जो पृथिवी आधित त्रस जीव हैं उन सबका घात प्रथिवीके स्रोदने जलानेरूप आरंभ

करनेसे सदा होता है ॥ १००७ ॥ तम्हा पुदविसमारभी दुविहो तिविहेण वि।

जिणमग्गाणुचारीणं जावजीवं ण कप्पई ॥ १००८ ॥ तसात् पृथिवीसमारंमो डिविधः विविधेनापि ।

जिनमार्गानुचारिणां यावजीवं न कल्पते ॥ १००८ ॥

अर्थ-- जिस कारण समारंभमें हिंसा है इसलिये प्रथियीका दोपकारका समारंग मनवचनदायसे जिनमार्गके अनुकुल चारित्र

पालनेवाले साधुओंको जीवनपर्यंत करना योग्य नहीं है ॥१००८॥ जो पुढविकाइजीवे णवि सद्दृद्धि जिणेहिं णिद्दिः। दूरत्थो जिणवयणे तस्स उवडावणा णत्थि ॥१००९॥

यः पृथिवीकायजीवान् नापि श्रद्याति जिनः निर्दिष्टान् । दुरस्यो जिनवचनात् तस उपन्यापना नाहित ॥ १००९ ॥ अर्थ--- जो जिनेंद्रदेवकर कहे गये पृथियीकायिक जीवोंका श्रद्धान नहीं करता यह जिनवचनोंसे दूर रहनैवाटा है उसके

जो पुरुविकायजीये अइसदहुदे जिणेहिं पण्णशे । उबल्द्वपुण्णपायस्स तस्सुयहायणा अत्यि ॥ १०१० ॥ यः प्रियोकायिकजीवान् अतिश्रह्माति निर्मः प्रमान् ।

सम्यम्दर्शनादिमें स्थिति नहीं है ॥ १००९ ॥

उपलन्धपुण्यपापस तस्तोपस्यापना जाति ॥ १०१० ॥ अर्थ—वो जिनदेवकर कहे गये प्रथिवीकायिक जीवोंका स्वतंत श्रद्धान करता है पुण्यपा जाननेवाले उस पुरुपके मोस्मार्थमें स्विति स्वदर्थ है ॥ १०१० ॥

गण सहहाद जो एदे जीवे पुढविदं गदे। स गच्छे दिग्यमदाणं टिंगत्योवि हु दुम्मदी ॥१०११ न अह्याति यू एताव् जीवान् पृथिवीत्वं गतान्।

न अर्थाति य एतान् जारान् प्राचारत् गतान् । स गच्छेन् दीर्घमध्यानं खिगन्योरि हि दुर्मतिः १०११ ॥ अर्थे—जो प्रध्यापनेको पात हुए जीवेंका श्रदान . नहीं कृतता वह नमल चिन्हकर सहित भी दुर्जेदि दीर्थ सवारको प्राप्त होता है ॥ १०११ ॥

क्षपं परे कथं चिट्टे कथमासे कथं सये। 4)कां मुंजेज मासिज कथं पायं ण यज्झदि ॥ १०१२

कर्य चरेत कथं तिष्टेत कथमासीत कथं श्रगीत । कर्य श्रंजीत मापेत कथं पापं न बच्यते ॥ १०१२ ॥

कच सुजीत मापत कथ पीप न बध्यते ॥ १०१२ ॥ अर्थ-स्स प्रकार कहे अर्थ कमकर जीवींसे भरे जगतमें ए किसतरह रामन करे. कैसे तिष्टे कैसे बैठे. फैसे सोटे.

साधु क्रिसतरह गमन करें, कैसे निष्ठें, कैसे बैठें, कैसे सोयें, कैसे मोजन करें, कैसे बोलें, किस तरह पापसे न बंधे ! ऐसा शिष्यने प्रश्न किया ॥ १०१२ ॥

ध्यन प्रश्नाक्या ॥ १०१९ ॥ ध्य उसका उत्तर कहते हैं;--

ग जदं चरे जदं चिट्टे जदमासे जदं सये । जदं मुंजेज भासेज एवं पावं ण मज्झहे ॥ १०१३ ॥

यतं चरेत् यतं तिष्टेत् यतमासीत यतं शयीत ।

गर्न मुंतीन मापेन एर्र पार्प न बचाने ॥ १०१२ ॥ अर्थ-यनाचारमे (ईर्यापगगुद्धिमे) गमन करे, मदानगरि

यत्रमें तिष्ठे, पीर्तामें शोपकर बैठे, मोपकर गतिमें एक पार्पमें सोने, दोपगहिन आहार करे, मानामिनिके कमने भोने-इम भकारसे पाप नहीं चंप सकता ॥ १०१३ ॥

जबं तु परमाणस्य दयापेष्टुस्म भिक्तुणो । णयं ण यज्ञादे कम्मं पोराणं च विज्यदि ॥ १०१४ ॥

यमेन त चरतः दयाप्रेक्षिणो मिशोः।

नवं न बध्यते कर्म पुराणं च विघूयते ॥ १०१४ ॥ अर्थ--- यत्रसे लानरण करते और दया पालते हुए साउके

नपीन कर्म तो बंधता ही नहीं और पुराने कर्म भी क्षय होते जाते हैं ॥ १०१४ ॥

एवं विघाणचरियं जाणित्ता आचरिज्ञ जो भिक्स्त् । णासेऊण दु कम्मे दुविहंपि य लहु लहह सिद्धि १०१५

एवं विधानचरितं झात्वा आचरेत् यो भिश्चः। नाशिपत्वा तु कर्म द्विविधमपि च लघु लमते सिद्धि १०१५ अर्थ--इसमकार कियाके अनुष्ठानको जानकर जी ग्रनि आचरण करता है वह साधु शुम जशुम दोपकारके कर्मीका

नाशकर शीप्र ही मोक्षको पाता है ॥ १०१५॥

इसपकार आनार्यश्रीवहकेरिविरचित मूलाचारकी हिंदी-भाषाटीकामें समयके सारको कहनेवाला

दशवां समयसाराधिकार समाप्त हुआ ॥ १०॥

शीलगुणाधिकार ॥ ११ ॥

आगे भंगरायालपूर्वक धीरतुल करनेकी प्रतिल करते हैं;— सीलगुणालपमूर्वे काहाणविसेसपाडिहेरखर्वे । पंदिचा अरहेर्ने सीलगुणे किराहस्सामि ॥ १०१६ ॥

दीलगुणाल्यभ्तान् कल्याणविश्वप्राविहार्यपुतान् ।

पंदित्वा अर्रेटः शीलगुनान् कीर्यपिपामि ॥ १०१६ ॥ अर्थ-सनकी रहारूच शील कीर संयनके भेदरूप गुण इनके जापरायन नमा पंच कत्यान चीतीस अविशय आठ सनिदायिक सिति पेसे अर्द्ध समयानको नमस्वार करके जब मित्र वाहित स्मित्र हो ॥ १०१६ ॥

अब शीलोंके मेद कहते हैं;-

जोए घरणे संपणा इंदिये भोम्मादि समणयम्मे य । अण्णोणणिहि अम्तया अहारहसीटसहस्साई ॥१०१७ योगाः करणानि संद्रा इंद्रियाणि भ्यादयः भमणपर्यम् । अन्योग्यं अभ्यस्ता अष्टाद्यद्यीत्मस्त्राणि ॥ १०१७ ॥ अर्थ—सीन योग सीन करण बार संद्रा पांच इंद्रिय दश इधिव्यादिक बाय, दश द्वान भर्म-दनको बाससमें गुणा करनेसे करारह हजा सील होते हैं ॥ १०१७ ॥ तियह सुद्रसंजोगो जोगो करणं य असहसंजोगो ।

तिण्हं सुहसंजोगो जोगो करणं च असुहसंजोगो । आहारादी सण्णा कासंदिय इंदिया णेया ॥ १०१८॥ श्रयाणां श्रमसंयोगो योगः करणं च अशुमरायागः ।

आहाराद्यः संज्ञाः स्पर्शनाद्यः देद्रियाणि मेयानि १०१८

विगतिमणदूर्पंपित्यभोममादि हर्वति दम एवं १०१९ एथिन्युद्काप्रमान्तप्रस्कानंतकापिकार्धमः । डिमिनतःपंपेदिया भ्यादयो मर्वति दमेने ॥ १०१९ ॥

डिमिनतुः पंचेद्रिया भ्यादया मर्चति दशने ॥ १०१९ ॥ अर्थ-पृथिनी अन तेन बादु मन्येडवनस्थति सापारम बनस्पति, दो इंदिम ते इंदिम बीइंद्री बंगेद्री-से प्रथिती आदि सम्बंध १०१९ ॥

दस हैं॥ १०१९॥ खंती महत्र अञ्चय साघव तय संजमो अकिंपणदा। तह होदि पंभवेर सर्व पागो य दस पम्मा॥१०२०

श्वांतिः मार्दयमार्त्रवं ठापवं तपः संयमः अकिंचनता । तथा मयति ब्रह्मच्ये सत्यं त्यागञ्च दद्य धर्माः ॥१०२०॥ अर्थ--- उत्तम क्षमा मार्द्व आर्वव शोच तप संयम आर्किचन्य ब्रह्मचर्य सत्य त्याग ये दस सुनिधमें हैं ॥ १०२० ॥

भागे शीलंकि उचारणका कम कहते हैं;-मणगुत्ते सुणिवस्है मणकरणोम्सुकसुद्धभावज्वदे ।

आहारसण्णविरदे फार्सिदियसंपुडे चेव ॥ १०२१ ॥ पुढवीसंजमञ्ज्ते खंतिग्रणसंज्जदे पढमसीलं । अचलं ठादि विसुद्धे तहेव सेसाणि णेयाणि॥१०२२॥

मनीगुप्तस्य मुनिष्टपमस्य मनःकरणोन्मुक्तगुद्धमावयुक्तस्य । आहारसंज्ञाविरतस्य स्पर्शनेद्रियसंष्ट्रतस्य चेव ॥ १०२१ ॥ ष्ट्रिविसियमपुक्तस्य धांतिपुणसंयुक्तस्य प्रयमदीलं । अपलं तिष्टृति विद्यद्वस्य तथेय दोषाणि वेपानि ॥१०२२॥ अप्य-मनकर गुग्न मनकरणसं रहित गुद्धभावसहित लाहार संज्ञाते विरक्त सर्गन इंद्रियमें संज्ञ प्रविकाशसंयसम्बाहित क्षमापुण गुक्त ग्रद्ध चारित्रबाले पत्ते ग्राणिक सदल पत्ति मनोयोग नामवाल स्विर रहता है। इसी तरह दोप (बाकी)

शीलोंके भेद भी जानना ॥ १०२१-१०२२ ॥ जय गुणोंके सब भेद बतलाते हैं;-

इगर्यास चतुर सदिया दस दस दसगाय आणुण्याय । हिंसादिकमकायाविराहणालोयणासोही ॥ १०२२ ॥ एकविंवतिः चलारः सवानि दल दस दम य आणुपूर्णो । हिंसायविकमकायविराधनालोवनागुद्धयः ॥ १०२२ ॥ अर्थ—हिंसादि व्यतिक्रम काव विरापना आलोजना गृद्धि इनके कमसे इहीत कार सी दस दम दस मेदीकी जापसर्मे गुणा करनेसे भीतसी टाल गुणोक मेद होते हैं ॥ १०२३ ॥ पाणियह सुसाचार्द अदल्तामेहुण परिमार्ट चय । भोहमदमायलोहा मय अरहिरदी दुगुंहाय ॥१०२४॥ मणयपणकायमंगुह निरुद्धारसण पमादो य । पिसुणसणामण्याणं अणिमाहो इंदियाणं च ॥१०२५

प्राणिवधो मुपावाद अदनं मेघुनं परिग्रद्धेय । क्रीधमदमायालोमा भयमरितिः जुगुपता च ॥ १०२४ ॥ मनोवचनकायमंगुलं मिध्यादर्धनं प्रमादय । पिशुनत्वमञ्जानं अनिग्रद्द देद्रियाणां च ॥ १०२५ ॥ होम मय करति रति जुगुप्ता मनोमंगुल यननांगुल कायमंगुल मिस्यारगंत ममाद पैराय कागल देदियों ग्रा भागत्य मे हिसादि हकीस भेद हैं ॥ १०२४-१०२५ ॥ अदिकामणं अदिचारी सहेय अणाचारो । एवेहिं चुनिहं पुणी सायको होइ गुणिपच्यो ॥१०२६ अतिकामणं व्यक्तिमणं अतीचारः स्वयं अन्याचारः । एने चुनिहं चुणी सायको मचित गुणिनच्यः ॥१०२६॥ अर्थ-संगमी ही निवासिकाण अतिकामणं हैं, विगयेषकाणं अर्थान्यां स्वयं अन्याचारः । व्यक्तिमणं अर्थान्यां स्वयं अप्याचनां स्वयं स्वयं

अर्थ-हिंसा झुठ चोरी अत्रश्च परिमद्द कीच मान माया

है। इसनम्य अधिकमादि भारको गुणा करता ॥ १०२६॥
गुडविद्यामणिमानस्यासेमार्गनकाइया भेष ।
दिस्यानस्य दुर्गिद्याभण्योगणामास्य दुरगुणिया ॥
गुविष्युद्रकात्रिमानस्य त्रोगमास्य दुरगुणिया ॥
दिविष्युद्रकात्रिमानस्य अस्योग्यामा दुरगुणिया ॥१०२०॥
त्राच्यान्यां अत्र आम् श्रमुखावक प्रयेक्वनस्य मापान्यन्य त्राप्यां व्याप्यां विद्या स्योग्यां ॥१०२०॥
स्वनस्य विद्या कर्यो स्वाप्यां विद्या स्थानस्य स्याप्यां व्याप्यां विद्या स्थानस्य स्वाप्यां विद्या स्थानस्य स्वाप्यां कर्यने भीमारी विद्या होते हैं। दिस्य प्रते भीमारी विद्यास्य १००॥

इन्धीसंसारी पणिवस्त्रकोषण पंचमहर्तहर्तः । सपमासणम्सणपं एटं गुण गीपवाह्यं वेष ॥१०२८ सम्बन्धः संपर्शासे कुलीनसंस्रीम सपनेषा स् । रशीविय संवरणं इस मीलविराहणा भणिया १०२९ शीर्तमर्गः प्रणीतसमीवनं गंधमान्यगंमद्राः । द्यपनासनभूष्णानि षष्टं पुनः गीनवादियं पेव ॥१०२८॥ व्ययंस्य संप्रयोगः कृषीलगंगराः सवसेवा ष ।

अर्थुन्य संप्रयोगः कुद्यीतमंत्रगः राजसेवा च । राप्ता अपि च मंचरणं दग्र शीतविराधना मणिताः १०२९

सान जार प नपाप देने हारावायमा भाषती (२०१९) अर्थ—सीनोंने साथ केंद्र, पुष्ट काहास्त्रा महण, युगंष हक्य होत पुष्पीती माथादा पारल रूप सारित संस्कार, कोमल सायता, कोमल कासता, कहक आदि आपूषण पारण करता, गीत सासरी कादि साजा, सुवर्ण कादि पत्रका संमह, कुसीसी जतोकी संगति, राजसेवा, यिना कारण राजिमी चलना—ये दम सीलकी निरापना (जाणक) कहीं हैं। इनमें गुणें तो चीरासी हजार भेद होते हैं। १०२८—१०२९ ॥

आरंपिय अणुमाणिय जं दिहं यादरं च सुष्टुमं च । छण्णं सदाकुटियं बहुजणमध्यत्त नरसेवी ॥ १०३०॥ आरंपितं अनुमानितं यद् दर्षं पादरं च यक्ष्मं च ।

छन्ने अञ्चातानाः पर् ०८ वाद् प प्रश्न प । छन्ने अञ्चादुष्टितं बहुजनमध्यकं तत्सेवी ॥ १०३० ॥ अर्थ---आदंपित अनुमानित दष्ट बादरः सदम प्रच्छन सस्ता-

जय—आश्चार जनुमानत दृष्ट बारत सुरम प्रस्वक्ष संद्यु-कुटिन महुजन अध्यक्त समेत्री-ये दश आठोचना दोग हैं। इनको गुणनेसे आठ त्यास चाटीस हजार मेर हुए ॥ १०३० ॥ आगे शुद्धिरूप मायश्चितके दम भेद कहते हैं;—

बाग शुद्धरूप आवाधवक दम मद षहत हु---आस्टोयण पडिकमणं डभय विषेगो तथा विउस्सम्मो। तव छेदो मूटाँपि य परिहारो चेव सदहणा ॥ १०३१ बालोचुनं प्रतिक्रमणं उमर्य विवेदः तथा स्युन्सर्गः

मूल परिहार खड़ान इन दस भंदोंको गुणनसे चौरासी लाग भन गुणकि होते हैं। इन सब भेदोंने जहां दोन कहे गये हीं उनवे निपरीत गुण समझना ॥ १०३१ ॥

विपरात गुण समजना ॥ १०३१ ॥ इस तरह चीराभी लाख गुण हैं।

पाणादिवादविरदे अतिकमणेदोसकरणउम्मके । पुढयीप पुढयीपुणरारमस्स संजदे घीरे ॥ १०३२ ॥ इत्थीसंसग्गविज्ञदे आकंषियदोसकरणउम्मुके । आलोयणसोघिज्ञदे आदिगुणो संसम्प णेया ॥१०३३

प्राणातिपातविस्तसः अतिक्रमणदोपकरणोन्ध्रक्तसः । पृथिव्याः पृथिवीपुनरारमेषु संयतस्य पीरसः ॥ १०३२ ॥ स्रीतंसमीविद्युतसः आकंपितदोपकरणोन्ध्रक्तसः ।

स्राससगविद्यतस्य आकापतदापकरणान्मुकस्य । आलोचनद्यद्विद्यतस्य आदिगुणः श्रेषा स्रेयाः ॥ १०३३ ॥

अर्थ-िहिंसासे रहित अतिक्रमणदोष करनेसे रहित प्रथियी-कायसे तथा पृथियोकायिककी पीडा-विराधनासे रहित स्रीकी संगतिसे रहित आकंपित दोषके करनेसे रहित आलोजनकी शुद्धिकर गुक्त सयमी पीर गीर गुनिके पहिला गुण अहिंसानामा होता है। इसीतरह अन्यगुण गी जानना ॥ १०३२-१०३३॥

हाता है । इसतिह जन्मगुण मा जानमा ॥ ५०२५–५०२५ सीलग्रुणाणं संखा पत्थारो अक्खसंकमो चेव । णहं तह उदिहं पंचवि वत्यूणि णेयाणि ॥ १०३४ ॥

शीलगुणानां संख्या प्रस्तारः अक्षसंक्रमधैव । नष्टं तथा उद्दिष्टं पंचापि वस्तुनि ज्ञेयानि ॥ १०२४ ॥ - अर्थ--शिट जोर गुणेंकी संस्था प्रसार अक्ष्संकम नष्ट उद्दिप-ये पांच बसु जातनी ॥ १०३४ ॥ सब्बेपि पुरुवभंगा उपरिममंगेसु एक्सेफेसु । मेटोतेसिय कमसो गुणिदे उप्पन्नदे संखा ॥ १०३५ ॥

सर्वानिप पूर्वभंगान् उपरि भंगेषु एकमेकं ।

मेलपिता कमशी गुणित उत्पत्तते संख्या ॥ १०३५ ॥ अर्थ—बील गुणीके सभी पूर्वभेदोको कमले भंगोंगे मिलाके एक एको कमसे गुणा करनेपर दोनीकी संख्या परजाती हैं ॥ पदम सीलपमाणं कमेण णिविस्वविय उयरिमाणं च । पिंट पहि एकेके णिविस्वविय उयरिमाणं च ।

प्रथमं शीलप्रमाणं क्रमेण निश्चिप्य उपरि मानं च ।

चिंड प्रति एकमेकं निश्चित्ते भयति प्रस्तारः ॥ १०३६ ॥ अर्ध-भयम जो मनवचनकायका विक यह श्रीतम्मण है उसे वित्वनहर (जुदा जुदा एक एक विदे १ पिठे कम्मी एक एक मेद प्रति एक एक विदे १ पिठे कम्मी एक एक मेद प्रति एक एक कराका तीनकरणकर कि स्थापनकरना इस तह विकेक प्रति एक एक स्वरोने मुकार होता होता हो। १०३६॥

यद सम प्रसार कहा । अब विषम प्रसार कहते हैं;-जिविष्यसु विदियमेको पढमं मस्सुविरि विदियमेको । पिटं पडि जिक्ष्यिस तहेव सेसावि काद्व्या ॥१०३७

निशिष्प डितीयमार्थ प्रथमे तस्त्रोपरि डितीयमेकेन । पिंडे प्रति निश्चिम तथेय दोषा अपि कर्तप्याः ॥ १०२७ ॥ अर्थ-प्रथम मनववनकायत्रिकको द्वितीयत्रिकमात्र तीन बार स्वापि उसके उत्तर दूसरा करणत्रिक एक एक द्विनीय प्रमाण ३६८

तीन वार स्थापे । इस तरह एक पिंडके ऊपर दूसरा स्थापन करनेसे प्रस्तार होता है। इसीतरह अन्य भी पिंड कर लेना१०३७

पढमक्लो अंतगदो आदिगदे संकमेदि यिदियक्लो। दोण्णिव गंतूणंतं आदिगदे संकमेदि तदिपक्लो॥ प्रथमाक्षः अंतगत आदिगते संक्रामति द्वितीयाक्षः । द्वावपि गत्वांतं आदिगते संक्रामति तृतीयाक्षः ॥१०३८॥

अर्थ-प्रथमभेद अंतको प्राप्त हो उसके वाद आदिको प्राप्त होनेपर द्वितीय अदा (करणरूप भेद) पलटता है उसके बाद दोनों अक्ष अंतको प्राप्त होकर आदिको प्राप्त हो तम सीसरा अझ

पलटता है। इसतरद अन्य अक्ष भी जानना ॥ १०३८॥ सगमाणेहिं विहरो सेसं छक्लिस् संकिये रूवं।

रुक्तिवज्ञांतं सुद्धे एयं सब्बत्थ कायब्वं ॥ १०३९ ॥ शक्यानैः विभक्ते दोषं लक्षयित्वा संक्षिपेत् रूपं । लिधिणमंते हाद्धे एवं सर्वत्र कर्तव्यं ॥ १०३९ ॥

अर्थ-अपने प्रमाण योगादिकाँसे भाग देनेपर दीपकी जान एक मिलाये माग देनेपर कुछ न रदे तो अश अंतर्ग स्थित हुआ । इसवकार सब जगह बीड गुणींने करना योग्य है।।१०३९

संटाविक्ण रूवं जयरीदो संग्रणित्र सगमाणे। अविणज्ञ अर्णकिद्यं कुज्ञा पदमंति याचेय ॥१०४०॥

गंम्याप्य रूपं उपरितः गंगुणस्य स्वक्रमानैः । अपनीय अनेकितं कुर्यात् प्रथमातं याप्रयेत ॥ १०४० ॥ अर्थ-एकको स्थापन कर उत्तरक्षे आरंगकर भाषने समाणमे गुणें जो प्रमाण हो उनमें अनेकित स्वानका प्रमाण प्रथमकी

आरंभकर अंतपर्यंत घटाना । इसीतरहका कथन गौंमटसारमें मगादके भंगोंने विस्तारसे षहा है ॥ १०४० ॥ एवं सीलगुणाणं सुत्तत्थवियप्पदो वियाणित्ता । जो पाटेदि विसुद्धों सो पावदि सब्वकछाणं ॥१०४१ एवं शीलगुणानां सत्रार्थविकस्पतः विद्याय । यः पारुपति विशुद्धः स प्राप्तोति सर्वकल्याणं ॥१०४१॥ अर्ध-इस प्रकार शील और गुणोंको सूत्र अर्थ और भेदोंसे जानकर जो पुरुष पालता है वह कमौंसे रहित हुआ मीक्षको

पाता है ॥ १०४१ ॥ इसपकार आचार्यश्रीवट्टकेरिविरचित मृताचारकी हिंदीमापाटीकार्मे शील और गुर्णोको कहने-वाला ग्यारवा श्लीलगुणाधिकार

समाप्त हुआ ।। ११ ॥

पर्याप्ति–अधिकार ॥ १२ ॥

आगे मंगव्यवरणपूर्वक पर्याप्ति कहनेकी प्रतिज्ञा करते हैं:-काऊण णमोकारं सिद्धाणं कम्मचक्षमुकाणं। पज्ञश्रीसंगहणी घोच्छामि जहाणुपुच्चीयं ॥ १०४२ ॥ कृत्वा नमस्कारं सिद्धेभ्यः कर्मचक्रमुक्तेभ्यः । पर्याप्तिसंग्रहिणी वश्ये यथानुपूर्वम् ॥ १०४२ ॥ अर्थ-कर्मरूपी चक्रसे छूटे हुए ऐसे सिद्धोंको नमस्कार

२४ महा

करके मैं अब पर्याप्तिके अधिकारको पूर्व कथित आगमके अनुसार कहता हूं ॥ १०४२ ॥

पद्धसी देहोवि य संठाणं कायइंदियाणं च । जोणी आड पमाणं जोगो वेदो य लेस पविचारो ॥ उववादो वहणमो ठाणं च कुलं च अप्पवहुठो य ।

पयाङिहिदिञ्जणुभागन्पदेसर्वयो य सुत्तपदा ॥ १०४४ पर्याप्तयो देहोपि च संस्थानं कार्येद्वियाणां च । योनय आधुः प्रमाणं योगो वेद्दम् लेक्या प्रविचारः १०५३

उपपाद उद्धर्तनं स्थानं च कुठानि च अल्पनहुत्वं च । प्रकृतिस्थलानुमागप्रदेशवंघञ्च स्त्रपदानि ॥ १०४४ ॥ अर्थ-पशित शरीर कायकी रचना इंद्रिय संस्थान गोनि

आयु आयुरेहका प्रमाण योग वेद लेदमा प्रविचार उपगाद उद्वर्तन जीवसानादि स्थान कुळ अरुपबहुत्व प्रकृतिनंथ स्थितिमंथ अनुमा-गर्वप प्रदेशनंपरूप बंध-ये सोलह सुत्र अथवा भेदसे बीससूत्र

होते हैं उनका कथन कमसे करते हैं ॥ १०४३-१०४४ ॥ आहारे य सरीरे तह इंदिय आणपाण भासाए । होंति मणोवि यकमसो पज्जसीओ जिणक्लादा१०४५

आहारस च शरीरस तथा ईद्रियस आनप्राणयोः भाषायाः। मर्वति मनसोषि च कमशः पर्याप्तयो जिनाख्याताः १०४५ अर्थ—आहार पर्याप्ति (निष्पणि) शरीर पर्याप्ति इंदियकी

चेहंदियादियाणं पञ्चसीओ अस्तिष्णिस्ति ॥ १०४६ ॥
एकेंद्रियेषु चतस्रो भवंति तथा आदितश्र पंच मवंति ।
होंद्रियादिकानां पर्याप्तयः असंत्रीति ॥ १०४६ ॥
अर्थ—एटीकाय आदि एक होंद्रवशालीके आदिकी चार
पर्याप्त होशी हैं जीर दो हेंद्रवको आदि रुक्त क्षेती पंचेद्रिय
पर्यंत पांच पर्याप्ति होती हैं ॥ १०४६ ॥
एप्ति य पञ्चसीओ पोघटवा होति स्विणकाषाणां ।

एदाहि अणिव्यसा ने दु अपज्ञसया होति ॥१०४॥। पडपि च पर्याप्तयो पोद्धव्या भवति संविकायानां।

एतामिः अनिर्श्वतास्ते तु अपर्याप्तका मर्वति ॥ १०४० ॥ अर्थ---आरासदि एदा पर्याप्ति संशी वंपीद्ववजायोके होती है। इन पर्याप्तियोस जो अपूर्ण है ये औव अपर्याप्त है ॥१०४०॥ पञ्जसीपञ्जसा मिण्णमुहुस्तेण होति णायच्या। अणुसूमर्य पञ्चसी सन्वेति नोयवादीणं॥ १०४८ ॥

पर्यक्षिपर्यक्षा मिसमुहर्नेन भवेति तातन्याः । अञ्चनमर्य पर्याप्तयः गर्नेषा चोषपादिनां ॥ १०४८ ॥ अञ्चनमर्य पर्याप्तयः गर्नेव चोषपादिनां ॥ १०४८ ॥ होते हें पेश जानता । माः ओ देव नारकी हें उन सबके समय समय मति पूर्णता होती हैं ॥ १०४८ ॥ जिति विभाणे जादो जयपाद्दिस्टा महारहे समयणे ।

अगुसमयं पञ्चलो देवो दिन्देण रूपेण ॥ १०४९ ॥ यमित् विमाने जातः उपपादशिलायो महार्दे शयने । अनुसमयं पर्पाप्ती देवो दिन्देन रूपेण ॥ १०४९ ॥ ३७२

भृषित द्वरीरसे समय समय मति पर्याप्त (पूर्ण) होनाजाता है ॥
अस देहसूत्रका वर्णन करते हैं;—
देहस्स य णिज्यसी भिष्णामुहत्त्तेण होड़ देवाणं ।
सन्दर्यसम्भ्रसणगुणं जोव्यणमित्र होति देहस्मिना।१०५०॥
देहस्स च निष्टेतिः भिन्नमुहर्तन मत्रति देयानां ।
सर्वागभूषणगुणं योवनमि भनति देहे ॥ १०५०॥
अर्थ—सरीरकी निष्पण्ति देवोके अंतर्गृहर्तते होती है जोर

देहमें सब अंगोंको भूपित करनेवाली योवन अवस्था भी अंतर्ध-

हर्तसे होती है ॥ १०५० ॥

अर्थ—गवन आदि सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जिस विमानमें सीपके पुरके आकार उपपादशिखाके कपर रहोंकर जड़ित सब आन्पणोंसे शोभित परुंगपर देव उत्पन्न होता है उसी जगह अपने योजनवाळे

कणयमिव णिरुषखेवा णिम्मलगत्ता सुपंधणीसासा । णादिवरचारुष्वा समचतुरंसोरुसंडाणं ॥ १०५१ ॥ कनकमिव निष्पखेषा निमंतगात्रा सुगंधनिश्वासाः । अनादिपरचारुष्पाः समचतुरसोरुसंखानाः ॥ १०५१ ॥ अर्थे—वे देव सुवर्णेक्ष समान मब्से रहित हैं निमंख शरीर-बाले हैं निनके आतोष्यास सुगंधवाले हैं बाल एद अवस्वा न होनेसे सुंदरहुपबाले हैं यथस्वान न्यूनाधिकतारहित ऐसे समचतु-

जर्भ—ने देय सुवर्णके समान मलसे रहित हैं निर्मल धर्र बाले हैं जिनके श्वातोष्ट्रास सुगंधवाले हें बाल पुद्ध अवशा होनेसे सुंदरस्वयाले हैं यथासान न्यूनाधिकतारहित ऐसे समच रस नामा उक्त संसानवाले हैं ॥ १०५१ ॥ केसणहमंद्यलोमा चम्मचसाकहिरसुत्तपुरिसं चा । णेयट्टी जेय सिरा देवाण सरीरसंठाजे ॥ १०५२ ॥ केशनखस्र्युलोमा चर्मवसाकपिरमृत्रपुरीपाणि या । नैवासीनि नैव मिरा देवानां ग्रशिरसंस्थाने ॥ १०५२ ॥ अर्थ—देवोके शशिरके आकारमें वाल नल डाडी मूछ रोम चनड़ा मांस छोडी मूल विद्या देही नसीका जाल-ये सव नहीं होते हैं ॥ १०५२ ॥

होते हैं ॥ १०५२ ॥ धरवणमंधरसकासा दिन्नं महुपोग्गलेहिं जिम्माणं । गेणहिंद देवो देहं सुक्यरिदकम्माणुमावेण ॥ १०५३ ॥ धरवर्णमंधसम्हाँ दिव्यवहुपुहत्वैय निर्मितं । गृह्वानि देवो देहं सुचरिदकमोतुमावेन ॥ १०५३ ॥

अर्थ—जिनके श्रेष्ट रूप गंध समर्पा हैं ऐसे दिव्य वैकिषिकः वर्गणांके भनंत पुद्रलोसे बने हुए शरीरको पूर्व उपार्वन किये हामकांके मनावसे वह देव महण कराते हैं। १०५२॥ विद्यालय स्तिरं देवाणं माणुसाण संद्राणं । सुहुणाम पसन्धगदी सुस्तरत्वपणं सुष्ट्रपं था।१०५५॥ विक्रियिकं दरीरं देवानां महुप्पाणां संव्यानं । १०५४॥ हमनाम प्रशन्मातिः सुद्धावयनं सुरूपं था।१०५४॥ हमनाम प्रशन्मातिः सुद्धावयनं सुरूपं था।१०५४॥

विभिन्निकं शरीरं देवानां महात्याणां संखानं ।
श्वमनाम प्रशन्मपतिः सुखरवचनं सुरूपं च ॥ १०५४ ॥
अर्थ—देवांका शरीर विभिन्नायुक्त होनेसे वैक्षियक हे
मनुत्योके समान पहला समब्दारस संखान होता है, शुननाम प्रशसनाम सुखरवचन सुरूप ये भी होते हैं ॥ १०५४ ॥
पदमाण सुदयीए गेरहपाणां सु होइ बरसेहो ।
सत्त्वायणु तिणिणरपणी फवेच य अंगुत्या होति॥१०५५
प्रथमायां श्रविष्यां नेरियकाणां सु मवति उत्सेषः ।

सप्त धर्न्षि त्रिरब्रयः पट्ट एव च अंगुरुा भवंति

उंचाई सात भनुष तीन हाथ छह अंगुल प्रमाण है ॥ १०५५ ॥ विदिचाए पुत्रबीए जेरहयाणं तु होह उस्सेहो । पण्णरस दोष्णि बारस घणु रदणी अंगुला चेव१०५६ द्वितीयायां पृथिच्यां नारकाणां तु भवति उत्सेवः ।

अर्थ--पहली रत्नपमा नामा नरककी पृथिवीमें नारिकयोंकी

पेचदश्च ह्रों हादश घनूंपि रत्तयः अंगुलायेव ॥ १०५६ ॥ अर्थ— शर्करा पृथिवीमें नारकियोंके शरीरकी उंचाई पंदर धनुष दो हाम बारह अंगुरू प्रमाण है ॥ १०५६ ॥ तदियाए पुढवीए णेरङ्याणं तु होइ उस्सेहो ।

तादयार युटवार जरहयाण तु हाइ उस्सहा।
एकत्तीसं च घणू एगा रदणी मुणेयव्या ॥ १०५७ ॥
तृतीयायां प्रथिव्यां नारकाणां तु भवति उत्सेषः ।
एकत्रिश्च घर्नुपि एका रिनः मंतव्या ॥ १०५७ ॥
अर्थ—बाङ्कका प्रथितीमें नारिक्योके शरीरकी उंबाई इक्ष्तीस
धरुप एक हाथ जानना चाहिये ॥ १०५७ ॥
चडधीए युटवीए णेरहयाणं तु होइ उस्सेहो ।

चडधीए पुढबीए णेरहयाणे तु होइ उस्सेहो । वासक्षी चेव धणु में रहणी होति जायच्वा ॥ १०५८ ॥ चतुध्याँ पृथिच्यां नारकाणां तु भवति उत्सेवः । डापिः चेव धन्त्रि हे रही मर्गत हातच्याः ॥ १०५८ ॥ अर्थ-चंदममा पृथिगीमें नाम्बिनीकी उंचाई वासठ धनुष दो हाथ मनाण है पेसा जानना ॥ १०५८ ॥

हाय मार्ग ह रेजा जारामा १९०२ ॥ पंचामिए पुडवीप पेरहपार्ण तु होह उस्सेहो । स्त्रह्मेर्ग पणवीसं घणुष्पमाणेण णादुच्यं ॥ १०५९ ॥ पंचम्यां प्रथिचां नारकाणां तु मवति उत्सेषः ।

शतमेकं पंचितिश्वतिः धनुःप्रमाणेन झातव्यं ॥ १०५९ ॥ अर्थ-- धूममभा पृथिवीमें नारकियोंकी उंचाई एकसी प्रशीम धनुष प्रमाण जानना चाहिये ॥ १०५९ ॥

छट्टीए पुदवीए णेरह्याणं तु होह उस्सेहो । दोणिणसदा पण्णासा घणुप्यमाणेण विण्णेया॥१०६० पष्टचां प्रथिच्यां नारकाणां सु भवति उत्सेषः ।

हे शते पंचायत् धनुःप्रमाणेन विशेषा ॥ १०६० ॥ अर्थ-तमप्रभा प्रथिवीमें नारकियोंकी उंचाई दोनी प्रधान धनुष ममाण है ॥ १०६० ॥

सरामिए पुढवीए जेरहयाणं सु होई उस्मेही। पंचेय प्रशासपाई प्रमाणवी चेय बोपप्या ॥ १०६१ ॥

सप्तम्यां पृथिष्यां नारकाणां सु भवति उत्सेषः । पंचय पत्तःशतानि प्रमाणतथ्य बोद्धण्यानि ॥ १०६१ ॥ अर्थ--महातम प्रभा नामकी सातवी प्रथियोगे नारियोशी उंपाई पांचले धनुष ममाण है ऐसा जानना ॥ १०६१ ॥

अब देवीक शरीरका प्रमाण बतलाते हैं:---

पणपीसं असुराणं संसकुमाराण दस पणु चेव। विंतरजोहसियाणं दस सत्त पणु मुणेयच्या ॥१०६६॥ वंचविदातिः अनुराणां दोपब्रमाराणां दस धनंषि चैव । व्यंतरञ्योतिन्त्राणां दश सम् धनुषि ज्ञातस्यानि ॥१०६२॥ अर्थ-अवनदासियोंने अगुरवृमारीका शरीर पथीस धनुष मनाण है लीर बारीके नी कुमारीका शरीर दस बहुक है।

३७६ मूत्राचार--व्यंतरदेवोंका शरीर दस धनुष ऊंचा है झीर ज्योतिषी देवोंका

सात धनुष ऊंचा है ॥ १०६२ ॥ छद्धणुसहस्सुस्सेघं चदु दुगमिच्छंति भोगम्मीस्र । पणवीसं पंचसदा वोषव्वा कम्मभूमीस्र ॥ १०६३ ॥

पणवीसं पंचसदा वोघव्या कम्मम्मीसः ॥ १०६३॥ पद घतुःसहस्रोत्सेषं चत्वारि हे इच्छंति मोगभूमिषु । पंचविद्यतिः पंचशवानि बोदव्यानि कर्मभूमिषु ॥१०६३॥

अर्थ-भोगम्भियोंनें उत्तम मध्यम जबन्य मोगम्मिके मतु-प्योंकी उंचाई कमसे छह हजार पनुत चार हजार पनुत दो हजार पनुत मागण हैं । जीर कमेम्सिके मतुन्योंकी उत्कृष्ट उंचाई

र्षचती पचीत धनुषमाण है ॥ १०६२ ॥ सोहस्मीसाणेसु य देवा खलु होति सन्तरयणीओ । छचेव य रयणीओ सणकुमारे हि माहिंदे ॥ १०६४ ॥

सीधर्मशानयोश देवाः सन्त मनेति सप्त स्त्रयः । पद वेव च स्त्रयः सनत्कुमारे हि माहिद्रे ॥ २०६४ ॥ अर्थ---सीवर्म भीर पेशान सर्गके देव सातं हाम ऊंचे होते हैं । सनत्कुमार भीर महिद्द सर्गके छह हाथ ऊंचे हैं ॥ २०६४ ॥

र नितालुक्तार आर स्वयः स्वाच कर्यः छन्। अप । संभे प स्त्रंतचिवि य कर्षे खल्छ होति पंच रचणीओ । चत्तारि य रचणीओ सुक्रसत्हस्सारकप्पेस्र ॥ १०६५ ॥ ब्रक्षे च लांववेषि च कर्षे खल्ज मृत्रंति पंचरत्वयः ।

चत्वारय रसयः शुक्रसहस्नारकल्पेषु ॥ १०६५ ॥ अर्थ---मझ युगल खोर लांतव युगलमें गांव हाय ऊंचे होते हैं लार शुक्र युगल तथा रातार सहसार सगीर्म चार हाय ऊंचे

होते है ॥ १०६५ ॥

आणदपाणदकष्पे अदुदाओ हवंति रयणीओ । तिण्णेव य रचणीओ बोधव्या आरणजुदो चापि१०६६ आनतप्राणतकल्पे अध्यद्धे भवंति रत्नयः । त्रय एव च रत्नयो बोद्धच्या आरणाच्युतयोश्वापि ॥१०६६ अर्थ--आनत लीर प्राणत सर्गमें साढे तीन हाथ ऊंचे देव होते है तथा आरण अच्युत कल्पमें तीन हाथ प्रमाण होते हैं ॥ १०६६ ॥ हेहिमगेयज्झेस य अड्डाइजा हवंति रयणीओ। मिजिलमगेवज्झेस य में रचणी होति उस्सेहो ॥१०६७ अधम्तनप्रवेषकेषु च सार्धइयं भवंति रह्नयः । मध्यमग्रवेयकेश च डॉ रज़ी भवतः उत्सेघः ॥ १०६७ ॥ अर्थ-अधोप्रेवेयक तीनमें अदाई हाथ उंचाई है और मध्यम-मैंवेयकतीनमें दो हाथ उचाई है ॥ १०६७ ॥ उचरिमगेवज्झेसु च दिवद्वरयणी हवे य उस्सेथो। अणुदिसणुत्तरदेवा एया रयणी सरीराणि ॥ १०६८ ॥ उपरिमग्रवेयकेषु च इचर्धरितः भवेतु च उत्सेधः। अनुदिशानुत्तरदेवा एका रक्षिः शरीराः ॥ १०६८ ॥ अर्थ-जपरके भैवेयकत्रिकर्ने डेट हाथ उंचाई है और नी अनुदिश तथा पांच अनुचर विमानोंके देव एक हाथ ऊचे शरीर-बाले हैं ॥ १०६८ ॥

आगे तिर्थेचोंके शरीरका प्रमाण कहते हैं;-भागमसंखेजनिम जं देहें अंगुलस्स नं देहें ! एइंदियादिपंचेंदियंत देहें जहण्णेण !! १०६९ !! भागमसंख्येयं यो देहो अंगुलस स देहः । एकेंद्रियादिपंचेंद्रियांतं देहो जयन्येन ॥ १०६९ ॥

प्रभादभावन पहिष्यात वहा जवन्यन । १०२८ ॥ अर्थ-पनांगुछ (द्रव्यांगुछ) के असंस्थातवें माग प्रमान एकेंद्रियसे लेकर पंचेंद्री तिर्वेचोंतक जपन्य देह होता है॥१०६९

एकेंद्रियसे लेकर पंचेंद्री तिर्धेचोंतक जपन्य देह होता है॥१०६९ साहियसहस्समेयं तु जोयणाणं हवेज डक्कस्सं । एइंदियस्स देहं तं पुण पडमस्ति णादद्वं ॥ १०७० ॥

साधिकसहस्रमेक तु योजनानां भवेत् उत्हर्षः । एकेंद्रियस्य देहः स पुनः पमे इति ज्ञातवर्षः ॥ १०७० ॥ अर्थ-एकेंद्रियका उत्हर्षः शरीर दो कोस अधिक एक हजार

जय—देशद्वरका उद्धर सार दो कात जायक देन हुआ योजन है यह कमल नाम बनस्पतिकायका देह जानता॥१०००॥ संस्थो पुण पारस जीयणाणि गोभी भवंति कोसं हु।

भमरो जोयणमेलं भच्छो पुण जोयणसहस्सं॥१०७१॥ शंखः पुनः बादश्योजनानि गोमी भवेत् त्रिकोशं तु । अमरो योजनमात्रः मत्सः पुनः योजनसहसं ॥ १०७१॥

अर्था पांचानातः सरसः चुनः चानत्वरहः ॥ १००१॥
अर्था—दो इंदिय शंस बारह्याननका होता है ते इंदिय
गोगी (सर्जूक) तीन कोग्नकं विचारवाना है। चौईदियमँसे
भेवर एक योननहा होता है खार पंचित्र तिर्धनमेंसे मत्त्व
हजार योजन विचारवाला होता है॥ १००१॥

हनार योजन विमासिका होता है ॥ १००१ ॥ जंदुदीवपरिहिओ तिण्णिय छक्ष्यं च सीलहसहस्सं । चे चेवजोपणसपा सत्तावीसा य हॉति चोपच्यारे ८ तिण्णेव गाउआई अहायीसं च पणुसपं भणिपं । नेरसय अंगुलाई अर्द्धगुलमेव सविसेसं ॥ १०७३ ॥

रसय अगुलाइ अद्धगुलमय सायसस्य ॥ १००२ अंदुर्दापपरिधिः त्रीष्येत्र लग्नाणि च योडग्रसहसाणि । है चैव योजनयते सप्तविंदातिय भवंति वोद्धव्यानि॥१०७२ श्रीष्येय गच्यूतीनि अद्यार्थिततिय घतुःश्वतं भणितं । वयोद्दा अंगुलानि अर्षागुलमेव सविदोर्ष ॥ १०७३ ॥ अर्थ—लास योजन विद्यार्थाले जेबूद्वीवकी परिषि (गोलाई) ति लास सोल्द हजार दोती सणाईस योजन तीन कोस प्रकृति अर्थुस साहे तेरह अंगुल बुळ अपिक (एक जी प्रगण) है ॥ १०७२-१०७३ ॥

जंबूरीवो पादहलंडो पुष्नवरयरो य तह दीवो । यारुणियर सीरवरो य चित्रवरी खोदवरदीवो॥१०७४ णंदीसरो य अरुणो अरुणन्यासो य कुंडलयरो य । संख्यररुजगञ्जनवरकुसवरकुंचवरदीयो ॥ १०७५॥

जंबुद्दीयो घातकीरांटः पुष्करवर्थ तथा द्वीपः । वारुणिवरः धीरवर्थ पुत्तवरः धोद्रवरद्वीषः ॥ १०७४ ॥ नंदीधरथ अम्याः अरुणामास्य इंटरवरथ । श्रंसुवररुपकसुत्रगवरक्षयवरद्वीपः ॥ १०७५ ॥

अर्थ--पट्टा अंबृद्वीप पातनीसड पुष्करवरद्वीप बारणीवर धीरवर प्रतवर धीद्रवर नंदीधर अरुण अरुणभास कुंटडवर दांसवर रुचकद्वीप सुजगबर कुरावर कीचवर द्वीप सोड्टबां है॥ १०७४-१०७५॥

हु ॥ १००४-१०७५ ॥ पृषं दीवसमुद्दा दुगुणदृगुणवित्यष्टा असंखेन्ना । पृदे हु तिरियदोष सर्यमुरमणोदही जाव ॥ १०७६ ॥ पूर्व होपसहुद्रा दिगुणदिगुणविन्तुता असंख्याताः । पृते हु तिर्यन्त्रोक सर्वभूसणोद्देष गावन ॥ १००६ ॥ 300

असंस्थात हैं। ये द्वीपममुद्रादिक सर्यम्सण समुद्रवर्थन हैं और
तिर्येग्लोकने हैं॥ १००६॥
जायदिया उद्धारा अश्वाहःव्याण सागम्यमाणं।
नायदिया उद्धाराण आर्थद्रयस्य सागरेपमस्य।
यावंति उद्धाराण आर्थद्रयस्य सागरेपमस्य।
वावंति खलु रोमाणि भवंति द्वीपाः समुद्रायः॥ १०७७॥
अर्थ-अद्धाई सागरोपमके जितने उद्धारपस्य हैं उनमें निवने
रोम हैं उतने ही द्वीप समुद्र हैं॥ १००७॥
जंमुदीये छ्यणो धादहस्तंद्रे य काल्डद्यी य ।
सेसाणं दीयाणं दीयसरिस्यणामया उद्यी॥ १०७८॥
जंमुदीय छ्यणो धातहितंद्रे च काल्डोद्यीय ।

अर्थ-इम प्रकार द्वीप समुद्र दूने दूने विद्यारगाउँ हैं

पत्तेयरसा चत्तारि सायरा तिष्णि होति उद्घरसा । अवसेसा य समुद्दा खोदरसा होति णायञ्चा॥१०७९ प्रत्येकसाः चत्तारः सामराः त्रयो मर्वति उद्करसाः । अवशेषात्र समुद्राः खोदरसा मर्वति इत्वत्याः ॥ १०७९॥ अर्थ—चार समुद्र भित्र भित्र समुद्र हुं, तीन समुद्र भागिक सादयाले हैं, तीन समुद्र समुद्रिक सादयाले हैं थार वाकी समुद्र रहुरसके सादयाले हैं थेरा जानवा ॥ १०७९॥

यामणिवर म्वीरवरो घनवर छवणो य होति परोधा । कालो पुक्तर उदधी सर्यभुरमणो व उदयरमा १०८० पारुणिवरः धीरवरी प्रतवरी खवणध मर्वति प्रत्येकाः ।

फारुः पुष्पत् उद्धिः भ्ययंभूरमणश्च उद्दर्गाः ॥१०८०॥ अर्थ--बारुणीवर क्षीरवर पृतवर रुवणसमुद्र-ये पार अपने

नामके अनुसार भिन्न भिन्न खादबाठे हैं और कारोदिध पुण्यर स्यंग्रमण-ये तीन सगुद्र जरुके समान म्वादवारे हैं॥ १०८०॥ रुपणे कारुममुद्दे सर्पभुरमणे य होति मच्छा हु । अवसंसंख समुदेख णित्थ मन्छा च मचरा चा १०८१

लवण कालममुद्रे भ्वयंभूरमणे च भवति गग्सान्तु ।

अवशेषेषु ममुद्रेषु न संति मत्स्याध मकता या ॥ १०८१॥ अर्थ- स्वणसमुद्र कालसमुद्र कीर स्वयंश्वरणसमुद्र-इन तीन समुद्रोंने तो मच्छ आदि जलचर जीव रहते हैं और दीव समुद्रोंने

मच्छ मगर आदि कोई भी जलबर जीव गर्दी रहता ॥ १०८१ ॥ अद्वारम जीविणया स्वणं जब जीवणा णहिमुहेस । छनीममा च बालोदहिमि अहारम णदिसुरेसु १०८६

अष्टादच योजना स्वयं नव योजना नदीमुखेष । पट्टिश्रालाथ कालोदर्भा अष्टादश नदीष्ट्रसेषु ॥ १०८२ ॥

अर्थ--- श्वण शमुद्रमें घटारह की अन प्रमाण मध्य है शंता आदिन, प्रवेश होनेके स्थानमें नी योजनके मस्य है। बालोदिर शमुद्रमें एसीय योजन प्रमाणवाते मास्य रहते हैं कीर महियोंके गुरुपेरे अटारट योजन मनाण मन्त्र है ॥ १०८२ ॥

सार्शितवा द बच्छा सर्वभुरमणित पंचमदिया द ।

देनारण सारवारामं कृतुमामाणं आजनीतम् ॥ १०८३ ॥ आजनिकासम् भागा सार्चभूमाणे चेनातिमानम् ॥ १००५ मार्चनानं कृतुमानाने नामानेष् ॥ १०८३ ॥ वर्षः चनवानान मानुति इतार भेवम प्रणान मान्य वेति भागः च १ मंग्यो जीवन्त्रे देन १००० सन्ते अभागः अनान्य अनान्य १००० च १ मंग्यो जीवन्त्रे देन १००० सन्ते अभागः अनान्य अनान्य विकास

प्रकार केटी हुन्ताम है। हर्ता । अल्पानकामान्य्विधमहित्य भगवनाया विकासि है। अल्टान्य्विधमानकामा तम भौनामान्य समितिको प्रकारवास्तान्य विचारी कार्यास्त्र हिन्दिस्ता । अल्टान्य कार्यान्य विचारी कार्यास्त्र । हिन्दिस्ता अल्टान्य अल्टान्य योग स्वार्थन हिन्दिस्ता

र १४ ३ केंद्र रहत वर्ष चा दरीश ने है ने हैब असे

हात प्राप्त कर राष्ट्र भाग गाँउ गाँउ गाँउ है के का है। करात के कार्याक्तर देव नहीं है विकास स्वाप्त कार्याक्त की है। रेटक करात्व की जिस्सी है है के ब्राह्म स्वाप्त की की रेटके हैं। कार्याक रेटक की स्वाप्त की स्वाप्त

स्यलगर्भजपर्याप्ताः त्रिगच्यूतानि उत्हृष्टमायामः ॥१०८६॥ अर्थ-जलचर गर्भजपर्याप्त जीवींका उत्हृष्ट देहपराण पांचसी योजन है और सरुवर गर्भज पर्याप्त जीवींका उत्कृष्ट आयाम तीनकोशका है॥ १०८६॥

अंगुरुअसंखभागं वादरसुहुमा य सेसवा कावा। उक्करसेण दु णियमा मणुगा य तिगाउ उव्विद्धा १०८७

अंगुलासँख्यभागं वादरसूक्ष्माश्र होपाः कावाः । उत्कृष्टेन तु नियमातु मनुष्याथ त्रिगव्युतानि उद्वद्धाः १०८७

अर्थ-द्रव्यांगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण वादर तथा सूक्ष्म वाकीके पृथिवीकाय अप्काय तेजःकाय वायुकायका उत्कृष्ट इरीर प्रमाण नियमसे जानना । और मनुष्योंना प्रभाण तीन कोसका जानना ॥ १०८७ ॥

सुरूमणिगोदअपञ्चत्तस्य जादस्य तदियसमयितः। हषदि दु सञ्बजहण्णं सञ्जूकस्सं जलचराणं॥१०८८॥

स्क्मिनिगोदापर्याप्तस्य जातस्य तृतीयसमये । मवति तु सर्वजयन्यं सर्वोत्कृष्टं जलचराणां ॥ १०८८ ॥

अर्ध-सदमतिगोदिया अपर्याप्त उत्पत्त एए जीवके तीसरे समयमें नियमसे सबसे जयन्य शरीर होता है और जड़बर मस्य जीवका सबसे उत्हृष्ट शरीर होता है।। १०८८ ॥

अब देहके आकार सूत्रको कहते हैं:--

मस्ररिय कुसन्गर्धिन् सहकताचा पडाप संटाणं। कायाणं संठाणं हरिद्रतसा णेगसंठाणा ॥ १०८९ ॥

मद्यरिका इत्याप्रविद्वः स्पीकलापाः पताका संस्थानं ।

कायानां संस्थानं हरितत्रसा अनेकसंस्थानाः ॥ १०८९ ॥ अर्थ—-पृथिचीकाय जलकाय तेनकाय वायुकायके वरीरका आकार मसूर डामके अप्रभागमें जलविंदु सूचीसमुदाय ध्वजा रूप कमसे हैं सम वनस्पति और दो इंद्रिय आदि त्रस जीवींका वरीर

भेदरूर अनेक बाकारवाला है ॥ १०८९ ॥ समचउरसणिग्गोहासादियखुद्धायवामणाहुडा । पंचिदियतिरियणरा देवा चउरस्स णारया हुडा१०९०

समचतुरस्रन्यग्रोधसातिककुण्जवामनहुंदाः । पंचेंद्रियतिर्यमरा देवाः चतुरस्रा नारका हुंदाः ॥१०९०॥ अर्थ---समचतुरस्र न्यगोध सातिक कुळ्ज वामन हुंद्र-न्ये छट

संस्थान पंचेदिम तिर्यच मनुष्योंके होते हैं, देव चतुरस संसा-नवाले है नारकी सब हुंडक संसानवाले होते हैं॥ १०९०॥

जयणालिया मसूरिज अतिद्युत्तपर्यदए खुरुषे य । इंदियसंठाणा खल्ड फासस्स अजेयसंठाणं ॥ १०९१॥ यवनालिका मसूरिका अतिद्युक्तकं चंद्रकं क्षुरंगे च । इंद्रियसंखानानि यत्न स्पर्येख अनेकसंखानं ॥ १०९१॥

अर्थ-भोत्र चशु प्राण जिहा इन चार इंदियोंका आकार क्रमसे जीकी नहीं, मत्तर, अतिश्रक्तक पुष्प, अर्थेनंद्र अथवा पुरण इनके समान है मार क्यान इंदिय अनेक आकाररूप है।। चन्नारि धशुसदाई चडसदी घशुसपं च फरसरसे।

चचारि ध्वसदार पडस्टी घणुसय च पस्सरसे । गंधे य दुगुज दुगुजा असिर्जिपिनिया जात्र १०९२ चलारि घतुःग्रवानि चतुःगरी धतुःग्रनं च सर्ग्यसयोः । गंधस च टिगुजिरुजानि ग्रवीनपेरिया यात्र १०९२ ं -- सर्शन इंदियका विषय चारसौ धनुष है, रसना इंदि-पय चौंसर धनुष है, प्राण इंदियका विषय सी धनुष है। मे लेकर असंजिपेचेदिय पर्यंत जीवोंके स्पर्शन आदिका गर्गे आगे दूना दूना कहा है ॥ १०९२ ॥ मजीयणसदाई चउवण्णाय होइ णायव्या । दियस्स णियमा चवखुष्कासं वियाणाहि १०९३ ।नित्रयुत् योजनश्रुतानि चतुः पैचाशत् भवति हात्व्यानि। रिद्रियस्य नियमात् चक्षःस्पर्धः विज्ञानीहि ॥१०९३॥ --- चौइंद्रिय जीवके चलु इंद्रियका विषय उनतीससी ोजन प्रमाण जानना ॥ १०९३ ॥ हे जोयणसदा अहेब य होति तह यणायव्वा। गपंचेंदीए चक्खुप्फासं वियाणाहि ॥ १०९४॥ न्नपष्टियोजनशतानि अप्टेंब च भवंति तथा च ब्रातब्यानि। तिपंचेंद्रियस चन्नःस्पर्धे विज्ञानाहि ॥ १०९४ ॥ -असभी पंचेंद्रियके चक्षु इंद्रियका उत्कृष्ट विषय उन-गठ योअन है ऐसा जानना ॥ १०९**० ॥** रणुसहस्सा सोद्रकासं अस्रिणणो याण। ावि य णायच्या पोरगलपरिणामजोगेण ॥१०९५ वेव धनुःसहसाणि श्रोत्रस्पर्धे असंतिनो जानीहि । त्रा अपि च प्रातन्याः प्रहलपरिणामयोगेन ॥१०९५॥ -असंज्ञी पंचेद्रियके श्रोत्र इंदियका विषय आठ हजार ाण है। पुद्रलके विशेष संस्थान आदिके संबंधसे अन्य विषय भी जानने चाहिये ॥ १०९५ ॥

मूलाचार--फासे रसे य गंधे विसवा णव जोयणाय बोघव्या ।

464

गोवस्स व यारसजीयणाणिदो चक्खसो बोर्च्छं१०९६ रंपर्शस रसस्य च गंधस्य विषया नव योजनानि बोद्धन्यानि। थोप्रस तु द्वादशयोजनानि इतश्रभुपो वस्ये ॥ १०९६ ॥ अर्थ--रांशीपंचेदिय चकवती आदिके सर्वान सना माण इन शीन इंदियोंका विषय नौ यौजन है और श्रोत्र इंदियका

निषम पारद योजन है। अब आगे चक्षु इंदियका विषय कहते हैं ॥ १०९६ ॥

राशेतालसहरसा ये चेव सदा हवंति तेसद्दी । गर्मिशदिगरस विसञो उक्तस्सो होदि अतिरित्तो१०९७

राप्तपारवारिकत्सहसाणि द्वे एव शते मवंति त्रिपष्टिः । पशुरिद्रिगस विषय उत्कृष्टो भवति अतिरिक्तः ॥१०९७॥

अर्थ-पशु रंदिमका उल्लप्ट विषय सैतालीस हजार दोसी त्रेसठ योजन कुछ अधिक है ॥ १०९०॥

अस्सीदिसदं विगुणं दीवविसेसस्स वन्ग दहगुणियं। मूलं सहिविहरां दिणद्भाणाहदं चक्ख् ॥ १०९८॥

अधीतिश्रं द्वियुणं द्वीपविशेषस्य वर्गो दश्यणितः । मुलं पष्टिविमकं दिनार्धमानाहतं घक्षः ॥ १०९८ ॥ अर्थ-पक्सी अस्तीकी दूना करनेपर तीनसी साठ हुए,

िनिया उस

ा किया ' उस वची हुई ं उसका वर्गमूल : 👊 भाग दे जो

ब्रमाण जाया निषय 🗟 आने योनिका सरूप वर्णन करते हैं;— एइंदिय जेरइया संयुद्धजोणी हवंति देवा य । वियक्तिंदिया य वियदा संयुद्धविषडा य मन्मेसु१०९९ एकेंद्रिया नारका संद्यवीनयो मर्वति देवाय । विकर्तिद्रियाय विद्वताः संद्यविद्वताय मर्भेषु ॥१०९९ ॥

एकेंद्रिया नारका संष्ठवयोनयो मर्वति देवाय । विकलेंद्रियाय विष्ठताः संष्ठविष्ठताय मर्भेषु ॥ १०९९ ॥ अयं—स्विच शीत संबुत व्यविष्ठ उच्च विष्ठुत सनिवासिक शीतोच्य संबुतिश्व इन भेदोंसे नी प्रकारकी योनि वर्धान् उत्यविस्तान है। एकेदी नारकी देव इनवेशीन है और गर्भेजोंसे संबुतिबद्ध योगी हैं॥ १०९९ ॥ अधिसा खल्ड जोणी चेरह्याणं च होइ सेवाणं।

आयसा अनु जाना गर्द्याण य हार प्राण में मिस्सा य गन्भजम्मा तिविही जोणी दु समाणं११०० अचिता राजु योनिः नास्काणों च भवति देवानां। मिश्राय मभेजमानः त्रिविधा योनिस्तु देवाणां॥११०॥ अर्थ—अविष योनि नास्त्री जीर देवीर होती है, गर्भजोंके

अर्थ-अधिष योनि नारकी और देवीके रोती है, गर्भजों के निश्र योनि होती: है और दोष संपूर्णनों के तीनी ही योनि होती हैं ॥ ११००॥ सीद्रण्हा प्यस्तु जोली चेदहयाणं महेब देवाणं !

सीतुण्हा चन्छ जोणी जेरहयाणं नहेब देवाणं ! नेकण वसिणजोणी तिबिहा जोणी दु सेमाणा।११०१ द्यीतीच्या राजु योनिः नारकार्या वर्धव देवानां !

हीतीच्या रातु योतिः नारकायां तर्पेष देवानां । तेवसां उष्णयोतिः विदिधा योतिन्तु होराष्टां ॥११०१॥ अर्थ—नारवी और देवोक शीत उष्ण कीति है तिरकारिक

मुलाचार-फासे रसे य गंधे विसया णव जोयणाय वोघव्वा।

३८६

सोदस्स दु वारसजोयणाणिदो चक्खुसो बोच्छं १०९६ स्पर्यस्य रसस्य च गंपस्य विषया नव योजनानि बोद्धन्यानि। श्रोत्रस्य तु द्वाद्ययोजनानि इत्यञ्जपो बस्य ॥ १०९६ ॥ अर्थ-संशोपवेदिय चकवर्ती शादिके सर्धन रहना प्राप इन तीन इंदियोंका विषय नी यौजन है जीर श्रोत इंदियका विषय बारह योजन है। अब आगे बलु इंदियका निषय कहते हैं ॥ १०९६॥ सत्तेतालसहस्सा वे चेव सदा हवंति तेसही।

चर्षिरादियस्स विसओ उद्धरसो होदि अतिरित्तो१०९७

सप्तचत्वारिशत्सहसाणि द्वे एव शते भवंति विपष्टिः । चतुरिद्रियस विषय उत्कृष्टी भवति अविरिक्तः॥१०९७॥ अर्थ-चन्न इंदियका उत्कृष्ट निषय सैंतालीम हजार दोनी त्रेमठ योजन कुछ मधिक है ॥ १०९७ ॥ अस्सीदिसदं विगुणं दीवविसेसस्स वग्ग दहगुणियं। मूलं सहिविहर्स दिणद्वमाणाहदं चक्त् ॥ १०९८ ॥ अद्योतित्तर्वं द्विमुणं द्वीपविशेषस्य वर्गो दरागणितः । मूलं पष्टिविमकं दिनार्थमानाइनं गञ्जः ॥ १०९८ ॥ अर्थ-पदमी अम्मीको दुना करनेरर तीतनी साठ तुर, तीनमी माठको बंदुरीपके विष्क्रम एकवाम योजनमेंने घराया उस बची हुई संस्थादा वर्ग हिया उस वर्गकी दमगुणा हिया '

उनका बर्गमुक हिया उसे साठका मान दे नीचे गुणा किया औ मन्त्र आया वरी च्या दंदियका निवय क्षेत्र है ॥ १०९८ ॥

जागे योनिका सहर वर्णन करते हैं,—
एई दिय णरइया संवुदजीणी हवंति देवा य ।
वियर्जिदेया य विषदा संवुदवियदा य गन्मेसु१०९९
एकेंद्रिया नारका संवुदगिनया मंति देवाय ।
विकर्जिद्रिया विश्वताः संवुदविवयदा गर्भेषु ॥ १०९९ ॥
अर्जे-द्रियात्र विश्वताः संवुदविव्यात्र गर्भेषु ॥ १०९९ ॥
अर्जे-सिव्य दीत संवृद्ध अविच उच्च विश्वत स्विजापित्र
शीतोच्या संवृद्धविष्ट इन भेदीसे नी भकाकी योनि अर्थात्
उत्पित्समा हैं। एकेदी नारकी देव इनके संवृद्ध (द्वरमक्स)
योनि हैं, दोईदीसे चौरंद्रीवक विश्वयोनि है और गर्भनीमें
संवृतविष्टत योनि है ॥ १०९९ ॥

अधिता खेळ जोणी जेरह्याणं च होइ देवाणं ।
मिस्सा य गर्नमजम्मा तिबिही जोणी दु सेसाणं११००
अभिना खेळ योनिः नारकाणां च मबित देवानां ।
मिश्राव गर्भनत्मानः विविधा योनिस्त हेपाणीं।११००॥
अर्थ—अपित योनि गरकी और देवेंके होती है, गर्भजोंके
मिश्र योनि होती है और दोष संगुर्जनोंके तीनों ही योनि
होती हैं ॥ ११००॥

सीटुण्हा खल्ड जोणी णेरइयाणं सहेव देवाणं । तेऊण उसिणजोणी तिविद्दा जोणीटु सेसाणं॥११०१ द्यीतोष्णा खल्ड योनिः नारकाणां तर्यव देवानां । तेत्रसां उष्णयोनिः त्रिविया योनिस्तु रोपाणां ॥११०१॥

तजसा उष्णयानः ।त्रायथा यानस्तु श्रयाणा ॥ १८०१ ॥ अर्थ--नारकी और देवोंके शीत उष्ण योनि हैं तेजवायिक 366

जीवंकि उच्च बोनि है जोर शेन प्रेंद्रियादिके तीनींनकारी बोनि है ॥ ११०१ ॥ संन्यायत्त्रपत्तोणी कुम्सुण्णद् यंमपत्त्रजोणी य ।

सत्यायसायसाया कुम्बुवगद् वमपराजाणा या तत्थ य संस्तावसे णियमादु विवञ्चण गन्मो ॥११०२॥ ग्रंसावर्तक्योनिः कुर्मात्रनः गंगपत्रयोनिय ।

श्रुतावर्तभयानः कृमाश्रुतः वश्रुपत्रयानश्च । तत्र च शंसावर्ते नियमान् विषयते गर्भः ॥ ११०२ ॥ अर्थे—शंसावर्तयोनि कृमाश्रुतयोनि शंशपत्रयोनि इसतरह

अर्थ--शंसावतेयोनि कूर्मात्रतयोनि यंशपत्रयोनि इस्तरह तीन प्रकारकी आकार योनि होती हैं उनमेंसे शंसावर्नयोनिर्ने नियमसे गर्म नष्ट होजाता है ॥ ११०२ ॥

कुम्मुण्णदजोणीए तित्ययस्य दुविङ्चक्यद्दीय । रामावि य जायते सेसा सेसेमु जोणीमु ॥ ११०३ ॥ कुर्मोत्वयोनी तीर्थकरा डिविषचक्रवर्तियः ।

स्तानविष्यां अवस्ति अवस्ति निर्मार विश्वास योगिषु ॥ ११०३ ॥ अर्थ-कूर्गांत्रत्योगिमं तीर्थकः वक्षी अर्थककीदोनी बळदेव- थे उत्तव होते हैं और बाकी दो योगियाँमें होप मनुस्याद पैदा

होते हैं ॥ ११०३ ॥ णिचिदरघादु सत्तय तरु दस विगलिंदियेसु छचेव । सुरणिरयतिरिय चउरो चोदस मणुएसु सदसहस्सा॥

सुराणरयातिरियं चचरा चाइस मण्युप्सु सद्सहस्सा॥ नित्येतरागुतसार्कं तरुणां दय विकलेंद्रियाणां पर् चेत्र। प्रस्तारकतिरयां चचारः चतुर्देश महाजानां ग्रतसहसाणि११०४ अर्धु—नित्यनिगोद इतरनिगोद प्रथिवीकावसे लेकर वायुकाय-

अध्—ानत्यानगाद इतरानगाद प्राथनाकायस रुकर वायुकाय-तक-इनके सात सात राख योगि हैं। प्रत्येक बनस्पतिके दश राख योगि हैं दो इंद्रिय आदि बौइंद्रीतक सन छह टास ही हैं, देव नारकी और पंचेदिय तिर्वचेक चार चार लाल मांति हैं तथा मनुष्पीके चीदह लाल योति हैं। सब मिल्डन चीलारी लाल योति हैं॥ १९०१॥ पारत्यपारस्तरहरसा आंत्र सुद्धेसु जाण उपलग्धं। चरसुद्धिविकायमेसु य पारस्तरहरमाणि पाषीना॥११०५ हादश्ववेकायमेसु य पारस्तहरमाणि पाषीना॥११०५॥ स्वरूचिवीकायियेश य पर्वचहरमाणि हाविद्विति॥११०५॥

काद्यवस्पत्साणं आयुः छुद्धः वानीदि उन्हर्षः । रार्ष्यविषिकायिके प्रवर्षमहाराणि हाविद्यक्षिः ।।१९०५।। अर्थ—एषिका शादि शुद्धः हृषियीकाविष्ये । शायुः उन्हर्ष्यः बारद्धः ह्यार वर्षकी हैं और स्वरः आदि सार्युविषी वाविकारी बार्द्स ह्यार वर्षकी हैं । यहां वितीससी तिर्चार उच्छुसीका सक् मुद्धा है जात है ऐसा जाता ॥ १९०५।। स्वरा तु याससारहस्या आठः आजस्य होर् उद्यस्तं । र्वित्रियासि तिरिचय हु सेठकां होर् उद्यस्तं ॥१९०५।।

त्यादेशाणां भागण्या दु राज्या रेहि उपराध १९६०मा सप्त तु वर्षसहसाणि आयुः अपो भवति उत्हर्षः । साबिदिनानि शीणि तु संज्ञानं भवति उत्हर्षः । ११०६ ॥ अर्थ-अपुकायिकोका उत्हर्णः आद्य सातः हजार वर्षका है

अय-अपकायकार्यकार उत्तर का वात है। ११०६॥ तीर तेजवायकोर उत्तर का वात तीन दिवसका है। ११०६॥ तिरिण वृषासमहस्माण द्वा प्रणाप्त को है। ११०६॥ दम वासमहस्माणि द्वा प्रणाप्त शिलं तु वदस्य।११०७ वीलि तुष्यस्साणि आयुः समुनी भरति उन्तरे।

त्रापि सु पंपत्रसाम अधुः चयुना नवात उन्हरः । द्रम्म पंपेत्रसामि सु वनरपर्तानां सु उन्हरः ।। ११०७ ॥ ऋयं—बादुनायिनीया उत्तर आयु तीन द्रम्म वर्षे हे और बनत्तरीनादिनीया उत्तर काम दर्म हमा दर्पेश है॥ ११०७॥ ३९० म्ह्यचार−ें यारस वासा वेइंदियाणमुकस्सं भवे आऊ।

यारस वासा चहाद्याणमुक्तस्स भव आज। राहंदिणाणि तेहंदियाणमुजुवण्ण उक्तस्तं ॥ ११०८॥

द्वादय वर्षाणि द्वीद्वियाणामुक्तस्यं भवेत् आयुः । रात्रिंदिनानि त्रीद्वियाणामेकोनपंचायत् उत्स्रद्धं ॥११०८॥ अर्थ—संस आदि दोहंद्वियका उत्स्रद्धं आयु बारह वर्षं है

अर्थ—शंस आदि दोईदियका उत्क्रष्ट आयु बारह वर्ष है और गोमी आदि तेईदियका उत्क्रष्ट आयु उनचास अही-रात्रका है।। ११०८॥

पनिविद्याणमाञ बक्क्सं खलु हवेज छम्मासं । पर्विदियाणमाञ एतो बहुं पवक्खामि ॥ ११०९ ॥ बहुरिंद्रियाणामाद्धः उत्हृष्टं खलु मवेत् पण्मासाः ।

चतुरराद्रयाणामायुः उत्कृष्ट खर्ख भवत् पणासाः । पंचेंद्रियाणामायुः इत ऊर्च्च प्रवस्यामि ॥ ११०९ ॥ अर्थे—अगर आदि चौईद्रियोंको उत्कृष्ट आयु छह महीनेका

है इससे आगे पंचेद्रियोंका बाद्य कहते हैं ॥ ११०९ ॥ मच्छाण पुरुवकोडी परिसच्पाणं तु णवय पुरुवंगा । यादालीस सहस्सा उरमाणं होइ उक्कस्सं ॥ १११० ॥

भादालस सहस्सा उरमाण हाइ उक्कस्स ॥ १११० ॥ मत्सानां पूर्वकोटी परिसपीणां तु नवेष पूर्वागानि । द्वापत्यारिंग्रत् सहस्राणि उरमाणां भवति उत्कृष्टे॥१११०॥ अर्थ—मच्छोंका उत्कृष्ट खाष्ठ एक कोटिपूर्व है गोर आदिका आयु नव पूर्वाग ही है सर्वोंका आयु ब्यालीस वर्षकाहै ॥१११०॥

अर्थे—मच्डोका उत्कृष्ट आयु एक कोटियुर्व है गोह आदिका आयु नव पूर्वेग ही है सर्वेका आयु व्यालीस वर्षका है ११११०॥ पक्सीणं उक्ससं चाससहस्सा विसत्तारी होति । एगा य युञ्चको डी असण्यीणं तह य कम्मासूमीणं११९१ पश्चिणां उत्कृष्टं वर्षेतहसाणि हासस्तिः मुवंति । एका च पूर्वकोटी असंज्ञिनां तथा च कर्ममोमानां ११११

अर्थ--कर्ममूमिया भैरंड आदि पक्षियोंका उत्कृष्ट आयु बहचरि हजार वर्षका है और असंज्ञी तिर्वचौका तथा कर्ममू-मिया आर्य मनुष्योंका आयु उत्हृष्ट एक कोटीपूर्ववर्षका है ११११

हेमवदवस्सयाणं तहेव हेरण्णवंसवासीणं। मणुसेसु य मेच्छाणं हबदि तु पलिदोवमं एकं १११२

हैमवतवर्पजानां तथेव हैरण्यवर्पवासिनां।

मनुष्येषु च म्लेच्छानां भवति तु पलिवोपमं एकं॥१११२ अर्थ-हैमवत क्षेत्रमें उत्पन्न तथा हैरण्य क्षेत्रमें रहनेवाले

भोगम्मियोंका च शद्से अंतरहीपजीका, मनुष्योंमेंसे म्हेच्छसंडवा-सियोंका आयु एक पत्य है।। १११२॥

हरिरम्मचबस्सेसु च हवंति पिटदोचमाणि सन्ह दोण्णि तिरिएस य सण्णीणं तिण्णिय तह कुरुवगाणं च १११३

हरिरम्यकवर्षेषु च भवंति परयोपमे एछ दे। तिर्यक्ष च संहिनां त्रीणि च तथा इरवकाणां च ॥ १११३

अर्थ-हरिवर्ष रम्यकवर्ष इनमें दो पत्त्रकी आयु है जीर संजी तिर्यचौकी तथा उत्तरकुरु देवकुरु मनुष्य भोगभूमियौकी भाषु

तीन पल्यकी है ॥ १११३॥

देवेख णारचेख य नेत्तीसं होति उद्धिमाणाणि । उद्यस्मयं तु आऊ पाससहस्सा दस जहण्णा॥१११४

देवेषु नारकेषु च श्रयस्थितं भवंति उद्धिमानानि । उत्कृष्टं तु आयुः वर्षसहसाणि दश जपन्या ॥ १११४ ॥

अर्थ--देव और नारिक्वोंकी उत्कृष्ट बायु तैतीस सागर ममाण है और जपन्य आय दस हजार वर्षकी है ॥ १११४ ॥

एकं च तिष्णि सराय दस सत्तरसेव होति वावीसा। तेतीसमुद्धिमाणा पुढवीण ठिद्धीणमुकस्सं ॥१११५॥

एकं च त्रीणि सप्त च दश सप्तद्शिय भवंति द्वाविंशतिः । त्रयस्त्रिशत् उद्धिमानानि पृथिवीनां स्थितीनामुत्कृष्टं१११५

अर्थ-नरक पृथिवियोंकी उत्कृष्ट आयु कमसे एक तीन सात दश सबह बाईस तेतीससागर है ॥ १११५ ॥

पदमादियमुक्तरसं विदियादिसु साधियं जहण्णत्तं ।

धम्मायभवणवितर वाससहरसा दस जहण्णं॥१११६ प्रथमादिकमुत्कृष्टं द्वितीयादिषु साधिकं जघन्यं । धर्मामवनव्यंतराणां वर्षसहस्राणि दश्च जधन्यं ॥ १११६॥

अर्ध-ओ पहले नरक आदिकी उत्कृष्ट आय है वह अगते अगले दूसरे आदि नरकमें एक समय अधिक जवन्य है और धर्मा नामका पहला गरक मयनवासी तथा ध्यंतरीकी जापन्य आप दस दजार वर्ष की है ॥ १११६ ॥

असरेस सागरोवम तिपह पहुं च जागभोमाणं। अद्दिल्ल सुवण्णा द् दीव सेसा दिवहुं तु॥ १११७॥

अगुरेषु मागरीपर्म त्रिपरयं पर्स्य च नागमीमानां । अर्थनृतीयं सुपर्णानां दे द्वीपानां शेषाणां द्वपर्ध सः।१११७ अर्थ--- मवनवासियोगि अनुर कुमारीकी एक सागर उत्कृष्ट

आप है, पर्लोद आदि नागकुमारो हि सीन पत्न, अंतरोही एक बल्य, सुवर्ण कुमारोधी बाई बला, द्वीपकुमारोधी दोवल्य स्पीर बार्धीक कुमारीकी बेट पन्य उत्हार आयु है।। ११२७॥ पहडनाग पर्छ च माधियं जोदिसाण जहिणातुरा ।

हेड्डिह्यकस्सठिदी सक्वादीणं जहण्णा सा ॥ १११८ ॥ पत्याप्तमागः पत्यं च साधिकं ज्योतिषां जधन्यमितरत् । अघ उत्क्रष्टिखितिः शकादीनां अधन्या सा ॥ १११८ ॥ अर्ध--चंद्रमा आदि ज्योतिपी देवोंकी जधन्य आयु पत्यके

माउदें माग है बार उल्ह्रेष्ट आयु लासवर्ष अधिक एकपत्य है। अयः सित ज्यातिपी आदिकी उत्कृष्ट स्थिति है वह सौधर्म आदि

देवोंकी जपन्य आयु जानना ॥ १११८ ॥ वे सप्त दसय चोदस सोलस अहार वीस वावीसा। एयाथिया य एतो सकादिस सागस्वमाणं॥१११९॥ द्वे मप्त दश्च चतुर्दश्च पोडश्च अष्टादश विंशतिः द्वाविंशतिः।

एकाधिका च इतः शकादिषु सागरोपमानं ॥ १११९॥ अर्थ-सीपर्म युगल आदि सर्गोंमें कमसे उत्क्रप्ट आय दो सागर सात दस चीदह सोल्ह जठारह बीस बाईस सागर इससे

जागे एक एक सागर अधिक होती हुई अंतके सर्वार्थ सिद्धि विमानमें तेतीस सागर है ॥ १११९ ॥

पंचादी येहिं जुदा सत्तावीसाय पक्ष देवीणं। तत्तो सञ्चत्तरिया जावट्ट अरणप्ययं कृष्यं ॥ ११२०॥ पंचादिः द्वाभ्यां युवाः सप्तविंशतिः पल्यानि देवीनां ।

त्तवः सप्तोचराणि यावत् आरणाच्युतं कत्यः ॥ ११२० ॥ अर्थ-सीधर्म आदिकी देवियोंकी उत्कृष्ट आयु पांचको आदि लेकर दो दो मिलाते हुए सहसारसर्ग पर्यंत संचाईस

पत्यकी है उससे आगे सात सात मिटानेसे अच्यतसर्गमें पचपन

पत्यकी है॥ ११२०॥

३९४

पणयं दस सत्तिधियं पणवीसं तीसमेव पंचिवयं। चत्तालं पणदालं पण्णाओ पण्णपण्णाओ ॥ ११२१ ॥ पंच दश्च सप्ताधिकानि पंचविश्वतिः विश्वदेव पंचाधिकाः । चत्वारिशत् पंचचत्वारिशत् पंचाशत् पंचपंचाशत्॥११२१॥ अर्थ-किसी आचार्यका ऐसा कहना है कि देवियोंकी आयु क्रमसे पांच सत्रह पचीस पैंतीस चालीस पैंतालीस पचास पचपन पल्यकी युगलोंमें है ॥ ११२१ ॥ चंदस्स सदसहरसं सहस्स रविणो सदं च सुक्करस। वासाधिए हि पछं लेहिट्टं वरिसणामस्स ॥ ११२२ ॥

मुहाचार-

चंद्रस शतसहस्रं सहस्रं रवेः शतं च शुकस्र । वर्षाधिकं हि पर्ल्यं रुधिष्टं वर्षनाम्नः ॥ ११२२ ॥ अर्थ--चंद्रमाकी उत्कृष्ट आयु हालवर्ष अधिक एक पत्यकी है, सूर्यकी हजार वर्ष अधिक पल्यकी है, गुककी सी वर्ष अधिक पत्यकी है, बृहस्पतिकी सौ बरस कम एक पत्यकी है।। ११२२॥ सेसाणं तु गहाणं पहन्दं आउगं मुणेयव्यं । ताराणं च जहण्णं पाददं पादमुकस्सं ॥ ११२३ ॥

शेपाणां त ग्रहाणां पल्यार्घ आयुः मंतव्यं । ताराणां च जपन्यं पादार्घं पादमुत्कृष्टं ॥ ११२३ ॥ अर्थ--- रोप प्रहोंकी उत्कृष्ट आयु आधा पत्य जानना । भुव आदि ताराओंकी जयन्य आयु पत्यका आठवां माग है उस्हष्ट

आय पत्यका चीया भाग है ॥ ११२३॥ सन्वेसि अमणाणं भिण्णमृहुत्तं हवे जहण्णेण।

सोवकमाउगाणं सण्णीणं चावि एमेव ॥ ११२४ ॥

सर्वेषां अमनस्कानां मिन्नपुहर्ते भवेत् जपन्येन । सोपक्रमायुष्काणां संज्ञिनां चापि एवमेव ॥ ११२४ ॥ अर्थ-सब असंजियोंकी जधन्य आय अंतर्भेहर्त है और विष आदिसे घात होनेवाठी आयुवाले संज्ञी जीवोंकी भी जपन्य अंत-

र्महर्त आयु है ॥ ११२४ ॥ अब संख्यामानको **क**हते हैं:--

संखेजमसंखेजं विदियं तदियमणंतयं वियाणाहि। तत्थ य पदमं तिविद्दं णवहा णवहा हवे दोविण११२५

संख्यातमसंख्यातं द्वितीयं वृतीयं अनंतं विजानीहि। तत्र च प्रथमं त्रिविधं नवधा नवधा मवेतां हे ॥११२५॥

अर्थ-संस्थात असंस्थात अनंत ये तीन संस्थामानके भेद जानना । उनमेंसे पहला संस्थात जपन्य भध्यम उत्कृष्टके भेदसे तीन तरहका है और शेप असंस्थात अनंत ये दोनों नी नी प्रकारके हैं ॥ इनदोनोंमें युक्त परीत दोवार ये भेद होनेसे नी नी मेद हैं ॥ ११२५ ॥

पहो सायर सुई पदरो य घणंगुलो य जगसेदी। होगपदरो प होगो अह दु माणा मुणेयव्या ॥११२६॥

पर्स्य सागरः सूची प्रवस्य पर्नागुरुं च जगरदेणी । होकप्रतरथ होकः अर्थ तु मानानि वातव्यानि ॥११२६॥ अर्ध-पत्य सागरीपम सूच्यंगुङ मतरांगुङ घनांगुङ जगच्छेणी

लोकपतर लोक-ये आठ उपमामान हैं ऐसा जानना ॥ ११२६ ॥ अब योगीको सामीसहित कहते हैं;-

वेइंटियाटि भासा भासा प मणी प सण्णिकायाणं।

३९६ मूलाचार-

अर्थ-दोइंदियसे लेकर असेनी पंचेदीतक वचनयोग है, संज्ञी पंचेंद्रीके वचनयोग और मनोयोग है एकेंद्रिय जीवोंके मनोयोग वचन योग नहीं है केवल काययोग है। काययोग सबके जानना चाहिये ॥ ११२७ ॥ एइंदिय विगर्लिदिय णारय सम्मुच्छिमा य खलु सब्वे। वेदे णपुंसगा ते णादच्या होति णियमाइ ॥ ११२८॥ एकंद्रिया विकलंद्रिया नारकाःसंमुर्छनाथ सञ्ज सर्वे । वेदेन नप्रंसकास्ते हातव्या भवंति नियमात् ॥ ११२८ ॥ अर्थ-- एकंद्रिय दो तीन चार इंद्रिय नारकी संपूर्णन जन्म-बाले असंशी संशी पंचेदिय वेदकर नपुंसकलिंग नियमसे होते हैं चेमा जानना चाहिये ॥ ११२८ ॥ देया य भोगभूमा असंनयासाउगा मशुवतिरिया। ते होंति दोस येदेस णन्धि तेसि तदिपयेदो॥११२९॥ देवाध मोगभूमा असंख्यवर्षापुषः मनुष्यतिर्येचः । ते मर्वति इयोः वेदयोः नामि तेषां हतीयवेदः॥११२९॥ अर्थ-मननगरी आदि देव असंस्थान वर्षेत्री आयुवाले भोममूजिया मनुष्य विभेच इनके पुर्तिग सीतिंग ये हो ही येद होते हैं बर्पुसक्येद नहीं है ॥ ११२९ ॥ पंचेदिया दू सेमा मणिग अमण्णी य तिरिय प्रशुसा य ।

ते होति हरियपुरमा गर्पममा चावि येवेहिं ॥११३०॥

एइंदिया च जीवा अमणाय अभासया होति॥११२७ द्वीन्द्रियादीनां भाषा भाषा च मनश्र संद्विकायानां । एकेंद्रियात्र जीवा अमनस्का अमाषका मर्वति॥११२७॥ पंचेंद्रियास्तु झेपाः संशितः असंशितय तिर्यंची महाप्याय ।
ते भवंति सीपुरुषा नपुंसकाथापि वेदैः ॥ ११३० ॥
अर्थ—देवादिकोते वचे हुए जो संश्री असंशी पंचेदिय
तिर्यंच व महाप्य सीवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद इन तीनों वेदोंबाले
होते हैं ॥ ११३० ॥
आईस्ताणा कप्पा जयवादो होइ देयदेवीणां ।
तस्तो परंतु णियमा जववादो होइ देयदेवीणां ॥ ११३१ ॥
आईशानात् कस्पात् उपपादी मवति देयदेवीनां ।
तता परं तु नियमात् उपपादी मवति देवानां ॥ ११३१ ॥
अर्थ—मवनवासीते लेकर पेशानसर्गर्थन देव देवी इन
होनीकी उत्पति है हसते आगि नियमते देव ही जलव होते

जावदु आरणअगुद गमणागमणं च होह देवीणं । तत्तो परं तु णियमा देवीणं णत्थि से गमणा।११३२॥ यावत् आरणाऱ्युवा गमनागमनं च भवति देवीनां।

हैं देवियां नहीं ॥ ११३१ ॥

तवः परं तु नियमात् देवीनां नासि तासी गमने॥११३२॥
अर्थ—आरण अच्छत सतेतक देवियोक्ता मनन आमान है
इससे आगे नियमते उन देवियोक्ता मनन नहीं है ॥११३२॥
कंदरपमारिक्तोना देवीओ चाबि आरण पुदोति।
छंतवमादो उवरि ण संति संमोह्सिक्तिमसिया ११३३
कंदर्यो आमियोग्या देव्यशायि आरणापुत्री इति।
छातवमात् उपरि न संति संमोहाः किस्विपिक्तः॥११३३
अर्थ—हास करनेविः कंदरदेव बाहन जाविके देव केत

सानत्कमार माहेंद्र देवोंके स्पर्शकर प्रतीचार है ॥ ११३९ ॥

800

वंभे कप्पे बंभूत्तरे य तह लंतवे य कापिट्टे। एदेसु य जे देवा योघव्या रूवपहिचारा ॥ ११४० ॥ ब्रह्मे कल्पे ब्रह्मोत्तरे च तथा लांतवे च कापिष्टे ।

मुलाचार— 1

एतेषु च ये देवा बोद्धच्या रूपप्रतिचाराः ॥ ११४० ॥ अर्थ--- ब्रह्मसर्ग ब्रह्मोत्तर लांतव काविष्ट इन खर्गोंने रहनेवाले देव रूपको देखनेसे ही कामसेवनके सुखको पाते हैं ऐसा जानना॥

सुक्षमहासुकेसु य सदारकप्पे तहा सहस्सारे। कप्पे एदेसु सुरा योघव्वा सद्दपडिचारा ॥ ११४१ ॥ शुक्रमहाशुक्रयोश शतारकल्पे तथा सहस्रारे ।

कल्पे एतेषु सुरा बोद्धव्याः शब्दप्रतिचाराः ॥ ११४१ ॥ अर्थ-गुक महागुक शतार सहसारसर्ग इन चार सर्गिके देव देवांगनाञोंके शब्द सुनने मात्रसे विषयसेवनकी प्रीतिको

पाते हैं ॥ ११४१ ॥ आणदपाणदक्षे आरणकष्पे य अनुदे य तहा । मणपिंडचारा णियमा एदेसु य होति जे देवा॥११४२ आनतप्राणतकरूपे आरणकरूपे च अच्यते च तथा ।

मनःप्रतीचारा नियमात् एतेषु च भवंति ये देवाः॥११४२ अर्थ---आनत प्राणतमर्ग आरणसर्ग अच्यतमर्ग इत भारोंके देव नियममे मनमें संकल्पमात्र दीसे कागसेवनका मुख

पाते हैं ॥ ११४२ ॥ तसो परंतु णियमा देवा चलु होति णिपाहीचारा। मप्पदिचारेहिवि ते अर्णतगुणसोक्त्रसंज्ञला॥११४३॥ ततः परतो नियमान् देवाः राजु भवंति निःप्रतीचाराः । सप्रतिचारेभ्योपि ते अनंतगुणसांख्यसंयुक्ताः ॥ ११४३ ॥ अर्थ—मोन्द्रवे सर्गमे आगेके देव नियमसे कानसेवनसे रहित हैं परंतु कानमेवनवाडोंने अनंतगुणे सुसक्र गहित हैं११४३ व जं च सामसुरं छोए जं च दिव्यं महासुरं । वीतरागसुहस्मेदे जंतन्यागीपि णन्यहे ॥ ११४४ ॥ यच कामसुरं छोके यच दिव्यं महासुखं ।

यस काममुगं लोके यस दिल्ये महामुखे । वीतरागसुरास्येते अनंबनागमपि नाईति ॥ ११४४ ॥ । अल्लेट्से एक्सेसेते उत्तव मुक्त है और ओ स्वर्गमेका महामुख है ये स्व पीतरागमुलके अनंतवें मागकी भी समानता नहीं करमकते ॥ ११४४ ॥ जिद्दे मागरोपमा जति वासमहस्मियाङ्क आहारो ।

जदि मागरोपमाऊ तदि वासमहस्मिवादु आहारो । पक्ष्मोहि दु उस्मामो सागरममयहि चेव भवे॥११४५ यावत् मागरोपमाषुः तावत् वर्षमहसः आहारः ।

पायन् नागराभावः वातन् वयनहरः आहरः । पर्यस्तु उच्छासः सागरसमयदेवः भवेत् ॥ ११४५ ॥ अर्थ-वितने सागरही खादु है उतने ही हजारवर्षिके बाद् देवेकि आदार है उतने ही पश्च गीतनेपर धासोच्यास है। ये सब सागरक् समयोक्त्र होता है॥ ११४५॥

उक्तस्तेणाहारो वामसहस्साहिएण भवणाणं। जोदिसियाणं पुण भिण्णमुहुन्तेणेदि सेम उक्तस्सं॥ उत्कृष्टेन आहारो वर्षसहसाधिकेन भवनानां। व्योतिष्काणां पुनः मित्रमुहुर्तेन इति श्रेषाणामुक्तम्ं॥

अर्थ-भवनवासी असुरंकि उत्हृष्ट भोजनकी इच्छा पंद्र-२९ मझा ४०२

मूलाचार-

आहारकी इच्छा है ॥ ११४६ ॥

भवनवासियोंके पूर्ववत् है ॥ ११४७ ॥

उक्तस्सेणुस्सास्तो पक्त्वेणाहिएण होइ भवणाणं । मुद्धस्तपुषसेण तहा जोइसणागाणं भोमाणं ॥११४७॥ उत्कृष्टेन उच्छासः पश्चेणाधिकेन भवति अवनानां । मुह्तपुष्वरत्वेन तथा ज्योतिष्कनागर्मामानां ॥ ११४७॥ अर्थ-भवनवासी बहुरोके उत्कृष्टवासे उच्छास कुछ व्यविष

पलगड़ासे होता है, जीर ज्योतिषी नागकुमारमवनवासियोंके व्यवरोके प्रथवस्व (चारसे आठ) अंतर्ग्रहर्तके बाद है सैंग

हसी वर्षके बाद होती है और चंद्रमा आदि ज्योतिषियोंके तथा नव भवनवासियोंके व्यंतरोंके सब देवियोंके अंतर्गहर्दके बाद

यंभालंतय तदियं सुक्षसहस्सारया चउत्थी द्व ॥११४४ पंचमि आणदपाणद्व छट्टी आरणचुदा य पस्संति । णवगेयद्वा सत्तमि अचुदिस अचुत्तरा य लोगं तं ॥ धर्मेद्वानाः त्रयमं द्वितीयं तु सनद्वमारमाहेद्वाः । मुक्तानाव दर्तायं धुम्नसहसारकाः चतुर्यो तु ॥११४८॥ पंचमी आनतमाणताः पद्यी कालाच्युताय पर्यति ।

सफीसाणा पढमं विदियं तु सणकुमारमाहिंदा।

नवर्षेत्रपताः सप्तर्मी अनुद्दिना अनुसार्य लोकांता।११७९॥ अर्थ-भाषमे देशानदेव अपने अवधिवानमे पहले तरहत्व देगते दें, मनदानारमादेददेव दूसरे तक, ब्रह्मतव से शुन-सेहे तीसरे नरहतक, गुक्त सहसार सुन्तरों हे देव पीये सरक-तक देवने हें। आनन प्राचन देव पांचें तक स्नारण अस्ट्रन देव छट्टी एपियोतक, नीमेयेयक सातवें नरकतक, देसते हैं।
नौ बजुदिश्व पान बजुकर विमानोंके देव लोकके बंतकक देसते
बानते हैं। ११४८-११४९॥
पण्डायीस जोचणाणं ओही विंतरखुमारचन्माणं।
संखेळजोयणोही ओहस्तामणं जहण्णं तु॥११५०॥
पंचर्विशतेः योजनानां अविः व्यंतखुमारवर्गाणां।
संख्यातयोजनाम्यिथः व्योतिकाणां अपन्यं तु ११५०

संस्थातयोजनान्यविशः ज्योतिष्काणां जपन्यं तु ११५० जर्थ-व्यंतरीके मवनकुमारीमें असुकि तिवाय नी कुमारीके पश्चीसोग्रेजन जपन्य अविशे हैं और ज्योतिविशोके संस्थातथीयन जपन्य अविश हे इतनी इर्गा स्वत वसुकी जानतकते हैं ११५० अस्त्रराणमसंखोज्जा कोडी जोइसिय सेसाणें । संत्यादीदा य स्वत्र जक्ससोहियिवसको इ ॥११६९॥

त्यादादा ये जन्तु उपारताहायाच्या दु गर्रा रहा। अनुसार्गामसंस्थाताः कोट्यो ज्योतिष्काणां श्रेगणां । संस्थातिकार सल्हाः अवधिवययस्तु ॥ ११५१ ॥

अर्थ-अपुरोके असंस्थातकोडि योजन जवन्य अविधि है। बदमा आदि ज्योतिथियोके मयनवासी व्यंतरोके निक्रष्टकस्वरा-तियोंके आसंस्थात कोडाकोडी योजन उरक्ष्य अविधि है।।११५१ रचणप्पहाए जोचणमेपं ओहिबिसओ मुणेपच्यो। पुडवीदो पुडवीदो गाऊ अद्धद परिहाणी॥ ११५२॥

रसप्रमायां योजनमेकं अविधिषयो झातच्यः। पृथिवीतः पृथिवीतो गय्यृतस्यार्थार्थं परिहानिः॥११५२॥ अर्थ-सम्मा पहली नरकप्रथिती एक योजन अविधन्न ४०४ मूलाचार-विषय है आगेके नरकोंमें आधा आधा कोस कम करना जो हो

वही अवधिका विषय है। सातवींमें एककोस रहजाता है॥११५२ आगे गमन आगमनको कहते हैं:—

पढमं पुढविमसण्णी पढमं बिद्यं च सरिसवा जंति। पक्ली जावदु तद्यं जाव चउन्थी दु उरसप्पा॥

पक्रको जावदु ताद्य जाव चउन्या दु उरसप्पा ॥ श्रयमां पृथिवीमसंज्ञिनः श्रथमां द्वितीयां च सरीष्टपा गांति। पक्षिणो यावत् तृतीयां यावचतुर्थीं तु उरःसर्पाः॥११५३॥

अर्थ—असंजी जीव पहली प्रथिपीमें जाते हैं गोह करकेंग्र आदि जीव पहली दूसरी प्रथिपीतक जाते हैं । मैरुंड आदि पक्षी तीसरीतक, अजगर आदि बौधीतक मरण करके जाते हैं॥ ११५३॥ आ पंचमीति सीहा इस्पीओ जाति छहिपुद्ववित्ति।

आपंचर्मामिति सिंहाः क्षियो यांति पष्टीप्रथिपीमिति । गच्छंति मापवीमिति च मत्स्या मतुजाश ये पापाः ॥११५४॥ अर्थ—सिंह व्याग्रादिक पहलीते लेकर पांचर्यतक जाते हैं। क्षियां छठी प्रशियोक्तक पापी गच्छ जोर पापी मनुष्य सातवें नफ्कक जाते हैं॥ १९५८॥ जन्यहित्याय सेता णेश्ड्या तमतमाद प्रदर्थादो ।

गच्छंति माघवीत्ति य मच्छा मणुया य जे पावा॥

नारकतक जाते हैं ॥ ११५८ ॥ खच्चिहिताय संता गेरहया तमतमाडु पुढ्वीदो । ण छहंति माणुसच्चं तिरियस्काणेणीसुचणयंति॥११५५ उद्वतिंताः संवो नारकालमतमातः पृथिवीतः । न कमंते महुप्यास्यं तिर्थग्योनिसुपनयंति ॥ ११५५ ॥

अर्थ-सातवें नरकसे निकले हुए नारकी जीव मनुष्यमव नहीं पाते सिंह आदि तिर्यंच योनिमें पैदा होते है ॥ ११५५ ॥ वाहेसु य दादीसु य पक्लीसु य जलचरेसु उपवण्णा। संग्वेजजाउटिद्या पुणंवि णिरयावहा होति॥११५६॥

वाल्येषु च दंष्ट्रामु च पश्चिषु च जलचरेषु उपपद्माः । संख्यातायुःस्थितिकाः पुनरपि निरयावहा भवंति ॥११५६ अर्ध-सातवीसे निकलकर स्वापद भुजंग सिंह ज्याप सुकर गीध आदि पक्षियोंमें मच्छ मगर आदि जलचरोंमें संख्यात वर्षकी आयुक्तो लेकर उत्पन्न होते हैं फिर भी पापके यश नरकर्ने

ही जाते हैं ॥ ११५६॥

छट्टीदो पुदवीदो उच्चहिदा अणंतरं भविन्ह। भज्ञा माणुसलंभे संजमलंभेण दु विहीणा ॥११५७॥ पष्टचाः पृथिवीत उद्वर्तिता अनंतरं भवे ।

भाज्या मनुष्यलामे संयमलामेन तु विद्दीनाः ॥ ११५७॥ अर्थ-एठे नरकसे निकले हुए मनुष्यगति पाते भी है

अथवा नहीं भी पाते । परंतु संयम नहीं धारण कर सकते ॥ ११५७ ॥

होजद संजमलंभो पंचमलिदिणिग्गदस्स जीयस्स । णत्थि पुण अंतिकिरिया णियमा भवसंकिलेसेण ॥ भवतु संयमलाभः पंचमक्षितिनिर्गतस्य जीवस्य ।

नासि पुनः अंतिकया नियमात् भवसंहेशेन ॥ ११५८ ॥ अर्थ-पानवीं पृथिवीसे निकले हुए बीवके संदमका लाग होवे परत जन्मके सद्वेशके दोषकर मोशगमन नहीं होता ११५८ मुलाचार--

808

होज्जदु णिब्बुदिगमणं चउत्थिखिदिणिगगद्रस जीवरस। णियमा तित्थयरत्तं णित्यत्ति जिणेहिं पण्णत्तं॥११५९ भवेत निर्देतिगमनं चतुर्थीक्षितिनिर्गतस जीवस । नियमात् तीर्थकरत्वं नास्तीति जिनैः प्रज्ञप्तं ॥ ११५९ ॥

अर्थ-चौथी पृथिवीसे निकले जीवका मोक्षमें गमन ती नियमसे होता है परंत तीर्थकरपना नहीं होता ऐसे जिनदेवने

कहा है ॥ ११५९ ॥ तेण परं पुढवीसु च भयणिज्ञा उवरिमा दु णेरह्या । णियमा अणंतरमवे तित्थयरत्तस्म उप्पत्ती ॥११६०॥

तेन परं पृथिवीपु च भजनीया उपरितमास्तु नारकाः। नियमात् अनंतरमवेन तीर्थंकरत्वस उत्पत्तिः ॥११६०॥

अर्थ--चौथी प्रथियोके पहलेकी तीसरी दूसरी पहलीमेंके ऊपरके नारकी निकले हुए नियमसे उससे आगेके मनुष्यभवकी धारणकर तथिकर दोके मोशको जाते हैं॥ ११६०॥

णिरचेहिं णिगादाणं अणंतरभवम्हि णत्थि णियमादी। यलदेययासुदेवराणं च तह चक्रवहिरां ॥ ११६१ ॥ नरकेश्यो निर्मतानां अनंतरभवे नाम्नि नियमात् ।

बलदेववागुदेवत्वं च तथा चक्रपतित्वं ॥ ११६१े ॥ अर्थ-- नरकोंसे निकले जीव उमी आगेके मयमें मलदेव बागुदेव चक्रवतीयद्वीको नहीं पाते ॥ ११६१ ॥

उवयाद्यहणमी णेरइयाणं समासदी भंणिशी। एतो समाणंपि य गदिआगदिमो प्यथमामि॥११६६ दपपादोडवेने नारकाणां समामनो मणिते ।

र्वः शेषाणामपि च गत्यागर्वी प्रयस्यामि ॥ ११६२ ॥ अयं—मारिक्योकी गति बागति संकेषसे कही इससे आगे रोष जीकोंकी भी गति बागति कहते हैं ॥ ११६२ ॥ । सन्यसपानकाणां सुद्धमकायाण सन्यते ऊर्ण ।

षाञ्जमस्विणां आगमणं तिरियमणुसेहि ॥११६३॥ सर्वापर्याप्तानां यक्षकायानां मुर्वतेत्रतां।

यागुनामर्गतिनां आगमनं तियमतुष्यभ्यः ॥ ११६३ ॥ अर्थः—मद अपर्याप्त सहमकायीवा सब तेजकायिकीका वायु-कायिकीका अस्तियोका आगमन प्रथिषीकायादिमें य मनुष्यम-

कांग्वहांका असीअयोक्ता आगमन प्राथमाकायारिम व मनुष्या-तिम है ॥ ११६१ ॥ तिपह म्बद्ध कायाणं तहेब विग्लिदियाण सब्बेस्ति ।

तिण्ह म्बर्कु कायाण नह्य विगालाद्याण सन्वास । अविरुद्धं संकमणं माणुमतिरियेसु य भवेसु॥११६४॥ प्रयाणां सञ्ज कायानां तथेव विकलेंद्रियाणां सर्वेषां ।

अविरुद्धं संक्रमणं मानुपनिर्धक्ष च भवेषु ॥ ११६४ ॥

अर्ध-पृथिवीकाय जलकाय बनस्ततीकाय इन तीनोंका तथा सब विकटेंद्रिवोंका गमन मनुष्य तथा तिर्ववोंने हे इसमें विरोध नहीं ॥ ११६७ ॥

सच्येवि नेडकापा सन्चे तह याडकाइया जीवा।
ण सहित माणुससं जिपमानु अर्णतरभ्योह ॥११६५
सर्वेषि तंडाकायाः सर्वे तथा पापुकापिका जीवाः।
न सर्वेन मानुष्वं तियमातु अर्वतरभवेन ॥११६५॥
अर्थ-स्भी तैक्कायिक सभी वाद्कायिक जीव आनेक

उसी भवमें मनुष्यगति नहीं पाते ॥ ११६५ ॥

माणुसतिरिक्खदेवेहिं चेवाइति खलु एदे ॥ ११६६॥ प्रत्येकदेहा वनस्पतयो बादराः पर्याप्ताः पृथिवी आपस्य । मानुपतिर्घग्देवेभ्यः एव आयांति खल एते ॥ ११६६ ॥ अर्थ--नारियल आदि मत्येक वनस्पति बादर पर्याप्त प्रथि-

मुलाचार-परोयदेहा वणप्पड़ चाद्रपज्ञत्त पुढवि आज य ।

वीकाय जलकाय बादर पर्याप्त इनमें लार्तध्यानी मनुष्य तिर्येच देव अकार उपजते हैं ॥ ११६६ ॥ अविरुद्धं संक्रमणं असण्णिपञ्चत्तयाण तिरियाणं।

माणुसतिरिक्खसुरणारएसु ण दु सब्बभावेसु॥११६७ अविरुद्धं संक्रमणं असंज्ञिपर्याप्तकानां तिर्धां। मानुपतिर्यक्सुरनारकेषु न तु सर्वभावेषु ॥ ११६७ ॥ अर्थ-असजी पर्याप्त तिर्येचोंका गमन मनुष्य तिर्येच देव

नारक इन चारों गतियोंमें है बिरोध नहीं है । परंतु सब पर्या-योंमें नहीं है ॥ ११६७ ॥ संखादीदाङ खलु माणुसतिरिया दु मणुयतिरियेहिं। संखिजाआउगेहिं हु णियमा सण्णीय आयंति॥११६८

संख्यातीतायुगः खलु मानुपतिर्येचस्तु मनुष्यतिर्यग्भ्यः । संख्यातायुष्केभ्यस्तु नियमात् संज्ञिभ्यः आयाति ११६८ अर्थ-असस्यात वर्षकी बायुवारे भोगम्भिया मनुष्य तिर्थेच है वे संख्यातवर्षकी आयुवाले संज्ञी मनुष्य तिर्यचमवींसे ही आते हैं॥ ११६८॥

संलादीदाऊणं संक्षमणं णियमदो दु देवेसु । पपढीए तणुकसाषा सन्वेसि तेण बोधन्वा ॥ ११६९

संन्यातीतापुर्या संक्रमणं नियमस्तु देवेषु ।
प्रकृत्या ततुक्रपायाः सर्वेषां तेन पोद्धन्याः ॥ ११६९ ॥
अर्थ—अर्सस्यातापुर्वाले भौगपृभियाओका गमन नियमसे
देवेमिं होता है क्योंकि सभीके समावसे अस्य क्रोधादि कपाय
दे ऐसा जानना ॥ ११६९ ॥
माणुस्त तिरिपाय तहा सलागपुरिसा ण होति क्वाल्य

यमा ।

तेसिं अणंतरभवे भयणिङ्गं णिव्युदीगमणं ॥११७०॥ मतुष्याः तिर्वेचश्च तथा घटाकाषुरुषा न भवंति राखु नियमात्। तेषां जनंतरमवे भजनीयं निष्टतिगमनं ॥ ११७० ॥

अर्थ-मनुष्य जार तिर्थेच निवमते शलाकापुरत तीर्थरर चन्नवर्धी आदि नहीं होते जार उसी आगेके भवमें मनुष्य कदा-चित् भोक्षको जाते भी है जार नहीं भी जाते ॥ ११७० ॥ सरिण असमणीण नहा वाणसु य सह य भवणवासीसु। उचवादो योषस्यो मिन्छादिष्टीण णियमादु ॥११०१॥

संहिनां असंहिनां तथा बानेषु च तथा च भवनवासिषु । उपपादो बोद्धच्यो मिध्यार्टीनां नियमान् ॥ ११७१ ॥ अर्थ—संश्ले असही मिध्यार्टियों श उत्पित नियमसे व्यंत-सं भवतवासियोंसे होती है पेगा बानजा ॥ ११७१ ॥

अथ-सशे असशे मध्यादाध्याशं उत्पात । तयसे स्वतः संग्ने मयनवासियोमें होती है ऐगा वानना ॥ १९०१ ॥ उत्पदादो जोदिविष उद्धस्तं मायनाणं तु ॥ ११०२ ॥ संस्थातितापुषां मनुष्यतिस्यां मिध्यात्यावेन ।

उपवादी ज्योतिष्वेश उत्कृष्टस्तापसानां तु ॥ ११७२ ॥

४१० मुह्यचारअर्थ-असंस्थात वर्षकी आयुवाले मनुष्य तिर्थेचांकी उत्पति

मिथ्यात्वपरिणामसे ज्योतिपी देवोंमें होती है और इंदम्लदिका आहार करनेवाले वापसियोंकी उत्पचि उत्कृष्ट ज्योतिपियोंमें होती

है॥ ११७२॥

परिवाजगाण णियमा उक्तस्सं होदि वंभलोगिन्ह । उक्तस्स सहस्सार ति होदि य आजीवगाण तहा ॥

परिव्राजकानां नियमात् उत्कृष्टो भवति ब्रब्सलोके । उत्कृष्टः सहस्रार इति मवति च आजीवकानां तथा ॥११७३ अर्थ—संन्यासियोको उत्तरि उत्कृष्ट ब्रबलोकपर्यंत हैं आजी-वक साधुजोका उत्पाद उत्कृष्ट सहस्रार सर्गपर्यंत होता है॥११७३

तत्तो परं तु णियमा उचवादो णत्थि अण्णारिंगीणं । णिग्गंथसावगाणं उचवादो अगुदं जाव ॥ ११७४ ॥ वतः परं त विकास उपण्यो समित वस्तरिंगासं ।

ततः परं तु नियमात् उपपादो नास्ति अन्यिलंगानां । निर्प्रथथावकाणां उपपादः अच्युतं यावत् ॥ ११७४ ॥

अर्थ—सहसारसे आगेके लगोंमें अन्यविगियोंका जन्म नहीं होता दिगंवर आवक आविका आर्थिकाओंका जन्म अच्छत सर्ग-तक होता है ॥ ११७२ ॥

जातुवरिमगेवेद्धं उववादो अभवियाण उकस्सो । उक्क्टेण तवेण दु णियमा णिग्गंथिंहगेण ॥ ११७५ ॥ यावत् उपरिमग्रेवेपं उपपादः अभव्यानां उत्कृष्टः । उत्कृष्टेन तपसा तु नियमात् निर्वयकिंगेन ॥ ११७५ ॥

अर्थ-अमव्योका जन्म निर्मयकिंग धारणकर उत्कृष्ट तप

करनेने दल्हरनासे उपरते मैवेयकतक होता है निय-मसे ॥ ११७५ ॥

तको परं तु जियमा तयदंमणणाजपरणजुक्ताणं। णित्मांथाजुषयादो जावद् मन्यदृदितिक्ति ॥ १९७६ ॥ ततः परं तु वियमान् वयोदर्गनजानपरणपुकानां। निर्वाचानापुषपादः यावन् यार्थासिदिरिति ॥ १९७६ ॥ अर्थ-भेवेषक विगानो उपरहे विगानोंने सर्वार्धसिदिति-

अर्ध-मेदेषक विमानसे अरहे विमानमिं सर्वार्धसिद्धिव-मानतक तद दर्शन ज्ञान आरियमे युक्त ऐसे मद परिम्रहत्यागी मुनियोंचा अन्म होना है अन्यका नहीं ॥ ११०६ ॥ आर्टमाणा देवा चएन्तु एइंदियत्ताणे भक्षा ।

तिरियत्तमाणुमको भयणिद्धा जाय सहसारा ॥११७७ आईनानात देवाः च्युन्या एकेंद्रियन्वेन माज्या ।

आईज्ञानात् देवाः च्युत्वा एकंद्रियन्वेन भाज्या । तिर्यवन्यमानुपत्वेन भजनीया यावत् सहस्रारं ॥ ११७७ ॥

अर्थ-भवनवासीसे रेक्स ईशान वर्गपर्यंत रहनेवाले देव चयकर करानित् दृष्टिनीकाधिकोंने उत्तक होते हैं। उससे आगे सहस्रास्त्रांतडके देव बदाचित् तिर्थयमें तथा मनुष्योंने उत्तक होते हैं॥ ११७७॥

तारी परं तु णियमा देवावि अर्णतरे भवे सब्दे । उचयर्ज्ञात मणुस्से पा नेर्सि तिरिपस उपयादी॥११७८ ततः परं तु नियमात् देवा अपि अर्नतरे मने सर्वे ।

ततः परं तु नियमात् देषा अपि अनंतरे मये सर्वे । उत्पर्धने मानुष्ये न तेषां तिर्वेशु उपपादः ॥ ११७८ ॥ अर्थ-- सहसारसर्पके उपरहे विमानोके देव उसी भवसे मनुष्यगतिमं उत्पन्न होते हें उनका तिर्वबोमं जम्म नहीं होता ॥ १९७८ ॥ आजोदिसित्ति देवा सलागपुरिसा ण होति ते णियमा।

आजोदिसिन्ति देवा सलागपुरिसा ण होति ते णियमा तेसि अणंतरभवे भयणिज्ञं णिव्युद्धीगमणं ॥११७९॥ आज्योतिष इति देवा श्रलाकापुरुषा न भवंति ते तियमात् । तेषामनंतरभवे भाज्यं तिर्युतिगमनं ॥ ११७९ ॥

तत्तो परं तु गेवज्ञं भषणिज्ञा सलागपुरिसा हु । तेसिं अणंतरभवे भषणिज्ञा णिव्युदीगमणं॥११८०॥

स अंशरर ने प्रमाणका १०० कुरानम् ॥ १६००॥ ततः परं तु ग्रैयेयकं भवतीयाः ग्रहाकापुरुपास्तु । वेपामनंतरमये सजर्नायं निष्टेतिगमनं ॥ १९८० ॥ अर्थ—डसके बाद सीपमंसर्गते लेकर नय भैषेयक पर्यंतके

देव शल्फापुरुष फदाचित् होते भी हैं अथवा नहीं नी होते जीर आगेफ भवमें मोक्षगमन फदाचित् होता भी है अथवा नहीं भी होता॥ ११८०॥ णिट्युदिगमणे रामत्तणे य तित्थयरचक्षवहित्ते।

अणुद्सिणुत्तरवासी तदो चुदा होति भयणिद्धा ॥ निश्वतिगमनेन रामस्वेन च तीर्थकरचक्रवर्तिस्वेन । अजुदिशानचरवासिनः तेस्यः च्यता भवति भजनीया ॥

अनुदिशानुत्तरवासिनः तेभ्यः च्युता भवंति भनर्नाया ॥ अर्थ-अर्थदेश स्रोर अनुतर विमानवासी देव वहांसे चयकर इदाचित मोझ जाते हैं तीर्थंकर बलदेव चक्रवर्तीवनेको भी कदाचित् पाते हैं अथवा नहीं भी पाते ॥ ११८१ ॥ सञ्बद्धादो य चुदा भन्ना तित्थयरचक्कवद्विते। रामत्तर्णेण भञ्जा णियमा पुण णिच्युदि जंति ॥११८२ सर्वार्थाच च्युता भाज्याः तीर्थकरचक्रवर्तित्वेन । रामत्वेन भाज्या नियमात् पुनः निष्टेति यांति ॥११८२॥ अर्थ-सर्वार्धसिद्धि विमानसे चये देव तीर्थकर चक्रवर्ती बलभद्र पदवीको पाते भी हैं अथवा नहीं भी पाते परंतु मोधको नियमसे जाते हैं ॥ ११८२ ॥ सको सहग्गमहिसी सहोगपाछा य दक्षिवणिंदा य । लोगंतिमा य णियमा चुदा दू खन्तु णिय्बुर्दि जंति ॥ शकः सहाग्रमहिषी सरोकपालय दक्षिणंद्राय । र्रोकांतिकाथ नियमात् न्युताम्तु खलु निर्शति यांति॥११८२॥ अर्थ--सौधर्म सर्गका इंद्र अपनी इंटाणी सहित सोकपार-सहित और सनत्कुमार आदि दक्षिणदिशाके इंद्र तथा सौकाति-कदेव-ये सब स्वर्गसे समक्त मनुष्यभवसे नियमकर मोक्षकी

जाते हैं ॥ ११८३ ॥
एयं तु सारसमण भिजदा दु गदीगदी सण जिंति ।
णियमादु मणुसगदिए णिष्ट्यदिगमण जणुणणादं ॥
एयं तु सारसमये भणिते तु गत्सागता मणा किंपिय ।
नियमात् मनुष्यासां निर्देतिगमं अनुज्ञात्यं ॥११८४॥
अर्थ—इसम्बार व्यास्त्रायशि नामके निदानसमीने हेकर
मैंने कुछ गति आगतिश सहस्य कहा । जोर मोश्यनन

४१४ म्लाचार-मनुष्यगतिमें ही नियमसे होता है ऐसी जिनदेवने आज्ञा की

है ॥ ११८८ ॥

सम्मद्दंसणणाणेहिं भाविदा सपलसंजमगुणेहिं। णिट्टवियसव्यकम्मा णिगंथा णिव्दुदिं जंति ॥११८५

सम्यर्द्यनज्ञानाभ्यां माविताः सकलसंयमगुणैः । निष्ठापितसर्वकर्माणो निर्द्रीया निर्देशि याति ॥ ११८५ ॥ अर्थ-सम्यर्द्दान सम्यज्ञानकर युक्त, सकलसंयमगुणींकर सहित परमगुक्रभ्यानसे जिनोंने सप कर्मोका नाद्य कर दिया है

ऐसे निर्भय ग्राने मोशको जाते हैं ॥ ११८५ ॥ ते अजरमरूजममरमसरीरमस्यूपमणुवमं सोक्लं । अञ्चापाधमणंत्र अणार्ग्य सामस्यति ॥ ११८६ ॥

अञ्चाषायमणात आगागद् कारुआस्पात ॥ १८०६ ॥ ते अजरमञ्जामरमायरीरमशयमञ्जूष सौरूपं । अन्याषायमनंते अनागतं कार्ड अधितिष्ठति ॥ ११८६ ॥ अर्थ —गोशको मात हुए थे निर्मय जाराहित रोगरहित अगर

धरीररहित धरिनाशी धरुषम अव्यागम सुस्तहित हुए धरीत अनामनकाननक अर्थात् सदा निवाम मोशमें करते हैं ॥११८६॥ अब स्थानपृत्रको कहते हैं;— एउंदियादि पाणा चोहम दु हवंति जीवटाणाणि ।

रागदानाचित्र महामा सम्माणटाणाणिति सहैत ॥ स्पाराणानि य सोहस सम्माणटाणाणिति सहैत ॥ एकॅटियादयः सागाः शतुदेश स मंति जीस्थानानि । सुप्रथानानि य शतुदेश सामगाध्यानायित तथैन ११८० । अर्थ—वयन एकॅटियादिस्युव दस्स माणपूर्व सीमस जीव- क्यान सुत्र भीषा भीदहराजम्यान सूत्र पांचरा भीदह मार्गणासूत्र-इन पांच सुत्रोंने स्थानसूत्रका च्याख्यान करते हैं ॥ ११८७ ॥ गदिआदिमागणाओं पम्विदाओं य चौहमा चेय। एदेंसि चाटु भेदा किंचि समासेण घोच्छामि॥११८८ गत्वादिमार्गणाः प्ररूपिताम चतुर्दश चैर । एतेषां राष्ट्र मेदाः कियंतः समासेन षश्यामि ॥११८८॥ अर्थ--गति आदि मार्गणा आगममें चौदह ही कही हैं इनके गुछ एक भेदोंको संक्षेपसे अब में कहता हूं ॥ ११८८ ॥ एटंदियादि जीवा पंचविषा भववदा हु पण्णशा । प्रदेशीयाचादीया विगला पंचेदिया चेव ॥ ११८९ ॥ एकेंद्रियादयः जीवाः पंचविधा मगवता दु प्रश्नप्ताः ! पृथिवीकायादयः विकलाः पंचेद्रिया एव ॥ ११८९ ॥ अर्थ- जिन भगवानने एकेंद्रियादि जीव संप्रहम्बसे पृथिवी-कायादि एकेंद्री, दोहंद्री, तेहंद्री चीहंद्री, पंचेद्रिय-हमतरह पांचप्रकार कटे हैं ॥ ११८९ ॥ संन्तो गोभी भमरादिया हु विंगलिंदिया सुणेद्द्या । पंचेंदिया दु जलधलखचरा सुरणारयणरा य॥११९०॥ शंगो गोभी भ्रमरादयम्त विकलेंद्रिया भ्रातच्याः । पेचेंद्रियास्त ज्ञुल्यरुखचराः सरनारकनराथ ॥ ११९० ॥ अर्थ--शंखादि गोपालिका आदि भारा आदि ऋगसे दोहंदी तेइंडी चौइंडी जानना छीर जरुचर साठचर आफाशचर तथा देव नारकी मनुष्य-ये सब पंचेंद्रिय जानने ॥ ११९० ॥ पंचय इंदियपाणा मणवचकाया दु तिविण बलपाणा ।

आणप्पाणप्पाणा आउगपाणेण होंति दस पाणा ॥ पंचेय इंद्रियाणि प्राणा मनोवयनकायाम्तु श्रयो बलप्राणाः।

आनप्राणः प्राणः आयुःप्राणेन भवंति द्व प्राणाः ११९१ अर्ध---पांच इंद्रिय पाण, मन यचनकायवलरूप तीन वल भाग, इवासोच्छास भाग और आयु:भाग-इसतरह दस भाग

11 8288 11 3

इंदिय यल उस्सासा आऊ चर् छक् सन्त अट्टेव ।

एगिटिय विगर्लिटिय असण्णि सण्णीण णव दस

पाणा ॥ ११९२ ॥ इंद्रियं वलं उच्छास आयुः चत्वारः पद् सप्त अप्टेव ।

एकेंद्रियस्य विकलेंद्रियस्य असंज्ञिनः संजिनो नव दश प्राणाः ॥ अर्थ--सर्शनइंद्रिय कायवल उच्छास आयु ये चार पाण,

छह माण, सात माग आठ प्राण कमसे एकेंद्रिय दोहंद्री तेहंद्री चौइंदीके होते है और असंजी तथा संजी पंचेंद्रियके नी तथा दस पाण होते हैं ॥ ११९२ ॥

सुहुमा वादरकाया ते खल पज्जत्तया अपज्ञता। एइंदिया द जीवा जिणेहिं कहिया चदुवियप्पा॥११९३

सक्ष्मा बादरकायास्ते खल पर्याप्तका अपर्याप्तकाः । एकेंद्रियास्तु जीवा जिनेः कथिताः चतुर्विकटपाः ॥११९३

अर्थ--जिन भगवानने एकेंद्रियजीव सूक्ष्म बादर पर्गाप्त अपर्याप्त भेदोंसे चार तरहके कहे हैं॥ ११९३॥

पञ्चत्तापञ्चत्ता वि होति विगर्लिदिया दु छन्भेया । ं "चत्तापञ्चता सरिण असण्जीय सेसा दु ॥ ११९४ ॥ पर्याप्ता अपर्याक्ता अपि भवंति विकलेंद्रियास्तु पर्नेदाः। पर्याक्ता अपर्याक्ताः संदिनः असंक्रिनः श्रेपास्तु ॥११९४॥ अर्थ—विकलेंदिन तीनके पर्यास अपर्याक्त छह भेद होते हैं लीर शेप संक्री असंक्रीके भी पर्यास अपर्याक्तके नेदसे नार भेद होते हैं। इस तरह ४+६+२=निल्क्त १४ जीव-समात है॥११९४॥।

मिन्छादिही सासादणो य मिस्सो असंजदो चेव । देसविरदो पमसो अपमस्तो तह य णायव्यो ॥११९५ एमो अपुट्यकरणो अणियही सुहुमसंपराओ य । उवसंतक्षीणमोहो सजोगिकेवळिजिणो अजोगी य ॥

मिथ्यादृष्टिः सासादनश्च मिश्रः असंयत्र्वेव । देशविरतः प्रमत्तः अप्रमत्तः तथा च हातव्यः ॥११९५॥

इतः अपूर्वकरणः अनिष्ठतिः सस्मसापरायम । उपज्ञांतक्षीणमोद्दां सयोगिकालिजिनः अयोगी चा।११९६ अर्थ—निष्यादिः, साधादन, निष्ठ कर्षयं देशचिरत मन्पतंत्रत अमनपातिः वर्षपति मान्पतंत्रत अमनपाति अपूर्वकरण अनिष्ठिकरण प्रस्करण उपपातंत्रते ही स्वीभिक्तिजिन और चौदद्वां अयोगिकतिजिन और चौदद्वां अयोगिकतिजिन उपात्ति । गुण जो आलामे परिणाम उनके सान जर्माद् दुर्ज युणसान हैं ॥११९५-९६॥

आगे बीदह मार्गणासार्वोक्षे कहते हैं;— गृह इंदिये च काये जीगे वेदे कसाय णाणे य ! संजम दंसण हेस्सा भविया सम्मत्त सण्णि आहारे॥ १ हार 288

गतिरिंद्रियांणि च कायो योगो वेदः कपायो ज्ञानं च । संयमो दर्शनं लेक्या मन्यः सम्यक्तं संज्ञी आहारः ॥११९७॥ अर्थ-गति इंदिय काय योग वेद कपाय ज्ञान संयम दर्शन लेश्या मव्य सम्यक्त्व संजी आहारमार्गणा-ये चौदह मार्गणा-

स्थान हैं॥ ११९७॥ जीवाणं खलु ठाणाणि जाणि ग्रणसण्णिदाणि ठाणाणि।

एदे मगगणठाणेस्रवेच परिमागदद्याणि ॥ ११९८ ॥ जीवानां खद्ध स्थानानि यानि गुणसंज्ञितानि स्थानानि ।

एते मार्गणास्थानेषु एव परिमार्गयितव्यानि ॥ ११९८ ॥ अर्थ-जो जीवोंके स्थान हैं और जो गुणसंज्ञक स्थान हैं वे दोनों इन मार्गणा स्थानोंमें ही यथा संमव देखने चाहिये॥

तिरियगदीए चोइस हवंति सेसास जाण दो दो हु। मग्गणठाणस्सेदं णेयाणि समासठाणाणि ॥ ११९९ ॥ तिर्यग्गती चतुर्दश मवंति शेपास जानीहि द्वी द्वी तु ।

मार्गणास्थानेषु एतानि ज्ञेयानि समासस्थानानि ॥११९९॥ अर्थ-तिर्यंच गतिमें जीवसमासस्यान चौदह हैं शेषगतियोंने दो दो संज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त स्थान हैं इसतरह मार्गणास्थानोंने जीवसमासस्थान यथासंभव जानना ॥ ११९९ ॥ सुरणारयेस चत्तारि होंति तिरियेसु जाण पंचेव।

मणुसगदीएवि तहा चौदसगुणणामघेयाणि॥१२००॥ सुरनारकेषु चत्वारि भवंति तिर्वश्च जानीहि पंचैव । मनुष्यगतावि तथा चतुर्दश गुणनामधेयानि ॥१२००॥

अर्थ-देव कीर नारिक्योंके चार गुणस्थान होते हैं तिर्थ-

पर्याप्त-अधिकार १२। बीम पांच गुणसान हैं और मनुष्पातिमें बीदर गुणसान ग्हंदियाय पंचेंदिया य उद्गमहतिरियलोगसु । पाये जाते हैं।। १२००।। संपल्विगालिहेगा पुण जीवा तिरिपंपि लोपंपि॥ एवंद्रियाः पंचेद्रियाध कर्यमपतियेग्लोकेषु । सम्बद्धविकलेहियाः पुनः जीवाः तिपालोके ॥ १२०१ ॥ अर्थ-प्रेतिय जीर वंचेदिय जीव उत्तर्थ अपः तिर्वेषः

इन तीनो होहोंने हैं जीत सब दोहंत्री आदि अतंशीतक विक. हेर्द्वी जीव तिर्माहोक्में हैं ॥ १२०१ ॥ पृष्टियाप जीवा पंचविषा यावरा प सुदूमा य । प्रश्वनाय जाया प्रयापमा पाठा प्रहरी छ। प्रश् देसेहि वादरा चल सहुमेहि जिस्तरो होओ॥१२०२॥

एवंद्रिया जीताः वंचविया बादराश्र ग्रह्माश्र । क्रुं: बादराः एउ ग्रह्मः निरंतरे होतः ॥ १२०२ ॥ अर्थ-एवंदिय जीव प्रधिनीकासादि यांच मकारके दे

वे प्रत्येक बादर सूक्ष्म है बादर जीव शोकके एक देशमें है सुर्म जीवीते सब श्लेष उतारम भग हुआ है ॥ १२०२ ॥ अत्थि अर्णना जीया जेहि ज पशो नमाज परिणा भावकरंकसुपन्ना शिगोदवामं अमुंचेता ॥ १२ संति अनंता जीवा पै: न प्राप्तः प्रमानो परिणामः भावकतंत्रगुरुत्ता निगोरवार्त अप्तुवंतः ॥ १२० अर्थ-वे अनेन और है जिनीने बनी असपर्य या मिध्यत्वारिसे बद्धवितुष् वे निगोर्यमार्थे नहीं है

माणिगोदसरीरे जीवा द्वाप्यमाणदो दिहा

एकनिगोदशरीरे जीवा द्रव्यप्रमाणतो दृष्टाः। सिद्धेरनंतगुणाः सर्वेणाप्यतीतकालेन ॥ १२०४ ॥ अर्थ-- एक निगोद शरीर (साधारण बनस्रती) में जीव

४२०

अपने दव्यप्रमाणसे सिद्धौंसे अनंतगुणे और सब अतीतकाउसे अनंतगुणे हैं ऐसा मगवानने देखा है ॥ १२०४ ॥ एइंदिया अणंता वणप्कदीकाविगा णिगोदेसु । पुढवी आऊ तेऊ वाऊ लोया असंखिद्धा ॥ १२०५ ॥ एकेंद्रिया अनंता वनस्पतिकायिका निगोदेप । पृथ्वी आपः तेजः वायवः लोका असंख्याताः ॥१२०५॥

अर्थ---निगोदोंने वनस्पतिकायिक एकेंद्रिय जीव वनंतानंत हैं और पृथिवीकाय जलकाय तेजःकाय वायुकायिक जीव असं-

ख्यात लोक **ममाण हैं ॥** १२०५ ॥ तसकाइया असंखा सेढीओ पदरछेदणिप्पण्णा । सेसास मग्गणासुवि णेदच्या जीव समासेज ॥१२०६ त्रसकायिका असंख्याताः श्रेण्यः प्रतरछेदनिष्पन्नाः । श्रेपास मार्गणास्त्रपि नेतच्या जीवाः समाश्रित्व ॥१२०६॥ अर्थ-दो इंद्रिय आदि त्रस जीव लोक प्रतरके भाग कर-नेसे उत्पन्न असंख्यात श्रेणी मात्र हैं । इस प्रकार शेप मार्गणा-भोंमें भी जीवोंको आश्रयकर संख्या जाननी ॥ १२०६ ॥

अब कुलोंका कथन करना चाहिये था परंतु पंचाचाराधि-कारमें २२१ वें गाथासे लेकर २२५ वें गाथातक व्याख्यान

किया गया है इससे यहां चार गाथा पुनरुक दोषके मयसे दो बार नहीं किसे इसकिये साध्यायवाके ९६ वेंके पत्रमें देखले॥ आगे अल्य बहुतको बहुते हैं;—— मणुस्ताद्वीप धोया नोईं असंखिळ्ळसंसुणा जिरचे । नोईं असंख्यिळ्या देयगदीए हवे जीया॥ १२०७॥ मनुष्पाती स्रोकाः तेम्यः आसंख्यासंसुणा नरके। तेम्यः आसंख्येयगुणा देवगती मधेयुः जीवाः॥१२००॥ अप्र--मनुष्पातिमें सबसे कम जीव (मनुष्प) हैं उनसे

असंस्यातगुणे नारकी जीव हैं उनसे असंस्थात गुणे देवगतिमें देव हैं ॥ १२०७ ॥

महिंतोणंनग्रणा सिद्धिगदीए भवंति भवरहिया। तिहिंतोणंनग्रणा तिरयगदीए किलेसंता॥ १२०८॥ तेम्योऽनंतग्रणाः सिद्धिगती मवंति मवरहिताः। तेम्योऽनंतग्रणाः तिर्धेगातां किरमंतः॥ १२०८॥ अर्थ—देशेस जनंतग्रणे सिद्धाति (मोक्ष) में संसारो-रहित हुए तिद्ध औव हैं। उन तिद्धोते भी व्यनंतग्रणे क्षिरयान तिर्वेत कृतंत्रगृष्ठे ॥ १२०८॥

घोचा दू तमतमाए अणंतराणंतरे दु चरमासः ।
होति असंविज्ञगुणा णारद्वपा छासु पुटवीसः ॥१२०९
स्रोकास्तु तमसमामां अनंतरानंतरे तु चरमासः ।
मर्वति असंव्येवगुणा नारका पद्म पृथिषीदः ॥ १२०९ ॥
अर्थ—सातवें नरकमें बनसे बोडे बीच हैं उससे पूर्व
पूर्वती पहले नरकक छह प्रथिवियोगे लसंस्थात लसंस्यातगणे

इसीतरह सब जानना ॥ १२०९ ॥ थोवा तिरिया पंचिंदिया दु चर्डारेदिया विसेसहिया। षेइंदिया दू जीवा तसो अहिया विसेसेण ॥१२१०॥

तसो विसमभिषा जीया नेइंदिया हु गायव्या। नेहिनोणंतगुणा भवंति एइंदिया जीया ॥ १२११ ॥ स्रोकाः तिर्येगः पंत्रेद्रियाम्तः नत्रिंद्रिया विशेषाथिकाः । द्वीद्रियास्तु जीवाः ततः अधिका विशेषेण ॥ १२१० ॥

तती विशेषाधिका जीवाः बीद्रियाम्त शानव्याः । तेभ्योऽनंतगुणा मर्वति एकेंद्रिया जीताः ॥ १२११ ॥ अर्थ-तिर्वचीमें सबसे मोहे वंचेदिय तिर्वच हैं उससे अ-धिक चौइंदी भीव हैं उससे अधिक दो इंद्रिय जीव हैं उससे

अधिक तेइंद्रिय जीव हैं तेइंद्रियसे अनंतगुणे एकेंद्रिय जीव हैं ॥ १२१०—१२११ ॥ अंतरदीवे मणुया थोवा मणुयेस होंति णायव्या । कुरुवेस दसस मणुया संखेत्रगुणा तहा होंति १२१२

तत्तो संविज्ञगुणा मणुचा हरिरम्मएस वस्सेस् । तत्तो संखेळगुणा हेमवदहरिण्णवस्साय ॥ १२१३ ॥ भरहरावदमणुया संखेळगुणा हवंति खल तत्तो । तत्तो संखिज्ञगुणा णियमादु विदेहगा मणुया॥१२१४॥

सम्मुच्छिमा य मणुवा होति असंखिज्ञगुणा य तत्तो हु। ते चेव अपज्रसा सेसा पज्रसया सब्वे ॥ १२१५ ॥

अंतर्द्वीपेषु मनुजाः स्तोका मनुजेषु भवंति हातन्याः ।

कुत्यु दशमु मनुजाः संस्थेयसुणाः नथा सर्वति ॥१२१२॥ ततः संस्थियसुणा मनुजा हरिरम्पकेषु वर्षेषु । ततः संस्थियसुणा हमग्रदेरण्यस्य ॥ १२१३ ॥ भरतस्यनमनुजाः संस्थियसुणा भर्वति गानु ततः । ततः संस्थियसुणा नियमान् विदेदका मनुजाः ॥१२१४॥ संपूर्विमाय मनुजा सर्वति असंस्थियसुणाथ ततन्तु । एते एव अपयोक्षाः शेषा पर्योक्षाः तवे ॥ १२१५ ॥

अर्थ — मनुष्योगे सबसे बोटे संप्याते सब अन्द्रीयोगे यनुष्य है उनसे संस्थानमुणे दस देवकुरू उत्तम भोगमृतियोगे हैं। उनसे संस्थानमुणे दस देवकुरू उत्तम भोगमृतियोगे हैं। उनसे संस्थानमुणे प्रत्म देवकुर त्या मण्या भोगमृतियोगे मनुष्य हैं उनसे संस्थानमुणे भागमृतियोगे दे। उनसे संस्थानमुणे भागमृतियोगे से रिदेर्ड निज्योगे भी असंस्थानमुणे भागमृत्य है। वेदी अवश्रीत रोजे दे बारीके सब मनुष्य वर्धात हो है। दरेर्द से रिद्राप तह ॥ भोषा विमाणयानी देवा देवी य होति सम्बन्ध । मेरि अस्मेणक्रमणा मयणस्य य हाति सम्बन्ध । निहि असंस्थानमुणा स्था व्याष्ट्र होति साम्बन्ध । निहि असंस्थानमुणा देवा व्याष्ट्र होति साम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा देवा व्याप्ट होति साम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा देवा व्याप्ट होति साम्बन्धिया। निहि असंस्थानमुणा देवा व्याप्ट होति साम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा देवा व्याप्ट होति साम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा देवा सम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा हेवा सम्बन्धियानस्य । निहि असंस्थानमुणा हेवा सम्बन्धियानस्य । निहि सम्बन्ध स्थानस्य । सम्बन्ध स्थानस्य । सम्बन्ध स्थानस्य । सम्बन्ध स्थानस्य । सम्बन्ध सम्बन्

क्षोका विमानशासिना देवा देव्यक्ष मर्वति मर्वेषि । तेभ्यः असंस्थिवगुषा भवनषु च दश्विषा देवाः ॥१२१६ तेभ्यः असंस्थिवगुषा देवाः सन्तु भवेति बानव्यंतराः । तेभ्यः असंस्थिवगुषा देवाः मर्वेषि ग्योतिष्काः॥१२१०॥ मुनानार-

858

अर्थ-देवगतिमें सबसे बोडे निमानवामी भीपमंदिक देव बीर मन देनी हैं उनमे बर्मम्यानगुणे दम प्रकारके मानगणी देन है उनमें भर्सम्मात गुणे संतरदेव हैं उनमें भर्सस्यान गुणे

सब ज्योतिषी देव हैं ॥ १२१६-१२१७॥ अणुदिसणुरारदेवा सम्मादिद्वीय होति योपव्या। तत्तो चलु हेट्टिमया सम्मामित्सा य तह समा ॥

अनुदिशानचरदेवाः सम्यग्दष्टयो भवति बोद्धव्याः ।

सतःराख अधननाः सम्पग्निश्राध तया शेषाः ॥१२१८॥ अर्थ-नय अनुदिश पांच अनुत्रतिमानों के देव सम्यग्दृष्टि

द्दी होते हैं और उनसे नीरीके देव मिश्यादृष्टिमे लेकर सम्य-ग्हष्टिगुणतक होते हैं तथा दोप नारक तिर्वेच मनुष्य मिथगुणतक होते हैं ॥ १२१८॥

अब बंधके कारण आदिको कहते हैं;--

मिच्छादंसणअविरदिकसायजोगा हवंति यंघस्स । आऊसज्झवसाणं हेद्दवी ते द्व णायन्वा ॥ १२१९ ॥ मिध्यादर्शनाविरतिकपाययोगा मर्वति वंघस ।

आयुप अध्यवसानं हेतवस्ते त ज्ञातन्याः ॥ १२१९ ॥ अर्थ--मिध्यादर्शन अविरति कपाय योग जीर आयका परि-

णाम-ये कर्मवंधके कारण हैं पैसा जानना चाहिये॥ १२१९॥ जीवो कसायग्रसो जोगादो कम्मणे दू जे जोग्गा।

गेण्हइ पोग्मलदब्बे बंधो सो होदि णायन्यो ॥१२२०॥

जीयः कपाययुक्तः योगात् कर्मणस्तु यानि योग्यानि । युक्ताति पुरुलद्रव्याणि वंघः स मवति ज्ञातव्यः ॥१२२०॥ अर्थ-जीव कोधादिक्यायरूप परिणत हुजा मनवयन कायकी क्षियारूप योगसे कमें होने योग्य पुरन्तदृष्यकी म्रहण करता है वह संघ है ऐमा जानना चाहिये॥ १२२०॥ पपिडिहिदिअणुभागप्यदेसपंभी प चट्चिही होह। दुविहो य पपिडिमीप मुलो तह उपरो चेत्र॥ १२२१

प्रकृतिस्थित्यनुमागप्रदेशवेषध चतुर्विधो भवति । विविधस प्रकृतिवेधो मृहस्तथा उत्तरक्षय ॥ १२२१ ॥

दिनिषम महतियंथे मृतस्तया उत्तरर्थय ॥ १२२१ ॥ असं—महतियंथ स्तितंथं अनुमागवंथ मदेततंथ-रातगर नार महाताव्यं संप है जनीते महतिवंथ मृत्र तीर उत्तर देने तीवतार है ॥ १२२१ ॥ जाजास्त्र संस्तावस्त्र म

वात्रकारका है। १२२२। जाणस्स संस्थासम् च आवरणं चेदणीय मोहणीयं। आजगणमाम् गोदं नहंनरायं च मृत्यओं।। १९२२॥ म्रानस्य दर्धनस्य च आवरणं वेदनीयं मोहनीयं।

हानस्य द्वानस्य च आवत्य वदनाय महताय । आयुनीम गोत्रं तयांतरायस्य मुकाः ॥ १२२२ ॥ अर्थ—हानावरण दर्शनावरण वेदनीय नोहतीय आयु नाम गोत्र जोत्रं भंतराय-चे कभोकी यूत्रपृतिकां है ॥ १२२२ ॥ यंच जाय दोजिया अहाथीर्सं यदुरी तहेव बाह्यहं । द्विज्ञिया पंत्रप्य भागित्या प्यदिशो उत्तरा स्व ॥११२३

पंच नव हे जहाविश्वतिः चतमः तथैव हाचन्याग्नित् ! हे पंच मनिताः प्रकृतय उच्चतथैव ॥ १२२३ ॥

अर्थ---शामावरणादिकी कामसे पांच मी हो अहाईस चर ब्यासीस हो पांच उत्तर महतियाँ (भेट) वहीं गर्दी है ॥१२२३॥ आभिनिकोधिपसुद्वजोहीसम्प्रमध्यकेषलानं च ४२६ म्लचार-

आवरणं णाणाणं णाद्वव्वं सच्बभेदाणं ॥ १२२४ ॥ आमिनिबोधिकश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानां च । आवरणं ज्ञानानां ज्ञातव्यं सर्वेमेदानां ॥ १२२४ ॥ अर्थ—मति आदिज्ञान पांच होनेसे उनके आवरण भी पांच

हैं। जैसे मतिज्ञानावरण श्वतानावरण अवधिज्ञानावरण मनःपर्ययज्ञानावरण केवळ्जानावरण ये पहली म्रकृतिक भेद हैं ॥१२२१॥
णिद्गाणिद्गा पमलापचला तह धीणिगिद्धि णिद्गा य ।
पपला चक्त्यु अचक्त्यु ओहीण केवल्ससेद ॥१२२५॥
निद्रानिद्रा प्रचलापचला तथा स्त्यानगृद्धिः निद्रा च ।
प्रचला चक्षुः अचक्षुः अवधीनां केवल्सदे ॥१२२५॥
अर्थ—निद्रानिद्रा प्रचलपचला स्थानगृद्धिः निद्रा प्रचल चक्षुदर्शनावरण अचक्षुदर्शनावरण केवल्दर्शनावरण केवल्दर्शनावरण अवक्ष्यर्शनावरण केवल्दर्शनावरणइसतरह दर्शनावरणके नी भेद हैं ॥ १२२५॥
सादमसाद दुविहं चेद्णियं तहेव मोहणीयं च ॥१२२६॥
सातमसातं द्विष्यं वेदनीयं तथेव मोहनीयं च ।
दर्शनचारित्रमीहः कायस्था नोक्शायश्च॥ १२२६॥

अर्थ—सावावेदनीय असावावेदनीय ये दो वेदनीयकर्मके भेद हैं। मोहनीयके दर्शनयोह चारित्रमोह ये दो भेद हैं चरित्रमोहके प्रपाय और नीकपाय ये दो भेद हैं॥ १२२६॥ तिरिणय दुयेय सोटस पायमेहत जहाकसेण णायच्या। मिच्छन्ते सम्मान्त सम्मामिन्छन्तमिदि तिरिण॥१२२७ प्रयो ही पीड्या नव मेदा युवाक्रमेण झावच्याः। मिभ्यात्वं सम्यवस्वं सम्यग्मिष्यात्वमिति त्रयः ॥१२२०॥ अर्थ—तीत दो सोवह नीभेद यभाकमसे दर्शनमोहनी आर्दिके हैं उनमेंसे दर्शनमोहनीयके निष्यात्व सम्यवत्व सम्यात्व-रयात्व ने तीत मेद हैं ॥ १२२० ॥ कोहो माणो माया लोहोणांतालुयंधिसण्णा य ।

अप्पचक्त्वाण तहा पद्यक्ताणों य संज्ञहणो ॥१२२८॥ क्रीणी मानो माचा होभः अनंतानुर्विष्वं च । अप्रतास्थ्यानं च संज्ञहनः ॥१२२८॥ अप्रतास्थ्यानं च संज्ञहनः ॥१२२८॥ अप्रतास्थ्यानं च संज्ञहनः ॥१२२८॥ अप्रतास्थ्यानं क्रीणादि मत्यास्थ्यानं क्रीणादि मत्यास्थ्यानं क्रीणादि संज्ञहन क्रीणादि परेसे सोव्ह भेद क्यायंत्रं हैं ॥१२२८॥

क्ष्मप्रकृति १९९८ त इत्प्रीपुरिसणाउंसयवेदा हास रिद अरिद सोगो य । भयमेताय दुगंठा णवविहं तह णोअसायवेदं तु १२२९

सीपुरपनपुँसकवेदा हासो रितरातिः योकथ । भयमेतसात् द्युप्पा नविषे तथा नोकपायवेदं तु १२२९ अर्थ—सीवेद पुश्येद न्युंडक्वेद हास रित स्वरित योक भय द्युप्पान ने नीमकरहा गोहपाय है ऐता जानना ॥१२२९॥ भिरमा के तिरियाक सामुसदेवाण होति आक्राण । गिरमा के तिरियाक सामुसदेवाण होति आक्राण । गिरमा के तिरियाक सामुसदेवाण ॥१२२०॥ संघटणोपीयां वणणारसगोषस्समणुपुन्ती । अगुरुगायेदं रिपादसुर्या पासं च ॥१२३१॥ अगुरुगाद्व विरापाहजुग्वस्ताय सुद्धमणामं च ॥१२३१॥ अगुरुगादावुक्वादिविरापाहजुग्वस्ताय सुद्धमणामं च ॥१२३१॥ प्रादावुक्वादिविरापाहजुग्वस्ताय सुद्धमणामं च ॥ प्रादावुक्वादिविरापाहजुग्वस्ताय सुद्धमणामं च ॥ प्रादावुक्वादिवारणाहण पिरसुर्ह सुभगं च जादेकं॥ १२३२

४२८ म्लाचार-

अथिरअसुहदुञ्भगपाणादेजं दुस्सरं अजसिकती। सुस्सरजसिकती विय णिमिणं तित्ययर णाम

बादारहं ॥ १२३३ ॥ नारकायुः तैरबायुः मानुपदेवानां भवंति आयृंपि ।

गविजातिश्वरीराणि च वेघनसंघावसंस्थानानि ॥ १२३० ॥ संहननमंगीपांगं वर्णरसगंघस्पर्धा आनुपूर्व्य ।

अगुरुरुचूपपाताः परघात उच्छासो नाम च ॥ १२११ ॥ आतापोधोतविद्वायोगतियुगरुत्रसाः सुस्मनाम च ॥ पर्याप्तसाधारणयुर्ग स्वरक्षमं सुमगं च आदेयं ॥१२१२॥ अस्यराध्यमद्रभेगाः अनादेयं दृश्यरं अपशस्कीर्तिः ॥

अस्पराशुमद्वमगाः अनादय दुःस्वर अध्यक्षकातः । सुखरयशःकीर्ती अपि च निर्माणं तीयकरत्वं नाम द्वार-त्वारिशत् ॥ १२३३॥

अर्थ—नरकायु तिर्वेशायु मानुपायु देवायु-ऐसे आयुक्रमेंक चार भेद हैं। गति जाति द्यारा संघन संघान संहनन अंगोपांग वर्ण रस गंप सर्दा आनुपूर्व अगुरुरुणु उपपात

जनाता वर्ण (स. गय सहा आर्युय्य जारुरु) उपरात परपात उच्छूतनाम बातप उचीत प्रशस्तिहायोगिति व्यशस्तिकी हायोगिति यसनाम स्कृतनाम पर्यास अपरास सापारण प्रत्येक स्विर छुम सुमग बादेय अस्तिर जछुम हुमैंग जनादेय हुःसर जय-धास्त्रीति सहर पदास्त्रीति निर्माण तीर्थकरत्वनाम-ये नायकमेके

घरतात सुसर प्यस्तात जागण तामकरलनाम----- नावकनक् प्याक्षसभेद हैं । यदि गति आदिके भेद क्रिये जांप तो तिस्त्^{ये} भेद होते हैं ॥ १२३०--१२३३ ॥ उद्याजियागोर्द द्वाणं स्थानंतराच भोगो **य** ।

परिभोगो विरियं चेव अंतरायं च पंचविहं॥ १२३४॥

उपनीष्मीत्रं दानं सामीतराये भोगम ।
परिमोगो बीर्यं चैव अंतरायम पंचविषः ॥ १२३४ ॥
अर्थ—उपनोत्र नीषमीत्र १४तरह गोवहमंत्र हो भेद हैं।
बानांतराय कामीतराय भोगांतराय उपमोगांतराय पीयीनगय इमताह अंतरायकमंत्रस मृत्यकृतिके पांच भेद हैं॥ १२३४ ॥ ऐमे
१४८ महत्तिवां हैं।
सम्अष्टमान्त्रपृष्टी पंचि काहारतिक्यपरे॥
१२३५ ॥
सम्अष्टमान्त्रपृष्टी पंचिद जाहारतिक्यपरे॥ १२३५॥

सन्य मिच्छादिष्टी पंयदि णाहारतिन्धपरे ॥ १२६५ द्यताष्ट्यत्वारिश्चमृत्रतिनां पंथं गच्छति विद्याधिकत्वने । सर्वा मिच्यादिश प्रप्ताति नाहार्त्वार्यकराः ॥ १२६५ ॥

अर्थ — पहती अहलाशीसकर्ममितियोंनेते एकसी बीस महिन-योका दी बंध होता दे अहार्दस अवंधमहितयां है कोर उन पहती पीसमें भारारक हारीर आहारक अगोषांग सीर्धकरत इन तीन महित्योंके तिथाय सभी एकसी सबद महिनयोंको निष्या-हिर्हे सोधना है।। १२६५॥

विजय तेतारीमं तेवण्णे चेव पंचवण्णं च । चंधह सम्मादिष्टी दु सावओ मंजदो चेव ॥ १९१६॥ वजेवित्वा विचत्वारिश्च विषेणाश्च चंब पंचवंपाश्च ।

षप्राति सम्पारश्मितु श्रावकः संपत्रश्च ॥ १२३६ ॥ अर्थ-सन्पारशि भीचे गुणस्थानवाना तेत्रातीन प्रशतिसीको

अय — सम्पाराध भाष ग्रुप्यमानवाना तनात्वान प्रकृतिसादा छोड्कर, प्रावक पोवर्षेवाला श्रेपको छोड्कर, संदर्भी प्रयक्त छटेबाला प्रयुक्तो छोड्कर अन्य स्व प्रकृतियोगा यंथ कात्रा है ॥ १२वर ॥ तिण्हं राखुं पदमाणं उक्षम्मं अंतराययमीय ।

तीमं कोडाकोडी मापरणामाणमेव ठित्री ॥ १२३०॥ प्रयाणी सन्दु प्रयमानी उन्ह्रष्टं जैनसपर्मात्र । विषय कोटीकोट्यः सागरनामामेप रिवनिः ॥ १२३० ॥ अर्थ-पर्छे तीन जानावरणी दर्शनावरणी वेदनीय सीर शंतगप इन चार कर्मीकी उत्कृष्टलिनि (रहनेवा कान) तीम कोडाकोडी मागर प्रमाण है ॥ १२३० ॥ मोहरम सत्तरिं मन्द्र यीमं णामस्म चेय गोदस्स । तेतीसमाउगाणं उबमाओ सागराणं तु ॥ १२३८॥

मोइस सप्ततिः यञ्ज वियतिः नामः नैव गीवस । भवस्तिश्च आधुप उपमाः सागरानां तु ॥ १२३८ ॥ अर्थ-मोहनीय मिथ्यालकी सत्तर कोडाकोडी है नामकर्म ब्यार गोपकर्मकी उत्कृष्टसिति बीस कोडाकोडी सागरीपन है

बीर नायुक्तमंकी उत्कृष्टस्वित तेतीस सागरीयमकी है ॥१२१८॥ षारस य वेदणीए णामागोदाणमृहय सुहुत्ता । भिण्णमुहुत्तं तु ठिदी जहण्णयं सेस पंचण्हं ॥१२३९॥ द्वादश च वेदनीयस नामगीत्रयोरही मुहूर्ताः ।

भिन्नमृहर्ते हु स्थितिः जघन्या शेषाणां पंचानां ॥१२३९॥ अर्थ-वेदनीयकर्मकी जघन्यस्थिति बारहसुहर्तकी है नाम मीर गोत्र इन दो कर्मोंकी आठ मुहुर्त है और बाकीके ज्ञानाव-

रणादि पांच कर्मोंकी जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्तपमाण है॥ १२३९॥ कम्माणं जो दु रसो अञ्झवसाणजणिद सह असहो वा

वंघो सो अणुभागो पदेसबंघो इमो होह ॥ १२४०॥

कर्मणां यस्तु वस अध्ययमानवितः सुमीत्सुमी वा । वेषः मा अनुमाना प्रदेशवेषः अयं मर्थतः ॥ १०४० ॥ अर्थ— शानावाणि विवादि वर्गका जो व वायादि परिनात्त्रवितः अर्थ वायादि परिनात्त्रवितः सुमानविद्यादि (परिनात्त्रवितः सुमानविद्यादि । १०४० ॥ सुमानविद्यादि । १०४० ॥ सुम्मी जीमाविद्यादि एवर्गका वायादि दिवालां । एमावा यु पर्वदेश वायादि स्वातः वायादि हिवालां । एमावा यु पर्वदेश वायादि स्वातः वायादि हिवालां । एमावा योगिविद्यादा एकर्गमावागिवित्यादा ॥ १९४१ ॥ स्वतः योगिविद्यादा स्वतः अर्थनात् ॥ १९४१ ॥ स्वतः वायादि स्वतः वायादि ॥ स्वतः वायादि ॥ १९४१ ॥ स्वतः वायादि ॥ स्वतः वायाद

होरे जिल आसादे एक एक घटेरावर विशासकात सुरत कारावर रणादि वर्गपरवाणु अनेत है ॥ १२६१ ॥ शही तक कर्णबर्ध स्वरूप पटा ।

भागे वर्गीके समारोजेका वस वरते हैं. -

भीहरवाषरणाणं क्यंण कर केनरायाय य एव । जबवाहर वे.बाहर्य व्याचार्य संस्थानायां ॥ १९४६ ॥ मीहरवाबरण्योः स्थेण अय अंतरायत् येत । जन्यने वेदने प्रवासके सर्वेभावातं ॥ १९४६ ॥ इत बार पानियावये केंग्र सानायत् स्थेलवार क्षेत्रकर हें इत बार पानियावये केंग्र सानायत् स्थेलवार क्षेत्रकर हें देश वेदनाया प्राप्त होत् है। १९५८ ॥

भागे वेचती होतेवे का करेएड होतेका तेवार काते हैं... मस्तोराज्यिदेशों बाह्या बोहें च केचली गुगर्व (आऊग वेदणीयं चहुहिं खिविइत्तु णीरओ होह ॥१२४३

तत औदारिकदेहं नाम गोत्रं च केवली गुगपत्।

आधु: वेदनीयं चत्वारि स्विधित्वा नीरवा मयति ॥१२४३॥ अर्थ-योगितिरोष फरके अयोग केवली होनेके गद वे अयोग केवली जिन बौदारिक दारीरसहित नामक्रमें, गोजकर्मे आधुकर्म बीर वेदनीयकर्म इन चार अपातिया कर्मोका सयकर कर्मक्सी रजरहित निर्मल सिद्ध मगवान हो जाते हैं॥

भावार्ध — अयोगकेवली अपने कालके दूसरे अंतसमयमें बहरारे कमेमकृतियोंका क्षय करते हैं फिर अंतके समयमें तेरह प्रकृतियोंका नाशकर घरीर छोड़ निर्मल सब उपापियोंसे रहित अनंतगुणमयी सिद्ध परमात्मा हुए मोक्षसानमें सबा विराजते हैं॥ १२४६॥

इसमकार आवार्यश्रीवहकेरिविरवित मूठाचारकी हिंदीमापाटीकार्मे पर्याप्ति आदिको कहने-वाटा बारवां पर्याप्ति-अधिकार समात हुना ॥ १२ ॥



